गीतामां ईश्वरवाद.
दामोदर वखतचंद शाह.

महाराणाश्री करणसिंहजी धर्मग्रंथावली नं. १.

गीतामां ईश्वरवाद.

बंगाळीमां लखनार

श्री हीरेन्द्रनाथ दत्त एम.ए.बी.एल.,

वेदान्तरत्न

गुजरातीमां अनुवाद करनार

दामोदर वखतचंद शाह

ताळुकास्कुल मास्तर लखतर.

आवृत्ति १ ली.

'दामोदरदास' मुद्रालय,–राजकोट.

विक्रम संवत १९६९.

मूल्य रु. २.
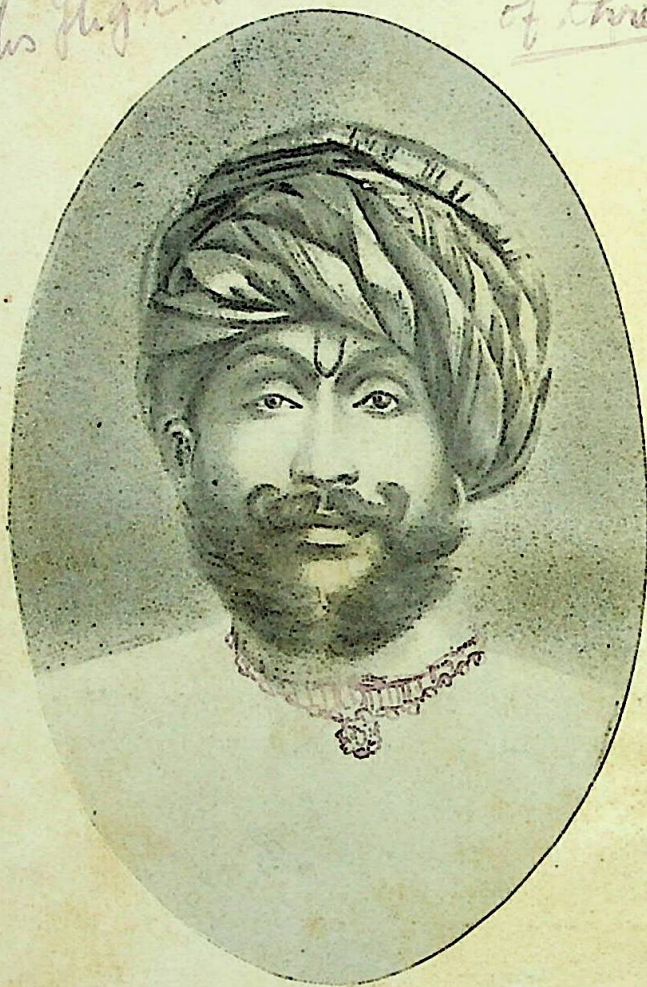
धार्मिकप्रवर **महाराणा श्री करण सिंहजी,**

सी. एस्. आई.

अर्पण पत्रिका.

ज्ञान-विज्ञान-परिमार्जिताभ्यंतर-महामहिमान्वित,-'पुण्यश्लोक' श्री श्रीमद्राज—करणसिंहजी-सी. एस. आइ.,—संस्थान थान-लखतरना नामदार महाराजा साहेब बहादुर.

परम पूज्य पितृदेव,

श्री कृष्ण परमात्मा प्रत्ये अनन्य भक्ति, श्रीमद् भगवद् गीतानां श्रवण, मनन, निदिध्यासनमां परम आसक्ति, दर्शनशास्त्रोनो सार-मर्म ग्रहण करवानी उग्र उत्कंठा, सनातन-धर्म उपरनी अटल-अचल-श्रद्धा, धर्मनुं अंतर्गत रहस्य समजवानुं गंभीर बुद्धिकौशल्य, प्रजा पालनमां अपूर्व उत्साह, राज्यकार्यमां दक्षता, विचारशीलता, धैर्य, सौजन्य अने शांतता, विद्यानुराग, गुणानुराग, सारा लेखको प्रत्येनी उदारता, मारा उपरनो वात्सल्य भाव अने अमृत द्रष्टि आ गुणसमुदाय आपनामां एकत्रित जोइ सानंदाश्चर्य पामीने दर्शनशास्त्रो अने श्रीमद् भगवद् गीतानी तुलनानो आ परम पवित्र ग्रंथ आप नामदारनी संमतिथी अत्यंत श्रद्धा-भक्ति अने आदर पूर्वक समर्पण करुं छुं, ते स्वीकारी कृतार्थ करशो.

लखतर,	भवदीय कृपाकांक्षी
मिति पौश शुक्ल त्रयोदशी	शरणागत बाल
नामदार महाराजा साहेब-	
नी जन्मतिथि.	दामोदर वखतचंद शाह.

संस्थान श्री थान-लखतर नरेश महाराणा श्री करणसिंहजी सी. एस. आइ.नुं जीवन वृत्तांत.

काठीआवाडना झालावाड प्रांतमां आवेला झाला वंशना अधिष्ठाता याने स्थापक मूळ पुरुष प्रख्यात हरपाळदेवना पाटवी पुत्र सोढाजी-थी वारसानुक्रमे चंद्रसिंहजीना यशस्वी नाना कुंवर अभेराजजीए लखतरमां इ. स. १६०४मां गादी स्थापी. अने थान तालुकानां २४ गामो काठीओ पासेथी जीती लइ त्यां स्थायी रेणाक करी, पोताना राज्यने थान लखतर सं-स्थानना नामथी प्रसिद्धिमां लावी मूक्युं. तेमनाथी ११मी पे-ढीए हालना राज्यकर्त्ता महाराणाश्री करणसिंहजीनो शुभ जन्म संवत् १९०२ना पोष शुद १३ (इ. स. १८४६मां) ना रोज थानमां थयो. अने तेज सालमां तेमना पिताश्री वजे-राजजीए वैकुंठवास करवाथी तेमने पाळी पोषी मोटा करवानुं

तथा राज्यने स्थीतिमां राखवानुं महान् कार्य तेमनां मातुश्री रुपाळीबा साहेब, के जे लाठी संस्थानना फटाया कुंवर लीमडावाळा गोहिल अजुभाइ लाखाजीनां कुंवरी हतां, तेमना उपर आवी पड्युं. अने तेमणे तेज सालमां थानथी लखतर गादी स्थापी.

ते वखतना जमानामां हालना जेवां केळवणी आपवानां साधननो अभाव होवाथी पोलीटीकल एजंट साहेब तरफथी एक केळवाएल महेताजी मंगावी गुजराती अभ्यास संपूर्ण कराववामां आव्यो, तेनी साथे विनय अने नम्रताना सद्गुणोथी विभुषित करवा ते वखतनी सुविख्यात फारसी भाषानो पण तेमने अभ्यास कराववामां आव्यो. जेम जेम पोताना कुंवर वयमां आवता गया तेम तेम तेमनी तहेनातमां सारा सारा विद्वानो, मुसद्दीओ, अने भायात वर्गमांथी चुंटी काढेला भायातोने राखी पोतानी नीघेबानी नीचे राज्य वहीवटनुं शिक्षण आपवानी शरुआत करी. जेना परिणामे युवावस्था प्राप्त थवानी साथे ज तेओ स्वतंत्र रीते राज्य वहीवट चलाववाने समर्थ थया एटले सने १८७२ (संवत १९२८)मां मातुश्रीए पोतानी देखरेख बिलकुल बंध पाडी अने त्यारथी आज सुधी महाराणाश्री करणसिंहजी थान लखतर संस्थाननो राज्य वहीवट कर्या जाय छे.

आ राज्य नामदार ब्रिटिश सरकारने खंडणी भरनारुं छे. अने पोलीटीकल एजंट नामना एजन्सि सत्ताधिकारीओ पोतानुं स्थळ राजकोटमां राखी काठीआवाडनां देशी राज्योपर देखरेख राखे छे तेवीज रीतनी तेमनी आ राज्यपर देखरेख होवाथी जे वखते नामदार ठाकोर साहेब विद्यार्थी अवस्थामां हता ते प्रसंगे दर छ छ महीने ते साहेबो पोते ठाकोर साहेबे मेळवेला ज्ञाननी परीक्षा करता, अने ते वखतना बीजा राज्य कर्त्ताओना मुकाबले महेनत लइ भाषा उपरना काबु धरावvana संबंधमां पोतानो संतोष जाहेर करता. तेनो एकज दाखलो बस थशे. मी. टी. सी. होप साहेब मुंबइना नामदार गवर्नर साहेब साथे संवत् १९१६मां लींबडी पधार्या अने दरेक राजाओनी मुलाकात लीधी ते वखत तेमनी साथे हता. नामदार गवर्नर साहेबे तेमना अभ्यासथी खुशी थइ तेमने वखतनी कदर करनार याने फोकटमां वखत नहीं जवा देनार राजकुंवर तरीके पसंद करी एक भारे कींमती सोनानुं घडीआळ इनाममां आप्युं छे, जे ते समयनी यादगीरीना एक चिन्ह तरीके गणी पोतानी जातथी थोडो वखत पण जूदुं पडवा देता नथी.

सने १८७२नी सालथी तेमनी राज्यकारकीर्दी शरु थइ छे तेने आज ४१मुं वर्ष चाले छे. ते दरमियानमां तेमणे राज्य-

कारभार चलावी दिनपरदिन पोतानी आबरुनी वृद्धि साथे प्रजोपयोगी मोटां मोटां कार्यो एवा दुरंदेशीपणाथी कर्या छे अने कर्या जाय छे के जेना परिणामे प्रजा आबादी भोगवी आनंद अने संतोष साथे पोताना राज्यकर्त्ताने हजारो आशिर्वाद आपे छे.

तेमनुं पोतानुं पहेल वहेलुं काम सने १८६७थी रीतसर न्यायनी कोर्टो स्थापन करी प्रजाने इन्साफ आपवा माटेनी गोठवण करी छेवटनो इन्साफ पोताना हाथमां राख्यो. त्यार बाद तमाम गामोनी सरवे करावी भागवटी अने वीघोटीनो मुकाबलो समजवा केटलाक गामोमां रेवन्यु सरवेनी रीते क्लासवारी करावी सेटलमेंट कर्युं, अने ते एवी शरते आज सुधी अमलमां छे के कोइपण कारणने लइने खेडुतोने जे वर्षमां वीघोटी वहीवट अनुकुळ लागे नहि ते सालमां भागवटी वहीवट करवामां आवे छे. संस्थानमां नीतिने रस्ते उपज वधारवा माटे ज्यां ज्यां मीठां पाणी नजरे पडयां त्यां त्यां कुवा बंधावी, तथा ज्यां ज्यां तेवी अछत जणाइ त्यां त्यां तळावो करावी तथा वरसादनां पाणी नकामां नहीं जवादेवा बंध बंधावी खेतीवाडीनी आबादी करवामां तेमनुं लक्षपूर्वक अवलोकन पोतानी प्रजाने आनंद आपे छे. खेडुतवर्गने खेतीना काम सारु ओछा व्याजे नाणां मळवा पोतानी खानगी बच-

तमांथी रु. ५०००० पचास हजारनी एक नादर रकम इला-
यदी ट्रस्टीओने सोंपी छे. तेना व्याजमांथी खेतीउपयोगी
कामोमां धीरधार थाय छे. जेथी खेडुतो राज्य तरफनी आवी
उच्च आशयवाळी मददनो लाभ लइ शाहुकार वेपारीओनी
पण ओछी गरज रहेवाथी पोताना मालेकने हजारो आशि-
र्वाद आपे छे. आ फंडनी आबाद स्थीति जोइने पोलीटीकल
ओफीसरो संतोष वतावता आवे छे. प्रसंग आवे त्यारे व्या-
पारी वर्गने पण आ रकममांथी धीरधार करवानो रस्तो रा-
ख्यो छे. जेने लीधे लखतर शेहेरमां मोटुं जीननुं कारखानुं,
पाकी गांसडीओ बांधवानो प्रेस अने थानमां एक नाना पाया
पर जीननुं कारखानुं हाल हस्ती धरावे छे. देश परदेशना वे-
पारीओ रुनी खरीदी माटे आवता होवाथी वेपार सारी आ-
बादीमां आव्यो छे. एटलुंज नहि पण दिनपरादिन वधतो जा-
य छे.

पोतानी प्रजामांहेना अनाथने खोराकी पोषाकीनी तंगी
नहि पडवा रु.२५०००) पंचवीस हजारनी रकम ट्रस्टमां आपी
छे. जेम खेतीवाडी फंडनो वहीवट प्रजाना हस्तक सोंप्यो छे
तेज प्रमाणे आ अनाथाश्रमनो वहीवट पण प्रजानाज हाथमां
छे. आ फंडना वधारा माटे वीन वारसी मील्कत राज्यमां
दाखल नहि करतां ते फंडमां आपवामां आवे छे.

पोतानी प्रजाने उंची केळवणी आपवाना हेतुथी रु. २४००० चोवीश हजारनी मोटी रकम स्कॉलरशीपमां रोकी छे, जेना व्याजमांथी युनीवरसीटी वगेरेना अभ्यासक्रम प्रमाणे अभ्यास करनारने माटे रु. २३, २२, १५ अने १० एम चार स्कॉलरशीपो मासीक स्थापी तेनो वहीवट नामदार सरकारना पोलीटीकल खाता मारफत एजन्सि केळवणी खाताने सोंप्यो छे. एटले शरुआतथी गुजराती भाषानी केळवणी लइ अंग्रेजी भाषानी केळवणी प्राप्त करवा पोताना स्वर्गस्थ दीलोजान मित्र लींबडी नृपति सर जशवंतसिंहजीना नामथी एंग्लो वर्नाक्युलर स्कुल स्थापी पांच धोरण शीखववानुं राखेल छे. अने छठ्ठा धोरणनी योजना विचार नीचे छे. लींबडी हाइस्कुल साथे संबंध जोडवानो करार होवाथी तथा आ स्टेटमां कांइपण फी लीधा सिवाय केळवणी अपाय छे ते ज प्रमाणे लींबडी हाइस्कुलमां छठा धोरणथी अभ्यास करी मेट्रीक्युलेशन सुधी पहोंचवानी उत्तम प्रकारनी योजनाने लइ शरुआतथी उंची केळवणी संपूर्ण रीते वगर फीए प्राप्त करी शके छे.

कन्याओ माटे पोतानां कुंवरी श्री माजीराजबाना नामथी लखतरमां कन्याशाळा स्थापन करी छे. तेमां धोरणवार अभ्यासनी साथे रसोइ करवानी कळा अने शीवण भरतनुं काम शीखववानी पण गोठवण करवामां आवी छे.

लखतर स्टेटनां मोटां मोटां गामोमां थइ १० निशाळो अने एक लायब्रेरीनी स्थापना थयेली छे. प्रजानी तंदुरस्तीना संरक्षणार्थे लखतरमां एक अने थानमां एक एम बे दवाखानां काढवामां आव्यां छे. लोकोपयोगी कामो, पाका रस्ता अने दीवाबत्ती वगेरे सुखनां साधनो राज्यकोषमांथी पुरां पाडयां छे, अने ते बदल रैयत पासेथी कांइ पण कर लेवामां आवतो नथी.

राज्यना लखतर विभागमां सीममां पण पाणी मळी शके एवा आशयथी बे माइलना रेलना पाटा अने डबा रु. १००००) दश हजारना खर्चथी खरीद करी तेने उपयोगमां लेवाथी सीममां योग स्थळे तळावो गाळवामां आवे छे अने तेनी माटी नजीकना खेतरमां खातरतरीके नाखवामां आवेछे जेना परीणामे " एक पंथ दो काज " थाय छे.

खेतीवाडीने लगतां पुस्तको इनाम आपी रचाववा करेलो प्रयास पण स्तुतिपात्र छे.

पोतानी प्रजा वीन हरकते पोतानी मरजीमां आवे ते धर्म पाळे छे अने दरेक धर्मनी संस्थाने राज्यथी जोइती मदद अपाय छे. ब्राह्मणना छोकराओ वर्णाश्रम धर्म प्रमाणे पोताना धर्मनी क्रियाओ सारी रीते पाळे अने एवां तत्त्व तेमना समजवामां आवे एवा उद्देशथी तेमनां षट्कर्मनी परीक्षा दर

वर्षे लेवरावी इनामो आपवानी प्रशंसनीय गोठवण करवामां आवेली छे तेमज हिंदुधर्मशास्त्रनुसार प्रजा कल्याणार्थे दर वर्षे एकेक यज्ञ करवानी योजना पण अमलमां मुकायाथीं प्रजा जनोने घणोज संतोष थयो छे.

थान महालमां त्रिनेत्रेश्वर महादेवनुं पुरातनी देवळ छे. तेनो रु. ५००००) पचास हजार खर्ची जीर्णोद्धार करावी प्राचीन कारीगरी जाळवी राखी छे.

पोतानां थरादवाळां सौभाग्यवंतां मरहुम राणीजी वाघेली वहुजीनी जीवाइनी बचत रकम दरबारमां दाखल नहीं करतां तेना व्याज वगेरेनी उपजमांथी तेमनी मरण तिथिने दिवसे लखतरमां दर वर्षे जानवरोनो मेळो भराय छे. तेमां गायो, वाछडी, वाछरडा, बळदो अने सांढने सारी रीते उछेरी सारी स्थितिमां राखनारने दरबारथी इनामो आपवामां आवे छे. ते सिवाय ते पेदाशमांथी स्टेटनी हकुमतमां आवेली धार्मिक जगाओ दुरस्त करावावाना काममां योग्य मदद आपवामां आवे छे.

मुसाफरोना विश्राम स्थान माटे लखतर अने थानमां पाकी इमारतनी धर्मशाळाओ अने बीजां मोटां मोटां गामोमां गामना प्रमाणमां धर्मशाळाओ करवामां आवी छे. तथा सदाव्रत लेनारन थान, लखतर अने लीलापुरमां हरहंमेश सदाव्रत

आपवामां आवे छे.

थानने फरतो असलना वखतनो किल्लो छे, अने लखतरने पण मोटे खर्चे किल्लाथी विभुषित करवामां आवेल छे.

लखतर स्टेशनथी गाममां पश्चिम बाजुएथी पेसतां विशाळ मोतीसर नामे तळाव, कोरोनेशन तालुकास्कुल, सर जशवंतसिंहजी एंग्लो वर्नाक्युलर स्कुल, लायब्रेरी, श्रीमद्‌गोस्वामी महाराजश्रीओने मुकाम राखवा लायक सात स्वरुपनी हवेली, तेथी आगळ वधतां बंने बाजु एक सरखा देखाववाळी बजार अने मेहेमानोने उतरवा माटे मोटा खर्चे करेला उताराओ ए सर्व, अवलोकन करनारने राज्य अने प्रजानी आबादानीनां चिन्ह तरीके अने महाराणाश्री करणसिंहजी साहेबनी उज्वळ कारकीर्दीना आभूषण रुप लखतर दृष्टिगोचर थतां एक नाना सरखा गामनी स्थीतिमांथी नाजुक शहेरनी पंक्तिमां लावी मुक्यानो ख्याल आपे छे.

जेम:प्रजाए,पोताना राज्यकर्त्तानी कदर बुजी तेमने मानपत्रो आपी पोतानो संतोष प्रदर्शित कर्यो छे तेम थान तथा लखतरनी पांजरापोळोमां तेओ नामदारश्रीए पांच पांच हजारनी रकम बक्षी मुगां प्राणीओ तरफनो पोतानो दयाभाव प्रगट रीते बतावी आप्यो छे.

आपणा बादशाह सलामत पंचम ज्योर्जे सने १९११ ना

डिसेम्बरमां दील्हीमां भव्य दरबार भर्यो ते वखते ते दरबारमां नामदार दरबारश्रीने आमंत्रण आपी पोताना मुबारक हस्ते "कम्पेन्यन ऑफ धी मोस्ट अॅक्झॉल्टेड स्टार ऑफ इंडीआ" ना मानवंता खीताबथी अलंकृत करी कदर करी छे ए मोटा आनंदनी वात छे.

हाल पोताने एक राणीजी हैयात छे. मरहुम लीमडावाळां सौभाग्यवंतां राणीजीथी त्रण कुंवर अने एक कुंवरी हाल छे. तेमां युवराज कुमार श्री बळवीरसिंहजी साहेबने एक पाटवी कुमार छे. नाना बे कुंवरो--कुमारश्री मानसिंहजी अने कुमार श्री भगवतसिंहजी--ने पोते भायाती शीरस्ते गीराशमां एकेक गाम अने तेमना मोभाने छाजती स्थावर जंगम मील्कत, वाहन, वस्त्राभूषण अने रोकड रकम यथाशक्ति स्टेटना पाछला वहीवट अनुसार आपी पिता तरीकेनी पोतानी फरज अदा करी छे.

आ राज्यकर्त्तामां बाळपणथीज पोतानां पूज्य मातुश्री तरफथी नीति, धर्म, विवेक अने केळवणीना संस्कारनी उंडी छाप पडेली छे ; वळी तेमनी साथे पगरस्तानी यात्राने निमित्ते जे मुसाफरी करी ते प्रसंगे, तथा पोते हिंदुओनां चारे धाम-उत्तरे बद्रिकेदार (हिमालयमां), दक्षिणे सेतुबंध रामेश्वर, पूर्वे जगन्नाथपुरी अने दक्षिणे द्वारिकांनी यात्रा करी ते प्र-

संगे चारे दिशाओनी अंतर्गत आवेलां अनेक तीर्थस्थळो, गामो, शहेरो, तथा कस्बामांनी वसती प्रजाओनां चरित्रो, व्यापार, रीतभात अने धार्मिक तेमज व्यवहारिक रीतरिवाजो जोवाथी, ते उपर विचार करवाथी तथा पोतानां राज्य-कारोबारनां दररोजनां चालतां कामकाजोना तेमज सारा सारा मुत्सद्दीओ, वकीलो, बेरिस्टरो, जडजो वगेरे अमलदारो तथा ब्रिटिश शहेनशाहतना नाना मोटा अमलदारोना संबंधमां आववाथी जे कौशल्य, अनुभव तथा उंचा सद्गुणोनी छाप पडी छे तेनो लाभ थान-लखतर स्टेटनी प्रजाने आपवाने, एक व्यवहार कुशळ धर्मश्रद्धाळु अने देशी नृपतिनुं संक्षिप्त पण मनन करवा योग्य जीवन वृत्तांत, आर्यमहर्षिओए प्रचलित करेलां छ दर्शनोनी साथे श्रीमद् भगवद्गीतानी तुलना करनारा "गीतामां ईश्वरवाद" नामना अति उपयोगी धर्मग्रंथना आरंभे मूकवानी साथे परम दयाळु महा प्रभु पासे प्रेम लक्षणा भक्तिना आनंदमां निमग्न रहेनार लखतरना नरेश महाराणाश्री करणसिंहजी साहेब दीर्घायु थाय, तथा पोतानी प्रजाना अधिकाधिक कल्याणकारक कार्यार्थे उदार हाथ लंबाववा शक्तिमान रहे एवी प्रेमपूर्वक प्रार्थना करुंछुं.

आ ग्रंथना अनुवादके आ महा पुरुषनुं जीवन चरित्र लखवा मने आग्रह करवाथी मारा आ राज्य साथेना सत्तर-

अढार वर्षना संबंधने लइ निष्पक्षपात दृष्टिथी मारा अंतःक-
रणने योग लागी तेटली ज नोंध में अत्रे लीधी छे.

सेवक,

श्री जन्माष्टमी
श्रावण सं. १९६९ } मगनलाल त्रीभुवनदास वकील.
मुख्य कारभारी, थान-लखतर स्टेट.

प्रस्तावना.

सनातन धर्मशास्त्रोनुं गूढ रहस्य समजवानी तीव्र उत्कंठाना आवेगमां आ अनुवाद करवानुं साहस कर्युं छे, बाकी तो आ कार्य मारी शक्ति उपरांतनुं छे, ए मारा लक्ष बहार नथीज.

गुजरातना अनेक प्रयासी पुरुषोए बंगाळी भाषानो अ-भ्यास कर्यो छे अने पोतपोतानी रुचि अनुसार सौ जुदा जुदा प्रकारना ग्रंथोना अनुवाद कर्या जाय छे. पण कहेवुं जोइए के आ प्रकारना ग्रंथोना अनुवाद करवानुं काम हजुसुधी कोइए हाथमां लीधुं जाणवामां नथी. साधारण रीते नवल कथाओनाज अनुवाद थता जोवामां आवे छे. नवल कथाओ कांइ निरुपयोगी नथी पण एथी वधारे उच्च प्रतिना ग्रंथोना पण अनुवाद थाय तो ठीक एवी मारी मान्यता थतां मारी रुचिना विषयनो आ पहेलो अनुवाद वाचक समक्ष मुकतां सविनय प्रार्थना के आ ग्रंथमां चर्चेला विषयो घणाज गूढ छे अने आवा गूढ विषयमां गमे तेटली सावचेती राख्या छतां पण दोषनो संभव छेज, तो सज्जनो ते क्षमा करशे अने मने योग्य सूचना आपशे तो बीजी आवृत्तिमां घणी खुशीथी तेनो स्वीकार करीश.

मारो आ रंक प्रयत्न वाचकवर्गने जो कांइपण उपकारक थयो समजाशे तो आज जातना बीजा अनुवाद करवानो मानुषी संकल्पतो छेज, पछी जेवी परमात्मानी इच्छा.

मनन थाय ए हेतुथी में आ अनुवाद लखी राख्यो हतो. मारा परम पूज्य पितृदेव लखतर नरेशनी सेवामां भाग्यवशात् जइ चडतां में मारो हस्तलिखित अनुवाद तेमने वंचाव्यो अने ते नामदारे आपेला उत्साह अने उदार आश्रयथीज आ ग्रंथ प्रसिद्धिमां मूकी शकायो छे. तेथी वाचकवर्ग उपर तेमज मारा उपर तेमनो मोटो उपकार थयो छे, ते मारे मुक्त कंठे स्वीकारवोज जोइए.

लखतरना महेरबान मुख्य कारभारी साहेब मगनलाल भाइए, नायब कारभारी साहेब नेणसी भाइए तथा बीजा जे जे सज्जनोए मने आ कार्यमां सहायता करी छे तेमनो पण मोटो उपकार मानुं छुं.

संवत १९६९ना पोश सुद १३, दामोदर वखतचंद शाह,
लखतर. अनुवादक.

नहि किञ्चिदपूर्वमत्रवाच्यं, न च संग्रंथनकौशलं ममास्ति
अत एव न मे परार्थ यत्नः स्वमनो भावयितुम् कृतम् मयेदम्
मम तावदनेन याति वृद्धिं कुशलं भावयितुम् प्रसाद वेगः
अथ मत् समधातुरेव पश्येत् अपरोऽप्येन मतोऽसिसार्थ-
कोऽयम् .

भावार्थ—हुं आ ग्रंथमां कोइ अपूर्व वात कहेवानो नथी, अने भाव संग्रह करवानी कुशळता पण मारी नथी. मारा पोतानां चित्तनी तृप्ति माटेज आ कार्य करवामां आव्युं छे.

जो मारा जेवो क्षुद्र बुद्धिवाळो कोइ माणस आ ग्रंथ अवलोकीने कांइपण लाभ मेळवशे तो हुं मने पोताने कृतार्थ थयो समजीश.

विनीत अनुवादक.

अनुक्रमणिका.

गीतामां ईश्वरवाद.

भूमिका.

गीता अति अपूर्व ग्रंथ छे. जगतनां साहित्यमां एवो उत्कृष्ट अने सर्वोत्तम ग्रंथ बीजो नथी. गीतानुं कद मोटुं नथी ; एमां मात्र ७०० श्लोक छे, तोपण गीता सर्व धर्मनो सार छे, सर्व शास्त्रोमां अत्युत्तम छे. जेम समुद्रना मंथनथी अमृत नीकळ्युं हतुं, तेम शास्त्र समुद्रनुं मंथन करवाथी आ गीतामृत उत्पन्न थयुं छे. तेटला माटेज प्राचीन पंडितो कही गया छे के–

"गीता सुगीता कर्तव्या, किमन्यैः शास्त्र विस्तरैः"

"गीतानेज सारी रीते गावी, बीजा शास्त्रना विस्तारथी शुं प्रयोजन छे ?"

गीतानी एक विशेषता छे. तेनी सार्वभौमता. गीतामां संप्रदायने लगता हठनो अथवा संकोचनो लेश पण नथी. तेथी बधा वर्गना तत्त्वज्ञानीओ, सर्व संप्रदायना साधको गीताने एक सरखा आदरनी नजरथी जुए छे. गीता विश्वतोमुख ग्रंथ छे. ज्ञानी, कर्मी, योगी, भक्त ए बधाना संबंधमां गीता एक सरखी सर्वोत्तम छे.

आम होवानुं कारण गीतानी सूचक शक्ति[1] छे. गीतामां एकी साथे बधां सार सत्योनो समावेश छे. गीता सत्यना सूर्य स्वरुप छे. सूर्यमां बधा रंगोनो समन्वय[2] छे; तेथी जे फूल जे रंग प्रतिफलित करी शके, ते फूल सूर्यनां किरणथी ते रंग धारण करे छे. जो सूर्य बधा रंगनो समन्वय न होतां वादळी पीळो के लीलो होत तो बीजा रंगनां फूलो ते प्रकाशमां प्रकाशित थात? ते प्रमाणे जो गीताए बधां सार सत्योनो समन्वय न करतां सत्यनो एक भाग अथवा मात्र थोडो भाग प्रगट कर्यो होत, तो बीजा मतवाळा साधक अथवा दार्शनिक गीतामांथी पोतपोताने तृप्तिजनक अथवा पुष्टिकर कोइ उपादान संग्रह करी शकत नहि.

[1] अंग्रेजीमां जेने Suggestiveness कहे छे ते.

[2] सूर्य सात घोडा वाळो छे. वादळी, पीळो, रातो वगेरे सात मूळ रंग (Prismatic Colours) तेनां वाहन छे.

आ देशमां अने बीजा देशोमां आ गीतानी जुदां जुदां द्रष्टि बिंदुथी जुदी जुदी रीते चर्चा थइ छे, तोपण गीता संबंधी छेवटनी वात हजी पण कहेवाइ नथी. गीताना संबंधमां कहेवायुं छे के--

" व्यासो वेत्ति न वेत्ति वा "

'व्यासदेव पोते पण रहस्य जाणे छे के नथी जाणता.'

ए ग्रंथनुं रहस्य स्पष्ट करवुं ए माणसनी शक्तिनी वात नथी. कारणके गीतानो उजळो प्रकाश आपणे द्रष्टिमर्यादामां लावी शकता नथी. पोतपोतानी केळवणी अने संस्कार प्रमाणे आपणे गीताने रंगीत काचमां राखीने जोइए छीए तेथी गीतानो उजळो प्रकाश रंगाइने आपणी आंखमां पडे छे. मारी आंख उपर पण ते रंगीत काच रहेलो छे, तेथी हुं गीतानुं रहस्य स्पष्ट करी शकीश एवी दुराशा राखतो नथी.

आ देशमां घणा काळथी अनेक दर्शन शास्त्र प्रचलित छे. बुद्धिवान पंडितोए बुद्धिवडे सत्यनो निर्णय करवाना प्रयास कर्या छे. आधुनिक पंडितो पण द्रढताथी एज मार्गे चाले छे. तेओ कोइपण काळे जवाने ठेकाणे पहोंचशे के केम, ते शकवाळी वात छे. कारणके सत्यनो निर्णय करवानो ए मार्ग नथी. दार्शनिकोना वळवान् तर्कनुं फळ वाद, जल्प, वितंडा, कलह वगेरे छे. तर्कथी कदिपण सत्यनो निर्णय थइ शके नहि.

श्रुति कहे छे के—

" नैषा तर्केण मतिरापनेया "

' तर्कवडे तत्त्वज्ञान मेळवी शकाय नहि. '

भगवान् बादरायण पण ब्रह्मसूत्रमां तर्कनी अप्रतिष्ठा कहे छे[1].

एनां भाष्यमां श्री शंकराचार्ये लख्युं छे के, लोको बुद्धि उपर विश्वास राखीने जे तर्क करे, ते तर्कनी प्रतिष्ठा नथी. कारणके एक बुद्धिमाने अनुमोदन करेला तर्कनुं बीजो बुद्धिमान् खंडन करे. बीजाना तर्कनुं वळी त्रीजो खंडन करे. आथी तर्कनो अंत क्यां आवे ?[2]

तेथी शास्त्रकारोनो उपदेश एवो छे के, अचिंत्य छेल्लां तत्त्वनो विचार करतां तर्कनो प्रयोग करवो नहि.[3]

---

[1] तर्काप्रतिष्ठानादप्यन्यथानुमेयमिति चेदेवमप्य विमोक्षप्रसंगः। ब्रह्मसूत्र २. १-११.

[2] निरागमाः पुरुषोत्प्रेक्षामात्र निबन्धनास्तर्का अप्रतिष्ठिता भवन्ति, उत्प्रेक्षाया निरंकुशत्वात्, तथाहि कैश्चिदभियुक्तै र्यत्नेनोत्प्रेक्षितास्तर्का अभियुक्ततैररन्यैराभासमाना दृश्यन्ते. तैरप्युत्प्रेक्षिताः सन्तस्ततोऽन्यैराभास्यन्त इति न प्रतिष्ठितत्वं तर्काणाम् शक्यमाश्रयितुम् पुरुषमतिवैरुपात्. [उपलां सूत्रनुं शंकरभाष्य].

[3] अचिन्त्याः खलु ये भावा न तांस्तर्केण योजयेत्.

ऋषिओए अनुमोदन करेली सत्यनो निर्णय करवानी रीत दर्शननी रीत करतां तद्दन जुदी छे. ते रीतनो क्रम, श्रवण, मनन, अने निदिध्यासन छे. छेल्लुं सत्य (जेने हर्बर्ट स्पेन्सर अज्ञेयकोटिमां नाखे छे) कादि पण प्रत्यक्ष अथवा अनुमाननो विषय थइ शके नहि. चरम सत्यने प्रत्यक्ष करी शकीए, एवी कोइ इंद्रिय आपणे नथी. अनुमान प्रत्यक्ष मूलक छे. आपणी शी शक्ति छे के आपणे तर्क अने युक्ति वडे छेल्लां सत्यनुं अवधारण करी शकीए? आथी छेल्लां सत्यना निर्णयनो मात्र एकज उपाय छे, अने ते उपाय आप्त वाक्य छे. आप्त एटले भ्रम प्रमाद वगरना पुरुष–जेमणे तत्वद्रष्टि वडे छेल्लां सत्यनो साक्षात्कार कर्यो छे, तेमनो उपदेश एज आप्त वाक्य. ऋषिओ आप्त, तेथी तेमणे प्रवर्तावेलां श्रुति स्मृति वगेरे शास्त्र एज मात्र छेल्लां सत्यना निर्णयनां प्रमाण छे. ए शास्त्र वाक्योनुं 'श्रवण' करवुं, अने ए बधां वाक्योनो परस्पर समन्वय करी 'मनन' करवुं, पछीं ते संबंधी एकाग्रचित्तथी ध्यान ('निदिध्यासन') करवुं. त्यारेज सत्यनो निर्णय थाय. आज ऋषिओए अनुमोदन करेली सत्यनो निर्णय करवानी रीत छे.

" श्रोतव्यः श्रुतिवाक्येभ्यो, मन्तव्यश्चोपपत्तिभिः
मत्वा च सततं ध्येय, एते दर्शन हेतवः "

'श्रुति वाक्य सांभळवां, युक्ति[1] वडे मनन करवुं, पछी सतत ध्यान करवुं. आ रीते सत्यनुं दर्शन थाय'.

हुं आ प्रस्तावमां यथाशक्ति ए रीतनुंज अनुसरण करवानो प्रयत्न करीश. कारण, मने खात्री छे के गीतानुं खरुं रहस्य ग्रहण करवुं होयतो मात्र तर्क अने युक्तिथी ग्रहण करी शकाय नहि. श्रद्धापूर्वक गीता श्रवण करी तेना अर्थनुं मनन करवुं जोइए, अने पछी एकाग्र अने निविष्ठ थइ तेना मर्मनुं निदिध्यासन करवुं. आम करीए तोज गीतानुं कांइपण रहस्य हृदयंगम करवाने आपणे शक्तिमान थइ शकीए.

---

[1] युक्तिनो अर्थ मात्र तर्क नथी. भगवान् मनुए कह्युं छे के,—

आर्षम् धर्मोपदेशंच, वेदशास्त्र विरोधिना
यस्तर्केणानुसंधत्ते, सधर्मं वेदनेतरः

[म. स्मृ. अध्याय १२ मो श्लोक १०६]

जे शास्त्रने अविरोधी तर्क वडे शास्त्रनो उपदेश समजवानो प्रयत्न करे, तेज सत्यनो निर्णय करी शके, बीजा करी शके नहि.

प्रकरण १ लुं.

षड्दर्शन.

आ देशनां मुख्य दर्शन छ छे. न्याय अने वैशेषिक, सांख्य अने पातंजल, पूर्वमीमांसा अने उत्तरमीमांसा. आ बधां दर्शन शास्त्रो पहेल वहेलां क्यारे रचायां, तेनो निर्णय करवानो उपाय नथी. तोपण पाश्चात्य पंडितो प्राचीन संस्कृत साहित्यना जे युगने सूत्रयुग कहे छे, ते युगमांज बधां दर्शन शास्त्रो रचायां, एम चोक्कसपणे कही शकाय छे. सूत्रयुग ए गीता रचाया पहेलांनो वखत छे. तेथी ज्यारे गीता रचवामां आवी त्यारे षड्दर्शने प्रतिपादन करेला सिद्धांतो लोकोने अजाण्या नहोता. हमणां जे आकारमां दर्शन शास्त्रो प्रचलित छे, तेज आकारमां गीता रचाइ ते वखते पण हतां, ए वात खात्रीथी कही शकाती नथी. कारणके रचाया पछी दरेक दर्शनमां थोडो घणो सुधारो वधारो थयो छे, एम मानवानां मजबुत कारणो छे. एम छतां पण गीता रचावाने समये पंडितोना समाजमां षड्दर्शन प्रचलित हतां, एमां शक लाववानुं कांइपण कारण नथी.

प्रत्येक दर्शननो मूळपायो—दुःखवाद छे. बधाज दर्शनकारोनो मत एवो छे के संसार दुःखनुं आलय छे. अहिंयां जे सहेजसाज सुख छे, ते एकलुं क्षण भंगुर छे, एटलुंज नहिं; पण ते मात्र दुःखनुं पूर्वरुप छे. तेवां सुखथी जीव कदिपण संतुष्ट थइ शके नहि. तेथी ए दुःखनो नाश करवा माटे जुदा जुदा उपायो शोधे छे. पण ते गमे ते उपायनो आशरो ले, तोपण ते उपाय वडे संसारदुःखमांथी छुटी शकातुं नथी. दुःखनो नाश ए जीवनी इच्छा छे, दुःख-हानि ए परम पुरुपार्थ छे. ए दुःखनी हानिना उपाय शोधी काढवा एज दर्शन शास्त्रोनुं प्रयोजन छे. आथी दर्शननी शरुआत दुःखवादथी थाय छे अने दर्शननी समाप्ति दुःखनाशमां[१] छे. बधां दर्शनोए दुःख अटकाववाना उपायो नक्की कर्या छे. पण बधांए नक्की करेलो उपाय एक नथी. जुदा जुदा दर्शनकारोए दुःखहानिना उपाय

---

[१] The aim of all Indian philosophy was the removal of suffering, which was caused by nescience, × × × × The principal systems of philosophy in India × × × × start from the conviction that the world is full of suffering and that this suffering should be accounted for and removed. (Max Muller's. The six systems of Indian philosophy. p. 140).

जुदा जुदा नक्की करेला छे. योग्य स्थळे ए विषयनो विचार करवामां आवशे.

गीताने विचारतां पण जणाय छे के गीताए पण दुःखवादनुं समर्थन कर्युं छे. गीताना मत प्रमाणे पण संसार क्षणभंगुर अने दुःखनुं आलय छे.

" पुनर्जन्म दुःखालयमशाश्वतम् " ८-१५

" अनित्यम् असुखं लोकम् इमम् प्राप्य " ९-३३

' अनित्य अने असुखकर आ लोकमां आवीने '

" मृत्युसंसार सागरात् " १२-७

' मृत्यु ग्रस्त संसार समुद्र '

" मृत्यु संसार वर्त्मनि " ९-३

' मृत्युथी पीडित संसार मार्गमां '

जन्म मृत्यु जरा व्याधि दुःख दोषानुदर्शनम् १३-८

(ज्ञानी संसारने) 'जन्म-मृत्यु-जरा-व्याधिरूप दुःख अने दोषथी भरेलो जुए छे '.

गीतामां पण दुःखनाशनो उपाय उपदेशाएलो छे. ए उपायनी साथे दर्शने कहेला उपायने सरखावतां एक खास तफावत समजाय छे. ए तफावतनुं मूळसूत्र गीतानो ईश्वरवाद छे. दुःखहानिना उद्देशथी गीताए जे विविध उपायनो उपदेश कर्यो छे, ते बधांने केन्द्रस्थाने ईश्वर छे. दर्शन शास्त्रोए बता-

वेला उपायोमां आ मोटामां मोटो भेद छे.

दर्शन शास्त्रनो विचार करतां आपणे जोइशुं के, एक वेदान्त दर्शन अथवा उत्तरमीमांसा सिवाय बीजां दर्शनोए बतावेली दुःखहानिनी रीत साथे ईश्वरनो संबंध बहु घाडो नथी. सांख्य अने पूर्वमीमांसाए तो ईश्वरनुं खंडनज कर्युं छे. न्याय अने वैशेषिक दर्शने जोके ईश्वरनुं प्रतिपादन कर्युं छे, पण तेमणे बतावेला उपायोनी साथे ईश्वरनो कोइ प्रकारनो संबंध नथी. वळी पातंजलदर्शने जोके योग पद्धतिनी साथे ईश्वरने संयुक्त कर्यो छे, पण तेमां ईश्वरनुं स्थान अतिशय गौण छे. वेदान्त दर्शनने प्रतिपादन करवानो विषय ईश्वरज छे, ए खरुं पण वेदान्तनी रीतमां अने गीतानी रीतमां जे तफावत छे, ते विचारवा जेवो छे. प्रसंग प्रमाणे क्रमे क्रमे आ बधानो उंडो विचार करवामां प्रवृत थइशुं.

बधां दर्शन शास्त्रोनो उंडो विचार करतां एवो विचार हृदयमां द्रढ थाय छे के, तेओमां कांइक अपूर्णता, कांइक अभाव रही गयो छे. अने गीताए ए बधां दर्शन शास्त्रोनो मूळ प्रतिपाद्य विषय अंगिकार करी लइने तेनी साथे एक एवी अपूर्व वस्तुनो संयोग करी दीधो छे के, तेथी ए अभाव मटी गयो छे, ए असंपूर्णता पुराइ छे. एम जणाय छे के कोइ रसायनिक मिश्रण (chemical solution) मां घणा पदार्थो मेळवी

घणी महेनत कर्या छतां स्फाटिक (crystal) बंधातो न होय, पण जेम कोइ समर्थ रसायन शास्त्री ते रसायनिक मिश्रणमां एक एवी वस्तु मेळवी दे के तरतज सुंदर स्फाटिक बंधाइ जाय, तेम दर्शन शास्त्रमां अनेक चिंता, विचार अने गवेषणा होवा छतां तेनी असंपूर्णता दुर थती नथी, पण गीता ईश्वरवादरुप एक अपूर्व वस्तुनो संयोग करी दइने घणी सरळताथी दर्शन शास्त्रने सुसंपूर्ण करी दे छे, ए वात धीमे धीमे स्पष्ट थशे.

प्रकरण २ जुं.

न्यायदर्शन अने गीता.

न्याय अने वैशेषिक एक वर्गनां दर्शन छे. न्याय मुख्यत्वे करीने (Logic) छे. पंचावयव न्याय अथवा Syllogism नां प्रतिपादनमां एनी विशेषता छे. वैशेषिकनी विशेषता परमाणुवादमां छे. तेना मत प्रमाणे परमाणु नित्य पदार्थ छे. पण खरुं जोतां परमाणु अनित्य छे, एतो मात्र सांख्यदर्शननुं तन्मात्र छे. ज्यां न्याय, वैशेषिकनो अंत, त्यांज खरां—वास्तविक दर्श-

नो आरंभ छे. तेटला माटे विद्यारण्य मुनिए तैत्तिरीय उपनिषद्नी दीपिकामां लख्युं छे के, मूळ कारण परब्रह्ममांथी उत्पन्न थएल आकाश, काळ, दिक् अने परमाणु स्थापित थया पछी, तेनी उत्तरकालीन जे सृष्टि तेज, गौतमादिए दर्शावेली रीते स्थापित थइ शके.'

न्याय दर्शननुं मूळ महर्षी गौतम प्रणीत न्याय सूत्र छे. एना पांच अध्याय छे. दरेक अध्यायना बे परिच्छेद छे. तेने आह्निक कहे छे. न्याय दर्शननुं वात्स्यायन प्रणीत भाष्य छे. तेना उपर उद्योतकरनुं न्यायवार्तिक, वाचस्पतिमिश्रनी तात्पर्य टीका अने उदयनाचार्यनी तात्पर्य परिशुद्धि प्रचलित छे.

न्याय दर्शनना मत प्रमाणे संसार दुःखमय छे. सुख पण दुःखथी जोडाएलुं छे, तेथी सुखने पण गौण रुपे दुःखज गणी शकाय. जन्म थतांनी साथेज दुःख. जो दुःखनो नाश करवो होय तो जन्मनो अटकाव करवो जोइए. जन्मनो हेतु प्रवृत्ति छे. प्रवृत्तिने लीधेज जीव कर्म करे छे, तेनांज फळ

' मुल कारणात् परब्रह्मण उत्पन्ना आकाशकालदिशः परमाणवश्च यदा व्यवस्थिताः, तदा तत आरभ्य उत्तर कालीना सृष्टि गौतमाद्युक्त प्रकारेण व्यवतिष्ठताम् "

भृगुवल्ली प्रथमखंड,—तस्माद्वा एतस्मादात्मनः आकाशः संभूत " ।। ए भागनी दीपिका.

रूपे तेने जन्म ग्रहण करवो पडे छे. प्रवृत्तिनो हेतु शो? दोष. दोष त्रण प्रकारना:—राग, द्वेष अने मोह. आसक्ति, विद्वेष अथवा प्रमाद सिवाय कोइ पण विषयमां जीवनी प्रवृत्ति थाय नहि. ए दोषो वळी मिथ्याज्ञानथी उत्पन्न थाय छे. तेथी मिथ्याज्ञाननो नाश करवानुं साधन न थाय तो दुःख निवृत्ति-नो उपाय थाय नहि.

"दुःख-जन्म-प्रवृत्ति-दोष-मिथ्याज्ञानानाम् उत्तरोत्तरापाये तदन्तरापायादपवर्गः"' न्यायसूत्र. १-१-२

तत्वज्ञान सिवाय मिथ्याज्ञाननो नाश थाय नहि. तेथी तत्व-ज्ञान थाय तोज निःश्रेयस अथवा अपवर्ग मळे. अपवर्ग एटले आत्यंतिक दुःख नाश. आ तत्वज्ञान जीवने आपवुं ए न्याय दर्शननो उद्देश छे. शानुं तत्वज्ञान? न्याय दर्शननो उत्तर,—(१) प्रमाण, (२) प्रमेय, (३) संशय, (४) प्रयोजन, (५) दृष्टांत, (६) सिद्धांत, (७) अवयव, (८) तर्क, (९) निर्णय, (१०) वाद, (११) जल्प, (१२) वितंडा, (१३) हेत्वाभास, (१४)

'आनां भाष्यमां वात्स्यायने लख्युं छे के—

"यदातु तत्वज्ञानात् मिथ्याज्ञानम् अपैति, तदा, मिथ्या-ज्ञानापाये दोषा अपयन्ति, दोषापाये प्रवृत्ति रपैति प्रवृत्त्यपाये जन्म अपैति, जन्मापाये दुःखम् अपैति, दुःखापाये चात्यंतिको ऽपवर्गो निःश्रेयसमिति."

छल, (१५) जाति अने (१६) निग्रहस्थान, ए सोळ पदार्थनुं तत्वज्ञान. तेमां प्रमेयनुं तत्वज्ञान पोतानी मेळे अने प्रमाण वगेरेनुं तत्वज्ञान बीजाथी थाय छे ने ते अपवर्गनो हेतु छे.

न्याय दर्शनना आ सोळ पदार्थनुं स्वरुप शुं?

(१) प्रमाण–प्रमानां साधननुं नाम प्रमाण (Means of knowledge). प्रमाण चार प्रकारनां-प्रत्यक्ष (Perception), अनुमान (Inference), उपमान (Analogy), अने शब्द (आप्त वाक्य). (२) प्रमेय-प्रमाणनो विषय (objects of knowledge). प्रमेय बार प्रकारनां ;–आत्मा, शरीर, इंद्रिय (आंख, कान वगेरे), अर्थ (इंद्रियना विषय क्षिति, अप्, तेज, वायु अने आकाशना संयोगथी अनुक्रमे शब्द, स्पर्श, रुप, रस अने गंध), बुद्धि, मन, प्रवृत्ति (Activity), दोष (राग, द्वेष, मोह), प्रेत्याभाव (पुनर्जन्म), फल (कर्मफल भोग) दुःख अने अपवर्ग. (३) संशय (Doubt). (४) प्रयोजन (Purpose) जे हेतुथी लोकोनी प्रवृत्ति थाय छे तेनुं नाम प्रयोजन. (५) दृष्टांत (Instance). (६) सिद्धांत-विषयनो निश्चय. (७) अवयव-न्यायनो एक देश (Premiss). (८) तर्क (Reasoning) (९) निर्णय-सामा पक्षमां दोष बताववो अने पोतानो पक्ष सिद्ध करीने ते वडे अर्थनो निश्चय (Conclusion). (१०) वाद (Argumentation). (११) जल्प (Sophistry) १२

वितंडा (Wrangling) (१३) हेत्वाभास (Fallacies). (१४) छल (Quibble). (१५) जाति (False Analogy). (१६) निग्रहस्थान-जेना वडे प्रतिपक्षीनी भूल (Mistake) अथवा अज्ञान (Ignorance) प्रगट कराय ते.

आ सोळ पदार्थ के जेनुं तत्वज्ञान थवाथी दुःखनी अत्यंत निवृत्ति थाय छे, अथवा अपवर्ग मळे छे, तेमां ईश्वरनो कशो पण प्रसंग के उल्लेख जोवामां आवतो नथी. एटले उपर कहेला १६ पदार्थना विचारमांज आखुं न्यायदर्शन संपूर्ण थयुं छे. न्यायदर्शनने मोटा त्रण भागमां वहेंची शकाय. (१) न्यायांश (Logic) (२) तर्कांश (Dialectic), अने (३) दर्शनांश (Metaphysic). न्यायांशमां प्रमाणना विचारनी साथे पंचावयवन्याय (Syllogism) नी विद्वत्ता भरेली चर्चा जोवामां आवे छे. पछीना वखतमां न्याय दर्शनना पंडितोए प्रमाणना विचारमांज पोतानी बधी शक्ति वापरी छे, अने ईश्वरने पण पंचावयव न्यायनी अंदर समाववानो प्रयास कर्यो छे. "क्षित्यादिकं सकर्तृकं कार्यत्वात् घटवत्"[1] घडानो बनाववनार जेम कुंभार छे, तेम जगत्नो बनाववनार छे, ते ईश्वर. आवा न्यायना तर्कमां जो कोइनो ईश्वरमां विश्वास थाय तो सारुं, पण ईश्वरने तर्कना विषयरुप करवो, ए ठीक नथी एम

[1] न्यायदर्शन ४-१-२१मा सूत्रनी विश्वनाथ कृत वृत्ति.

घणानुं कहेवुं-मानवुं छे[1]. न्याय दर्शननो तर्कांश-जल्प, वितंडा, छल वगेरेना विचारमां जोडाएलो छे, एनी साथे प्रकृत दर्शन-नो संबंध बहु घाटो नथी. न्यायना दर्शनांशमां आत्मा, देह, इंद्रिय, मन वगेरेनी तत्व चर्चा करी छे. आ भागमां प्रसंग प्रमाणे पृथ्वी, पाणी, वगेरे पांच भूत अने शब्द, रस वगेरे गुणोनो विचार अने परमाणु वादनो टुंको उल्लेख जोवामां आवे छे. शरीर, मन, इंद्रिय, अने बुद्धिथी आत्मा स्वतंत्र छे, भोक्ता ज्ञाता अने नित्य छे. आ बधी वात न्याय दर्शने युक्ति वडे सप्रमाण करी छे.

न्याय दर्शन ईश्वरनो अस्वीकार करतुं नथी. पण एथी उलटुं तेणे तो चोथा अध्यायनां पहेलां आह्निकमां असत्मांथी सत्नी उत्पत्तिना खंडनना प्रसंगमां ईश्वरनो उल्लेख कर्यो छे अने तेज जीवोने कर्म फल आपनार छे, एम सिद्ध कर्युं छे.

" ईश्वरः कारणम् पुरुष कर्माफल्य दर्शनात् "

न्यायसूत्र ४-१-१९.

---

[1] आगमाच्च द्रष्टा बोद्धा सर्वज्ञा तेश्वर इति. बुध्यादिभिश्चात्म-लिंगैर्निरुपाख्यम् ईश्वरम् प्रत्यक्षानुमानागम विषयातीतम् कः शक्त उपपादयितुम्." न्यायदर्शन ४-१-२१ मा सूत्रनुं वात्स्यायन भाष्य. आथी जणाय छे के ईश्वरने तर्कनो विषय करवो ए वात्स्यायननो पण मत नथी.

आ सूत्रनां भाष्यमां वात्स्यायने लख्युं छे के—

माणसना कर्मफळभोग जेने आधीन छे तेज ईश्वर[1]. आ सिवाय बीजे कोइपण ठेकाणे न्यायदर्शनमां ईश्वरनो प्रसंग जोवामां आवतो नथी.

आथी आपणे जोयुं के, न्यायदर्शनमां ईश्वरनुं स्थान मुख्य नथी, अतिशय गौण छे. न्यायदर्शनकारे दुःखनाश अथवा अपवर्ग लाभनो जे उपाय बताव्यो छे, तेनी साथे ईश्वरनो जरापण संबंध नथी. ईश्वर हो के न हो, जीवनी साथे तेनो संबंध स्थापित हो के न हो, तेमां न्याये बतावेली रीतने कांइ लेवा देवा नथी. कारण के न्यायदर्शनमां कहेला १६ पदार्थनुं (ईश्वरनो ए १६ मां समावेश नथी) उत्कृष्ट ज्ञान मेळववाथीज जीव अत्यंत दुःखना तावामांथी नीकळी अपवर्ग पामे छे. आज न्याये बतावेलो मुक्ति मार्ग. गीताए बतावेलो मार्ग आनाथी तद्दन जुदोज छे. ईश्वरनो आधार न ले तो ते मार्गमां एक पगलुं पण आगळ जवानो उपाय नथी. आ कारणथीज आखी गीतामां न्यायदर्शननो जरापण प्रसंग, इंगित, के आभास जोवामां आवतो नथी, एम समजाय छे.

---

[1] पराधीनम् पुरुषस्य कर्मफलाराधनम् इति यदधीनम् स ईश्वरः, तस्मात् ईश्वरः कारणम् इति.

प्रकरण ३ जुं.

वैशेषिक दर्शन अने गीता.

पाछळ कहेवाइ गयुं छे के, न्याय अने वैशेषिक एक वर्गनां दर्शन छे. वैशेषिक दर्शननुं मूल महर्षि कणाद-प्रणीत वैशेषिक-सूत्र छे. एना दश अध्याय छे: दरेक अध्यायना बे परिच्छेद छे. तेने पण आह्निक कहेछे. वैशेषिक दर्शननुं प्राचीन भाष्य मळतुं नथी. पण प्रशस्तपादाचार्यनो पदार्थदर्शन-संग्रह ग्रंथ एनां भाष्य जेवो छे. उदयनाचार्यनी किरणावली अने श्रीधराचार्यनी न्यायकन्दली ए बे पदार्थदर्शनसंग्रहनी उत्कृष्ट टीकाओ छे. शंकरमिश्रकृत वैशेषिकसूत्रोपस्कार नामनुं आधुनिक भाष्य पण प्रचलित छे. वैशेषिक दर्शनना मतमां पण संसार दुःखमय छे. ते दुःखनी अत्यंत निवृत्ति एज निःश्रेयस[1]. वैशेषिक मतमां पण निःश्रेयस मेळववानो उपाय तत्त्वज्ञान छे. जीवने आ तत्त्वज्ञाननो अधिकारी करवो, ए वैशेषिक-दर्शननो उद्देश छे. केवुं तत्त्वज्ञान थवाथी निःश्रेयस मळे ?

---

[1] निःश्रेयसम् आत्यन्तिकी दुःखनिवृतिः (शंकरमिश्रकृत वैशेषिक सूत्रोपस्कार).

द्रव्य, गुण, कर्म, सामान्य, विशेष अने समवाय ए छ पदार्थनां साधर्म्य अने वैधर्म्य ज्ञानथी उत्पन्न थएलुं तत्त्वज्ञान.

" धर्मविशेषप्रसूताद् द्रव्यगुण कर्म सामान्य विशेष समवायानाम् पदार्थानाम् साधर्म्य वैधर्म्याभ्याम् तत्त्वज्ञानात् निःश्रेयसम्."

(वैशेषिक दर्शन १-२-३).

वैशेषिक दर्शनना आ छ पदार्थो साथे ग्रीक दर्शन Catagoriesनुं घणुं मळतापणुंछे.

(१) द्रव्य (Substance) ना नवप्रकार-पृथ्वी, पाणी, तेज, वायु, आकाश, काल, (Time), दिक् (Space), आत्मा अने मन. पृथ्वी, पाणी, तेज अने वायु ए चार भूत नित्य अने अनित्य एवा भेदथी बे प्रकारनां छे. परमाणु रुपे नित्य अने परमाणुना संघातथी उत्पन्न थएल शरीर, इंद्रिय अने विषय रुपे अनित्य. वैशेषिक मत प्रमाणे आ चार प्रकारना परमाणु अने आकाशादि बीजां पांच द्रव्य नित्य. आत्मा ज्ञाननो आश्रय

---

[1] पाछळथी रचाएला ग्रंथोमां अभाव नामे एक सातमा पदार्थनो अंगीकार कर्यो छे. घणुं करीने प्रशस्तपादाचार्यज आ मतना प्रवर्तक छे. तेमणे लख्युं छे के—" द्रव्यगुणकर्मसामान्य विशेष समवायानां षण्णाम् पदार्थानाम् अभावसप्तमानाम्."

छे, एनुं मानसप्रत्यक्ष थाय छे. आत्मा विभु एटले अनेक छे, दरेक शरीरमां जुदोजुदो छे. वैशेषिक मत प्रमाणे मन अणु छे. मन, ए आत्मा अने सुखदुःखादिनां प्रत्यक्षनुं करण-साधन छे. द्रव्य गुणनो आश्रय छे ; गुणरहित थइने द्रव्य रही शके नहि.

(२). गुण (Attributes). वैशेषिक मत प्रमाणे गुण २४ प्रकारना छे. रुप, रस, गंध, स्पर्श, संख्या (Number), परिमाण, पृथक्त्व (Severalty), संयोग, (Conjunction), विभाग (Disjunction), परत्व (Priority), अपरत्व (Posteriority), बुद्धि (Thought), सुख, दुःख, इच्छा, द्वेष अने प्रयत्न (Effort), सूत्रमां आ सत्तर गुण कहेला छे. प्रशस्तपादाचार्ये गुरुत्व (Weight), द्रवत्व (Fluidity) स्नेह (Vascidity), संस्कार, अदृष्ट [धर्म अने अधर्म], अने शब्द आ सात गुणोनो योग करीने २४नी संख्या पुरी करी छे.

३. कर्म पांच प्रकारनां छे. उत्क्षेपण (उंचे फेंकवुं), अवक्षेपण (नीचे फेंकवुं), आकुंचन, प्रसारण अने गमन. बीजां जे जे कर्म छे, ते बधांनो गमनमां समावेश थाय छे.

(४). सामान्य एटले जाति (Genus). जाति बे प्रकारनी छे. परा अने अपरा. अधिकदेशवृत्ति जातिने परा अने अल्प देशवृत्ति जातिने अपरा कहे छे. जेम मनुष्यत्व, अश्वत्व, गोत्व

वगेरे अपरा जातिनी सरखामणीमां प्राणित्वजाति परा.

(५). विशेष. कोइ कोइ विशेष एटले व्यक्ति (Individual) समजे छे. सामान्य=जाति अने विशेष=व्यक्ति. आ मत पण यथार्थ लागे छे. पण वैशेषिक दर्शनवाळा ए मत कबुल करता नथी. जे असाधारण धर्म वडे निरवयव पदार्थनो परस्पर भेद सिद्ध थाय, तेनेज तेओ विशेष कहे छे. वैशेषिको कहेछे के-द्व्यणुकथी आरंभ करीने घटादि पर्यंत बधां सावयव द्रव्यनो परस्पर भेद पोतपोताना अवयवना भेद वडे सिद्ध थाय छे. पण निरवयव एक जातिनां बे परमाणु परस्पर भिन्न शी रीते? जे धर्म वडे तेमनो परस्पर भेद सिद्ध थाय, तेज विशेष.

(६). समवाय---Inhesion (Inseparability) = नित्य संबंध, तंतुनी साथे वस्त्रनो जे संबंध, गुणनी साथे गुणीनो जे संबंध. क्रिया साथे द्रव्यनो जे संबंध, जाति साथे व्यक्तिनो जे संबंध, तेनुं नाम समवाय.

(७). अभाव बे प्रकारनो. (क) संसर्गाभाव एटले संबंधनो अभाव; तेना त्रण भेद (१) प्रागभाव, जेम सूत्रमां वस्त्रनो प्रागभाव. (२) ध्वंस एटले नाश, अने (३) अत्यंताभाव, जेम जडमां चेतननो अत्यंताभाव (ख) अन्योन्याभाव–घोडो ए हाथी नथी, तेथी घोडामां हाथीनो जे अभाव अने हाथीमां घोडानो जे अभाव, तेज अन्योन्याभाव.

वैशेषिकदर्शन ईश्वरनो अस्वीकार करतुं नथी.एथी उलटुं बीजा अध्यायनां पहेलां आह्निकमां वायुनो विचार करवाने प्रसंगे इसारामां ईश्वरनो उल्लेख नजरे पडे छे. "संज्ञा-कर्म-त्वस्मद्विशिष्ठानाम् लिंगम्" (वेशेषिक २-१-१८) "प्रत्यक्ष प्रवृत्तत्वात् संज्ञाकर्मणः" (वैशेषिक २-१-१९). संज्ञा एटले नाम, अने कर्म एटले पृथ्वी आदि कार्य, ए बंने आपणाथी विशिष्ठ (Superior) ईश्वर, महर्षि वगेरेनुं अस्तित्व साबीत करे छे. घट, पट वगेरे नाम वडे ते ते पदार्थ शी रीते ओळखाय छे? ईश्वरना संकेत वडे. पृथ्वी, पाणी वगेरे ज्यारे कार्य छे, त्यारे अवश्य तेनो कर्ता छे; तेज ईश्वर[1]. आ मात्र इंगित छे. केटलुंक अप्रासंगिक पण कही शकाय. आ सिवाय वैशेषिक सूत्रमां बीजे कोइपण ठेकाणे ईश्वरनो प्रसंग जोवामां

---

[1] शंकरमिश्रे वैशेषिक सूत्रोपस्कारमां आ प्रमाणे लख्युं छे— "संज्ञा नाम, कर्म कार्य क्षित्यादि, तदुभयं अस्मद्विशिष्ठानाम् ईश्वरमहर्षिणाम् सत्येऽपि लिंगम्" (२-१-१८) "घटपटादि संज्ञा निवेशनमपि ईश्वरसंकेताधीनम् एव. यः शब्दो यत्र ईश्वरेण संकेतितः स तत्र साधुः * * * * तथा च सिद्धं संज्ञाया ईश्वर लिंगत्वम्. एवं कर्मापि कार्यमपि ईश्वरे लिंगम्. तथाहि क्षित्यादिकम् सकर्तृकं कार्यत्वात् घटवत् इति." (२-१-१९).

आवतो नथी.

नवीन नैयायिकोए रचेला वैशेषिक दर्शनना ग्रंथोमां मूल सूत्रोमां कहेलां नव द्रव्यमांना एक, आत्मानो विचार करती वखते ईश्वरनो प्रसंग नजरे पडेछे. तेओ आत्मा अने परमात्मा एवा भेदथी आत्मा बे प्रकारनो कहेछे. भाषापरिच्छेद ग्रंथमां आत्माने बदले 'देहिनौ' (जीव अने ईश्वर) शब्दनो प्रयोग जोवामां आवेछे. मूल सूत्रना त्रीजा अध्यायमां आत्मानुं निरूपण कर्युं छे. देह, इंद्रिय अने मनथी आत्मा जुदो छे. एवुं युक्तिथी सिद्ध कर्युं छे. पण त्यांए ईश्वरनो कशोए प्रसंग जोवामां आवतो नथी[1]. नवीन वैशेषिकोए गणत्री वडे नक्की कर्युं छे के, ईश्वरमां ज्ञान, इच्छा, प्रयत्न, संख्या वगेरे आठ गुणोनो समावेश छे "महेश्वरेऽष्टौ." कहेवानी जरुर नथी के कणाद ऋषिए आवी गणत्री करवानुं साहस कर्युं नथी.

प्रशस्तपादाचार्ये पदार्थोनुं तत्त्वज्ञानज मोक्षनुं कारण छे, एम कहेती वखते "तच्च ईश्वर नोदनाभिव्यक्तात् धर्मादेव" 'ते

[1]वात्स्यायने न्याय दर्शनना ४था अध्यायनां पहेलां आह्निकना २१मा सूत्रना भाष्यमां आ प्रमाणे लख्युं छे —

"गुणविशिष्टम् आत्मांतरम् ईश्वरः तस्य आत्मकल्पात् कल्पांतरानुपपत्तिः" आज शुं आत्माना जीवात्मा अने परमात्मा रूपे भेद स्वीकारनुं मूल ?

तत्वज्ञान ईश्वरनी प्रेरणाथी उत्पन्न थएला धर्ममांथी उत्पन्न थाय छे. एम कहेलुं छे. पण मूल सूत्रमां तो 'धर्मविशेष प्रसूत' एटलो ज उपदेश छे. मने लागे छे के एनो हेतु एवो छे के निवृत्ति लक्षण धर्म अथवा निष्कामकर्मोपार्जित धर्मथी उत्पन्न थतुं जे तत्त्वज्ञान तेज मुक्तिनुं साधन छे.

प्रशस्तपादाचार्ये परमाणुवादना प्रसंगमां पण ईश्वरनी अवतारणा करीछे. पण मूलसूत्रमां ए ठेकाणेए ईश्वरनो कशोये प्रसंग नजरे पडतो नथी. कणादना मत प्रमाणे परमाणु सत् नित्य अने अकारण छे. परमाणुज घट, पट, वगेरेनुं कारण छे, पण तेनुं कोइ कारण नथी. जो घट वगेरे सावयव द्रव्यना अवयव विभाग करवामां आवे, तो आपणे सूक्ष्मथी सूक्ष्मतर अने सूक्ष्मतरथी सूक्ष्मतम अवयवे पहोंचतां पहोंचतां छेवट एवा अवयवे पहोंचीए के, जेना विभाग थवानो संभव नरहे, जेना विभाग थइ शके नहि, जे अत्यंत सूक्ष्म, तेज परमाणु. परमाणुनी उत्पत्ति पण नथी, विनाश पण नथी. तेथी परमाणु नित्य छे. बे परमाणुना संयोगथी द्व्यणुक अने त्रण द्व्यणुकना संयोगथी त्रसरेणु उत्पन्न थाय छे. आवी रीते क्रम प्रमाणे स्थूल

[1]महामहोपाध्याय श्रीयुक्त चंद्रकान्त तर्कालंकारप्रणीत हिंदु दर्शन भाग १लो पृष्ट १४६.

अवयववाळां द्रव्यनी उत्पत्ति थइ छे[1].

प्रशस्तपादाचार्य कहे छे के, ज्यारे महेश्वरनी संहार करवानी इच्छा थाय त्यारे परमाणुपुंजना संघातथी थयेलां शरीर, इंद्रिय, अने विषयो क्रमे क्रमे विश्लिष्ठ अने विनष्ठ थइ जाय छे, त्यारे तद्दन जुदी जातना परमाणुओनो समुहज बाकी रहे छे. प्रलयकाळने अंते प्राणीओने भोग भोगववा माटे फरी सृष्टि उत्पन्न करवानी महेश्वरनी इच्छा थाय छे, त्यारे अदृष्टनी प्रेरणाथी पहेलां वायुना परमाणुमां स्पंदन उत्पन्न थाय छे, अने पछी क्रमे क्रमे वायुना परमाणुना परस्पर संयोगथी द्व्यणुकादि क्रमे महान् वायु उत्पन्न थइ आकाशमां वावा मांडे छे. पछी ए रीते तेजना परमाणुमांथी मोटुं तेज अने पाणीना परमाणुमांथी महान् सलीलराशि उत्पन्न थाय छे, अने पृथ्वीना परमाणुना संयोगथी विशाळ पृथ्वीनी उत्पत्ति थाय छे. आ प्रमाणे चार महा भूतो उत्पन्न थया पछी महेश्वरनाज संकल्पथी ब्रह्मांडनी उत्पत्ति थाय छे, अने तेमां ब्रह्मा उत्पन्न थइने सृष्टि कार्य निष्पन्न करे छे. पाछळ कहेवाइ गयुं छे के आ मत प्रशस्तपादाचार्यनो छे. मूल सूत्रमां एनो कांइ पण इसारो के आभासे जोवामां आवतो नथी.

गमे तेम छे, पण आटलुं तो आपणने स्पष्ट जणाय छे के,

---

[1] वैशेषिक दर्शन ४थो अध्याय पहेलुं आह्निक जुओ.

वैशेषिक दर्शनमां पण ईश्वरनुं स्थान मुख्य नथी. वैशेषिक दर्शनकारे निःश्रेयसनी प्राप्तिनो जे मार्ग शोधी कहाड्यो छे, तेनी साथे ईश्वरनो संबंध घणोज थोडो छे. ईश्वर जाय के रहे, जीवनी साथे तेनो संबंध घाटो हो के नहो, तेमां वैशेषिकने कांइ लाभ नुकसान नथी. सात पदार्थ (ईश्वर ए सातमां नथी) अने तेमनुं साधर्म्य अने वैधर्म्य ज्ञान अखंड रहे एटले ते, ते तत्त्वज्ञाननां बळे दुःखथी छुटी निःश्रेयस-मोक्ष-मेळवे. आज वैशेषिके अनुमोदेलो मुक्तिमार्ग. गीताए बतावेलो मार्ग आथी तद्दन जुदो ज छे. मने लागे छे के, तेथीज गीतामां वैशेषिक दर्शननो पण जराए प्रसंग, इंगित के आभास जोवामां आवतो नथी.

प्रकरण ४ थुं.

मीमांसादर्शननुं टुंकुं विवरण.

वेदना बे भाग—कर्मकान्ड अने ज्ञानकान्ड. संहिता अने ब्राह्मण भागमां कर्मकांड अने आरण्यक ने उपनिषद् भागमां ज्ञानकांड. कर्मकांडवेदनो विरोध मटाडी समन्वय करी

आपवा मीमांसादर्शननी उत्पत्ति थइ छे. मीमांसा दर्शननुं मूल महर्षि जैमिनिए रचेलुं पूर्वमीमांसा सूत्र छे. तेना बार अध्याय छे. पूर्वमीमांसा उपर शबर स्वामीए करेलुं प्रसिद्ध भाष्य छे. कुमारिल भट्टे ए भाष्य उपर 'तंत्रवार्तिक' नामनुं प्रख्यात वार्तिक रच्युं छे. माधवाचार्यना 'जैमिनीय न्यायमाला विस्तर' ग्रंथमां मीमांसा दर्शननो वधो विषय स्पष्टपणे प्रदर्शित थयो छे. आपोदेवनो 'मीमांसा-न्यायप्रकाश' अने लोगाक्षिभास्करनो 'अर्थ संग्रह' आ बे मीमांसा दर्शन संबंधी मुख्य प्रकरण ग्रंथो छे.

मीमांसा दर्शनना मत प्रमाणे वेदनो कर्मकांडज सार्थक छे, ज्ञानकांड निरर्थक छे. "आम्नायस्य क्रियार्थत्वात् आनर्थक्यम् अतदर्थानाम्" [मी. सू. १-२-१] [1] 'कर्मनुंज वेदने प्रतिपादन करवानुं छे, तेथी ते सिवाय वेदनो जे ज्ञानभाग जोवामां आवे छे, ते निरर्थक छे.' तेथी ए मत प्रमाणे उपनिषद्नो उपदेश ते मात्र अर्थवाद छे. "सत्यं ज्ञानमनंतं ब्रह्म" "अयमात्माब्रह्म" "तत्त्वमसि" वगेरे वाक्यो न होत तो पण चालत. वेदमां जे आत्माना तत्त्वज्ञाननो उपदेश करवामां आव्यो छे, तेनो हेतु देहथी जुदा आत्मानुं अस्तित्व साबीत

[1] शेषत्वात् पुरुषार्थवादो यथाऽन्येषु इति जैमिनिः (ब्रह्मसूत्र ३-४-२).

करी जीवने अदृष्ट फल स्वर्गादिनुं साधन जे यज्ञो तेमां प्रव-र्ताववो एटलोज छे.

मीमांसा दर्शनना मत प्रमाणे वेद नित्य,[1] अभ्रान्त अने अपौरुषेय छे, मतलब के वेदनो कोइ रचनार नथी. ऋषिओ मात्र मंत्रदृष्टा छे. वेद अनादि काळथी छे, अने अनंत काळ रहेशे. वेदनुं प्रामाण्य स्वतः सिद्ध छे, वेदनी सत्यता माटे बीजां प्रमाणनी जरुर नथी.

वेद जीवनां हितने माटे धर्मनुं प्रतिपादन करे छे. धर्म शुं ? यज्ञो वगेरे. "यजेत स्वर्गकामः"—'स्वर्गनी इच्छावाळाए यज्ञ करवो,' आ रीतना उपदेशवडे वेद जीवने प्रेरणा करे छे. जे दृष्ट विषय छे, तेनो उपाय जीव पोतानी मेळे करी शके, जेमके भूख तरसनी शांति माटे जीव अन्न पाणीनो संग्रह करे, पण जे अदृष्ट विषय छे, जेमके स्वर्गादि, ते मेळववानो उपाय जीव शी रीते शोधी शके ? तेथी जीव दुःखमय संसार छोडी ने सुखमय स्थान मेळववा माटे व्याकुल रहे छे. लौकिक उपा-योथी आ हेतु सिद्ध थतो नथी. तेथी वेद कृपा करीने जीवने उपदेश आपेछे के, "स्वर्गकामो यजेत"—'स्वर्गनी प्राप्तिनुं साधन यज्ञ कर' यज्ञ करवाथी अवश्य स्वर्ग मळशे. स्वर्ग

[1] वेदनी नित्यता सिद्ध करवा माटे मीमांसा दर्शनमां उंडा विचार पूर्वक शब्दनुं नित्यत्व सिद्ध कर्युं छे.

सुखनुं धाम छे, त्यां जरापण दुःख नथी, त्यां मात्र संकल्पथी सुख मले छे.

" यन्न दुःखेन संभिन्नम् न च ग्रस्तमनन्तरम् ।
अभिलाषोपनीतंच तत्सुखं स्वःपदास्पदम् ॥"

' जे सुखमां दुःखनुं मिश्रण नथी, जे सुख पाछळथी दुःख रूप थतुं नथी, जे सुख इच्छामात्रथी थाय छे, ते सुखनुं धाम स्वर्ग छे.' यज्ञवडे आ स्वर्ग मळे छे. कारणके यज्ञनुं फळ अपूर्व (Transcendental) छे, " यजतेर्जातम् अपूर्वम् ". यज्ञवडे अमृतत्व मळे छे. " अपाम सोमम् अमृता अभूम " आपणे सोमनुं पान करीने अमरत्व मेळव्युं छे.

वेद कहे छे, " अक्षय्यं ह वै चातुर्मास्य याजिनः सुकृतम् भवति." ' चातुर्मास्य यज्ञ करनारने अक्षय पुण्य संचय थाय छे. " सर्वान् लोकान् जयति मृत्युम् तरति पाप्मानम् तरति ब्रह्महत्याम् तरति योऽश्वमेधेन यजते." अश्वमेधयज्ञ करनार यजमान बधा लोकने जीते, मृत्युने तरी जाय, पाप--ब्रह्महत्याथी उत्तीर्ण थाय." त्यारे ते आ प्रमाणे कही शके. "किमूनूनम् अस्मान् कृणवत् अरातिः"–' शत्रु अमने शुं करी शके ?' " किमु धूर्त्तिरमृतमर्त्यस्य."—' मर्त्य मनुष्य-हुं अमर थयो छुं, धूर्ति [जरा] मने शुं करी शके ! '

पूर्वमीमांसाना मत प्रमाणे वेदना पांच प्रकार--[१] विधि

[२] मंत्र, [३] नामधेय, [४] निषेध अने [५] अर्थवाद.

१. विधि—Injunction जे वेदवाक्यथी अजाण्यो विषय जाणवामां आवे, तेने विधि कहे छे. जेम "स्वर्गकामो यजेत" पूर्वमीमांसाना मत प्रमाणे विधिवाक्योज वेदनो सार भाग छे.

आ विधि वळी चार प्रकारना छे. उत्पत्ति विधि, विनियोग विधि, प्रयोगविधि अने अधिकार विधि. जे विधि मात्र कर्मनुं स्वरुप बतावे, तेने उत्पत्ति विधि कहे छे; जेम "अग्निहोत्रम् जुहोति,"—'अग्निहोत्र होम करवो'. होम करवाना संबंधमां मात्र आटलुंज जाणवाथी बस थाय नहि. केवी रीते होम करवो [कोना उद्देशथी अने क्या द्रव्योना उपचारथी], ते जाणवानी जरुर छे. तेटला माटे विनियोग विधिनो उपदेश. जेम "दध्नाजुहोति—'दधिवडे होम करवो; "इन्द्राग्नि इदम् हविः"—'इंद्र अने अग्निना उद्देशथी आ हविः' यज्ञानुष्ठानने माटे आटलुं जाणवुं पण बस नथी. एक एक पछी कये क्रमे यज्ञनां अंगोनुं अनुष्ठान करवुं जोइए, ते जाणवानी जरुर छे. ते माटे प्रयोगविधि उपयोगी छे. जेम "अग्निहोत्रम् जुहोति यवागूम् पचति"—आ ठेकाणे अग्निहोत्र होम अने यवागूनो पाक, आ बंने क्रियानो उपदेश रहेलो छे. प्रयोगविधिनी मददथी कइ क्रिया पछी करवी ते जाणवामां आवेछे. पण ए

जाणवाथी बस न थाय. कारणके, कोणे कयो यज्ञ करवो ते जाणवामां न होय तो यज्ञानुष्ठान संभवे नहि. तेथी अधिकारविधिनी जरुर छे. कारणके, जे जे कर्मनो अधिकारी होय ते सिवाय बीजो ते कर्म सांगोपांग करी शके नहिं. जेम "राजा राजसूयेन स्वाराज्य| कामो यजेत." आ वाक्यथी राजा सिवाय बीजो राजसूय यज्ञनो अधिकारी नथी, एम समजाय छे.

मीमांसकोए विधिनो विचार करती वखते नियम अने गणत्रीनो उल्लेख कर्योछे. "श्राद्धे भुंजीत पितृ सेवितम्." श्राद्धमां बाकी रहेलुं भोजन करवुं. आ नियम विधि छे. रागने लीधे माणस विषयमां प्रवृत्त थाय पण खरो, अने न पण थाय, तेमां प्रवृत्त कराववा माटे नियमविधिनी जरुर छे. श्राद्धशेष भोजन करवुं, एवो विधि न होय तो कोइ ठेकाणे श्राद्ध करनार पाधरोज भोजन करी ले, अथवा कोइ ठेकाणे ठामुकुं भोजन करेज नहि. तेथी श्राद्धशेष भोजन करवुं ज योग्य छे. तेमां प्रवृत्ति कराववा माटे ए विधि कर्यो छे. एज प्रमाणे " ऋतौ भार्याम् उपेयात् "—आ एक नियम विधि छे, ए विषयमां रागने लीधे माणसनी स्वभावथीज प्रवृत्ति छे, गणत्रीनी रीत वडे तेनो संकोच कर्यो छे. जेम "प्रोक्षितम् मांसम् भुंजीत "—'प्रोक्षित मांसनुं भोजन करवुं.' मांस भक्षणमां मा-

णसनी स्वभाविक प्रवृत्तिछे, ते विषयमां तेने प्रेरणा करवानी नथी. आ परिसंख्या विधि वडे एवो उपदेश करवामां आव्यो के, जो मांस भक्षण करवुं होय, तो गमे ते मांस खावुं नहि, प्रोक्षित [मंत्र वडे संस्कृत] मांसज खावुं.'

२. मंत्र--"अग्निमीडे पुरोहितम्" इत्यादि वेदनो संहिता भाग मुख्यत्वे आ मंत्रथी बनेलो छे. मीमांसकोना मत प्रमाणे यज्ञना उद्दिष्ट देवता वगेरेना स्मारक रुपे मंत्रोनुं उपयोगी-पणुं छे.

३. नामधेय.—करवा योग्य विषयनो संकोच कराववो ए नामधेयनो हेतु छे. जेम "उद्भिदा यजेत पशुकामः" "चित्रया यजेत पशुकामः" आ ठेकाणे उद्भिद् अने चित्रा शब्दथी यज्ञ विधिनो संकोच करायो छे. इच्छा पार पाडवानो उपाय गमे ते यज्ञ नथी, पण उद्भिद् अथवा चित्रा नामना यज्ञ वडे ज उद्देश पार पडे, बीजा यज्ञथी पार न पडे.

४. निषेध—निषेध वाक्य वडे पुरुषने निवृत्त करवामां आवे छे. जेमके, "कलंजम् न भक्षयेत्,"—'कलंजनुं भक्षण करवुं नहि.' "मा दिवा स्वाप्सीः,"—दिवसे उंघवुं नहि; आ बधां वाक्यो वडे कलंज भक्षण अने दिवसनी उंघनो अटकाव

' "विधिरत्यन्तम प्राप्तौ नियमः पाक्षिके सति ।
तत्र चान्यत्र च प्राप्तौ परिसंख्येति गीयते." ॥

करवामां आव्यो छे.

५. अर्थवाद.—जे वाक्य वडे विधि अथवा निषेधना संबंधमां प्रशंसा अथवा निंदा करवामां आवे तेने अर्थवाद कहे छे. अर्थवादना त्रण प्रकार छे. गुणवाद, अनुवाद अने भूतार्थवाद. गुणवादनुं उदाहरण–"आदित्यो यूपः" सूर्य कदि पण यूप (यज्ञकाष्ठ) थइ शके नहि, यूप सूर्यना जेवो उज्वल छे, ए आ वाक्यमां कहेवानुं छे. अनुवाद–जेमके, "अग्निर्हिमस्य-भेषजम्."—'अग्नि हिमनुं ओसड छे. आ वात वगर कह्ये पण आपणे जाणीये छीये, तेथी ते वात वेदमां न कही होत तोपण चालत; तेथी ए अर्थवाद. भूतार्थवाद—जेम, "इन्द्रो वृत्राय वज्रम् उदयच्छत्"–'इंद्रे वृत्र उपर वज्र उगाम्युं छे.' आ प्रमाणे बधाज वेद साक्षात् अथवा परंपराथी, यज्ञ रुप धर्मनुंज प्रतिपादन करे छे, एम मीमांसकोए सिद्ध कर्युं छे.

इंद्रादि देवताओना उद्देशथी यज्ञोनुं अनुष्ठान करवामां आवे छे खरुं, पण यज्ञज मुख्य छे, देवताओ तो मात्र गौण छे-प्रयोजक नथी.[1] कारणके मीमांसाना मत प्रमाणे देवताओनुं स्वतंत्र

---

[1] "देवता वा प्रयोजयेत् अतिथिवत् भोजनस्य तदर्थत्वात्" मीमांसादर्शन ९-१-६ "अपि वा शब्दपूर्वत्वात् यज्ञ कर्मप्रधानम् स्यात् गुणत्वेदेवता श्रुतिः" मीमांसादर्शन ९-१-९. "तस्मात् देवता न प्रयोजिका" इति-शंकरभाष्य.

अस्तित्व नथी. देवता मंत्रात्मक छे. अमुक क्रम प्रमाणे गोठवेलो शब्दोनो समुह ते मंत्र. ते क्रम अथवा शब्दोनो व्यत्यय थाय तो मंत्र निष्फळ थाय. "अग्निमीडे पुरोहितम्"—आ मंत्रमां जो अग्निने ठेकाणे वह्नि शब्दनो प्रयोग करवामां आवे अथवा "ईडे अग्निम् पुरोहितम्"—आ प्रमाणे आवे, तो ते मंत्रथी कांइपण फल थाय नहि.

मीमांसको निरीश्वरवादी छे. तेओ वेदने नित्य अने अभ्रांत कहे छे खरा, पण वेद ए ईश्वर वाक्य छे, ए स्वीकारता नथी. खरुं जोतां मीमांसादर्शनमां कोइपण ठेकाणे ईश्वरनो कशोये प्रसंग नथी. तेथी 'विद्वन्मोद तरंगिणी' रचनारे मीमांसकोनी ओळखाण आपतां कहेलुं छे के—

तेओ ईश्वर मानता नथी, जगत्नो कोइ बनावनार, पालन करनार अने नाश करनार छे, ए वातपण कबुल करता नथी. तेमनां मत प्रमाणे जीव पोतानां कर्म प्रमाणे फळ भोगवे तेमां ईश्वरने कशोए संबंध नथी.[1]

---

[1] महा महोहाध्याय महेशचंद्र न्यायरत्ने पोतानां मीमांसा दर्शननी भूमिकामां लख्युं छेः—"But though dealing so largely with the sacred scriptures of the Hindus and thus commanding a large share of their respect, oddly enough, it propounds a godless system of religion. The main drift of its arguments is to shew that if bliss be

ज्ञानवादीओ कर्मकांडना विरोधी छे. तेओ कहे छे के, कर्म वडे मोक्ष मळे नहि. "न कर्मणा न प्रजया धनेन त्यागेनैके अमृतत्व मानशुः"[१] अमरत्व मेळववानो उपाय कर्म नथी, संतान नथी, धन नथी, मात्र त्यागथीज अमर थइ जवाय छे.' तेओ बीजुं पण कहे छे के कर्मनुं फळ चिरस्थायी नथी. भोगो वडे कर्मनो क्षय थाय एटले कर्म करनार अवश्ये नीचो पडेज. आथी जेओ कर्मानुष्ठाननेज श्रेय मेळववानो उपाय माने छे, तेओ मोहांध छे.

"प्लवा ह्येते अदृढा यज्ञरूपा अष्टादशोक्तमवरंयेषुकर्म एतच्छ्रेयो येऽभिनन्दन्तिमूढा, जरामृत्युम् ते पुनरेवापि यान्ति॥"
(मुंडक १-२-७).

"अविद्यायां बहुधावर्तमाना वयंकृतार्था इत्यभिमन्यन्ति बालाः। यत् कर्मिणो न प्रवेदयन्ति रागात्, तेनातुराः क्षीणलोकाश्च्यवन्ते॥" (मुंडक १-२-९).

'जेथी आ यज्ञ निर्वाहक अढार विनाशी (ने) अदृढ (छे, ने तेने आशरे कर्म) कह्युं (छे, तथा) जेओमां कनिष्ट कर्म (छे तेथी ते विनाश पामे छे.) जे अविवेकीओ आ कर्म, श्रेयस्

the fruit of good works, the interposition of a duty is simply superfluous."

[१]महा नारायणोपनिषद् १०-५.

छे (एम जाणीने) हर्ष पामे छे, तेओ पुनः पण जरा मृत्यु पामे छे.'

'अज्ञानीओ अविद्यामां बहु प्रकारे रहेला छतां अमे कृतार्थ छीए एम अभिमान करे छे, जेथी कर्म करनाराओ रागथी जाणता नथी तेथी दुःखी थया छतां क्षीण फळवाळा पडे छे.'

तेथी कर्मफळ स्थायी नथी, एम समजाय छे. कर्म करनार पडे छे. कर्म वडे अमरत्व मळवानी जे वात कहेवामां आवे छे, ते अमरत्व मात्र अमुक वखत सुधीलुं छे, चिरस्थायी नथी. ए अमरत्व प्रलय सुधी रहे छे.

"आभूतसंप्लवं ज्ञानम् अमृतत्वं हि भाष्यते"

(विष्णुपुराण २-८-९०).

'प्रलय सुधीनी स्थीतिने अमरत्व कहे छे.'

कर्मफळ मात्र क्षणभंगुर छे, एटलुंज नथी. तेमां वळी न्युनाधिकता पण छे. कर्मीओ चडतां उतरतां कर्म प्रमाणे उंचा नीचा लोकना अधिकारी थाय छे.[१] वीजानी उंची स्थीति जोइने स्वर्गमां रहेनाराओने पण दुःखनो अनुभव थायछे.[२]

---

[१] वाचस्पति मिश्रे लख्युं छे के—"ज्योतिष्टोमादयः स्वर्ग मात्र साधनम् वाजपेयादयः स्वाराज्यस्येत्यातिशय युक्तत्वम् इति" सांख्य तत्व कौमुदी २.

[२] अतिशयो विशेष स्तेनयुक्तः विशेष गुणदर्शनात् इतरस्य दुःखम् स्यात्— सांख्यकारिका, २ गौडपादभाष्य.

कर्मनो एक मोटो दोष ए छे के, कर्म ए बंधनुं कारण छे. "कर्मणा बध्यते जन्तु र्विद्यया च प्रमुच्यते"–जीव कर्म वडे बंधाय छे, अने ज्ञान वडे मुकाय छे. पुण्य हो के, पाप हो पण जीव जे कर्म करे छे, तेनुं फळ तेने अवश्य भोगववुंज पडे छे.

" अवश्यमेव भोक्तव्यं कृतं कर्म शुभाशुभम् "

'सारुं काम होय के, नठारुं होय, पण भोगव्या सिवाय कोइ पण कर्मनो क्षय थतो नथी.'

" नाभुक्तम् क्षीयते कर्म कल्पकोटिशतैरपि "

' भोगव्या सिवाय शतकोटि कल्पे पण कर्मनो क्षय थतो नथी. वळी ज्यां सुधी थोडुंक पण कर्म बाकी रहे, त्यांसुधी तेनां फळ भोगववा जीवने संसारमां आववुं पडे.

" पुण्येन पुण्यम् लोकम् नयति पापेन पापम् उभाभ्यामेव मनुष्य लोकम् " प्रश्नोपनिषत्, ३-७

'जीवने पुण्यनां फल भोगववा माटे पुण्य लोकमां, पापनां फल भोगववा माटे पापलोकमां, अने पापपुण्य बंनेनां फल भोगवामाटे मनुष्य लोकमां जवुं पडे छे.' आथी ज्ञानवादी ना मत प्रमाणे, जे कर्म आवा दोषोनी खाण छे, ते कर्मनो संन्यास करवो एज योग्य छे. मतलब के सर्व प्रकारनां कर्मनो त्याग करवो एज सौथी सरस रस्तो छे.

प्रकरण ९ मुं.

पूर्वमीमांसा
मीमांसा दर्शन अने गीता.

कर्मानुष्ठान अने कर्मसंन्यास ए मतभिन्नत्वना संबंधमां गीतानो उपदेश शो छे? गीताए पण कर्मासक्तिनी निंदा करी छे. कर्मकांडवेदने लक्षमां राखीने अर्जुनने भगवान् उपदेश करे छे के–

" त्रैगुण्यविषयावेदा निस्त्रैगुण्योभवार्जुन " गीता २-४९

' वेदनो विषय त्रिगुणमय छे. हे अर्जुन ! तुं निर्गुण था '.

वळी कर्मवादी मीमांसकोने उद्देशीने गीता ए निंदा करी छे.

" यामिमां पुष्पितां वाचं प्रवदन्त्यविपश्चितः
वेदवादरताः पार्थ नान्यदस्तीति वादिनः
कामात्मनः स्वर्गपरा जन्मकर्मफलप्रदाम्
क्रिया विशेषबहुलां भोगैश्वर्यगतिं प्रति
भोगैश्वर्यप्रसक्तानां तयापहृतचेतसाम्
व्यवसायात्मिका बुद्धिः समाधौ न विधीयते "

गीता २-४२, ४४.

जे वेदवादमां मग्न थयेला अने बीजुं कांइ छेज नहि एम वाद करनारा, तथा स्वर्गनेज परम स्थान गणनारा, कामनापूर्ण (अविद्वान), भोग अने ऐश्वर्यनी गति आपवा माटे नाना प्रकारनां कर्मथी बहु रुपे थयेली, आ पुष्पितवाच, हे पार्थ ! बदे छे, तेवा, भोग अने ऐश्वर्यमांज प्रसक्त अने तेज वाच वडे मोह पामेलानां अंतःकरणमां व्ययसाय बुद्धि पेदा थती नथी! गीता पण स्पष्ट भाषामां कर्मीनुं पतन प्रतिपादन करे छे.

" त्रैविद्या मां सोमपाः पूतपापा यज्ञैरिष्ट्वा स्वर्गतिं प्रार्थयन्ते।
ते पुण्यमासाद्य सुरेन्द्रलोक मश्नन्ति दिव्यान्दिवि देवभोगान्॥
ते तं भुक्त्वा स्वर्गलोकं विशालं क्षीणेपुण्ये मर्त्यलोकं विशन्ति
एवं त्रयीधर्ममनुप्रपन्ना गतागतं कामकामा लभन्ते "

गीता ९-,२०-२१.

' त्रैविद्य अने सोमप तथा पूतपाप एवा, यज्ञथी मने यजीने स्वर्गगति प्रार्थे छे, ने ते पुण्यवाळा सुरेन्द्र लोकोने पामी स्वर्गमां देवने योग्य एवा भोग भोगवे छे ; ए विशाळ स्वर्गलोकने भोगवी, पुण्यक्षीण थतां ज, ते लोक मर्त्य लोकमां पेसे छे ; आम त्रयीधर्मने अनुवर्तनारा कामनी कामनावाळा गतागत लाभे छे !

कर्म ए बंधनु कारण छे, ए वात गीताए वारंवार कहेली छे.
" यज्ञार्थात्कर्मणोऽन्यत्र लोकोऽयं कर्मबंधनः " गीता ३-९

'यज्ञ विनाने अर्थे कर्म करवाथी लोक बंधनमां पडे छे.'

"अयुक्तः कामकारेण फले सक्तो निबध्यते"

गीता ५-१२.

'अयुक्त छे ते, फलमां आसक्त होइ, कामकारथी बंधायछे.'

देवताना हेतुथी जे यज्ञनुं अनुष्ठान करवामां आवे तेनुं फल श्रेयस्कर थाय नहि. कारणके, देवतानुं भजन करवाथी देवतानी प्राप्ति थाय, परमेश्वर मळे नहि. साधकने जवानुं ठेकाणुं ज्यारे भगवानज छे त्यारे तेने छोडीने देवतानुं भजन करवा थी आवेल मार्गेज जवाय.

"यान्ति देवव्रता देवान् पितॄन्यान्ति पितृव्रताः
भूतानि यान्ति भूतेज्या यान्ति मद्याजिनोऽपिमाम्"

गीता ९-२५

'देवव्रती देवने पामे छे, पितृव्रती पितृने पामे छे, भूतयाजी भूतने पामेछे, ने मने यजनारा मने पामे छे.'

'देवान्देवयजो यान्ति मद्भक्तायान्तिमामपि'

गीता ७-२३

'देवने पूजनारा देवने पामे छे, ने मारा भक्त मने पामे छे.

गीता बीजुं पण कहे छे के—

"येऽप्यन्यदेवताभक्ता यजन्ते श्रद्धयान्विताः।
तेऽपि मामेव कौंतेय यजन्त्यविधिपूर्वकम्॥" गीता ९-२३

'एमनाथी बीजा पण जे अन्यदेवतानी भक्ति राखी श्रद्धा पूर्वक यजे छे, तेपण हे कौंतेय ! अविधिपूर्वक मनेज यजे छे.'

कहेवानी जरुर नथी के, देवताने पामवामां अने भगवानने पामवामां मोटो भेद छे. देवताने पामवानो अर्थ एवो छे के जे देवताविशेषनी उपासना करवामां आवे, तेनुं सालोक्य अने कोइ कोइ वार सायुज्य थाय. मतलबके जे साधक इंद्रनी उपासना करे, तेने इंद्र लोकनी प्राप्ति थाय–बहु त्यारे ते इंद्रनी सत्तामां पोतानी सत्ता निमज्जित करे–एथी विशेष न थाय. शास्त्रकारो कहेछे के, देवताओनुं पण पतन छे.

"बहुनीन्द्र सहस्राणि देवानांच युगे युगे
कालेन समतीतानि कालोहि दुरतिक्रमः"
सांख्य कारिका २, गौडपादभाष्यधृत वचन.

'युगयुगमां घणा इंद्रो, अने घणा देवताओ कालने लीधे नाश पामी गया छे. कालने कोइपण अतिक्रम करी शकतुं नथी.' आथी देवतानुं सालोक्य अथवा सायुज्य थवाथी मोटो लाभ थतो नथी, कारणके, देवताना पतननी साथे ते देवनी उपासना करनारनुं पण पतन थाय छे. त्यारे तेने पाछुं संसारमां आववुं पडे छे. गीता पण एमज कहे छे.

"आब्रह्मभुवनाल्लोकाः पुनरावर्तिनोऽर्जुन
मामुपेत्य तु कौंतेय, पुनर्जन्म न विद्यते" गीता ८-१६.

"मामुपेत्य पुनर्जन्म दुःखालयमशाश्वतम्
नाप्नुवन्ति महात्मानः संसिद्धिं परमां गताः"

गीता ८-१५.

'हे अर्जुन ! ब्रह्मभुवनथी मांडीने लोक मात्र पुनरावर्तन पामवावाळां छे, पण मने पाम्या पछी तो हे कौंतेय ! पुनर्जन्म नथी.'

'मने पाम्या पछी दुःखालय अने अशाश्वत एवो पुनर्जन्म परम सिद्धिने पामेला महात्माओ पामता नथी.'

त्यारे शुं गीता यज्ञानुष्ठाननी विरोधी छे? गीता सकाम यज्ञनी विरोधी छे खरी पण, यज्ञ मात्रनी विरोधी नथी; एथी उलटुं जीवनी यज्ञमां प्रवृत्ति करावत्रा माटे गीताए यज्ञनी प्रशंसा करी छे.

यज्ञशिष्टामृतभुजो यांति ब्रह्म सनातनम्।
नायं लोकोऽस्त्ययज्ञस्य कुतोऽन्यः कुरुसत्तम॥

गीता ४-३१.

यज्ञशेष एवा अमृतनो भोग करनारा सनातन ब्रह्मने पामे छे; अयज्ञनो आलोक नथी, (तो) बीजो तो हे कुरुश्रेष्ठ! क्यांथी ज?

यज्ञशिष्टाशिनः संतो मुच्यंते सर्वकिल्बिषैः।
भुंजते ते त्वघं पापा ये पचंत्यात्मकारणात्॥ गीता ३-१३.

यज्ञशेषनो भोग करनारा सत्पुरुषो सर्व पापथी छुटेछे, जेओ पोतानेज माटे पाक करेछे ते पापीओ पापनेज भोगवे छे : स्वर्ग वगेरेनी प्राप्ति माटे सकाम यज्ञो करवा ए निंदाने योग्य-छे एम आ संबंधमां गीतानुं कहेवुं छे. पण देवताना पोषण माटे अने संसारचक्रना प्रवर्तनने माटे जीवे यज्ञनुं अनुष्ठान अवश्य करवा योग्य छे.

सहयज्ञाः प्रजाः सृष्ट्वा पुरोवाच प्रजापतिः।
अनेन प्रसविष्यध्वमेष वोऽस्त्विष्टकामधुक् ॥
देवान् भावयतानेन ते देवा भावयंतु वः।
परस्परं भावयंतः श्रेयः परमवाप्स्यथ ॥
इष्टान् भोगान्हिवोदेवा दास्यंते यज्ञभाविताः।
तैर्दत्तानप्रदायैभ्यो यो भुंक्ते स्तेन एव सः ॥

गीता ३, १०-११-१२.

'पूर्वे यज्ञाधिकारी प्रजा सर्जीने प्रजापतिए कह्युं, आनाथी तमे वृद्धि पामो, ए तमने इष्ट आपनार कामधेनु थाओ, आ-नाथी देवार्चन करो, अने देवताओ पण तमने आनंद आपो, एम परस्परने संतोष करतां तमे परम श्रेय पामशो ; यज्ञथी तृप्त थयेला देव तमने इष्ट भोग आपशे ; तेथी तेमणे आपेलुं तेमने आप्या विना जे भोगवे ते चोरज जाणवो.

आ कथानो सार मर्म आवो छे के, देवलोक अने मनुष्य-

लोकमां निरंतर आदान प्रदान चाले छे. देवताओ जुदी जुदी रीते–वर्षण करीने, गरमी आपीने, जळ, स्थळ अने अंतरीक्षमां अधिष्ठाता थइ-रहीने जगत्‌ना हितनुं साधन करे छे. माणसो पण तेमना करेला आ उपकारनो केटलांक प्रमाणमां बदलो वाळी शके. ते प्रमाणे करवानो उपाय यज्ञानुष्ठान छे. कारण के, यज्ञनां फळथी जे अपूर्व उत्पन्न थाय, ते वडे देव लोकनी पुष्टिनुं साधन कराय. आथी, जेमना चित्तमां देवताओ प्रत्ये कृतज्ञतानो अनुभव छे, तेमणे यज्ञानुष्ठान करीने बने तेटलुं देव-ऋण वाळवुं ए योग्य छे.

अन्नाद्भवन्ति भूतानि पर्जन्यादन्नसंभवः।
यज्ञाद्भवति पर्जन्यो यज्ञः कर्मसमुद्भवः॥
एवं प्रवर्तितं चक्रं नानुवर्तयतीह यः।
अघायुरिंद्रियारामो मोघं पार्थ स जीवति॥

गीता ३, १४-१६.

'अन्नथी भूत मात्र थाय छे, अन्न पर्जन्यथी थाय छे, पर्जन्य यज्ञथी थाय छे, अने यज्ञ कर्मथी थाय छे.

'आम प्रवृत्त थयेला चक्रने जे अनुसरतो नथी, ते पापी जीवतर वाळो, केवळ इंद्रियोनेज पोषनार, हे पार्थ! व्यर्थ आवरदा गुमावे छे.

आथी गीताना मत प्रमाणे सारो वरसाद वगेरे प्राकृतिक

व्यापारो सारी रीते सिद्ध करवानो उपाय यज्ञ छे. व्यापार निर्विघ्ने चाले तेम करवामां यज्ञ करीने मदद करवी, ए बधानी फरज छे. तेथी आ हेतु पार पाडवा माटे बने तेटलुं यज्ञानुष्ठान करवुं एवो गीतानो उपदेश छे.

अहीं सुधी कर्मवाद संबंधी गीताना उपदेशनो विचार कर्यो. हवेना प्रकरणमां गीताए प्रवर्तावेला अपूर्व कर्मयोगनो शक्ति प्रमाणे विचार करीशुं.

प्रकरण ६ ठुं.

कर्म अने कर्मयोग.

पाछळ आपणे जोयुं के एक वर्गना ज्ञानवादी साधको कर्मनां फलनी क्षणभंगुरता, कर्मोनुं पडवुं, कर्मनुं बंधन वगेरे दोषो कर्ममां जोइने एकदम कर्मो छोडी देवानो बोध करेछे. आ वर्गना साधको पोताने कर्मसंन्यासी तरीके ओळखावे छे. तेओ नित्य, नैमित्तिक के काम्य एमांनां कोइ पण प्रकारनां कर्मनुं अनुष्ठान करता नथी. करवा योग्य अने नहि करवा योग्य एम बधांज कार्योने छोडी देछे. तेमने उद्देशीने गीता कहे छे के–

' त्याज्यं दोषवदित्येके कर्मप्राहुर्मनीषिणः १८-३

'कोइ मनीषीओ एम कहे छे के दोषवान कर्म त्याज्य छे.' पण गीता आ मतनो पक्षपात करती नथी. गीता कहेछे के—

"न कर्मणामनारंभान्नैष्कर्म्यं पुरुषोऽश्नुते
न च संन्यसनादेव सिद्धिं समधिगच्छति"

गीता ३-४

'कर्म न आरंभवाथी पुरुष नैष्कर्म्यनुं (सुख) भोगवी शकतो नथी, तेम संन्यास मात्रथीज सिद्धि पामी जतो नथी.' कारणके, एम जोवामां आवे छे के, घणीवार जीव, देहने कर्म रहित राखीने मनने कर्ममां जोडी देछे. बहारथी इंद्रियो नो संयम करी, मनमां इच्छेली वस्तुनुं ध्यान करेछे. आ प्रकारना कर्मसंन्यासीने गीता ढोंगी कहे छे.

"कर्मेन्द्रियाणि संयम्य य आस्ते मनसा स्मरन्
इन्द्रियार्थान् विमूढात्मा मिथ्याचारः स उच्यते"

गीता ३-६

जे महामूढ कर्मेन्द्रियोने वश करी मनथी (तो) इन्द्रियोना विषयनुं स्मरण करतो रहेछे ते मिथ्याचारी-ढोंगी-कहेवाय छे. गीताना मत प्रमाणे जे मनवडे इन्द्रियोने संयत करी कर्मेन्द्रियोवडे कर्मयोगनुं अनुष्ठान करे छे, ते अनासक्त कर्मीज प्रशंसाने योग्य छे.

यस्त्विन्द्रियाणि मनसा नियम्यारभतेऽर्जुन

कर्मेन्द्रियैः कर्मयोग मसक्तः स विशिष्यते

गीता ३-७

‘पण जे इन्द्रियोने मनवडे वश राखी, कर्मेन्द्रियोथी कर्म योग करे छे ते असक्त होवाथी श्रेष्ठ छे.

वळी गीता कहे छे के, कोइ, एक क्षण पण कर्म कर्याविनानुं रही शकतुं नथी, (केमके) सर्वेने वांधी रुंधीने प्रकृतिना गुणो कर्ममां प्रेरेज छे.

“नहि कश्चित् क्षणमपि जातु तिष्ठत्यकर्मकृत्
कार्यते ह्यवशःकर्म सर्वप्रकृतिजैर्गुणैः (गीता ३-५)

“न हि देहभृताशक्यं त्यक्तुं कर्माण्यशेषतः

(गीता १८-११)

देहधारीथी अशेष कर्म तजावां शक्य नथी.

गीताना मत प्रमाणे कर्ममां आसक्ति जेम दोषरुप छे, तेम कर्ममां अनासक्ति पण दोषरुप छे.

मा कर्मफलहेतुर्भूर्मा ते सङ्गोऽस्त्वकर्माणि (गीता २-४७)

‘कर्म फलनो हेतु मा था. तेम अकर्ममां पण मा पड. तेथी गीतानो उपदेश आ छे के–

नियतं कुरु कर्म त्वं कर्मज्यायो ह्यकर्मणः (गीता ३-८)

निरंतर तुं कर्म कर, कर्म, अकर्म करतां वधारे ठीक छे.

गीता कहे छे के कर्म जे बंधनुं कारण थाय छे, तेनो हेतु ए

छे के, जीव फलनी इच्छा राखीने आसक्त चित्ते अहंकार बुद्धिथी कर्म करे छे. पण जो फलनी इच्छा रहित थइने अनासक्त चित्ते कर्तव्यबुद्धिनी प्रेरणाथी कर्म करी शके, तो पछी कर्म तेने बंधन करी शके नहि.

" अनाश्रितःकर्मफलं कार्यं कर्म करोति यः
स संन्यासी च योगीच न निरग्निर्न चाक्रियः
गीता ६-१

' कर्मफलनो आश्रय कर्याविना, जे कार्य कर्म करे छे, ते संन्यासी छे, योगी छे ; निरग्नि के अक्रिय ते नहि !'

गीता कहेछे के, जे द्वेष करतो नथी, जे इच्छा करतो नथी, तेने नित्य संन्यासी जाणवो ; केमके हे महाबाहो ? निर्द्वंद्व सहजमां बंधथी छूटेछे.

" ज्ञेयः स नित्यसंन्यासी यो न द्वेष्टि न कांक्षति
निर्द्वन्द्वो हि महाबाहो सुखं बंधात् प्रमुच्यते (गीता ५-३)

फलनो त्याग न करी शके, इच्छा छोडी न शके, तो संन्यास शानो ? गीताना मत प्रमाणे संन्यास एटले फलसंन्यास—कर्मसंन्यास नहि.

" यं संन्यासमिति प्राहुर्योगं तं विद्धि पांडव
न ह्यसंन्यस्त संकल्पो योगीभवति कश्चन "
(गीता ६-२)

'हे पांडव! जेने संन्यास कहे छे तेने योग जाण, केमके संकल्पनो संन्यास कर्या विना कोइ पण योगी थतो नथी.'

पाणीमां जीव छे एवा भयथी पाणी पीवानुं बंध करवुं, वायुमां जीव छे, एवी शंकाथी श्वासोश्वास न लेवो, अने कर्म बंधनुं कारण छे ए बीकथी कर्मनो त्याग करवो ए एक सरखुंज छे. जो पाणी अने वायु दोषवाळां होय तो कुशळताथी—चतुराइथी ए दोष दुर करवो; पण शंकाथी निश्चेष्ट थइ वायु अने पाणी न वापरी मरी जवुं ए योग्य नथी. आवी रीते जो कर्म खरेखर दोषनो भंडार होय तो कुशलताथी ते दोष दुर करो, पण कर्म फलना भयथी बीहीने जडरुप थइ जवुं ए बुद्धिमाननुं काम नथी.

खरी वात छे के, साधारण रीते कर्म ए बंधननुं कारण छे, पण एवी रीते कर्मनुं अनुष्ठान करी शकाय के, कर्मपण कराय अने कर्मथी बंधन पण न थाय. कर्मनी आवी कुशळताने कर्म योग कहे छे.

"योगः कर्मसु कौशलम्"(गीता २-५०).

"योगसंन्यस्तकर्माणं ज्ञानसंछिन्नसंशयम् ।
आत्मवंतं न कर्माणि निबध्नंति धनंजय"॥
गीता ४-४१.

'योगथी कर्मसंन्यास करी अने ज्ञानथी संशय मात्रने

छेदी आत्मवत् थयेलाने, हे धनंजय ! कर्ममात्र बांधी शकतां नथी."

"योगयुक्तो विशुद्धात्मा विजितात्मा जितेंद्रियः।
सर्वभूतात्मभूतात्मा कुर्वन्नपि न लिप्यते।।"
(गीता ५-७).

'योगयुक्त (होइ) जे विशुद्धात्मा, जितात्मा, जितेन्द्रिय, सर्वभूतात्मभूतात्मा होय ते करतो छतां पण लेपातो नथी.'

गीताए आ कर्मयोगनो प्रचार करीने कर्म अने अकर्म, कर्मानुष्ठान अने कर्मसंन्यास ए बंनेनुं आश्चर्यकारक सांमजस्य कर्युं छे. गीता कहे छे के कर्मयोग अने कर्मसंन्यास ए बंने श्रेयनां साधन छे खरां, पण कर्मसंन्यास करतां कर्मयोग श्रेष्ठ छे, कारणके कर्मसंन्यासना मूळमां स्वार्थपरता छे, अने कर्मयोगनां मूळमां सर्व जिवनी हितैषणा छे.

"संन्यासःकर्मयोगश्च निःश्रेयसकरावुभौ ।
तयोस्तु कर्मसंन्यासात् कर्मयोगो विशिष्यते।।"
गीता ५-२;

जेओ साधन साधीने जीवनमुक्तिना अधिकारी थया छे, तेओ जो जगत्नां हित माटे कर्मनुं अनुष्ठान न करतां पोताना स्वार्थ साधवाना हेतुथी कर्मसंन्यास करीने बेशी रहे, पोताने मुक्ति मळे एटलामांज बस समजे, तो शुं तेओ आ-

ध्यात्मिक-स्वार्थपरता दोषथी दुषित न थाय? कर्म न करवुं, एमज जो तेओ नक्की करी बेशी रहे तो संसार कार्य शी रीते चाले? मुक्त पुरुषो तो जगत्नी स्थीति माटे विशेष विशेष अधिकारनो भार वहन करी—कोइ मनु थइ, कोइ सप्तर्षि थइ, कोइ ईंद्र, चंद्र, वायु, वरुण, वगेरेना कामनो बोजो माथे उटावी,—भगवाननुं कार्य करवामां सहायता करे छे. पोतानां कर्मानुष्ठान संबंधे भगवाने जे कह्युं छे, तेज वात बीजाना संबंधमां पण कहेवाय.

न मे पार्थास्ति कर्तव्यं त्रिषु लोकेषु किंचन।
नानवाप्तमवाप्तव्यं वर्त एव च कर्मणि ॥
यदि ह्ययं न वर्तेयं जातु कर्मण्यतन्द्रितः।
मम वर्त्मानुवर्तन्ते मनुष्याः पार्थ सर्वशः ॥
उत्सीदेयुरिमे लोका न कुर्यां कर्म चेदहम्।

गीता—३—२२ थी २४

'हे पार्थ, मारे त्रणे लोकमां कांइ कर्तव्य नथी, के कांइ न प्राप्त करेलुं एवुं प्राप्त करवानुं नथी, तथापि हुं कर्ममां वर्तु छुं; जो हुं आलस्य मात्र त्यजी नित्य करुंछुं ते करतां जरा पण कर्ममां प्रवृत्ति न करुं, तो मनुष्यो तुरत ज मारे मार्गे वळवा मांडे, ने हुं कर्म न करुं तो आ लोक उत्सन्न थाय.'

जेनुं ज्ञान परिपक्व थयुं छे, जे खरेखरो कर्मयोगी छे, तेना

संबंधमां पण बराबर आमज कही शकाय. जगत्मां तेने पण कशुं कर्तव्य नथी–कांइपण अप्राप्य नथी, कामनानी कोइपण वस्तु नथी, के जेने लीधे ते कर्ममां प्रवृत्त थाय.

यस्त्वात्मरतिरेव स्यादात्मतृप्तश्च मानवः ।
आत्मन्येव च संतुष्ट स्तस्य कार्यं न विद्यते ॥
नैव तस्य कृतेनार्थो नाकृतेनेह कश्चन ।
न चास्य सर्वभूतेषु कश्चिदर्थव्यपाश्रयः ॥

गीता ३-१७ ने १८.

'पण जे आत्मरतिज छे, ने आत्म तृप्त तथा आत्म संतुष्ट छे तेने कर्म करवाथी, के न करवाथी कांइ प्रयोजन नथी, कारणके तेने सर्वभूतमां कहींपण प्रयोजननो संबंध नथी.' तेथी ते कर्म करवानी इच्छा करतो नथी, अथवा कर्मनो त्याग करवा माटे पण उत्सुक थतो नथी.

प्रकाशं च प्रवृत्तिं च मोहमेव च पांडव ।
न द्वेष्टि संप्रवृत्तानि, न निवृत्तानि कांक्षति ॥

गीता १४-२२

'प्रकाश अने प्रवृत्ति अने मोहपण, तेनी संप्रवृत्तिनो, हे पांडव! ते द्वेष करतो नथी, के निवृत्तिनी इच्छा करतो नथी.' कारण के तेने पोतानो कशोपण स्वार्थ नथी.

पण तेनो पोतानो स्वार्थ न होवा छतांये भगवाननुं अनु-

करण करीने जगत्नां हितने माटे ते निरंतर कर्मो कर्या करेछे. तेना पवित्र आत्मामांथी नीकळेली शक्तिनो पुण्यप्रवाह ईश्वर तरफ जायछे. अने ए शक्ति अध्यात्मशक्तिमां परिणाम पामीने जगतनुं पालन करवाना काममां परमेश्वरने मदद करवा जोडाइ जाय छे.

आ कर्मयोग सिद्ध करवानो रस्तो कयो ? कर्मयोगनां एक पछी एक एम त्रण पगथीयां अनुक्रमे आ छे—(१) फलनी इच्छा छोडीदेवी. (२) कर्तापणानुं अभिमान छोडी देवुं (३) अने ईश्वरार्पण. पहेलां बे पगथीयांनो उपदेश बीजां शास्त्रोमां पण जोवामां आवे छे, पण ईश्वरार्पण बुद्धिथी कर्मानुष्ठाननो उपदेश सर्वांशे गीतानो पोतानो ज छे.

१–फलनी इच्छा छोडी देवी. गीता कहेछे के—

"कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन" गीता २–४७

'तने कर्मनो ज अधिकार छे, फलनो कदापि नहि.'

"तस्मादसक्तः सततं कार्यं कर्म समाचर" गीता ३–१९

'आटला माटे नित्य असक्त रही कर्तव्य कर्म कर.'

"एतान्यपि तु कर्माणि संगं त्यक्त्वा फलानि च"।

कर्तव्यानीति मे पार्थ निश्चितं मतमुत्तमम्॥" गीता १८–६

'आ कर्मो पण संग तथा फल त्यजीने कर्तव्य छे, एम हे पार्थ ! मारुं निश्चित अने उत्तम मत छे'.

આ રીતે જે કર્મ કરી શકે, તેજ યથાર્થ નિષ્કામ કર્મી છે. તેનાં બધાંજ કર્મો કામના અને સંકલ્પ રહિત હોય છે. તે કર્મમાં પ્રવૃત્ત થાય છે ખરો, પણ તે કર્મ માત્ર તેના દેહના વ્યાપાર હોય છે. તેની સાથે તેના ચિત્તનો આસંગ અથવા લેપ હોતો નથી.[1] આવા નિષ્કામ કર્મીને ઉદ્દેશીને ગીતા કહે છે કે—

"યસ્ય સર્વે સમારંભાઃ કામસંકલ્પવર્જિતાઃ ।
જ્ઞાનાગ્નિદગ્ધકર્માણં તમાહુઃ પંડિતં બુધાઃ ॥
ત્યક્ત્વા કર્મફલાસંગં નિત્યતૃપ્તો નિરાશ્રયઃ ।

[1] ગીતાના ૧૮ મા અધ્યાયમાં સાત્ત્વિકકર્તા અને સાત્ત્વિકત્યાગનું લક્ષણ બતાવતાં જતાં આ વાતનો પુનરુલ્લેખ કર્યો છે.

"કાર્યમિત્યેવ યત્કર્મ નિયતં ક્રિયતેઽર્જુન ।
સંગંત્યક્ત્વા ફલં ચૈવ સ ત્યાગઃ સાત્વિકો મતઃ॥"
ગીતા ૧૮–૯

"મુક્તસંગોઽનહંવાદી ધૃત્યુસાહસમન્વિતઃ ।
સિદ્ધ્યસિદ્ધ્યો નિર્વિકારઃ કર્તા સાત્વિક ઉચ્યતે॥"
ગીતા ૧૮–૨૬

'કાર્ય જ છે એમ નિયમ જાણીને હે અર્જુન! સંગ તથા ફલ ત્યજીને જે કર્મ કરાય છે, તે સાત્વિક ત્યાગ છે.'

'મુક્તસંગ, અનહંવાદી, ધૃત્યુત્સાહસમન્વિત, સિદ્ધિઅસિદ્ધિમાં નિર્વિકાર, તે કર્ત્તા સાત્વિક કહેવાય છે.'

कर्मण्यभिप्रवृत्तोऽपि नैव किंचित् करोति सः ॥
निराशीर्यतचित्तात्मा त्यक्तसर्वपरिग्रहः।
शारीरं केवलं कर्म कुर्वन्नाप्नोति किल्बिषम्" ॥

गीता ४-१९-२१

'जेना सर्वे समारंभ कामसंकल्पथी वर्जित छे तेवा, ज्ञानाग्निथी दग्ध कर्मवाळाने बुधलोक पंडित कहे छे.'

'कर्म फलनो आसंग त्यजी नित्य तृप्त अने निराश्रय एवो ते कर्ममां अभिप्रवृत्त छतो पण कांइ करतो नथी.'

'निराश अने यतचित्तात्मा तथा सर्व परिग्रह रहित (एवो ते) मात्र शरीर कर्म करवाथी किल्बिष प्राप्त करतो नथी.'

"असक्तोह्याचरन् कर्म परमाप्नोतिपुरुषः" गीता ३-१९

'जे पुरुष असक्त रही कर्म आचरे छे ते परम पदने पामे छे.' फलनी इच्छा छोडी दइने कर्म करे तेथी निष्काम कर्मीने सिद्धि-असिद्धि, जय-पराजय, लाभ-नुकसान एक सरखां ज जणाय. तेथी अर्जुनने भगवाने उपदेश आप्यो छे के—

"सुखदुःखे समे कृत्वा लाभालाभौ जयाजयौ।
ततो युद्धाय युज्यस्व नैवं पापमवाप्स्यसि"॥गीता२-३८

"योगस्थः कुरुकर्माणि सङ्गंत्यक्त्वा धनंजय।
सिद्ध्यसिद्ध्योः समो भूत्वा समत्वं योग उच्यते" ॥

गीता २-४८

'सुख दुःख, लाभालाभ, जयाजय, सर्व समान करीने युद्धमां प्रवृत्त थाः—एम करतां पाप नहि लागे.'

'योगस्थ रही संग त्यजीने, सिद्धि असिद्धि समान करीने धनंजय कर्म करः समत्व एज योग कहेवाय छे.'

घणीवार आपणे निष्काम कर्म करीए छीए, एम समजीने आपणे आपणी जातने ठगीए छीए. कोइ कर्म सकाम भावे करायुं छे के निष्काम भावे करायुं छे, ते जाणवानो मात्र एक ज मार्ग छे. ते मार्ग आ छे के, ते कर्मनी सिद्धि अने असिद्धिमां आपणुं चित्त एक सरखुं निर्विकार रहेलुं हतुं के नहि ? मतलब के ते कर्म सिद्ध थतां आपणे आनंदित थया हता के नहि ; अने ते कर्ममां निष्फळ थतां आपणे दीलगीरीथी मरवा जेवा थइ गया हता के नहि. ज्यारे करेलां कामनी सफलता अने निष्फलता ए बंनेने एक सरखीज गणी शकीए त्यारे ज निष्फर्म कर्मनुं पहेलुं पगथीउं आपणे चडी चूक्या एम समजवुं.'

'फळमां अनासक्ति अने फळनी इच्छा न राखवानी वात सांभळी एम समजवानुं नथी के निष्काम कर्म उद्देगहीन होय छे. मतलबके निष्काम कर्मनां अनुष्ठानमां कर्ता कोइ प्रकारना उद्देश (Motive)नी परिचालनाथी कर्म करतो नथी एम न समजवुं. कोइ कोइ आवी समजणथी निष्काम कर्मने असं-

"यदा हि नेन्द्रियार्थेषु न कर्मस्वनुषज्जते ।
सर्वसंकल्पसंन्यासी योगारूढस्तदोच्यते ॥"
गीता ६-४

ભવિતજ માને છે. ખરું જોતાં નિષ્કામ કર્મ ઉદ્દેશ વિનાનું કર્મ નથી. ઉદ્દેશ સિવાય કર્મ થઇ શકેજ નહિ.

"प्रयोजन मनुद्दिश्य न मन्दोऽपि प्रवर्तते"

મતલબ કે 'પ્રયોજન વિના મૂર્ખ માણસ પણ કર્મમાં પ્રવૃત્ત થતો નથી.' નિષ્કામ કર્મી અને સકામ કર્મી એ બંને ઉદ્દેશની પ્રેરણાથીજ કર્મ કરે છે. એ બેમાં તફાવત એ છે કે, નિષ્કામ કર્મી ફલાકાંક્ષા વિનાનો હોય છે, તેથી સિદ્ધિ અસિદ્ધિ તેને સમાન જણાય છે, સકામકર્મી ફલાસક્ત હોય છે, તેથી સફલતા તેને પરમ ઉપાદેય અને નિષ્ફલતા અત્યંત હેય લાગેછે.

એક બીજી વાત. કર્તવ્ય બુદ્ધિ (duty)ની પ્રેરણાથી કર્મ કરવું તે અને કર્મયોગ એ એક નથી. કર્તવ્યપાલનમાં એક કઠોરતા છે. આ કર્મ મારે કરવા યોગ્ય છે, તેથી અનિષ્ટ અને પ્રતિકૂળ હોવા છતાં પણ હું કરીશ, એ પ્રમાણે ઔચિત્ય જ્ઞાનની પ્રેરણાથી કરેલાં કર્મને કર્તવ્ય પાલન કહે છે. કર્તવ્ય પાલનમાં વચે ઠેકાણે ફલેચ્છા ન હોય—પણ ફલ તરફ આગ્રહ પૂર્વક નજર તો હોય, અને તેનું છેવટનું ફલ ઘણીવાર પ્રસન્નતામાં નહિ પણ અપ્રસન્નતામાં આવે છે.

'ज्यारे इंद्रियार्थमां के कर्ममां आसक्त थतो नथी, अने सर्व संकल्पनो संन्यास करे छे, त्यारे योगारुढ कहेवाय छे.'

गीताना मत प्रमाणे आज खरो संन्यास छे.

"काम्यानां कर्मणां न्यासं संन्यासं कवयो विदुः।
सर्वकर्मफलत्यागं प्राहुस्त्यागं विचक्षणाः"॥

गीता १८-२.

'काम्य कर्मना न्यासने कविओ संन्यास जाणे छे, सर्व कर्मना फलत्यागने विचक्षण त्याग कहे छे.'

"यस्तु कर्मफल त्यागी सत्यागीत्यभिधीयते."

गीता १८-११.

'जे कर्म फल त्यागी छे, ते त्यागी कहेवाय छे.'

'सिद्धि के असिद्धि उभय परत्वे सम छे ते, करतो छतो पण बंधातो नथी.'

"समः सिद्धावसिद्धौ च कृत्वापि न निबध्यते"

गीता ४-२२

आ ज कर्मयोगनुं पहेलुं पगथीउं छे.

पण कर्म योगमां जरापण कठोरता नथी. दीन, दुःखीनुं दुःख दुर करवाथी दाताने जे आनंद थाय छे, बाळकने धवरावतां माताने जे आनंद थाय छे, ने जातना आनंदनो अनुभव कर्मयोगनां अनुष्ठानमां कर्म करनारने थायछे.

२. कर्मयोगनुं बीजुं पगथीउं--कर्तापणानुं अभिमान छोडी देवुं.

कर्म, जाळरूप थइने जीवने बंधन करे छे, तेनुं मुख्य कारण जीवनी अहंकार बुद्धि छे. आपणे जे कर्म करीए छीए. तेनी साथे आत्मानो योग करी दइए छीए. आ कर्म आपणे करीशुं. एम आपणे विचारीए छीए. तेथी कर्म आत्माने बंधनरूप थाय छे अने तेनुं फल जीवने भोगववुं पडे छे. तेथीज कहेवामां आव्युं छे के—

" ना भुक्तं क्षीयते कर्म कल्पकोटि शतैरपि ।
अवश्यमेव भोक्तव्यं कृतंकर्मशुभाशुभम् "॥

'भोगव्या सिवाय सो कोटीकल्पे पण कर्मनो नाश थतो नथी. करेला कर्मनां शुभाशुभ फल अवश्ये भोगववां पडेछे.' आ भोगनुं कारण कर्तृत्वाभिमान—'हुं करुंछुं' एवो अहंकार छे. अभिमानने लीधे जीव धारे छे के, 'हुं ज कर्त्ता' छुं; पण वास्तविक रीते जीव अकर्त्ता छे. कायिक अथवा मानसिक—जे जे कर्म थाय छे, ते बधांज प्रकृतिना सत्व, रजस् अने तमस् ए गुणोनी प्रेरणाथी सिद्ध थाय छे. तेथी विवेक बुद्धिथी जोतां समजी शकाय छे के, आत्मा कर्त्ता नथी, ते स्वतंत्र, केवल छे. निष्काम कर्मी आ वात समजी शके छे. तेथी ते पोताने कर्त्ता मानतो नथी. ते जाणे छे के—

" प्रकृतेःक्रियमाणानि गुणैःकर्माणि सर्वशः ।
अहंकारविमूढात्मा कर्ताहमितिमन्यते॥"

गीता ३-२७

'प्रकृतिना गुणोए सर्वथा करातां कर्मनो अहंकारथी मूढ थयेला आत्मावालो, हुं कर्त्ता छुं एम माने छे.

तत्रैवं सति कर्तारमात्मानं केवलं तु यः ।
पश्यत्यकृतबुद्धित्वान्न स पश्यति दुर्मतिः ॥

गीता १८-१६

'एम सते आत्माने केवलने, जे अकृत बुद्धि होइ कर्ता देखे छे, ते दुर्मति देखतो नथी.'

आ अयोग्य कर्तृत्वाभिमाननो परित्याग थाय तो प्रकृतिने ज यथार्थ कर्ता अने पोताने तो मात्र द्रष्टा तरीके अनुभवी शकाय.

" नान्यं गुणेभ्यः कर्तारं यदा द्रष्टानुपश्यति ।
गुणेभ्यश्च परं वेत्ति मद्भावं सोऽधिगच्छति॥"

गीता १४-१९

'ज्यारे द्रष्टा गुण थकी अन्यने कर्ता देखतो नथी त्यारे गुणथकी परने जाणे छे, अने मारा भावने पामे छे.'

" प्रकृत्यैव च कर्माणि क्रियमाणानि सर्वशः ।
यः पश्यति तथात्मानमकर्तारं स पश्यति॥"गीता १३-२९

'सर्व प्रकारे करातां कर्मने जे प्रकृतिनांज करेलां जाणे छे, ते आत्माने अकर्ता पण जाणे छे.'

" तत्त्ववित्तु महाबाहो गुणकर्मविभागयोः।
गुणा गुणेषु वर्तन्त इति मत्वा न सज्जते ॥"

गीता ३-२८

'पण गुणकर्म विभागनुं तत्त्व जाणनार, गुणज गुणमां प्रवर्ते छे, एम मानी आसक्त थतो नथी.'

गीता बीजे ठेकाणे पण कहेछे के,—

"नैव किंचित्करोमीति युक्तो मन्येत तत्त्ववित्
पश्यन्शृण्वन्स्पृशञ्जिघ्रन्नश्नन्गच्छन्स्वपन्श्वसन्
प्रलपन्विसृजन्गृह्णन्नुन्मिषन्निमिषन्नपि
इंद्रियाणींद्रियार्थेषु वर्तन्त इति धारयन्"

गीता ५:८-९

'युक्त तत्त्ववित् तेणे एम मानवुं के हुं कांइ करतो नथी; जोतो, सांभलतो, स्पर्शतो, सुंघतो, खातो, प्रवर्ततो, उंघतो, श्वास लेतो, बोलतो, आपतो, लेतो, उन्मेष करतो, निमिष करतो, छतो पण; केवल एम समजीने के इंद्रियो इंद्रियोना अर्थमां प्रवर्ते छे.'

गीता ए बीजुं पण कह्युं छे के—

यस्य नाहंकृतोभावो बुद्धिर्यस्यन लिप्यते।

हत्वापि स इमांल्लोकान्नहन्ति न निबद्धयते ॥

गीता १८-१७

'जेने अहंकृतभाव नथी, जेनी बुद्धि लेपाती नथी, ते आ लोकमात्रने हणीने पण हणताए नथी ने बंधाताए नथी.

आवो निरभिमानी निर्लिप्त पुरुषज प्रकृत ज्ञानी छे. आवा ज्ञानीने कर्म स्पर्श करी शकतुं नथी.

"यथा पुष्करपलाश आपो न श्लिष्यन्त एव
मेवं विदि पापं कर्म न श्लिष्यते"

छांदोग्य ४-१४-७

'जेम कमळने पाणी स्पर्श करी शकतुं नथी तेम ज्ञानीने पाप (अने पुण्य) कर्म स्पर्श करी शकतुं नथी.'

ज्ञानीने मात्र क्रियामाण कर्मज स्पर्श करी शकतुं नथी, एम नथी, तत्वज्ञान उत्पन्न थवाथी तेनां बधां संचित कर्म पण बळी जाय छे.

"यथैधांसि समिद्धोऽग्नि भस्मसात् कुरुतेऽर्जुन ।
ज्ञानाग्निः सर्व कर्माणि भस्मसात्कुरुते तथा ॥"

गीता ४-३७

'जेम सळगावेलो अग्नि काष्टने, हे अर्जुन ! भस्म करे छे तेम ज्ञानाग्नि सर्व कर्मने भस्म ज करे छे.'

"तद्यथेषीका तूलम् अग्नौप्रोतं प्रदूयेतैवं हास्य
सर्वे पाप्मान: प्रदूयन्ते."— छांदोग्य, ५-२४-३

'जेम मुंजना तृणनो अग्रभाग अग्निमां नाखवाथी भस्मीभूत थाय छे, तेम ज्ञानीनां बधां पाप बळी जाय छे.'

"क्षीयन्ते चास्य कर्माणि तस्मिन् दृष्टे परावरे."
मुंडक. २-२-८

'ते परम वस्तुनुं दर्शन थवाथी बधां पाप नाश पामी जाय छे'. तेथी, पछी ज्ञानीने संसारमां आववुं पडतुं नथी. ज्ञान मळवाथी जीव निर्वाणनो अधिकारी थाय छे.

"विहाय कामान् यः सर्वान् पुमांश्चरति निस्पृहः ।

---

[1]ब्रह्मसूत्रमां पण आ बाबतनुं प्रतिपादन कर्युं छे.

"तदधिगमउत्तरपूर्वाघयोरश्लेषविनाशौ तद्व्यपदेशात्"

इतरस्याप्येवमसंश्लेषः पाततु" ब्रह्मसूत्र ४, १,१३-१४

कर्म त्रण प्रकारनां छे—प्रारब्ध, संचित अने क्रियमाण. साधारण रीते भोगथी प्रारब्ध कर्मनो नाश थाय छे. पण ज्ञान उत्पन्न थवाथी संचितनो नाश अने क्रियमाणनो अश्लेष थाय छे. मतलबके जन्मांतरोमां करेलां कर्मो (जेना भोगने माटे जीवने फरी फरीने जन्म लेवो पडे छे) विनष्ट थइ जाय छे; अने आ जन्ममां जे कर्म करवामां आवे, ते पण बंधनो हेतु थतां नथी.

निर्ममो निरहंकारः स शान्तिमधिगच्छति."॥

गीता २-७१

'जे पुरुष सर्व कामना त्यजीने निःस्पृह थइ फरे छे, तथा जेने 'अहंत्व' 'ममत्व' टळी जायछे तेज शांति पामे छे.'

कारण ज्ञानी रागद्वेष विनानो होय छे. वधां इंद्रियो तेने वश होय छे; तेथी विषय भोगमां पण तेनी शांतिनो भंग थतो नथी.

"रागद्वेषवियुक्तैस्तु विषयानिन्द्रियैश्चरन्।
आत्मवश्यैर्विधेयात्मा प्रसादमधिगच्छति"॥

गीता २-६४

'छतां जे इंद्रियोने राग द्वेषथी विमुक्त राखी, आत्माने वश सोंपी, आत्मा वश करीने विषयमां (पण) फरे छे तेनुं चित्त प्रसन्न थाय छे.'

चोपासाथी भरातां छतां पण पोतानी सीमामां अचल रहेनार समुद्रमां जेम निरंतर जल पड्या करे छे, तेम जेने विषे सर्व कामना प्रवेश करे ते शांति पामे छे. बीजा कामना पाछळ गांडा भमनारा नहिज.

निष्काम कर्मीनुं आज विशेषपणुं छे. सकाम पुरुष आ सौभाग्यनो अधिकारी थइ शकतो नथी.

"आपूर्यमाणमचलप्रतिष्ठं समुद्रमापः प्रविशंतियद्वत्।

तद्वत्कामा यं प्रविशन्ति सर्वे, स शांतिमाप्नोति न कामकामी."

पण फळनी इच्छानो अने कर्तृत्वाभिमाननो त्याग कर्या छतां—ये कर्मयोगनुं संपूर्ण अनुष्ठान थयुं कहेवाय नहि. कर्मयोगीने आनी उपर पण एक पगथीउं चडवानुं छे. ए त्रीजुं पगथीउं—

३. ईश्वरार्पण—बधां कर्म ईश्वरने अर्पण करवां, यज्ञार्थे कर्मानुष्ठान करवुं ते—छे.

साधारण रीते माणस पोताने माटे, पोताना संकल्पनी सिद्धिने माटे, स्वार्थनी प्रेरणाथी कर्मो करे छे, तेनां दरेक कर्मनां मूळमां स्वार्थनो विचार जोडाएलो होय छे. ते पोताने केन्द्रस्थळे राखीने कर्ममां प्रवृत्त थाय छे. तेथी तेनुं काम सकाम थइ जाय छे. गीतानो बोध ए छे के, बधां कर्मनुं फळ ईश्वरने अर्पण करवुं जोइए. सर्व रीते ईश्वरमां आत्मसमर्पण करवुं जोइए. तेनाज उद्देशथी तेनाज कार्यनुं साधन करीए छीए, एवा भावथी, जगत्नां हितने माटे कर्मनुं अनुष्ठान करवुं जोइए, तेटला माटे भगवाने अर्जुनने उपदेश आप्यो छे के—

" मयि सर्वाणि कर्माणि संन्यस्याध्यात्मचेतसा
निराशीर्निर्ममो भूत्वा युद्ध्यस्व विगतज्वरः"

गीता ३-३०

'सर्व कर्मनो मारामां आरोप करी, आत्माने विषे मन स्थिर बांधी, निराशी अने निर्मम थइ संताप त्यजीने युद्ध कर.'

" चेतसा सर्वं कर्माणि मयि संन्यस्य मत्परः
बुद्धियोगमुपाश्रित्य, मच्चितः सततं भव "

गीता १८-५७.

'चित्तथी सर्व कर्म मारामां संन्यसी, मत्पर थइ, बुद्धियोगनो आश्रय करी सर्वदा मच्चित्त था.'

जे आवी रीते कर्म करे छे, जे आवी रीतना विचारथी कर्म करे छे, तेनो उद्देश स्वार्थ सिद्धि अथवा आत्मप्रीति नथी होतो. ईश्वरनुं कार्य साधुं छुं, एवोज मात्र तेना मनमां होय छे, ते पोताने तो मात्र ईश्वरनुं करण (हथीयार-साधन) ज माने छे. पोतानी क्षुद्र सत्ता ईश्वरमां डुबावी दइ बधां कर्मनां फळ भगवाननेज अर्पण करे छे.

जे आ प्रमाणे करी शके छे, तेनां सौभाग्यनी सीमा-हद रहेती नथी.

" सर्वकर्माण्यपि सदा कुर्वाणो मद्व्यपाश्रयः
मत्प्रसादादवाप्नोति शाश्वतं पदमव्ययम् "

गीता १८-५६

'सर्वदा सर्व कर्म करतो, मनेज शरण रहेतो, मारा प्रसादथी, शाश्वत अव्यय पद पामे छे.'

आवा भावथी कर्मानुष्ठान करवामां आवे तो कर्म, बंधनना हेतु रुप थाय नहि. कारणके आवी रीते कर्म करनारनी साथे

कर्मनो कशो संबंधज रहेतो नथी. आ प्रमाणे करेलां कर्मनो संबंध ईश्वर साथे रहे छे.

" ब्रह्मण्याधाय कर्माणि संगं त्यक्त्वा करोति यः
लिप्यते न स पापेन पद्मपत्रमिवांभसा "

गीता ५-१०

'कर्मोने ब्रह्ममां अर्पी संगनो त्याग करी जे करे छे, ते, जळमां कमळपत्रनी पेठे, पापे लेपातो नथी,

" यज्ञार्थात्कर्मणोऽन्यत्र लोकोऽयं कर्मबन्धनः "

गीता ३-९.

'यज्ञ विनाने अर्थे कर्म करवाथी लोक बंधनमां पडे छे.'

" यज्ञायाचरतः कर्म समग्रं प्रविलीयते "

गीता ४-२३.

' यज्ञार्थे करेलां कर्म समग्र लय पामे छे.'

आ यज्ञ एटले शुं ? शंकराचार्ये " यज्ञो वै विष्णुः " 'यज्ञज विष्णु'–ए श्रुतिना प्रमाणथी यज्ञ एटले ईश्वर एम नक्की कर्युं छे. यज्ञार्थे कर्म करवुं एनो अर्थ ईश्वरना उद्देशथी कर्म करवुं, कर्मनुं फळ ईश्वरने अर्पण करवुं एवो छे. यज्ञ शब्द-नो एक बीजोपण अर्थ करी शकाय छे. यज्=यजवुं, अग्निमां धामधुमथी अमुक प्रकारना पदार्थो नांखवानी क्रिया करवी, एने आपणे साधारण रीते यज्ञ समजीए छीए, पण यज्ञनो मूळ

अर्थ एवो नथी. यज्ञनो मर्म–त्याग (sacrifice) छे; प्राचीन काळमां यज्ञथी लोकोना मनमां त्यागनो भावज स्फुरी आवतो. वास्तविक जोतां यज्ञनुं मुख्य उपादान त्याग छे. प्रजापतिए जे महान् अनुष्ठान करीने आ जगत् रच्युं छे, तेनो इसारो पुरुषसूक्तमां करवामां आव्यो छे. ते महायज्ञ बीजुं कांइ नहि, पण जीवना हितने माटे भगवाननो मोटो आत्मत्याग छे. जगत्‌ना पोषण माटे ईश्वरना उद्देशथी आवो जे त्याग, तेनेज आपणा पूर्वजो यज्ञथी ओळखता, तेनेज यज्ञ समजता. आवा भावथी कर्मानुष्ठान करवाथीज खरो यज्ञ सिद्ध थाय. यज्ञना अंग्रेजी शब्द 'sacrifice' मां हाल पण ए त्यागनो भाव स्पष्ट रहेलो छे. आथी 'यज्ञार्थे कर्म करवुं' एनो आवो अर्थपण थइ शके के, त्यागना भावथी (as a sacrifice) कर्मानुष्ठान करवुं. जे कर्ममां कशी स्वार्थ सिद्धिनो उद्देश न होय, जे कर्मनां मूळमां संकल्प सिद्धिनी प्रत्याशा न होय, अहंकार रहित थइने जे कर्म भगवानना उद्देशथी समर्पण करवामां आवे, तेज यज्ञ कर्म. आवी रीते कर्मानुष्ठान करवानो ज्यारे अभ्यास पडी जाय, शीलज बंधाइ जाय, त्यारे मनुष्य जीवन एक महायज्ञनो आकार धारण करे. जगत्‌नुं हित ए आ यज्ञनी वेदी छे, त्याग ए आत्मबलिदान छे, अने यज्ञेश्वर भगवान पोते छे. गीतामां भगवाने फरीफरीने उपदेश कर्यो छे के, माणसे जे कांइ करवुं,

ते मनेज अर्पण करवुं; जो एम करवामां आवे तो पछी तेने कर्मबंधनथी बंधावुं पडे नहि.

" यत्करोषि यदश्नासि यज्जुहोषि ददासि यत् ।
यत्तपस्यसि कौंतेय तत्कुरुष्व मदर्पणम् ॥
शुभाशुभफलैरेवं मोक्ष्यसे कर्मबन्धनैः ।
संन्यासयोगयुक्तात्मा विमुक्तो मामुपैष्यसि ॥"

गीता ९, २७-२८.

'जे तुं करे, जे भोगवे, जे होमे, जे दान करे, जे तप करे, ते सर्व हे कौंतेय! मने अर्पण कर. शुभ अने अशुभ फळरुपी कर्मबंधनथी एम तुं मुक्त थइश. अने एम संन्यास योगथी मुक्त होइ, विमुक्त थइ मने पामीश.'

आ संबंधी भागवतमां एक सुंदर दृष्टांत आपवामां आव्युं छे.

" एतत् संसूचितं ब्रह्मं स्तापत्रयचिकित्सितम् ।
यदीश्वरेभगवति कर्म ब्रह्मणि भावितम् ॥
आमयो यश्च भूतानां जायते येन सुव्रत ।
तदेव ह्यामयं द्रव्यं न पुनाति चिकित्सितम् ॥"

श्रीमद् भागवत् १-४-३२, ३३.

जे वस्तुनां सेवनथी कोइ रोग उत्पन्न थयो होय, तेज वस्तुनुं सेवन कर्या करवाथी ते रोगनी शांति थाय नहि. पण वैदक शास्त्रनी रीते ते वस्तुने बीजी वस्तुनी भावना देवामां आवे

तोज ते वस्तुथी रोगनी शांति थाय छे. तेम त्रण तापवाळा आ संसार रुप रोगनी उत्पति कर्मथी छे, तेज कर्मोनुं सेवन करवाथी तेनी शांति थाय नहि. पण ते कर्म जो भगवान (ब्रह्म) मां समर्पण करवामां आवे तो, ईश्वरनी भावनावाळां ते कर्मो वडेज त्रणे तापने मूळमांथी उखेडी नाखी शकाय.[1]

आवी रीते कर्म करवामां आवे तो पछी ते बंधनना हेतुरुप न थाय. जे आ प्रमाणे करी शके, तेनां कर्म पछी कर्म न रहे, अकर्म थइ जाय. तेना संबंधमां कर्म अने कर्मसंन्यास ए बंने एक सरखांज थाय; कर्म अने अकर्ममां कशो तफावतज रहे नहि. ते सर्व प्रकारनां कर्म करे, पण कर्मनां फळनां बंधनथी मुक्त रहे.

"कर्मण्यकर्म यः पश्येदकर्मणि च कर्म यः।

---

[1] मीमांसा-प्रकरण ग्रंथना रचनार लौगाक्षि-भास्करे तेना अर्थ संग्रहमां पण आवोज विचार जणाव्यो छे.

सोऽयंधर्मो इत्यादि. मतलब के स्वर्ग वगेरे मेळववानी आशाथी वेदोक्त धर्मनुं अनुष्ठान करवामां आवे तो स्वर्ग वगेरे फळ मळेछे, पण ए बधानुं अनुष्ठान ईश्वरार्पण बुद्धिथी करवामां आवे तो ते मुक्तिना कारणरुप थायछे. मूळ दर्शनमां आ मतने कशो आधार नथी, ए चोक्कस छे, कारणके मूळ दर्शन निरीश्वरवादी छे.

स बुद्धिमान् मनुष्येषु स युक्तः कृत्स्नकर्मकृत् ॥"
गीता ४-४८.

'कर्ममां जे अकर्म जुए छे, ने अकर्ममां कर्म जुए छे, ते मनुष्योमां बुद्धिमान्, युक्त, अने सर्व कर्म करनार छे.'

गीतानो बोध आ छे के, जीव आ कर्मयोग सिद्ध करीने जगत्ना लाभ माटे कर्ममात्र करे, तो ते पोतेपण कर्मनां बंधनथी बंधाय नहि, अने जगत् व्यापारपण सारी रीते सिद्ध थाय. आ ज गीताए बोधेलो कर्मयोग छे.

प्रकरण ७ मुं.

सांख्य दर्शननुं टुंकुं विवरण.

सांख्यदर्शनना प्रवर्तक महर्षि कपिल छे. तेमना शिष्य आसुरी, अने आसुरीना शिष्य पंचशिखाचार्य. आ पंचशिखाचार्ये सांख्यदर्शननी विवृत्ति करीने अनेक ग्रंथो रच्या हता. ते बधा ग्रंथो अत्यारे मळता नथी. पातंजल दर्शननां व्यासभाष्यमां पंचशिखाचार्यनां मात्र केटलांक वचनोनो उतारो करेलो जोवामां आवे छे. हमणां सांख्यशास्त्रना जे प्रचलित ग्रंथो छे, तेमां तत्वसमास सौथी प्राचीन छे. कोइकोइतो एने

ज कपिलप्रणीत मूळ सांख्य दर्शन समजे छे', पण ते खरुं जणातुं नथी. तत्वसमासने दर्शन न कहेतां दर्शननुं सूचीपत्र अथवा विषयनी अनुक्रमणिका कहीए तो वधारे ठीक. तत्व-समासनुं एक उत्कृष्ट भाष्य प्रचलित छे. ते आसुरीनुं रचेलुं छे, एम केटलाएकनुं मानवुं छे. मने तो ए खरुं लागतुं नथी. हाल सांख्य-प्रवचन-सूत्र नामनुं जे पांच अध्यायवाळुं सांख्य-दर्शन प्रचलित छे, ते आधुनिक ग्रंथ छे, एम मानवानां मज-बुत कारणो छे. भगवान् शंकराचार्य, वाचस्पतिमिश्र (जे बा-रमा सैकामां हता) अने चौदमा सैकाना लेखक माधवाचार्य एमांना कोइए पण ए ग्रंथमांथी कोइपण सूत्रनो पोताना ग्रंथ-

---

'महामहोपाध्याय चंद्रकान्त तर्कालंकार प्रणीत हिंदुदर्शन २५४मुं पृष्ठ. विज्ञानभिक्षुए आ मतनुं समर्थन कर्युं छे.

"नन्वेवमपि तत्वसमासाख्यसूत्रैः सहास्याः षडाध्यायाः पौनरुक्तमितिचेत् । मैवम् । संक्षेपविस्तररुपेण उभयोऽरप्यपौनरुक्तात्.॥" (सांख्य-प्रवचन-भाष्य भूमिका).

आ संबंधमां मेक्षमूलरे नीचे प्रमाणे लख्युं छे.

"I venture to call the 'Tatwasamasa' the oldest record that has reached us of the Sankhya Philosophy × × × × These Samasa Sutras, it is true, are hardly more a table of contents."

—Max Muller's The Six Systems of Indian Philosophy. Page 318.

मां उतारो करेलो नथी. तेमना समयमां जो सांख्य-प्रवचन सूत्र प्रचलित होय तो तेओ तेमांथी शामाटे उतारा न करे? ए प्रवचन सूत्रनुं विज्ञानभिक्षुकृत एक उत्कृष्ट भाष्य प्रचलित छे. सांख्यदर्शननी अनिरुद्ध कृत संक्षिप्त वृत्ति पण उल्लेख योग्य छे.

सांख्यदर्शन संबंधी ईश्वरकृष्णनो सांख्यकारिका अति प्रामाणिक ग्रंथ छे. श्री शंकराचार्ये शारीरकभाष्यमां ए ग्रंथमांथी उतारा कर्या छे. माधवाचार्ये पोताना 'सर्वदर्शन संग्रह' मां ए कारिकानुं अनुसरण कर्युं छे. ई. स. ना छठ्ठा सैकामां चीनाइ भाषामां ए कारिकानुं भाषांतर थयुं हतुं. शंकराचार्यना गुरुना गुरु गौडपादाचार्ये ए कारिकानुं भाष्य रच्युं छे. ए भाष्य अति प्रामाणिक ग्रंथ छे. वाचस्पति मिश्रकृत सांख्यतत्व कौमुदि ए कारिकानीज उत्कृष्ट टीका छे. ए सिवाय सांख्यदर्शन संबंधी विज्ञान भिक्षुकृत सांख्यसार नामनो उत्कृष्ट ग्रंथ छे.

बीजां दर्शनोनी पेठे सांख्यदर्शननो आरंभपण दुःखवादथी छे. जगतमां जीवने त्रण प्रकारनां दुःख खमवां पडे छे. आध्यात्मिक, आधिभौतिक अने आधिदैविक एम त्रण प्रकारनां दुःख छे. आध्यात्मिक दुःख बे प्रकारनां छे. रोग वगेरेथी थतुं शारीरिक दुःख, अने काम क्रोध वगेरेथी थतुं मानसिक

दुःख. मनुष्य, पशु अने जड पदार्थथी थतां दुःखनुं नाम आधिभौतिक दुःख. यक्ष, राक्षस वगेरेथी जे दुःख थाय, तेनुं नाम आधिदैविक दुःख. ज्यांसुधी शरीर त्यांसुधी दुःखनो सपाटो. तेथी दुःख उपादेय (ग्रहण करवा योग्य) नथी, हेय (तजवा योग्य) छे, मतलबके आपणे दुःख इच्छता नथी, दुःख दुर थाय एवुंज इच्छीए छीए. आ संबंधमां ईश्वरकृष्णे लख्युं छे के :—

" तत्र जरामरणकृतं दुःखम् प्राप्नोति चेतनः पुरुषः
लिंगस्याविनिवृत्ते स्तस्माद्दुःखं स्वभावेन "

(सांख्यकारिका ५५).

जीव ज्यांसुधी शरीर धारण करे, त्यांसुधी तेने जरामरण वगेरेथी थतुं दुःख भोगववुंज पडे, आथी दुःखभोग जीवने स्वभावथी सिद्ध छे.[1]

जगतमां सुख छेज नहि, एम नथी. पण सुख कदाचित् कोकनांज भाग्यमां होय छे. ते सुख पण थोडुं अने दुःखथी जोडाएलुं होय छे. वळी एवुं सुखपण स्थायी नहि. तेथी ते

[1] समानम् जरामरणादिजं दुःखम्. सांख्यसूत्र ३-५३.
" उर्ध्वाधोगतानाम् ब्रह्मादिस्थावरान्तानाम् सर्वेषाम् एव जरामरणादिजं दुःखम् साधारणम् "—विज्ञानभिक्षु.

सुख दुःखना पक्षमांज मुकवा योग्य छे.[1] तेथी सूत्रकारे कह्युं छे के–

" कुत्रापि कोऽपि सुखीति । तदपि दुःख शबलम् ॥
इति दुःखपक्षे निक्षिपन्ते विवेचकाः"—

सांख्यसूत्र ६,७-८

बधाज आ त्रण प्रकारनां दुःखनी निवृत्ति इच्छे छे. पण थोडा वखतनी निवृत्तिथी मोटो लाभ नथी. तेथी हमेशने माटे ए दुःखनी अत्यंत निवृत्ति थवानी जरुर छे.

" अथ त्रिविधदुःखात्यन्तनिवृत्तिरत्यन्तपुरुषार्थः"

सांख्यसूत्र १-१.

आ त्रण प्रकारनां दुःखनी अत्यंत निवृत्ति शी रीते थाय? लौकिक उपायोथी ए निवृत्ति थवानो संभव समजातो नथी.

---

[1] पाछळ कहेवाइ गयुं छे के गीताए ए मतने अनुमोदन आप्युं छे. भगवाने संसारने दुःखनुं आलय अने क्षणभंगुर कह्यो छे.

" पुनर्जन्मदुःखालयमशाश्वतम् "

गीतामां बीजे ठेकाणे कहेवामां आव्युं छे के–

" अनित्यम् असुखम् लोकम् इमं प्राप्य भजस्व माम् ."

'आ अनित्य अने असुखकर संसारमां आवीने मने भज.'

कारणके ओसड सेववाथी शारीरिक दुःखनी अने इष्ट साधनथी मानसिक दुःखनी जे निवृत्ति थाय छे, ते तो मात्र थोडा वखतनीज होयछे, स्थायी नथी होती. वळी ए बधा उपाय[२] रामबाण नथी. आथी लौकिक उपायथी दुःखनी निवृत्ति इच्छवी ए तो मात्र दुराशाज छे. दुःख निवृत्तिनो एक वैदिक उपाय छे. वेदमां कहेला यज्ञो वगेरेनुं अनुष्ठान करवाथी जीव सुखधाम--स्वर्गलोकने पामे खरो, पण ए उपाय बराबर नथी. कारणके ते लोक त्रण प्रकारना दोषवाळो छे. कर्मनी न्युनाधिकता प्रमाणे स्वर्गलोकमां पण न्युनाधिकता छे. कर्मनां फळथी कोइ उंच अने कोइ नीच स्वर्गना अधिकारी थाय छे. तेथी एक बीजामां चडती उतरती स्थीतिना भेदथी स्वर्गमांना जीवो दुःखनो अनुभव करे छे. बीजुं, यज्ञ करतां यज्ञ करनारने जीवहिंसा अवश्य करवी पडे छे, तेथी घणी हिंसा करवी पडे तेवा यज्ञमां जेम पुण्य थाय छे, तेम पाप पण थाय छेज. अने ते पापनां फळरुपे दुःख भोगववुंज पडे छे. वळी वैदिक उपायनुं दुःख—एक मोटुं दुःख ए छे के यज्ञ करवाथी जे स्वर्ग मळे, तेना भोग स्थायी नथी. पुण्यकर्मनां फळ भोगवाइ रहे एटले कर्मीनुं अवश्य पतन थाय छे. तेथी कर्मीने वळी दुःखमय संसारमां आववुं पडे छे. तेथी सांख्याचार्यो कहे छे के, जेम दुःख निवृत्ति

[२] Unfailing remedy.

करवा माटे लौकिक उपाय यथेष्ट नथी, तेमज वैदिक उपायो पण यथेष्ट नथी.[1] त्यारे दुःख निवृत्तिनो सरस उपाय कयो? आ उपाय नक्की करवा माटेज सांख्य शास्त्र रचायुं छे. सांख्य दर्शनना मत प्रमाणे दुःख निवृत्तिनो उत्तम उपाय ज्ञान छे.

"ज्ञानान्मुक्तिः"— सांख्यसूत्र, ३-२३.

शेलुं ज्ञान? प्रकृति अने पुरुषना विवेक अथवा भेदनुं ज्ञान.[2]

---

[1] "दुःखत्रयाभिघाताज्जिज्ञासातदपघातके हेतौ
दृष्टे साऽपार्था चेन्नैकांतात्यंतोऽभावात्"—
सांख्यकारिका १.

"दृष्टवदानुश्रविकः स ह्यविशुद्धिक्षयातिशययुक्तः" ॥
सांख्यकारिका २.

"न दृष्टात् तत्सिद्धिर्निवृत्तेऽप्यनुवृत्तिदर्शनात्"
सांख्यसूत्र १-२.

"उत्कर्षादपि मोक्षस्य सर्वोत्कर्षश्रुतेः"॥ सांख्यसुत्र ५.

"अविशेषश्चोभयोः"॥ सांख्यसुत्र ६.

[2] पातंजल योगसूत्रमां आ वातने अनुमोदन आपेलुं छे.

"विवेकख्यातिरविप्लवाहानोपायः" (साधनपाद २६)

विवेकख्याति=सत्व पुरुषान्यता प्रत्ययः; मतलब के प्रकृति अने पुरुषना भेदनुं ज्ञान. आ ज्ञान चित्तमां द्रढ थाय तो दुःख निवृत्तिनो उपाय थाय.

"तच्च (कैवल्यम्) सत्वपुरुषान्यताख्याति निबन्धनम्"

तत्व कौमुदी २१.

ईश्वरकृष्णे पण कहेलुं छे के–

"तद्विपरीतः श्रेयान् व्यक्ताव्यक्तज्ञ विज्ञानात्"

सांख्यकारिका २.

मतलबके 'प्रकृति-पुरुषना भेदनो साक्षात्कार एज सर्वोत्तम उपाय छे. अने साक्षात्कार व्यक्ति (विकृति), अव्यक्त(प्रकृति) अने ज्ञ (पुरुष), ए त्रणनां विशेष ज्ञानथी उत्पन्न थाय छे.

"एवम् तत्त्वाभ्यासान्नाऽस्मि न मे नाऽहमित्यपरिशेषम्।
अविपर्ययाद्विशुद्धं केवलमुत्पद्यते ज्ञानम्।।सांख्यकारिका६४

गीतामां भगवान् पण आ प्रकृत्ति पुरुषना भेद ज्ञाननी प्रशंसा करे छे.

क्षेत्रक्षेत्रयोर्ज्ञानं यत् तद् ज्ञानम् मतं मम. । गीता १३-२.

'क्षेत्र अने क्षेत्रज्ञ अर्थात् प्रकृति अने पुरुषनुं जे भेदज्ञान ते ज मारा मत प्रमाणे श्रेष्ठ ज्ञान.'

"क्षेत्रक्षेत्रज्ञयोरेव, मन्तरं ज्ञान चक्षुषा।
भूतप्रकृतिमोक्षञ्च, ये विदुर्यान्ति ते परम्"॥

गीता १३-३५.

"जेओ ज्ञानचक्षु वडे क्षेत्र अने क्षेत्रज्ञनो भेद अने भूतोनी प्रकृति अने मोक्ष जोइ शके, तेओ परम पद पामे."

'आ प्रमाणे तत्त्वनी फरी फरीने चर्चा करवाथी संशय अने भ्रम रहित, विशुद्ध, विमळ, निःशेष ज्ञान उत्पन्न थाय. तेनां फळ रुपे जीव जीवन्मुक्तिनो अधिकारी थइ प्रारब्ध कर्मना क्षय सुधी देह धारण करी रहे.' ए अवस्थामां हुं कर्त्ता नथी, भोक्ता नथी; मारे कांइपण कर्तव्य नथी, एम जीव समजी शके छे. आम ममता अने अहंकार वगरना पुरुषना संबंधमां धर्माधर्मनो बीज भाव नाश पामी जाय छे, मतलबके पछी पाप पुण्य जन्मादिरुप फळ उत्पन्न करवाने शक्तिवान थतां नथी. वाचस्पति मिश्रे कह्युं छे के–

"क्लेशसलिलावसिक्तायां हि बुद्धिभूमौ कर्मबीजान्यकुरं प्रसूवते तत्वज्ञाननिदाघनियीतसकलसालिलायामूषरायां कुतः कर्मबीजानां अंकुरप्रसवः"

पाणी सींचेला खेतरमांज बीज उगे छे, अति तिक्ष्ण सूर्यनां किरणोथी जो खेतरनुं बधुं पाणी सुकाइ जाय, तो ते उखर-खारवाळी-भूमिमां-खारनी जमीनमां-पछी शुं बीज उगी शके ? अज्ञानवाळी बुद्धिमांज संचित कर्म, फल उत्पन्न करवाने-शक्तिवान थाय, पण ज्यारे तत्वज्ञान अविवेकने दुर करीने चित्तने उखर करी दे, त्यारे ते खेतरमां कर्मबीज शी रीते उगी शके ?

ए प्रमाणे विवेकीने उद्देशीने कारिकामां कह्युं छे के–

" प्राप्ते शरीरभेदे चरितार्थत्वात् प्रधान विनिवृत्तौ ।
ऐकान्तिकमात्यन्तिकमुभयं कैवल्यमाप्नोति ॥ '
सांख्यकारिका, ६८

तेनुं शरीर नाश पामतां प्रकृतिनी प्रवृत्ति अटकी जवाथी ते ऐकान्तिक (अवश्य थनार), अने आत्यन्तिक (अविनाशी) कैवल्य (त्रणे दुःखनी निवृत्ति)ने पामे छे. ए अवस्थामां सुख दुःख ए बंने नाश पामे छे.'

" नोभयंच तत्त्वाख्याने "— सांख्य सूत्र १-१०७

' तत्त्व साक्षात्कार थवाथी सुख दुःख बेमांथी एके रहेतुं नथी.' आवा तत्त्वज्ञानी पुरुषना संबंधमां गौडापादाचार्ये नीचे प्रमाणे कह्युं छे–

" पंचविंशतितत्त्वज्ञो यत्रतत्राश्रमेवसेत् ।
जटी मुण्डी शिखी वापि मुच्यते नात्र संशयः॥"

' जेने पचीश तत्त्वनुं ज्ञान थयुं छे, ते गमे ते आश्रममां रहे ते ब्रह्मचारी होय, के ग्रहस्थ होय, के वानप्रस्थ होय, पण ते मुकाइ जाय छे एमां जरापण संशय नथी.'

आ पचीश तत्त्व कयां कयां? विकार सहित प्रकृति अने पुरुष.

सत्त्वरजस्तमसां साम्यावस्था प्रकृतिः प्रकृतेर्महान् महतोऽहंकारः अहंकारात् पंचतन्मात्राण्युभयमिन्द्रियं तन्मात्रेभ्यः स्थूलभूतानि पुरुष इति पंचविंशतिर्गणः । सांख्यसूत्र १-६१

मतलब के, 'मूलप्रकृति, तेनो विकार महत्तत्त्व, महत्‌नो विकार अहंकारतत्त्व, अहंकारनो विकार पंचतन्मात्र अने अगियार इंद्रियो, पंचतन्मात्रनो विकार पंचमहाभूत, अने पुरुष,–ए पचीश तत्त्व.' तत्त्वसमासनी भाषामां कहीए तो, आठ प्रकृति[1] (मूलप्रकृति, बुद्धि, अहंकार अने पंचतन्मात्र, ए पण गौणभावे प्रकृति, कारण के इंद्रिय अने महाभूतनुं उपादान) अने सोळ विकार (पांच ज्ञानेंद्रिय, पांच कर्मेन्द्रिय अने मन–ए अगीयार इंद्रियो अने पृथ्वी, पाणी, तेज, वायु, आकाश, ए पांच महाभूत), अने पुरुष (ए प्रकृति पण नथी, विकृति पण नथी). ईश्वरकृष्णे आमज कह्युं छे.

> मूलप्रकृतिरविकृतिर्महदाद्याः प्रकृतिविकृतयः सप्त ।
> षोडशकस्तु विकारो न प्रकृतिर्न विकृतिः पुरुषः ॥
>
> सां. कारिका ३.

आ पचीश तत्त्व [illegible] फ़ विचार करवानी जरुर छे. पहेलांतो प्रकृति एटले शुं? जड जगत्‌नुं जे अपरिच्छिन्न, निर्विशेष, मूल उपादान, तेनेज सांख्य शास्त्रमां प्रकृति अथवा प्रधान कहेल छे.[2] प्रकृतिनुं एक वीजुं नाम अव्यक्त छे. तेनुं

---

[1] "अष्टौ प्रकृतयः षोडशविकाराः"

गर्भोपनिषद् ३.

[2] The mighty expanse of Cosmic Matter.

—T. Suba rao's Lectures on the Bhagvadgita.

કારણ એ છે કે, સરજાયા પહેલાં જગત્ અવ્યક્ત (unmanifest) અવસ્થામાં રહે છે. અવ્યક્તની વ્યક્ત અવસ્થાનું નામ સૃષ્ટિ છે. ગીતામાં ભગવાને કહ્યું છે કે—

" અવ્યક્તાત્ વ્યક્તયઃ સર્વે પ્રભવન્ત્યહરાગમે ।
રાત્ર્યાગમે પ્રલીયન્તે તત્રૈવાવ્યક્તસંજ્ઞકે ॥"

ગીતા ૮-૧૮.

મતલબ કે—'પ્રલયને અંતે, અવ્યક્ત પ્રકૃતિમાંથી વ્યક્ત જગત્નો આવિર્ભાવ થાય છે; અને સૃષ્ટિને અંતે વ્યક્ત જગત્નો અવ્યક્ત પ્રકૃતિમાં તિરોભાવ થાય છે'. તત્વસમાસમાં આ અનુલોમ ક્રમે આવિર્ભાવને "સંચર" અને વિલોમ ક્રમે તિરોભાવને "પ્રતિસંચર" કહેલ છે.'

"પરિચ્છિન્નમ્ ન સર્વોપાદાનમ્"- સાંખ્યસૂત્ર ૧-૭૬.
બધાનું ઉપાદાન પ્રધાન પરિચ્છિન્ન નથી-વિજ્ઞાનભિક્ષુ.

"પ્રકૃતેરાદ્યોપાદાનતા"-સાંખ્યસૂત્ર ૬-૩૨. પ્રકૃતિજ જગત્નું મૂલ ઉપાદાન (Primary Material) છે.

'સૃષ્ટિનો ક્રમ આ પ્રમાણે છે. પ્રકૃતિમાંથી મહત્તત્ત્વ, મહત્તત્ત્વમાંથી અહંકાર, અહંકારતત્વમાંથી પંચતન્માત્ર અને અગીયાર ઇંદ્રિયો, અને પંચતન્માત્રમાંથી પંચમહાભૂતનો આવિર્ભાવ થાય છે. પ્રલયનો ક્રમ એનાથી ઉલટો છે;—પહેલાં પંચમહાભૂત અને અગીયાર ઇંદ્રિયો પંચતન્માત્રામાં વિલીન થાય છે, પછી પંચ-

प्रकृतिनुं एक नाम " अजा " छे. तेनुं कारण ए छे के प्रकृतिनुं परिणाम थइने मात्र रूपांतर थाय छे; प्रकृतिनो आदि-अंत नथी.[1] कारण के, प्रकृति नित्य अने सत् वस्तु छे. सांख्य मत प्रमाणे सत्नी उत्पत्तिपण नथी, विनाशपण नथी. सांख्यो कहे छे के—

" नासदुत्पद्यते न सद्विनश्यति "

' असत्नी उत्पत्ति नथी; सत्नो विनाश नथी.'

गीताए आ मतने अनुमोदन आप्युं छे—

"नासतो विद्यते भावो नाभावो विद्यते सतः" गीता २-१६.

'असत्नो भाव होय नहि; सत्नो अभाव न होय.'

"प्रकृतिपुरुषयोरन्यत् सर्वमनित्यम्" सांख्यसूत्र ५-७२.

' प्रकृति पुरुषज नित्य छे, बीजुं बधुं अनित्य छे.'

तन्मात्र अहंकारतत्त्वमां विलीन थाय छे, अहंकारतत्त्व महत्तत्त्वमां अने महत्तत्त्व प्रकृतिमां विलीन थाय छे.

[1] " अजामेकाम् लोहित शुक्ल कृष्णाम्
बह्वीः प्रजाः सृजमानाम् सरूपाः"

श्वेताश्वरोपनिषद् ४-५.

प्रकृति एक, प्रकृति अज, प्रकृति राती, धोळी अने काळी (त्रिगुणमयी) छे—प्रकृति पोताना जेवी विविध प्रकारनी सृष्टि बनावनारी छे.

विज्ञानभिक्षुए आ मतने टेको आपी नीचे प्रमाणे लख्युं छे.

" अव्यक्तं कारणं यत् तन्नित्यं सदसदात्मकम् ।
प्रधानं प्रकृतिश्चेति यदाहुस्तत्त्वचिंतकाः" ॥

'जगत्नुं जे अव्यक्त कारण छे, ते नित्य छे, सत् अने असत् (ते अनादि अने अनंत होवा छतां विकारशील छे माटे असत्) छे, तत्त्वज्ञानीओ तेने प्रधान अथवा प्रकृति कहे छे.' गीतामां भगवाने आ मतने टेको आप्यो छे.

" प्रकृतिं पुरुषं चैव विद्ध्यनादि उभावपि ।
विकारांश्चगुणांश्चैव विद्धि प्रकृतिसंभवान् " ॥
गीता १७-१९.

' प्रकृति अने पुरुष ए बंनेने तुं अनादि जाण; बधा विकार अने गुण प्रकृतिमांथी उत्पन्न थयेला जाण'.

पाश्चात्य विज्ञाने पण आ मतने टेको आप्यो छे. दार्शनिक प्रवर (Herbert Spencer) लखेछे के—मेटर (Matter) नी उत्पत्ति पण थती नथी, नाश पण थतो नथी ; तेनुं मात्र अवस्थांतर थाय छे.'

[1] Matter never either comes into existence or ceases to exist. * * The seeming annihilation of Matter turn out on close observation to be only changes of state. It has grown into an axiom of Science, that whatever Metamorphoses Matter undergoes, its quantity is

घणा वखत सुधी पाश्चात्य विज्ञाननो निश्चय हतो के, जड जगत् ७० मूळतत्त्व (elements) ना संयोग अने वियोगथी बनेलुं छे. आ मूळतत्त्वोनां परमाणुने तेओ एक बीजाथी स्वतंत्र अने नित्य मानता हता. पण विद्वानोनी एक एवी कल्पना हती के ए मूळतत्त्वो एक अद्वितिय उपादाननुं, एक छेवटनां तत्त्वनुं मात्र परिणाम छे. विद्वान् सर वीलीयम क्रुकसे आ कल्पना खरी करी बतावी छे.[१] केटलांक वरस पहेलां तेणे साबीत कर्युं छे के, मूळतत्त्वोना परमाणुं खरुं जोतां स्वतंत्र अथवा नित्य नथी. ते एक चरम महातत्त्वना विशेष-विशेष-संघा

fixed. * * The annihilation of Matter is unthinkable for the same reason that the creation of Matter is unthinkable.

—Herbert Spencer's 'First Principles.' The indestructibility of Matter.

[१]It is dream ot science that all the recognized chemical elements will one day be found to be modification of a single material element.

—World life, page 48.

Crook's chemistry admits that the primary constituents of all matters, of all atoms are identical in their nature and issue from one single basis called 'Protyle'; their difference of form and appearence, in molecules and compound bodies being only the result of a difference in distribution or position.

—Dr. Marque's Scientific corroborations Page 11.

तथी उत्पन्न थयेलो विकार मात्र छे. तेणे आ छेवटनां महातत्त्वनुं नाम प्रोटाइल (Potyle) पाड्युं. आ प्रोटाइल अने प्रकृतिमां घणुं मळतापणुं छे.[१]

क्रुकसनो मत हालना विद्वानोमां विशेष्य मान्य थयो छे. इंग्लांडना सौथी प्रख्यात वैज्ञानिक लोर्ड केलवीने (Lord Kelvin) आ मतने टेको आप्यो छे. वैज्ञानिक शिरोमणि निकोला टेस्ला (Nikola Tesla) ए आ मतने मान्य गण्यो छे. तेथी जड पदार्थो एक अद्वितिय, निर्विशेष, चरम उपादानना

---

[१] पण Protyle अने प्रकृति एक पदार्थ नथी. Protyle स्थूल जगत्‌नुं चरम उपादान छे. स्थूल जगत्‌थी बीजुं कांइ वधारे छे, एम विज्ञान मानतुं नथी. तेथी वैज्ञानिकोनी समज प्रमाणे Protyle ए प्रकृतिने ठेकाणे छे. पण खरी रीते जोतां स्थूल जगत्‌नी उपर सूक्ष्म जगत् अने तेनी पण उपर कारण जगत् रहेलुं छे. स्थूल जगत्‌नुं चरम उपादान जे Protyle ते सूक्ष्म जगत्‌नां चरम उपादाननी साथे सरखावतां मूळतत्त्व नथी; वळी सूक्ष्म जगत्‌नुं जे चरम उपादान, ते पण कारण जगत्‌नां अति सूक्ष्म उपादाननी साथे सरखावतां मूळतत्त्व नथी. आ अत्यंत सूक्ष्म कारण जगत्‌नुं जे सूक्ष्म उपादान, तेनी निर्विशेष अव्याकृत, अव्यक्त चरम अवस्थानुं नाम प्रकृति. तेथी Protyle अने प्रकृतिमां घणो तफावत छे.

विकारथी बन्या छे, ए मत हमणां विज्ञानना एक महान् सत्य तरीके गणायो छे.[1]

पाछळ कहेवाइ गयुं छे के, प्रकृति एटले त्रण गुणनी साम्यावस्था. (State of equilibrium); आ त्रण गुणनां नाम सत्व, रजस् अने तमस्. सांख्यो कहे छे के, जेम माणसना शरीरमां कफ, वात अने पित्त, ए त्रण विरोधी वस्तु हमेशां लड्या करे छे, तेम जगत्नां मूळ उपादान प्रकृतिमां पण आ त्रण विरोधी गुणो निरंतर एक बीजाने हराववाने प्रयत्न कर्या करे छे. ए लडाइमां कोइवार सत्व जीतीने प्रकाश, अथवा सुख, अथवा लघुता उत्पन्न करे छे; कोइक वखत रजस् बळवान थइने प्रवृत्ति, अथवा दुःख, अथवा चंचळता उत्पन्न करे छे; वळी कोइवार तमस् बळवान थइ जडता, अथवा मोह अथवा गुरुत्व उत्पन्न करे छे. तात्पर्य के, आ त्रण गुण प्रकृतिनां स्वभाव सिद्ध त्रण विरोधी वलण (tendency) छे. तमस्=resis-

[1] According to the adopted theory, first clearly formulated by Lord Kelvin, all matter is composed of a primary substance of inconceivable tenuity, vaguely designated by the word "Ether", * * All matter then is merely whirling Ether. By being set in movement, Ether becomes matter perceptible to our senses; the movement arrested, the primary substance reverts to its Normal State and becomes imperceptible—Nikola Tesla.

tence अथवा inertia ; रजस्=activity ; अने सत्व=harmony. प्रलय वखते आ त्रणे गुण साम्यावस्थामां होय छे; मतलब के त्रणे वलण सरखां बळवाळां होय छे; कोइ कोइने हरावीने बळवान थइ शकतुं नथी.

सांख्यो कहे छे के, प्रकृतिनो स्वभावज परिणाम पामवानो छे. तेथी सांख्य शास्त्रमां प्रकृतिने "प्रसवधर्मी" एवुं एक सार्थक विशेषण आप्युं छे. ज्यां प्रकृति त्यां परिणाम होयज होय. परिणामनी साथे प्रकृतिनो नित्य संबंध छे.[1] प्रकृति एक क्षणवार पण परिणाम पाम्या विना रही शके नहि.[2] तेथी प्र-

[1] "प्रसवधर्मि प्रसवरुपो धर्मो यः सोऽस्यास्तीति प्रसवधर्मि, प्रसवधर्मेति वक्तव्येमत्वर्थीय प्रसवधर्मस्य नित्ययोगमाप्रयातुम्, सरुपविरुपपरिणामाभ्याम् न कदाचिदपि वियुज्यते इत्यर्थः" ११मी कारिकानी तत्वकौमुदी.

[2] "परिणामस्वभावा हि गुणा नापरिणम्य क्षणमप्यवतिष्ठन्ते" १६मी कारिकानी तत्वकौमुदी.

प्रकृति जो सर्वदाज परिणाम पामती होय, तो प्रलय वखते महत्तत्त्व वगेरेनो आविर्भाव केम थतो नथी? आ शंकाना समाधानमां सांख्यो कहे छे के,-प्रकृतिनुं बे प्रकारनुं परिणाम थाय छे. सदृश परिणाम अने विसदृश परिणाम. प्रलयने वखते सदृश परिणाम थाय छे, मतलब के सत्व सत्वरुपमां रजस् रजो

कृतिनी साम्यावस्था पोतानी मेळेज तुटे छे. प्रकृतिनी साम्यावस्था तुटतां जे पहेलो परिणाम थाय, तेनुं नाम महत्तत्त्व. गीतामां एने 'महद्ब्रह्म' कहेवामां आव्युं छे. महत्तत्त्वमां पण विकार थया विना रही शकतो नथी. महत्तत्त्वना विकारनुं नाम अहंकारतत्त्व. अहंकारतत्त्व पण पोतानी मेळेज परिणाम पामे छे. तेथी पंचतन्मात्र अथवा निर्विशेष सूक्ष्म पंचभूतनो आविर्भाव थाय छे. आ पंचतन्मात्रनां नाम अनुक्रमे शब्दतन्मात्र, स्पर्शतन्मात्र, रुपतन्मात्र, रसतन्मात्र अने गंधतन्मात्र छे. तेनी साथे साथे अगीयार इंद्रियोनी पण उत्पत्ति थाय छे.

"प्रकृतेर्महान् ततोऽहंकारस्तस्मात् गणश्च षोऽशकः"

सां. कारिका २२.

आ सात तत्त्वने, तंत्रोमां आदि, अनुपादक, आकाश, वायु,

रुपमां अने तमस् तमोरुपमां परिणाम पामे छे.

"प्रतिसर्गावस्थायाम् सत्वंच रजश्च तमश्च सदृशपरिणामानि भवन्ति, तस्मात् सत्वं सत्वरुपतया, रजो रजोरुपतया, तमस्तमोरुपतया प्रतिसर्गावस्थायामपि प्रवर्तते',

१६ मी कारिकानी तत्वकौमुदि.

वळी सृष्टि उत्पन्न थती वखते प्रकृतिनुं विसदृश परिणाम थाय छे. तेथी साम्यावस्था तुटी महत्तत्त्व वगेरेनो आविर्भाव थाय छे.

तेज, पाणी अने पृथ्वी एवां नाम आप्यां छे. ए क्रम प्रमाणे जडनी स्थूलथी सूक्ष्म अने सूक्ष्मथी अति सूक्ष्म अवस्था छे. आ संबंधमां भागवत नीचे प्रमाणे कहे छे—

अंडकोषेशरीरेऽस्मिन् सप्तावरणसंयुते ।
वैराजः पुरुषो योऽसौ भगवान् धारणाश्रयः ॥

श्रीमद् भागवत् २-१-२९.

मतलब के आ विश्व ब्रह्मांड विराट पुरुषनुं शरीर छे. एनां एक उपर एक एवां सात आवरण छे. ए आवरणनां नाम अनुक्रमे पृथ्वी, पाणी, तेज, वायु, आकाश, अहंकार अने महत्तत्त्व छे.[1]

---

[1] हमणाना पंडितोनुं आम मानवुं छे के सांख्यो महत्तत्त्व एटले समष्टि बुद्धि अने अहंकार एटले समष्टि अभिमान एम माने छे. पण आ योग्य लागतुं नथी. आ संबंधमां मेक्षमूलरे पण शंका बतावी छे. पण कोइ चोकस सिद्धांतपर ते आवी शक्या नथी.

Buddhi is generally taken in its subjective or psychological sense; but it is impossible that this should have been its original meaning in the mind of Kapila * * The Buddhi or the Mahat must here be a phase in the cosmic growth or the universe * * We can hardly help taking this Great Principle, the Mahat in a Cosmic Sense * * Ahankar is in the Sankhya some-

सांख्यो ईश्वरनो स्वीकार करता नथी. तत्व समास अने कारिकामां कोइपण ठेकाणे ईश्वरनो कशोये प्रसंग नथी. सांख्य प्रवचन सूत्रमां चोख्खी रीते ईश्वरनो निषेध करवामां आव्यो छे. प्रकृतिनां परिणाममां ईश्वरनो कोइपण प्रकारनो संबंध तेओ स्वीकारता नथी. प्रकृति पोतानी मेळे ज परिणाम पामे छे, एम तेओ कहे छे. परिणाम पामवा माटे प्रकृतिने बीजां कोइ पण कारणनी जरुर नथी. प्रकृति जड अने अचेतन होवा छतांपण पुरुषना भोग अने मोक्ष माटे जगत् सरजे छे.[1]

"प्रधानसृष्टिः परार्थम् स्वतोऽप्यभोक्तृत्वादुष्ट्रकुंकुमवहनवत्."

सां. प्रवचनसूत्र ५८.

"अचेतनत्वेऽपि क्षीरवत् चेष्टितं प्रधानस्य"

सां. प्रवचनसूत्र ५९.

"कर्मवद्दृष्टेर्वा कालादेः" ६० सां. प्रवचनसूत्र

३ जो अध्याय,

मतलब के, प्रकृति पोतानी मेळेज जगत् रचे छे, पण ते र-

---

thing developed out of primordial matter, after that matter has passed through Buddhi—Max Muller's 'The Six Systems of Indian Philosophy', p. p. 323-27.

[1] तेथी सर्वदर्शनसंग्रह रचनार माधवाचार्य सांख्य दर्शननो परिचय आपी आ प्रमाणे कहे छे. "एतदर्थे निरीश्वरसांख्यशास्त्रप्रवर्तककपिलानुसारिणाम् मतमुपन्यस्तम्"

चना पोताने माटे नथी,—बीजाने माटे छे. ("प्रधानस्य स्वत एव सृष्टिर्यद्यपि तथापि परार्थम् अन्यस्य भोगापवर्गार्थम्"--विज्ञानभिक्षु). तेनो उद्देश जीवने भोग अने मोक्षनो छे. एवी शंका थाय के जड प्रकृति शी रीते सृष्टिकार्यमां पोतानी मेळे प्रवृत्त थाय? तेना समाधानमां सांख्यो कहे छे के, जेम दुध पोतानी मेळेज दहींरुपे परिणाम पामे छे, अथवा जेम एक ऋतु पछी बीजी ऋतु पोतानी मेळेज आवे छे, तेम प्रकृति पोतानी मेळेज परिणाम पामे छे.

आ संबंधमां सर्वदर्शन संग्रह रचनार माधवाचार्य लखेछे के, अचेतन प्रकृति चेतननां अधिष्ठान विना महदादि कार्यमां प्रवृत्त थइ शके नहि. तेथी पकृतिनो कोइ चेतन अधिष्ठाता अवश्य, छे--तेथीज सर्वज्ञ परमेश्वरनो स्वीकार करवामां आवे छे? सांख्य मत प्रमाणे आ शंका असार छे; कारण के जड होवा छतां प्रयोजनने लीधे प्रकृतिनी प्रवृत्ति थाय छे. कारण के चेतननां अधिष्ठान सिवाय पण पुरुपार्थने माटे अचेतननी प्रवृत्तिनां द्रष्टांतनो अभाव नथी. जेम वाछडाना पोषण माटे अचेतन दुधनी प्रवृत्ति, अथवा लोकना उपकार माटे अचेतन पाणीनी पवृत्ति; तेम अचेतन होवा छतां पण प्रकृति पुरुषनां मोक्ष साधनने माटे प्रवृत्त थाय छे. * * * आथी अचेतन होवा छतां पण चेतननां अधिष्ठान सिवाय प्रकृतिनुं महदादि

रूपे परिणाम थाय छे---ते परिणामनो हेतु पुरुषार्थ साधन छे.--अने ते प्रकृति अने पुरुषना संयोगथी थाय छे. जेम व्यापार विनाना लोहचुंबक (Magnet) नी समीपमां आववाथी लोढांनी प्रवृत्ति थाय छे, तेम व्यापार विनाना पुरुषनी समीपमां आववाथी प्रकृतिनुं परिणाम थाय छे.'

ए संबंधमां सांख्यकारिका नीचे प्रमाणे कहे छे.

"वत्सविवृद्धिनिमित्तं क्षीरस्य यथा प्रवृत्तिरज्ञस्य।

'नन्वचेतनं प्रधानं चेतनानधिष्ठितं महदादिकार्ये न व्याप्रियते। अतः केनचित् चेतनेनाधिष्ठात्रा भवितव्यम्। तथा च सर्वार्थदर्शी परमेश्वरः स्वीकर्तव्यः स्यादितिचेत्, तदसंगतम्। अचेतनस्यापि प्रधानस्य प्रयोजनवशेन प्रवृत्युपपत्तेः। दृष्टंच अचेतनं चेतनानधिष्ठितं पुरुषार्थाय प्रवर्तमानं यथा वत्सविवृद्ध्यर्थम् अचेतनं क्षीरं प्रवर्तते यथा जलमचेतनं लोकोपकाराय प्रवर्तते तथा च प्रकृतिरचेतनापि पुरुषविमोक्षायप्रवर्तस्यति। * **तस्मादचेतनस्यापि चेतनानधिष्ठितस्य प्रधानस्य महदादिरूपेण परिणामः पुरुषार्थ प्रयुक्तः प्रधानपुरुषसंयोगनिमित्तः यथा निर्व्यापारस्यापि अयस्कान्तस्यसन्निधानेन लोहस्यव्यापारः तथा निर्व्यापारस्य पुरुषस्य सान्निधानेन प्रधानव्यापारो युज्यते"

----सर्वदर्शनसंग्रहमां सांख्यदर्शन.

पुरुषविमोक्षनिमित्तं तथाप्रवृत्तिःप्रधानस्य ॥
सां. कारिका ५७.

मतलब के–'जेम वाछडानी पुष्टि माटे जड दुधनी प्रवृत्ति थाय छे, तेम पुरुषनी मुक्तिने माटे जड प्रकृत्तिनी प्रवृत्ति थाय छे.' आ कारिकानी टीकामां होरेस विलसने (Horace Wilson) नीचे प्रमाणे सांख्यमत स्पष्ट कर्यो छे, प्रकृतिनुं परिणाम स्वतः सिद्ध छे; ते माटे प्रकृतिने कोइ स्वतंत्र कर्त्ता अथवा अधिष्ठाता (ईश्वर अथवा ब्रह्मा वगेरे) नी जरुर नथी. खरुं जोतां निरीश्वर सांख्यशास्त्र सृष्टिव्यापारमां कोइ रचनारनो हाथ होवानी जरुर स्वीकारतुं नथी. ते मतमां प्रकृतिनी प्रवृत्ति थया वगर रही शकेज नहि.'

महत्तत्त्व, अहंकारतत्त्व अने पंचतन्मात्रनो थोडोएक विचार कर्यो; हवे एकादश इंद्रिय अने पांच स्थूळभूतनो थोडोएक

' This (Nature's evolution) is the spontaneous act of Nature. It is not influenced by any external intelligent principle such as the Supreme Being or a Subordinate Agent as Brahma; it is without (external) cause. * * The atheistical Sankhya, on the other hand, contends, that there is no occasion for a guiding Providence, but that the activity of Nature for the purpose of accomplishing its end is an intuitive necessity.

The Sankhya Karika by Horace K. Wilson. M.A. F.R.S.

विचार करवानी जरुर छे.

सांख्यो कहे छे के अहंकारतत्त्वना विकारथी तमोगुण बळवान थतां पंचतन्मात्र, अने सत्वगुण बळवान थतां एकादश इंद्रियो उत्पन्न थाय छे.

"सात्विक एकादशकः प्रवर्तते वैकृतादहंकारात्."

सां. कारिका २५.

अगीआर इंद्रियो कइ कइ? आंख, कान, नाक, जीभ अने चामडी, ए पांच ज्ञानेंद्रिय; अने हाथ, पग, वाणी, मळद्वार अने उपस्थ ए पांच कर्मेन्द्रिय; अने मन. मन—उभयात्मक; ज्ञान अने कर्म बंनेनुं साधन.

पंचतन्मात्र (शब्दतन्मात्र, स्पर्शतन्मात्र, रुपतन्मात्र, रसतन्मात्र, अने गंधतन्मात्र.) अविशेष (Homogenous) छे. तेओ अनुक्रमे पांच स्थूलभूत—आकाश, वायु, अग्नि, पाणी अने पृथ्वी–उत्पन्न करे छे. ए बधां स्थूलभूत अविशेष नथी, विशेष छे.[1]

"अविशेषाद् विशेषारंभः"—सांख्यसूत्र ३-१.

"तन्मात्राण्यविशेषास्तेभ्यो भूतानि पंच पंचभ्यः"

सां कारिका ३८.

[1] प्रश्नोपनिषत्मां पण (४-८) स्थूलभूत अने सूक्ष्मभूतनो भेद जणाव्यो छे. "पृथिवी च पृथिवीमात्रा च" इत्यादि.

आ पांच महा भूत स्थूल विषय रुपे अने जीवनां शरीररुपे आपणां भोग्य छे. एमांनां कोइ सुख करनार, कोइ दुःख करनार अने कोइ मोह करनार छे. ते ते अवस्थामां तेमनां पारिभाषिक नाम–शांत, घोर अने मूढ छे.

सांख्य मत प्रमाणे जगत् त्रिगुणात्मक छे. जगत्नी दरेके दरेक वस्तु त्रण गुण भेगा मळवाथी बनेली छे. गीताए आ मतने टेको आप्यो छे. गीता कहे छे के–

“न तदस्ति पृथिव्यां वा दिवि देवेषु वा पुनः ।
सत्वं प्रकृतिजैर्मुक्तं यदेभिः स्यात् त्रिभिर्गुणैः ॥”
गीता १८-४०.

‘पृथ्वीमां अथवा स्वर्गमां देवोमां एवी कोइपण वस्तु नथी के जे प्रकृतिथी उत्पन्न थयेला आ त्रण गुणथी मुक्त होय.’

सांख्यो कहे छे के दरेक विषयमां त्रण गुणनुं अधिष्ठान रहेलुं छे, तेथी एकज विषय अवस्थाभेदे कोइना प्रत्ये सुख कर, कोइना प्रत्ये दुःखकर अने कोइना प्रत्ये मोहकर थाय छे द्रष्टांत तरीके तेओ कहे छे के, एकज सुंदर स्त्री प्रियजनने सुखनो, शोकने दुःखनो अने निराशप्रेमीने मोहनो हे

अत्यार सुधीमां प्रकृतिथी आरंभी सांख्यमां कहेलां चोवीशं

'गीताए पण सांख्यमां कहेलां २४ तत्वनी गणना करीछे.
“ महाभूतान्यहंकारो बुद्धिरव्यक्तमेवच ।

तत्त्वनो टुंकामां विचार कर्यो ; हवे सांख्यनुं पचीशमुं तत्त्व जे पुरुष ते विशे थोडोएक विचार करीए.

सांख्य मत प्रमाणे प्रकृति अने पुरुष बंने नित्य, अनादि, अपरिच्छिन्न अने निष्क्रिय छे ; बंने स्वतंत्र, अलिंग अने निरवयव[1] छे. प्रकृति जड पण पुरुष चेतन ; प्रकृति परिणामी, पुरुष निर्विकार ; प्रकृति गुणमयी, पुरुष निर्गुण (गुणातीत), प्रकृति दृश्य, पुरुष द्रष्टा ; प्रकृति भोग्य, पुरुष भोक्ता ; प्रकृति विषय (object), पुरुष विषयी (subject). प्रकृतिना गुणो वडेज बधां कर्म थाय छे. पुरुष अकर्त्ता-उदासीन-मात्र साक्षी[2]

इंद्रियाणि दशैकंच पंच चेन्द्रियगोचराः ॥"

गीता १३-५

[1]महत्तत्त्व वगेरे एनाथी बराबर उलटां छे ; मतलबके अनित्य, सादि, परिच्छिन्न अने सक्रिय, तेमज सावयव, परतंत्र अने लयशील छे—सां. कारिका १०मी कारिका जुओ.

जुओ तत्व समास ३-२५

तत्त्वसमासना मत प्रमाणे क्षेत्रज्ञ अने प्राण ए बंने शब्दो पुरुषना पर्याय छै.

[2]गीता आ मतने अनुमोदन आपे छे.

" प्रकृतेःक्रियमाणानि गुणैःकर्माणि सर्वशः ।
अहंकार विमूढात्मा कर्ताहमितिमन्यते ॥ " गीता ३-२७

छे, पुरुष कूटस्थ, केवल (सुख दुःखथी अतीत, नित्य मुक्त) अने असंग (" असंगो ह्ययं पुरुषः "—बृहदारण्यक, ४-३-१५) छे.

" निष्कलं निष्क्रियं शांतं निरवद्यं निरंजनम् "

श्वेताश्वतर ६-१९

'आत्मा कला विनानो, क्रिया विनानो, शांत, निष्पाप अने निरंजन छे.'

गीताए पण आ मतने अनुमोदन आप्युं छे, गीताना मत प्रमाणे पण आत्मा निर्गुण अने निर्लेप छे.

" अनादित्वान्निर्गुणत्वात् परमात्मायमव्ययः ।

'प्रकृतिना गुणो वडेज बधां काम थाय छे, पण अहंकारथी मूढ थएलो पुरुष हुं कर्त्ता छुं एम माने छे.'

" प्रकृत्यैव च कर्माणि क्रियमाणानि सर्वशः ।
यः पश्यति तथात्मानमकर्त्तारं स पश्यति " ॥

गीता १३-२९

'प्रकृतिज बधां कर्म करेछे, पण आत्मा अकर्ता छे ; जे आ प्रमाणे जोइ शके छे तेज यथार्थ दर्शी छे.'

" तस्माच्च विपर्ययासात् सिद्धं साक्षित्वमस्य पुरुषस्य ।
कैवल्यं माध्यस्थ्यं द्रष्टृत्वमकर्तृभावश्च " ॥

सां• कारिका १९

शरीरस्थोऽपि कौंतेय न करोति न लिप्यते" ॥

गीता १३-३१

'हे अर्जुन! अविकारी आ परमात्मा अनादि अने निर्गुण होवाथी शरीरमां रहेलो छतां पण निष्क्रिय अने निर्लेप छे.

सृष्टि काळे प्रकृति अने पुरुष एक बीजा साथे संयुक्त थाय तेथी पुरुषना गुणनो प्रकृतिमां अने प्रकृतिना गुणनो पुरुषमां आभास थाय छे. तेथी खरी रीते प्रकृति अचेतन होवा छतां पण चेतन होय एम लागे छे, अने खरी रीते पुरुष कर्ता न होवा छतां पण कर्ता होय एम लागे छे.'

" तस्मात् तत्संयोगादचेतनं चेतनावदिव लिंगम् ।
गुणकर्तृत्वेऽपि तथा कर्तेव भवत्युदासीनः" ॥

सां. कारिका २०

'एवं महदादि लिंगम् पुरुषसंयोगात् चेतनावदिव भवति * * * यद्यपि लोके पुरुषः कर्ता गन्तेत्यादि प्रयुज्यते तथापि अकर्ता पुरुषः—२०मी कारिकानुं गौडपाद भाष्य.

" प्रधानेन संभिन्नः पुरुषस्तद्गतं दुःखत्रयं स्वात्मन्यभिमन्यमानः कैवल्यं प्रार्थयते तच्च सत्वपुरुषान्यताख्यातिनिबंधनम्

२१मी कारिकानी तत्त्व कौमुदी

कोइकोइ आने सृष्टि उत्पन्न थती वखतनो प्रतिबिंब संयोग कहे छे. आज पातंजलनुं—" वृत्तिसारुप्यम् इतरत्र " १-४

गीता पण कहे छे के—

“ पुरुषः प्रकृतिस्थो हि भुंक्ते प्रकृतिजान् गुणान् ”

भगवद् गीता १३-३१

‘ प्रकृतिमां रहेलो पुरुष प्रकृतिथी उत्पन्न थयेला गुणो भोगवे छे.’

प्रकृति पुरुषनो आ भोग्य भोक्तृत्व भाव शी रीते सिद्ध थाय? ए संबंधमां सांख्याचार्योमां मतभेद जोवामां आवे छे. केटलाक कहेछे के ते कर्म निमित्त छे,—केटलाक कहेछे अविवेक निमित्त छे,—वळी केटलाक कहेछे के, लिंग शरीर निमित्त छे. (६ नुं ५७, ५८, ५९ सूत्र जुओ). विज्ञानभिक्षुना मत प्रमाणे भोग्य भोक्तृ भावनुं खरुं कारण अविवेक ज छे. “अविवेकानिमित्तो वा स्वस्वामिभाव इति पंचशिख आह, तन्मतेऽपि अनादिरित्यर्थः. एतदेव स्वमतं प्रागुक्तत्वात्.” प्रलयमां पण आ अविवेक पुरुषमां वासना रुपे रहेछे. पछी सृष्टि थती वखते प्रकृतिनी साथे भोक्तृ भोग्यभाव उत्पन्न करेछे. सांख्यो बीजुं पण कहेछे के, प्रकृतिजड, तेथी आंधळाने ठेकाणे छे. पुरुष अकर्ता तेथी पांगळाने ठेकाणे छे. बंने संयुक्त थइने एक बीजानी अपूर्णता पुरी करेछे. तेमना संयोगथी ज सृष्टि थाय छे. ते सृष्टिनो हेतु पुरुषनो भोग अने मोक्ष छे.

“ पुरुषस्य दर्शनार्थं कैवल्यार्थं तथा प्रधानस्य ।

पंग्वन्धवत् उभयोरपि संयोगस्तत्कृतः सर्गः ॥

सां. कारिका; २१

जेने तत्वज्ञान थइने आ प्रयोजन सिद्ध थयुं छे, तेना संबंधमां प्रकृतिनी साथे पुरुष संयुक्त होय तो पण पछी सृष्टि थती नथी. भुंजेलां बीज जेम उगी शकतां नथी, तेम ज्ञानाग्निथी बळेलुं कर्माशय संसार उत्पन्न करी शकतुं नथी.

" दृष्टा मयेत्युपेक्षक एको दृष्टाहमित्युपरमत्यन्या ।
सति संयोगेऽपि तयो प्रयोजनं नास्ति सर्गस्य ॥ "

सां. कारिका–६६.

" प्रकृतेर्द्विविधं प्रयोजनं शब्दविषयोपलब्धिर्गुणपुरुषान्तरोपलब्धिश्च. उभयत्रापि चरितार्थत्वात् सर्गस्य नास्ति प्रयोजनम् "–उपली कारिकानुं गौडपादभाष्य.[1]

---

[1] " विविक्तबोधात् सृष्टिनिवृत्तिः प्रधानस्य सूदवत् पाके."

सां. सूत्र ३-६३.

विमुक्तबोधात् न सृष्टिः प्रधानस्य लोकवत् सां. सूत्र ६-४३.

अर्थात् ' रसोइ थइ रहेतां जेम रसोइयो निवृत्त थाय छे; तेम प्रकृति पुरुषना जुदापणानुं ज्ञान थतां प्रकृतिनो सृष्टिव्यापार निवृत्त थाय छे.

" नर्तकीवत् प्रवृत्तस्यापि निवृत्तिश्चारितार्थ्यात् "

सां. सूत्र ३-६९.

प्रकृतिनां परिणामनां बे प्रयोजन छे;–पहेलुं भोग अने बीजुं प्रकृतिपुरुषनां जुदापणानुं ज्ञान. जेना संबंधमां आ बंने प्रयोजन पुरां थयां छे, तेना संबंधमां सृष्टिनी आवश्यकता शी?[1] गौडपादे पण एक ठेकाणे लख्युं छे के–

जेम आंधळो अने पांगळो अमुक वखते सकारण भेगा थाय, अने ते कारण सिद्ध थया पछी छुटा पडे, तेम प्रकृति,

---

"दोषबोधेऽपि नोपसर्पणं प्रधानस्य कुलवधूवत्"
सां. सूत्र ३-७०.

[1] आ संबंधमां कारिका कहे छे के––

"रंगस्य दर्शयित्वा निवर्त्तते नर्तकी यथा नृत्यात्।
पुरुषस्य तथात्मानं प्रकाश्य विनिवर्त्तते प्रकृतिः"॥
सां. कारिका ५९.

"प्रकृतेः सुकुमारत्वं न किंचिदस्तीति मे मतिर्भवति।
या दृष्टाऽस्मीति पुनर्नदर्शनमुपैति पुरुषस्य"॥
सां. कारिका ६१.

मतलबके–'नाचनारी जेम जोनाराने नाच देखाडी निवृत्त थाय छे, तेम प्रकृतिपण पुरुषने पोतानुं रुप देखाडी निवृत्त थाय छे. प्रकृति करतां वधारे सुकुमार बीजुं कांइ छेज नहि; कारण के पुरुष तेने एकवार देखे एटले पछी ते पुरुषनी नजरे पडतीज नथी.'

पुरुषनुं मोक्ष साधन करी निवृत्त थाय अने पुरुष पण प्रकृतिने जोइने कैवल्य पामे. त्यारे बंनेना संयोगनुं प्रयोजन सिद्ध थवाथी वियोग थाय.[1]

आटले सुधी सांख्यदर्शननो संक्षिप्त परिचय आपतां गीतानी साथे जे जे विषयमां सांख्यमतनुं ऐक्य छे, ते बताव्युं. हवे पछीना प्रकरणमां गीता अने सांख्यमां जे भेद छे ते बतावीशुं.

प्रकरण ८ मुं.

सांख्य दर्शन.

सांख्य दर्शन अने गीता.

पाछलां प्रकरणमां सांख्यदर्शननुं टुंकुं वर्णन आपतां गीतानी साथे सांख्यमतनी जे जे विषयमां एकता छे, ते कहेवामां आवी. हवे गीता अने सांख्यमतमां जे भेद छे, जे जुदापणुं छे ते बतावीशुं.

---

[1] "यथा वानयोः पंग्वन्धयोः कृतार्थयोर्विभागो भविष्यतीप्सितस्थानप्राप्तयोरेवं प्रधानमपि पुरुषस्य मोक्षंकृत्वा निवर्त्तते, पुरुषोऽपिप्रधानं दृष्ट्वा कैवल्यं गच्छति; तयोः कृतार्थयोर्विभागो भविष्यति."—२१ मी कारिकानुं गौडपादभाष्य.

गीता ज्ञाननी विरोधी नथी; गीतामां तो उलटी ज्ञाननी यथायोग्य प्रशंसा करवामां आवी छे.

"न हि ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिह विद्यते"-गीता ४-३८.

'ज्ञानना जेवुं अहिं कशुं पवित्र नथी.'

"सर्वं कर्माखिलं पार्थ ज्ञाने परिसमाप्यते."–

गीता, ४-३३.

'हे पार्थ! सर्व अखिलकर्म ज्ञानमां समाय छे.'

"सर्वं ज्ञानप्लवेनैव वृजिनं संतरिष्यसि"---गीता ४-३६

'ज्ञानरुपी नावथी तुं सर्व पापने तरी जइश.'

"यथैधांसि समिद्धोऽग्नि र्भस्मसात्कुरुतेऽर्जुन।
ज्ञानाग्निःसर्वकर्माणि भस्मसात्कुरुतेतथा॥" गीता ४-३७

'हे अर्जुन! जेम सळगावेलो अग्नि लाकडांने भस्म करे छे तेम ज्ञानरुपी अग्नि सर्व कर्मोने भस्म करे छे.'

"ज्ञानं लब्ध्वा परां शांति मचिरेणाधिगच्छति।"

गीता ४-३९

'ज्ञान प्राप्त करीने ते तुरत परम शांतिने पामे छे.'

पण जे ज्ञान गीता इच्छे छे, ते तत्त्वज्ञान-जेने परा विद्या कहेछे ते छे--अपरा विद्या अथवा अवर ज्ञान नथी.[1] परा विद्या

[1] Madame Blavatsky ए टीबेटनी भाषामां प्रचलित Book of Golden Precepts नामना ग्रंथमांथी जे अपूर्व सार

कोने कहेछे? जे विद्यावडे ते अक्षर पुरुषनी प्राप्ति थायछे तेने.
"अथ परा यया तदक्षरमधिगम्यते"-मुन्डकोपनिषद् १-१-५
'अने जे वडे ते अक्षर प्राप्त थाय छे, ते परा विद्या छे.'

तत्त्वज्ञान एटले "तत्"नुं ज्ञान. तत्=ते; ॐ तत्सत्=ते सच्चिदानंद भगवान्. गीता कहेछे के, जेना वडे जीव पहेलां प्राणी मात्रने पोतामां अने छेवटे ईश्वरमां जुए, तेनेज तत्त्वज्ञान कहेवायछे.

"येन भूतान्यशेषेण द्रक्ष्यस्यात्मन्यथो मयि"
गीता ४-३५

आथी तत्त्वज्ञानी भगवद् भक्त थया विना रही शकेज नहि, कारणके तेने जाणवाथीज तेनामां परम प्रेमनो उदय थाय. आथी ज्ञानीने भक्त थवुंज पडे, माटेज गीतामां भगवाने चार

संग्रह (Voice of the silence) तारव्यो छे, तेमां पण आ अवरज्ञान (Head-learning) अने तत्त्वज्ञान (Soul-wisdom) ए बेमां भेद बताववामां आव्यो छे.

"Learn to discern the real from the false, the ever fleeting from the ever lasting. Learn, above all, to separate Head-learning from soul-wisdom, the 'Eye' from the 'Heart'-doctrine"-Voice of the Silence.

एटला माटे गीताए ज्ञाननां लक्षणनो निर्देश करती वखते अत्यंत द्रढ भक्तिनो उल्लेख कर्यो छे.

प्रकारना भक्तो गणावीने ज्ञानीनेज श्रेष्ट भक्त कहेलो छे. आ चार प्रकारना भक्तो अनुक्रमे, (१) आर्त (जेम कौरवोनी सजामां द्रौपदी); (२) अर्थार्थी (जेम उत्तम पदनी इच्छावाळा ध्रुवजी); (३) जीज्ञासु (जेम उद्धव अने अर्जुन) अने (४) ज्ञानी (जेम प्रह्लाद, शुक, नारद वगेरे), आ बधामां ज्ञानी ज श्रेष्ट छे. कारणके ज्ञानीने भगवान्‌ज वहालामां वहाला छे. तेथी भगवान् पण ज्ञानी उपर प्रीतिवाळा छे.

" चतुर्विधा भजंते मां जनाः सुकृतिनोऽर्जुन।
आर्तो जिज्ञासुरर्थार्थी ज्ञानी च भरतर्षभ॥
तेषां ज्ञानी नित्ययुक्त एकभक्तिर्विशिष्यते।
प्रियो हि ज्ञानिनोऽत्यर्थ महं स च मम प्रियः॥
उदाराः सर्व एवैते ज्ञानी त्वात्मैव मे मतम्।
आस्थितः स हि युक्तात्मा मामेवानुत्तमां गतिम्॥"

गीता ७,१६-१७-१८

'हे भरत कुळमां श्रेष्ट अर्जुन! जे सारां आचरणवाळा मनुष्यो मने भजे छे, तेना चार प्रकार छे; दुःखी, मोक्षनी इच्छावाळो, स्वार्थी अने ज्ञानी. तेओमां नित्ययुक्त एवो ज्ञानी जे मनेज भजे छे ते उत्तम छे; केमके बीजाओ करतां ज्ञानीने

" मयिचानन्ययोगेन भक्तिरव्यभिचारिणी।"

गीता १३-१०

हुं घणोज प्रिय लागुं छुं, अने ज्ञानी मने घणो प्रिय लागे छे. जोके ए चारे प्रकारना मनुष्यो उत्तम छे, तोपण ज्ञानी तो मारो आत्मा ज छे एम हुं मानुंछुं; केमके ते आत्मामां एकता पामेलो होइ, मनेज सर्वोत्तम गतिरुप मानीने, मारामांज रहेलो छे.

" बहूनां जन्मनामंते ज्ञानवान्मां प्रपद्यते।
वासुदेवः सर्वमिति स महात्मा सुदुर्लभः ॥"

गीता ७-१९

' ज्ञानी पुरुष " आ सर्व वासुदेव रुप छे " एम जाणीने घणा जन्मोने अंते मने पामे छे. पण एवो महात्मा बहुज दुर्लभ छे.'

प्रचलित सांख्य मत प्रमाणे प्रधान अथवा प्रकृति एक छे, पण पुरुष घणा छे; माटे दरेक पुरुष आखां जगत्मां व्यापी रहेलो छे[१].

---

[१] आ मतनी अयोग्यता सिद्ध करतां प्रोफेसर मेक्षमुलरे लख्युं छे के–

" If the Purush was meant as absolute, as eternal, immortal and unconditioned, it ought to have been clear to Kapila, that the plurality of such a Purush, would involve its being limited, determined or conditioned, and would render the character of it self-contradictory. * * * Many Purushas, from a metaphysi-

"जन्मादि व्यवस्थातः पुरुषबहुत्वम्"॥--सां. सूत्र १-१४९

पुरुष बहुत्वं व्यवस्थातः–सां. सूत्र ६-४५

'पुरुषो घणा छे, एवुं कबुल न राखीए तो जन्म वगेरेनी व्यवस्था थाय नहि.'

जन्ममरणकरणानां प्रतिनियमादयुगपत् प्रवृत्तेश्च ।

पुरुषबहुत्वं सिद्धं त्रैगुण्यविपर्ययाच्चैव–सां. कारिका १८

'बधा जीवनो एक साथे जन्म थतो नथी, एकसाथे मृत्यु थतुं नथी, अने एकसाथे इंद्रियोनी विकळता थती नथी ; बधानी एकज वखते प्रवृत्ति पण जोवामां आवती नथी ; कोइ पुरुषमां एक गुण बळवान् जोवामां आवे छे, बीजामां बीजो गुण बळवान् जोवामां आवेछे, तेथी पुरुषो घणा छे ए वात सिद्ध थाय छे.

गौडपादनो पण आवोज मत छे. छेवटे उपली कारिकाना भाष्यमां पुरुषना बहुपणाना मतनी सामे कांइ कह्युं नथी, पण अगीआरमी कारिकाना भाष्यमां पुरुष एक छे, एवुं लख्युं छे. "अनेकं व्यक्तं एकमव्यक्तं तथाच पुमानप्येकः"–

---

cal point of view, necessitate the admission of one Purusha. * * Because, if the Purushas were supposed to be many, they would not be Purushas, and being Purush they by necessity cease to be many.—Max Muller's "The Six Systems of Indian Philosophy," page 375.

व्यक्त (विकृति) बहु, पण अव्यक्त (प्रकृति) एक, अने पुरुष पण एक छे. प्राचीन काळमां आ मत चालतो होवानो ज संभव छे, कारणके सांख्यो जे श्रुतिने सांख्यशास्त्रना मूळ आधार तरीके कबुल राखेछे, तेमां पुरुषनुं एकपणुं स्पष्ट पणे जणाववामां आव्युं छे.

"अजामेकां लोहितशुक्लकृष्णां बह्वीः प्रजाः सृजमानां सरूपाः।
अजो ह्येको जुषमाणोऽनुशेते जहात्येनां भूक्तभोगामजोऽन्यः॥"

श्वेताश्वतरोपनिषद् ४-५

प्रकृति अजा (नित्या), एका (अद्वितीया), लोहित शुक्लकृष्णा (त्रिगुणमयी), घणा विकारोनी जननी छे. पुरुष अज (नित्य), एक (अद्वितीय) छे. पुरुष भोगने माटे प्रकृतिने आलिंगन करे छे; भोग पूर्ण थइ रह्या पछी तेने छोडीने स्वतंत्र थाय छे.

गीता पुरुषनां बहुपणांनो स्वीकार करती नथी. गीता कहेछे के जेम एक सूर्य आ आखा लोकने प्रकाशे छे, तेमज क्षेत्रज्ञ पण आखां क्षेत्रने हे भारत! प्रकाशे छे.

" यथा प्रकाशयत्येकः कृत्स्नं लोकमिमं रविः।
क्षेत्रं क्षेत्री तथा कृत्स्नं प्रकाशयति भारत॥ "

गीता १३-३३

क्षेत्री=क्षेत्रज्ञ=पुरुष.

गीताना मत प्रमाण भगवान् पोतेज, क्षेत्रज्ञरुपे बधां क्षेत्रोमां वीराजेला छे. ते एक नहोतां घणा शी रीते होइ शके ?

" क्षेत्रज्ञं चापि मां विद्धि सर्वक्षेत्रेषु भारत "

गीता १३-२

'हे भारत! सर्व क्षेत्रमां क्षेत्रज्ञ पण मने जाण.' एम भगवान् कहे छे. ते सर्वव्यापी, अपरिच्छिन्न अने अविभक्त छे. तेथी उपाधि भेदे तेने विभक्त कही शकाय एम समजाय छे.

" अविभक्तं च भूतेषु विभक्तमिव च स्थितम् "

गीता १३-१६

'अविभक्त छतां भूतमां विभक्त होय तेम रहेलुं छे.' शास्त्रमां बीजे पण कहेलुं छे के–

" एकं बहुधा निहितं गुहायाम् "

'ते एक होवा छतां पण गुफा-बुद्धि-अंतःकरणना भेदथी बहु थइ रहेल छे.' बीजे ठेकाणे आत्मानो परिचय आपतां गीता आ प्रमाणे कहेछे.–

" अविनाशी तु तद्विद्धि येन सर्वमिदं ततम् ।
विनाशमव्ययस्यास्य न कश्चित्कर्तुमर्हति ।। " गीता २-१७

" न जायते म्रियते वा कदाचिन्नायं भूत्वा भविता वा न भूयः।
अजो नित्यः शाश्वतोऽयं पुराणो न हन्यते हन्यमाने शरीरे।। "

गीता २-२०

" नित्यः सर्वगतः स्थाणुरचलोयं सनातनः " गीता २-२४
" अव्यक्तोऽयमचिन्त्योऽयमविकार्योऽयमुच्यते "
गीता २-२५

'जे आत्माथी आ सर्व विश्व व्याप्त थएलुं छे, ते आत्माने तुं अविनाशी जाण. ते अविनाशी आत्मानो नाश करवाने कोइ पण समर्थ नथी.'

'आ आत्मा कदिपण जन्मतो नथी के मरतो नथी. तेमज ते पूर्वे नहोतो एम पण नथी, अने फरीथी ते नहि होय एम पण नथी. केमके आ आत्मा अजन्मा, नित्य, शाश्वत, अने अनादि काळनो छे, अने शरीर हणावाथी ते हणातो नथी.'

'नित्य, सर्वव्यापी, स्थिर, अचळ अने सनातन छे.'

'अव्यक्त (देखाय नहि तेवो), मनथी कल्पी शकाय नहि तेवो अने अविकारी कहेवाय छे.'

सांख्यो पुरुषने छ विकार विनानो कहेछे. ते मत उपरनां गीता वाक्योमां स्वीकार्यो छे. ते मत उपरांत गीतामां जीवात्मा साथे परमात्मानो-सांख्योकत पुरुषनी साथे पुरुषोत्तमनो-अभेद पण बताव्यो छे.

गीतामां बीजे ठेकाणे आ विषयनो स्पष्ट उपदेश छे.

" अहमात्मा गुडाकेश सर्वभूताशय स्थितः"
गीता १०-२०

सर्वस्य चाहं हृदि सन्निविष्ठः---गीता १५-१५

"हे गुडाकेश! हुं सर्व प्राणीओना हृदयमां रहेलो आत्मा छुं.

'हुं सर्वना हृदयमां रहेलो छुं.'

सांख्यमत प्रमाणे प्रकृतिनो स्वभावज परिणाम पामवानो छे, एटले प्रकृतिना त्रण गुणनी साम्यावस्था (Equilibrium) एनी मेळेज तुटे छे, एम पाछळ कहेवाइ गयुं छे. आथी प्रकृतिमां विकार थवा माटे बीजां कारणनी जरुर पडती नथी.

पुरुषना भोग अने मोक्षने माटेज प्रकृतिमां विकार थाय छे, एम पण सांख्यो कहे छे, तेने तेओ प्रकृतिना विकारनो उद्देश, अभिप्राय अथवा फळ कहे छे. पण प्रकृतिना विकारना फलथी प्रयोजन सिद्ध थाय, तेने विकारना कारणमां गणी शकाय नहि.

प्रकृतिनो परिणाम पोतानी मेळेज थाय छे, ए मतने गीता अनुमोदन आपती नथी. गीता कहे छे के, प्रकृतिनो जे परिणाम थाय छे, ते पुरुषना अधिष्ठानथी थाय छे.

---

[१] सांख्यो कहे छे के, पुरुष षड्भाव विकार रहित छे. आ छ विकार कया कया? "जायते, अस्ति, वर्धते, विपरिणमते, अपक्षीयते, नश्यति"—जन्म, स्थीति, वृद्धि, परिणाम, क्षय अने विनाश. सांख्यमत प्रमाणे आ छमांनो कोइपण विकार पुरुषने स्पर्श करी शकतो नथी.

"मयाऽध्यक्षेण प्रकृतिः सूयते सचराचरम्।
हेतुनाऽनेन कौंतेय जगद्विपरिवर्तते"॥ गीता ९-१०.

'मारा उपरीपणा नीचे प्रकृति स्थावर अने जंगम जगत्ने उपजावे छे, अने आ कारणथीज हे कुंतीपुत्र! जगत्नी प्रवृत्ति थाय छे.'

"यावत्संजायते किंचित्सत्वं स्थावरजंगमम्।
क्षेत्रक्षेत्रज्ञसंयोगात्तद्विद्धि भरतर्षभ" ॥
गीता, १३-२६.

'जे कांइ स्थावर के जंगम प्राणी उत्पन्न थाय छे ते क्षेत्र अने क्षेत्रज्ञना संयोगथी थाय छे, एम हे भारतोमां उत्तम! तुं जाण.'

अहिंयां क्षेत्रनो अर्थ प्रकृति अने क्षेत्रज्ञनो अर्थ पुरुष छे. सांख्य शास्त्रमां पण आ वातनो इसारो मळी शके छे. सांख्यो पण कहे छे के प्रकृति अने पुरुषना संयोगनुं फळ सृष्टि छे. (तत्कृतः सर्गः) प्रचलित सांख्य शास्त्रमां ज्यारे ईश्वरनो अस्वीकार कर्यो छे, त्यारे जरुर सांख्यो आ स्थळे पुरुष एटले ईश्वर समजता नथी, जीव समजे छे. आथी सांख्य मत प्रमाणे मूळतत्त्व विकृत थइने एवो आकार धारण करे छे, के जीव

[1] 'स ऐक्षत,' 'स ईक्षांचक्रे.' वगेरे श्रुति वाक्यो आ मतनुं पोषण करे छे.

8

अने प्रकृतिना संयोगथी सृष्टि उत्पन्न थाय छे. जो एमज होय तो प्रकृतिना पोतानी मेळे परिणाम थवाना सिद्धांतनी शी गति थशे? वीजुं, सांख्यमत प्रमाणे ज्यारे पुरुषो घणा छे, अने दरेक पुरुप सर्व व्यापी छे, त्यारे ज्यांसुधी वधा पुरुषोनी मुक्ति न थाय त्यांसुधी प्रकृतिनो परिणाम थतो अटकी शके नहि, छतां सांख्यो कहे छे के, अमुक जीवने विवेकज्ञान थाय एटले प्रकृतिनो परिणाम अटकी जाय. (सांख्यकारिका ग्रंथमांनी ६९ मी कारिकामां "निवृत्तप्रसवा" अने ६८ मी कारिकामां "प्रधानविनिवृत्तौ" शब्दो जोवा). तो त्यारे पण प्रकृतिनी साथे कोइने कोइ पुरुपनो संयोग रहे. पण एम शी रीते थाय? सांख्यो वखते एम कहेशे के तत्त्वज्ञानीना संबंधमां जे प्रकृतिनो परिणाम अटके छे, ते समष्टि प्रकृति नथी, "व्यष्टि" प्रकृति छे. मतलब के प्रकृतिनो जे थोडो भाग ते तत्त्वज्ञानीनां लिंग शरीर रुपे वेंचाएलो हतो, तेनोज परिणाम अटक्यो. पण अखंड प्रकृतिनो आगळ पाछळ जे परिणाम चालु हतो, ते तो एमनो एमज रह्यो. ज्ञानीना मोक्षना संबंधमां जो प्रकृतिनो आवो संकुचित अर्थ करवामां आवे, तो जे ठेकाणे प्रकृति पुरुपना संयोगने सृष्टिनो हेतु कहेल छे, ते ठेकाणे पण एवो संकुचित अर्थ शा माटे न लेवामां आवे? पुरुष अथवा जीवनी साथे संयुक्त थइने जे प्रकृतिनो परिणाम

थाय, ते अखंड प्रकृति नहि पण तेनो थोडो भाग जीवना कारण शरीर रुपी मात्र व्यष्टि प्रकृतिज. आ संयोगपर लक्ष राखीने सांख्यो जीवने संन्निधि मात्रथी उपकारी लोहचुंबक जेवो गणे छे. मतलब के लोहचुंबक जेम लोढाना साक्षात् संबंधमां आव्या विना पण लोढाने गति आपे छे, तेम पुरुष निष्क्रिय होवा छतां पण संन्निधि मात्रथीज प्रकृतिने परिणामशील करे छे.[1] पण जे प्रकृति अने पुरुषना संयोगथी सृष्टिव्यापार सिद्ध थाय छे, ते प्रकृति अखंड प्रकृति अने ते पुरुष पुरुषोत्तम.[2] खरुं जोतां ईश्वरनुं अधिष्ठानज प्रकृतिना

[1]सांख्योनुं लोहचुंबकनुं द्रष्टांत बंध बेसतुं नथी. सांख्य मत प्रमाणे पुरुष संपूर्ण निष्क्रिय अने निर्व्यापार छे. लोहचुंबक शुं तेवुं छे? आपणे विद्यानी मददथी जाणीए छीए के लोहचुंबक ए क्रियाशील चौम्बकशक्तिनुं केंद्रस्थल छे. सांख्योक्त पुरुष जे चिन्मात्र (True monad) ते निष्क्रिय खरो, पण जे संन्निधिमात्रथी उपकारी-जेनां अधिष्ठान अने ईक्षण माटे प्रकृतिनो परिणाम थाय छे, ते पुरुष नहि, पण पुरुषोत्तम छे ते निष्क्रिय नथी.

[2]पुरुषनी संन्निधि सिवाय जो प्रकृतिनो परिणाम सिद्ध न थाय, तो प्रलयकाळे ज्यारे पुरुषनी साथे प्रकृतिनो कशो संयोगज रहेतो नथी, त्यारे सांख्योनुं प्रकृतिनुं समान स्वतः

सृष्टि रुपे परिणामनुं यथार्थ कारण छे. प्रलयमां ए अधिष्ठान रहेतुं नथी, तेथीज प्रकृतिनी साम्यावस्था रहे छे. प्रलयमां प्रकृतिनुं समान परिणाम थाय छे. ए तो मात्र सांख्योनी कल्पनाज छे. सृष्टि करती वखते भगवान् प्रकृतिने "ईक्षण" करे. गीतामां आ "ईक्षण"नेज भगवान् प्रकृतिमां गर्भाधान कहे छे.

"मम योनिर्महद्ब्रह्म तस्मिन् गर्भं दधाम्यहम् ।
संभवः सर्वभूतानां ततो भवति भारत ॥
सर्वयोनिषु कौंतेय मूर्तयः संभवंति याः ।
तासां ब्रह्म महद्योनिरहं बीजप्रदः पिता" ॥

गीता १४, ३-४.

'मारी योनि ते महान ब्रह्म छे, तेमां हुं गर्भ मुकुं छुं. तेमांथी हे भारत ! सर्व प्राणीओनो जन्म थाय छे. सर्व योनिमां हे कौंतेय ! जे जे मूर्तिओ थायछे. तेमनी महत् योनि ब्रह्म छे अने हुं बीज आपनार पिता छुं.

सिद्ध परिणाम शी रीते सिद्ध थाय ? कांतो उपर कहेलुं परिणाम मात्र काल्पनिक अथवा तो प्रकृति पुरुषनो संयोग ए परिणामनुं खरुं कारण नहि.

महद्‌ब्रह्म=अचेतना प्रकृति. गर्भ=चेतना प्रकृति, पुरुष.'
भगवान् मनु पण कहे छे के–

" अप एव ससर्जादौ तासु वीजम् अवासृजत् ॥ "

मनुसंहिता.

भगवाने सृष्टि करवानी इच्छा करीने पहेलां आप (प्रकृति) रची अने तेमां वीज नांख्युं.'

उपनिषद्‌मां पण कहेलुं छे के, जगत् रचीने भगवाने तेमां प्रवेश कर्यो-तेमां पेठा.

" तत्सृष्ट्वा तदेवानुप्राविशत्"-तैत्तिरेय उपनिषद् २-६-१

'मदीया माया त्रिगुणात्मिका प्रकृतिः–शंकर. प्रकृतिरित्यर्थः–श्रीधर. क्षेत्र-क्षेत्रज्ञ-प्रकृतिद्वयशक्तिमान् ईश्वरोऽहम् * * क्षेत्रज्ञंक्षेत्रेण संयोजयामि–शंकर. जगद्‌विस्तारहेतुं चिदाभासं क्षेत्रज्ञं सृष्टि समये भोग योग्येन क्षेत्रेण संयोजयामि–श्रीधर.

क्षेत्रज्ञं सृष्टि समये भोग्येन क्षेत्रेण कार्य-कारण-संघातेन संयोजयितुम् चिदाभासाख्यरेतः–सेकपूर्वकं मायावृत्तिरूपं गर्भम् अहं आदधामि–मधुसूदन.

" इतस्त्वन्यां प्रकृतिं विद्धि मे परां जीवभूताम् " इति चेतन पुंजरूपा या प्रकृतिः निर्दिष्टा सेह सकल प्राणीवीजतया गर्भ शब्देन उच्यते. तस्मिन्नचेतने योनिभूते महति ब्रह्मणि चेतन पुंजरूपंगर्भंदधामि.–श्रीरामानुज.

" अनेन जीवेन आत्मनानुप्रविश्य नामरूपे व्याकरवाणि"

छांदोग्यउपनिषद् ६-३-२.

'तेने सृजीने तेमां प्रवेश कर्यो.' भगवाने जीवरुपे जगतमां प्रवेश करीने नाम अने रुपनो विकार सिद्ध कर्यो.'

माटे ज गीतामां भगवाने कहेलुं छे के, अव्यक्त सूक्ष्ममूर्तिथी हुं आखां जगत्मां व्यापी रहेलो छुं.

प्रकृतिनो परिणाम पुरुषना अधिष्ठानथी ज छे, ए भागवतमां पण स्पष्ट रीते कहेवामां आव्युं छे.

" कालवृत्त्या तु मायायां गुणमय्यामधोक्षजः ।
पुरुषेणात्मभूतेन वीर्यमाधत्तवीर्यवान् ॥"
ततोऽभवत्महत्तत्त्वं " भागवत ३,५,२६,२७

'वखत आवतां-योग्य समय थतां-अतिन्द्रिय शक्तिवान परमात्माए गुणमयी मायामां आत्मभूत पुरुष रुपे वीर्याधान कर्युं. तेमांथी ज महत्तत्त्व उत्पन्न थयुं.'

कालात्गुणव्यतिकरः परिणामः स्वभावतः ।
कर्मणो जन्म महतः पुरुषाधिष्ठितादभूत् ॥

भागवत, २-५-२२.

मतलब के, सृष्टिना संबंधमां त्रण कारण छे; काल, कर्म अने प्रकृति. प्रलयनो नक्की थएलो वखत पूरो थतां, पूर्व कल्पनां नहि भोगवाएलां कर्मना भोग माटे प्रकृतिनो परिणाम

थाय छे.

मतलब के, सृष्टिनुं उपादान कारण प्रकृति छे, अने निमित्त कारणोमांनुं एक जीवनुं अदृष्ट छे. जीवनां पूर्व कल्पनां नहि भोगवाएलां कर्म ए सृष्टिनुं निमित्त कारण छे, ए वातनो इसारो सरखो पण तत्वसमास अथवा सांख्यकारिकामां मळतो नथी. पण पौराणिक मतने याद राखीने आधुनिक काळमां रचाएला सांख्यप्रवचनसूत्र नामना ग्रंथमां ठेकाणे ठेकाणे ए मतनो समावेश करवामां आव्यो छे.

"न कर्मण उपादान व्यायोगात्"-सां. सूत्र १, ८१.

"कर्मणोऽपि न वस्तुसिद्धिर्निमित्तकारणस्य कर्मणो न मूल कारणत्वं गुणानां द्रव्योपादनव्यायोगात्" (उपरनां सूत्रनुं विज्ञानभिक्षुकृतभाष्य)

"व्यक्तिभेदः कर्मविशेषात्"—सां. सूत्र ३-१०.

"अत्र विशेषवचनात् समष्टिसृष्टिर्जीवानां साधारणैः कर्मभिर्भवतीत्यायातम्"—(उपरनां सूत्रनुं विज्ञान भिक्षु कृत भाष्य).

"कर्माकृष्टेर्वानादितः"=सां. सूत्र ३-६२.

"यतः कर्मानादि अतः कर्माभिराकर्षणादपि प्रधानस्यावश्यकी व्यवस्थिता च प्रवृत्तिः" (विज्ञान भिक्षु)

कर्म अनादि छे, तेथी प्रकृतिनी प्रवृत्ति कर्मना आकर्षणथी

पण सिद्ध थइ शके.

"कर्मनिमित्तःप्रकृतेः स्वस्वामिभावोऽप्यनादि बीजांकुरवत् ॥"

सां. सूत्र ६-६७

अहिं कर्मने सृष्टिनुं निमित्त कारण कह्युं. पण बीजे ठेकाणे प्रकृतिने परिणाम पामवामाटे बीजां कारणनी जरुर नथी, एवो उपदेश करवामां आव्यो छे.

" कर्मवत् दृष्टेर्वा कालादेः " सां. सूत्र ३-६०

"कालादेः कर्मवद्वा स्वतः प्रधानस्य चेष्टितं सिद्ध्यति॥"

(विज्ञानभिक्षु).

मतलबके प्रधाननुं कार्य पोतानी मेळेज सिद्ध थाय छे. जेम ऋतुना फेरफार रुप काळ वगेरेनुं कर्म छे तेम.

" अदृष्टोद्भूतिवत् समानत्वम् " सां. सूत्र ६-६९.

" यथा सर्गादिषु प्रकृतिक्षोभककर्माभिव्यक्तिः काल विशेषमात्राद्भवति तदुद्बोधक कर्मान्तरस्य कल्पनेऽनवस्थाप्रसंगात् तथैवाहंकारः कालमात्रनिमित्तादेव जायते न तु तस्यापि कर्मान्तरमस्तीति समानत्वमावयोरित्यर्थः "

(उपरनां सूत्रनुं विज्ञानभिक्षुकृत भाष्य).

" येषां सांख्यैकदेशिनां प्रकृतेः पुरुषस्य च स्व-स्वामीभावो भोग्य-भोक्तृभावः कर्मनिमित्तकस्तन्मतेऽपि स प्रवाहरूपेनानादिरेव."(सां. सूत्र१३-६७सूत्रनुं विज्ञानभिक्षुकृत भाष्य)

मतलबके, सृष्टिना प्रारंभमां प्रकृतिनो जे क्षोभ अथवा प-रिणाम प्रगट थाय छे, ते काळने लीधेज सिद्ध थाय छे ; तेने माटे बीजां कर्मनी अपेक्षा रहेती नथी.

बीजे ठेकाणे सूत्रकारे स्पष्ट कह्युं छे के–

" प्रधानसृष्टिःपरार्थं स्वतः " सां. सूत्र ३-५८.

' प्रधाननो परिणाम पोतानी मेळेज थाय छे. तेनुं प्रयोजन बीजाना (पुरुषना) अर्थनी सिद्धि (भोग अने मोक्ष साधन) छे."

---

[1]सांख्य मतमां प्रकृतिनो परिणाम बीजा कारणनी अपेक्षा नथी राखतो अने पोतानी मेळेज सिद्ध छे. ते शंकराचार्यनाज मतानुयायी छे. वेदांतभाष्यमां शंकराचार्ये सांख्यमतनुं आ प्रमाणे विवरण कर्युं छे.–" यथा तृणपल्लवोदकादि निमित्तां-तरनिरपेक्षं स्वभावादेव क्षीराद्याकारेण परिणमते, एवं प्रधान-मपि महदाद्याकारेण परिणंस्यत इति * * यथा क्षी-रमचेतनं स्वभावेनैव वत्सविवृद्ध्यर्थं प्रवर्तते, यथा च जलम-चेतनं स्वभावेनैव लोकोपकाराय स्यन्दते, एवं प्रधानम् अचे-तनं स्वभावेनैव पुरुषार्थसिद्धये प्रवर्तिष्यत इति * * सां-ख्यानां त्रयोगुणाः साम्येनावतिष्ठमानाः प्रधानं, नतु तद्व्यति-रेकेण प्रधानस्य प्रवर्तकं निवर्तकं वा किंचित् बाह्यम् अपेक्ष्यम् अवस्थित मस्ति. " ब्रह्मसूत्रनुं शंकरभाष्य २, २, ३-९

वळी बीजे ठेकाणे अविवेक अथवा तृष्णानेज सृष्टिनुं निमित्त कारण कह्युं छे.

" सृष्टेर्मुख्यं निमित्त कारण माह । "

" रागविरागयोर्योगः सृष्टिः " सां. सूत्र २-९.

" रागे सृष्टिः वैराग्ये च योगः स्वरूपेऽवस्थानम् "

(उपलां सूत्रनुं विज्ञानभिक्षु कृत भाष्य).

मतलबके 'सृष्टिनुं मुख्य निमित्त कारण-राग अथवा तृष्णा छे.'

" अविवेक निमित्तो वा पंचशिखः " सां. सूत्र ६-६८.

" अविवेक निमित्तो वा स्वस्वामिभाव इति पंचशिख आह। तन्मतेऽप्यनादिरित्यर्थः। एतदेव स्वमतं प्रागुक्तत्वात्।"

(उपलां सूत्रनुं विज्ञानभिक्षु कृत भाष्य).

मतलबके, पुरुष अविवेकने वश थइने पोताने प्रकृतिनी साथे अभेद रुप जाणे छे. आ प्रमाणे सांख्यप्रवचन सूत्रमां जूदेजूदे ठेकाणे विरोधी मतोनो समावेश होवाथी ठेकठेकाणे विरोध थइ आव्यो छे. ए गमे तेम हो, पण प्रकृतिनो परिणाम पुरुषनां अधिष्ठान सिवाय सिद्ध थतो नथी, ए विषयमां शक लाववानुं कशुं कारण नथी.

" जातक्षोभाद् भगवतो महान् आसीत् गुणत्रयात् "

भागवत् ३-२० १२.

'ભગવાન્‌થી પ્રકૃતિનો ક્ષોભ ઉત્પન્ન થવાથી મહાન્‌નો પ્રાદુર્ભાવ થાય છે.'

પ્રાચીન સાંખ્ય મત આવોજ-આજ-હતો, એમ સંભવે છે[*]. કોઇકોઇ સાંખ્યગ્રંથમાં આ શ્રુતિ લીધેલી જોવામાં આવે છે. 'अग्रेतमआसन्, तद्वै परेनेरितं विषमत्वं प्रायात् तद्वै रजोरूपं। तत्परेनेरितं विषमत्वं प्रायात्। तद्वै सत्त्वरूपम्' સિદ્ધાંત શિરોમણી ગ્રંથમાં આ મતનું અનુસરણ કરેલું છે.

"सांख्यादि योगशास्त्रेषु श्रुतिपुराणेषु चादिसर्गे यथोदितं तदत्रोच्यते। तत्र प्रकृतिर्नामाव्यक्तमव्याकृतम् गुणसाम्यं कारणं इत्यादयः प्रकृतेः पर्यायाः। तस्या प्रकृतेरन्तर्भगवान् सर्व व्यापकः पुरुषोऽस्ति"—

સિદ્ધાંતશિરોમણિ; ગોલાધ્યાય ; ભુવનકોશ.

મતલબકે 'સાંખ્ય વગેરે યોગ શાસ્ત્રોમાં અને શ્રુતિ પુરાણો

---

[*] પ્રોફેસર મેક્ષમુલરે પોતાના હિંદુદર્શન ગ્રંથમાં તત્ત્વ સમાસનો જે સાર સંગ્રહ કર્યો છે, તેમાં આ વાતને પુષ્ટિ આપી છે.

"From the avyakta undeveloped Prakriti, when superintended by the high and omnipresent Purusa (spirit), Buddhi arises; and this of eight 8 kinds."

Max Muller's Indian Philosophy, page 345-346, આ high and omnipresent પુરુષ, સર્વવ્યાપી પુરુષોત્તમ ભગવાન સિવાય બીજા કોણ હોઇ શકે?

वगेरेमां आदि सृष्टिनो प्रकार जे रीते कहेवामां आव्यो छे, ते अहिं कहीअे छीअे. प्रकृतिज मूळ कारण छे; अव्यक्त, अव्याकृत, गुणसाम्य वगेरे प्रकृतिनां बीजां नामो छे. ते प्रकृतिनी अंदर भगवान् सर्वव्यापी पुरुष अधिष्ठान करेछे. तेनां फलथीज सृष्टि थाय छे.'

गौडपादाचार्यें लख्युं छे के—"यथा स्त्रीपुरुषसंयोगात् सुतोत्पत्तिस्तथा प्रधानपुरुषसंयोगात् सर्गस्य उत्पत्तिः"। (२१ मी कारिकानुं भाष्य).

जो तेमज होय, तो पछी पुरुष निष्क्रिय छे, संन्निधिमात्रथी उपकार करनारो छे,—आ बधा मतोने अवकाश क्यां रह्यो ?

प्रकृतिनो परिणाम स्वभाव सिद्ध नथी, ते युक्तिवडे पण साबीत थइ शके छे. प्रकृति ए जगत्नुं निर्विशेष उपादान (Homogeneous root matter) छे. जे निर्विशेष (Homogenous) तेनी जे साम्यावस्था, ते साम्यावस्था नाशवंत (Unstable equilibrium). नाशवंत साम्यावस्था कहेवाथी एमज समजाय के, ते अवस्थामां शक्तिओनुं सामंजस्य रहे. पण जो बहारनी कोई शक्ति (पछी ते शक्ति गमे तेवी सामान्य होय तेनीअडचण नहि) तेमां आवी मळे, त्यारेज ए साम्यावस्था तुटे, अने ते निर्विशेष उपादान परिणामोन्मुख थईने विकारग्रस्त थाय. पछी तेनां फळरुपे धीमेधीमे अविशेषमांथी

विशेषनो आरंभ थाय (अविशेषात् विशेषारंभः); अने ते विशेषभावनी उत्तरोत्तर वृद्धि थती जाय, अने विशेष पछी पछीनां सविशेषमां परिणाम पामे.'[1]

आ अतिरिक्त शक्ति (further force), के जे आव्या सिवाय निर्विशेष सविशेपमां परिणाम पामी शके नहि, ते शक्ति क्यांथी आवे छे? गीता कहे छे के, ईश्वरमांथी.

" यतः प्रवृत्तिः प्रसृता पुराणी "

' भगवानमांथीज पुराणी प्रवृत्ति उत्पन्न थाय छे.'[2]

---

[1]आ संबंधमां Herbert spencer हरबर्ट स्पेन्सरे जे कह्युं छे, ते आपणे विचारवा योग्य छे.

The condition of homogeneity is a condition of unstable equilibrium. The phrase unstable equilibrium is one used in mechanics to express a balance of forces of such kind that the interference of any further force, however minute, will destroy the arrangement previously subsisting and bring about a totally different arrangement.

It is clear that not only the homogeneous must lapse into the non-homogenous but that the more homogenous must tend over to become less homogeneous.

—Herbert Spencer's First Principle : The instability of the Homogeneous, p. 358.

[2]आ संबंधमां श्रीमती आनीबीसेंटे पोताना 'Esoteric Christianity' नामे ग्रंथमां आ प्रमाणे लख्युं छे (२३१ पृष्ट).

'सांख्यो ईश्वरनो स्वीकार करता नथी. सांख्यशास्त्र निरीश्वर शास्त्र छे. तत्त्व समास अथवा कारिकामां ईश्वरनो कशो प्रसंगज नथी. सांख्यप्रवचनसूत्रमां ईश्वरनो स्वीकार कर्यो नथी ; पण ईश्वरनो निषेध करवामां आव्यो छे तेथी पातंजल दर्शन (जे दर्शनमां ईश्वरनो स्वीकार करवामां आव्यो छे)थी कापिल दर्शनने जुदुं गणी तेने निरीश्वर सांख्य अने योगदर्शनने सेश्वर सांख्य कहे छे. विज्ञानभिक्षु कहेछे के, सूत्रकारे "अभ्युपगमवाद" नुं अवलंबन करीने ईश्वरनो निषेध कर्यो छे. मतलबके, जो तकरारनी खातर कबुल करीए के ईश्वर सिद्ध थतो नथी, तो तेथी पण मुक्तिने कशी पण अडचण थइ शकती नथी. वाचस्पति मिश्र आ वातनो स्वीकार करता नथी तेमना मत प्रमाणे सांख्य निरीश्वरवादी छे. माधवाचार्ये पण "सर्वदर्शन संग्रह"मां वाचस्पतिमिश्रना मतने अनुमोदन आप्युं छे. सांख्यसूत्र तरफ नजर करवाथी आ संबंधमां जरा पण शक रहेतो नथी.'

When the three qualities are in equilibrium there is the one, the virgin matter, unproductive; when the power of the Highest overshadows Her and the breath of the spirit comes upon her, the qualities are thrown out of equilibrium and she becomes the Divine Mother of the worlds.

'प्रसिद्ध टीकाकार श्रीधरस्वामी अने मधुसूदन सरस्वतीनो

"ईश्वरासिद्धेः" सां. सूत्र १-९२.

"मुक्तबद्धयोरन्यतरभावात् न तत्सिद्धिः" सां. सूत्र १-९३

"प्रमाणाभावान्नतत्सिद्धिः" सां. सूत्र ५-१०.

"अहंकार कर्त्रधीना कार्यसिद्धिः" सां. सूत्र ५-११.

"नेश्वराधीना प्रमाणाभावात्" सां. सूत्र ६-६४.

पण आवोज अभिप्राय छे. गीताना १४मा अध्यायना १ला श्लोकनी टीकामां तेमणे लख्युं छे के–

'स च क्षेत्रक्षेत्रज्ञयोः संयोगो निरीश्वरसांख्यानामिव न स्वातंत्र्येणकिंतुईश्वरेच्छयैव' श्रीधर. 'तत्र निरीश्वरसांख्यमतनिराकरणेन क्षेत्रक्षेत्रज्ञसंयोगस्य ईश्वराधीनत्वं वक्तव्यम्' मधुसूदन. मतलबके, निरीश्वर सांख्यो प्रकृति पुरुषना संयोगने जे स्वतंत्र मानेछे, ते संगत-योग्य-नथी,-ते संयोग ईश्वरने आधीनछे.

पण मेक्षमुलरे विज्ञानभिक्षुना मतनुं अनुसरण कर्युं छे.

It is true that the Shankhya Philosophy was accused of atheism, but that atheism was very different from what we mean by it. It was the negation of the necessity of admitting an active or limited personal god. —Indian Philosophy, page 865.

Nor does he enter on any argumeuts to disprove the existence of one only god. He simply says—and in that respect he does not differ much from Kant—that there are no logical proofs to establish that existence but neither does he offer any such proofs for denying it.—Max Muller, Indian Philosophy, page 397.

मतलबके, ईश्वर सिद्ध करवा माटे कोइ प्रमाण नथी. ईश्वर जगत्‌ने रचनार होइ शके नहि. कारणके, तेनी कोइ प्रकारनी क्रिया अथवा व्यापार नथी. वळी सृष्टि रचवा माटे तेनी प्रवृत्तिज शी रीते थाय ! जो तेने बद्ध कहो, तोज तेनी प्रवृत्ति संभवे ; पण जो बद्ध होयतो ते सर्वज्ञ होइ शके नहि. आथी सृष्टि रचवामां ते अशक्त थइ पडे. वळी जो तेने मुक्त कहो, तो तो ते परिपूर्ण, आत्मकाम होय. तेने कांइपण प्रयोजनकशांनी पण अपेक्षा-होइ शकेज नहि. ते सृष्टि कार्यमां शी रीते प्रवृत्त थाय ? जो कहो के बीजानां दुःख दूर करवा माटेज तेनी प्रवृत्ति थाय छे, तो तेपण संगत-योग्य-नथी. जो ते करुणामय होय, तो तेणे दुःखनी रचना शा माटे करी ? जीवे करेलां कर्मोनी विचित्रता प्रमाणे विचित्र प्राणीओनी रचना करी छे, एम कहोतो तेपण संगत-योग्य-नथी. कारणके कर्म तो अचेतन छे ; चेतननां अधिष्ठान सिवाय कर्म शी रीते फल उत्पन्न करी शके ! इत्यादि'.

'सांख्यो नित्य ईश्वरनुं खंडन करीने जन्य ईश्वर (थएला-उत्पन्न थएला ईश्वर)नो स्वीकार करे छे. "(नित्येश्वरस्यैव विवादास्पदत्वात्"--३-५७ सूत्रना भाष्यमां विज्ञानभिक्षु) तेओ कहे छे के, जे जीवो पूर्व कल्पमां प्रकृतिमां लय पाम्या होय, तेओज पछीना कल्पमां सर्वज्ञ, सर्वकर्त्ता वगेरे पुरुष रुपे

आवी वधी असार अने दुर्बळ युक्तिओथी सांख्योए इश्वर

उत्पन्न थाय. आवा जन्य ईश्वर प्रमाण सिद्ध छे.

“ ईदृशेश्वरसिद्धिः सिद्धा । स हि सर्ववित् सर्वकर्त्ता ”

सां. सूत्र ३-५६, ५७

तेओ कहे छे के, वेदमां ईश्वरनुं प्रतिपादन करनारी जे श्रुतिओ जोवामां आवे छे, तेमां आवा मुक्त पुरुषोनीज (जन्य ईश्वरनीज) प्रशंसा अथवा उपासना करवानो उपदेश आप्यो छे.

“ मुक्तात्मनः प्रशंसा उपासना सिद्धस्य वा ”

सां. सूत्र १-९५

विज्ञानाभिक्षु वळी कोइ कोइ सूत्रमां ब्रह्मा, विष्णु वगेरे पौराणिक त्रिमूर्तिनो साक्षात्कार पाम्या छे. अहंकार कर्त्रधीना कार्यसिद्धिः नेश्वराधीनाप्रमाणाभावात् ” (६-६४) आ सूत्रनां भाष्यमां तेणे लख्युं छे के-‘ अनेन सूत्रेण अहंकारोपाधिकं ब्रह्मरुद्रयोः सृष्टिसंहारकर्तृत्वं श्रुतिस्मृतिसिद्धमपि प्रतिपादितम् ’ वळी तेणे ‘ महतोऽन्यत् ’ ए सूत्रना (६-६६) भाष्यमां लख्युं छे के-‘ अनेन च सूत्रेण महत्तत्त्वोपाधिकं विष्णोःपालकत्वमुपपादितम् ’ तेथी तेमना मत प्रमाणे प्रवचन सूत्रमां ब्रह्मा, विष्णु अने रुद्र ए त्रण मूर्तिनोज उपदेश रहेलो छे. पण सूत्र तेनी व्याख्याना प्रकाशमां प्रकाशित न थवाथी

नुं खंडन कर्युं छे. आ बधी युक्तिओ खरी ज छे, एम सांख्यो तो चोक्कस पणे माने छे. पण बीजा लोको ते युक्तिओनु सारवानपणुं तेटले अंशे कबुल करता नथी.

पाछळ कहेवाई गयुं छे के, गीता ईश्वरवादथी प्रकाशी रही छे, झगझगी रही छे. ईश्वरनो निषेध करीने गीता एक पगलुं पण आगळ जइ शकती नथी. सां. शास्त्रमां कैवल्य मेळववाना जे जे उपायोनो उपदेश कर्यो छे, तेनी साथे ईश्वरने कांई पण संबंध नथी. लेशमात्र पण संबंध नथी. ईश्वर तो छेज नहि, पण जो होय तोए सांख्य दर्शने बतावेली रीतनुं अनुसरण करवा माटे तेनी साथे जीवनो कोई पण प्रकारनो संबंध स्थापन करवानी कशी जरुरज नथी.[१] कारण के, सांख्य दर्शन-

---

आपणे ए बधा उपदेशनो साक्षात्कार पामीये छीये के नहि, ते संबंधमां शकनुं मजबुत कारण छे.

[१]आ संबंधमां मेक्षमुलरे आ प्रमाणे लख्युं छे,——

There is a place in his system for any number of subordinate Devas, but there is none for God, whether as the creator or as the ruler of all things. There is no direct denial of such a being, no out spoken atheism in that sense, but there is simply no place left for him in the system of the world, as elaborated by the old Philosopher—Indian Philosophy; Atheism of Kapila, page 397.

मां कहेलां पचीश तत्त्वो (जेमां ईश्वरनो समावेश थतो नथी) नुं प्रकृष्टज्ञान मळवाथीज जीव अत्यंत दुःखथी छुटीने कैवल्य पामे. आज सांख्ये बतावेलो मुक्तिनो मार्ग. कहेवानी जरुर नथी के, गीताए अनुमोदेलो मार्ग आथी तद्दन जूदो छे. गीताने मार्गे जवामां ईश्वरज लक्ष्यस्थान जोईए अने ईश्वरनुंज स्मरण करवुं जोईए.

सांख्य मत प्रमाणे प्रकृति अने पुरुष ए जगत्नुं छेल्लुं द्वैत (Ultimate duality) छे. प्रकृति जड छे. जगत्नुं अमूल मूल छे,[1] अने पुरुष जडथी विपरीत-चेतन-छे. आ प्रकृति-पुरुषनां महाद्वैतमां सांख्य शास्त्रनो अंत-छेडो-आवे छे. आ बंन्नेनो समन्वय एकीकरण (synthesis) छेवटनी एकतामां करी शकाय, एनो आभास सांख्य दर्शनने नथी. पण गीताए आ छेल्ली एकतानो सुस्पष्ट उपदेश कर्यो छे. गीताना मत प्रमाणे प्रकृति अने पुरुष एतो मात्र भगवान्‌ना बे विभाव-रुप-(aspect) छे. गीता कहे छे के, भगवान्‌नी बे प्रकृति छे; अपरा अने परा. अपरा प्रकृति=सांख्यमां कहेलुं प्रधान; परा प्रकृति=सांख्यमां कहेलो पुरुष. गीताना मत प्रमाणे आ छेवटनां तत्त्व नथी;

[1] मूले मूलाभावात् अमूलं मूलं । सांख्य सूत्र, १।६७.
अमूल मूल—Root less root. "समान प्रकृतेर्द्वयोः" ।
१-६९ सूत्र.

पण एतो मात्र भगवान्ना विलास छे.

“ भूमिरापोऽनलोवायुः खं मनो बुद्धिरेव च ।
अहंकार इतीयं मे भिन्ना प्रकृतिरष्टधा ॥
अपरेयमितस्त्वन्यां पृकृतिं विद्धि मे पराम् ।
जीवभूतां महाबाहो ययेदं धार्यते जगत् ॥
एतद्योनीनि भूतानि सर्वाणीत्युपधारय ।
अहंकृत्स्नस्यजगतः प्रभवः प्रलयस्तथा ॥
मत्तः परतरंनान्यत् किंचिदस्ति धनंजय ।
मयि सर्वमिदं प्रोतं सूत्रे मणिगणा इव ” ॥

गीता. ७ मो ४ थी ७.

भगवान् कहे छे, ‘मारी बे प्रकृति, अपरा अने परा. अपरा प्रकृति भूमि, जळ, अग्नि, वायु, आकाश, मन, अने बुद्धि तथा अहंकार ए आठ प्रकारे वहेंचाएली छे. अने परा प्रकृति जीव रुपे छे. तेनाथी आ जगत् टकी रहे छे. जगत्मां जे कांइ पदार्थ छे, ते तमाम आ बंन्ने प्रकृतिमांथी उत्पन्न थएला छे. आखा जगत्नी उत्पत्ति तथा लयनुं स्थान हुं छुं. हुंज छेवटनुं तत्त्व छुं, माराथी श्रेष्ट बीजुं कांइ नथी; दोरामां मोतीनी पेठे मारामां आ बधुं जगत् परोवाएलुं छे.’

मतलब के, गीताना मत प्रमाणे भगवान्ज छेल्लुं तत्त्व छे, प्रकृति-पुरुप ए छेल्लां तत्त्व नथी. तेओ स्वाधीन नथी. ईश्वरने

आधीन छे[१]. ईश्वरनी अपरा प्रकृति ए जड वर्गनुं उपादान छे अने जीवरुपी पुरुष ए तेनी परा प्रकृति छे. आधुनिक सांख्यो पुरुष एटले केवळ चिन्मात्र (Monad) समजे छे. गीताए जेने परा प्रकृति अथवा क्षेत्रज्ञ कहेल छे, जेणे जगत् धारण कर्युं छे, तेनो अंश मात्र जीव (Monad) छे. भगवान् क्षेत्रज्ञरुपे आखा जगत्मां परोवाएला रहेला छे. हर्बर्ट स्पेन्सरे विश्वव्यापी शक्ति (Power) नो जे परिचय आप्यो छे, ते परथी एम लागे छे के, गीतानी परा प्रकृतिनो केटलोएक आभास तेने हतो[२]. बीजे ठेकाणे गीता आ अपरा प्रकृति अने परा प्रकृतिने क्षरपुरुष अने अक्षर पुरुष कहे छे. क्षरपुरुष=प्रधान अने अक्षर पुरुष=क्षेत्रज्ञ[३], अने भगवान्नो क्षरथी अ-

---

[१] "अथवा ईश्वरपरतंत्रयोः क्षेत्रक्षेत्रज्ञयोर्जगत्कारणत्वं न तु सांख्यानामिव स्वतंत्रयोः"–गीतानुं शांकरभाष्य.

[२] The Power which manifests itself in consciousness is but a differently conditioned form of the power which manifests itself beyond consciousness.—Herbert Spencer's Ecclesiastical Institutions, page 838.

The power which manifests throughout the universe distinguished as material is the same power which in ourselves wells up under the form of consciousness.—Ibid, page 839.

[३] "क्षरं जडवर्गं अतिक्रांतोऽहं नित्य मुक्तत्वात्। अक्षराच्चे-

तीत अने अक्षरथी उत्तम परमात्मा पुरुषोत्तमरुपे निर्देश कर्यो छे.

तनवर्गादप्युत्तमश्च नियन्तृत्वात् । ” १५ । १८ श्लोकनी श्रीधर स्वामीनी टीका.

‘ आत्मत्वेन क्षराद् अचेतनाद् विलक्षणः परमत्वेन अक्षराच् चेतनात् भोक्तुर्विलक्षण इत्यर्थः’ । १५ । १७ श्लोकनी टीकामां श्रीधर. ‘तत्र क्षरः पुरुषो नाम सर्वाणि भूतानि ब्रह्मादि स्थावरांतानि शरीराणि * कूटस्थश्चेतनो भोक्ता । स तु अक्षरः पुरुष इत्युच्यते विवेकिभिः’ १५ । १६ श्लोकनी श्रीधर कृत टीका. पण श्री शंकराचार्य अने मधुसूदन सरस्वतीए क्षर पुरुष अने अक्षर पुरुषनो जूदो अर्थ कर्यो छे. तेमना मत प्रमाणे अक्षर पुरुष=भगवान्‌नी माया शक्ति अने क्षर पुरुष=तेनो विकार अथवा विवर्त-समस्त कार्य राशि. मधुसूदन पण आमज कहे छे. ‘केचित्तु क्षरशब्देन अचेतनवर्गमुक्त्वा कूटस्थोऽक्षर उच्यत इत्यनेन जीवमाहुः । तन्न सम्यक्’ । मतलब के ‘केटलाएक क्षर शब्दथी जड वर्ग समज्या छे, अने कूटस्थ अक्षर शब्दथी जीव समज्या छे. पण ते बराबर नथी.’ आ पण कहेवुं जोइए के, शंकराचार्ये ‘क्षरं प्रधानम् अमृताक्षरं हरः’ आ श्रुतिनां भाष्यमां क्षराक्षरनो अर्थ प्रधान अने पुरुष समजाव्यो छे. माटे, श्रीधर स्वामीनो मत अग्राह्य करवानो नथी.

" द्वाविमौ पुरुषौ लोके क्षरश्चाक्षर एव च ।
क्षरः सर्वाणि भूतानि कूटस्थोऽक्षर उच्यते ॥
उत्तमः पुरुषस्त्वन्यः परमात्मेत्युदाहृतः ।
यो लोकत्रयमाविश्य बिभर्त्यव्यय ईश्वरः ॥
यस्मात्क्षरमतीतोऽह मक्षरादपि चोत्तमः ।
अतोऽस्मि लोके वेदे च प्रथितः पुरुषोत्तमः"॥

ગીતા, १५ । १६ થી १८.

'આ લોકમાં બે પુરુષ છે, વિનાશી અને અવિનાશી. વિનાશી તે સર્વ પ્રાણીઓ અને અવિનાશી તે અવિકારી. ઉત્તમ પુરુષ તો ખરેખર બીજોજ છે, જેને પરમાત્મા એવું નામ આપ્યું છે. તે અવિનાશી ઈશ્વર ત્રણે લોકમાં વ્યાપી રહીને સર્વનું પોષણ કરે છે. હું વિનાશીથી ઉત્તમ છું અને અવિનાશીથી પણ ઉત્તમ છું; માટેજ મને જગત્માંને વેદમાં પુરુષોત્તમ કહેલો છે.' આથી ગીતાના મત પ્રમાણે પ્રકૃતિ અને પુરુષ છેવટનાં તત્ત્વ નથી.

બીજાં શાસ્ત્રોમાં પણ આ મતને ટેકો આપ્યો છે. શ્વેતાશ્વતર ઉપનિષદ્માં ભગવાન્ને " પ્રધાન-ક્ષેત્રજ્ઞપતિ " વગેરે વિશેષણ લગાડ્યાં છે. ભાગવત તેને " પ્રધાન પુરુષેશ્વરઃ " કહે છે. વિષ્ણુ પુરાણમાં પ્રહ્લાદ ભગવાન્ની સ્તુતિ કરીને કહે છે કે— " યતઃપ્રધાનપુરુષૌ " જેમાંથી પ્રધાન અને પુરુષનો આવિર્ભા-

व थाय छे ते.

स्कंदपुराणमां कह्युं छे के, भगवान्‌ने सृष्टि करवानी इच्छा थवाथी तेनी प्रकृति परा अने अपराऋपे जुदी थइ.

" या परापर संभिन्ना प्रकृतिस्ते सिसृक्षया । "

उत्कलखंड, २-२९.

विष्णुपुराणना छठ्ठा अंशमां पराशर कहे छे के—

" एकः शुद्धः क्षरो नित्यः सर्वव्यापी पुरातनः ।
सोऽप्यंशः सर्वभूतस्य मैत्रेय परमात्मनः ॥
प्रकृतिर्यामया ख्याता व्यक्ताव्यक्तस्वरूपिणी ।
पुरुषश्चाप्युभावेतौ लीयते परमात्मनि "॥

६,४,३५-३८.

' पुरुषएक[1], शुद्ध, अक्षर, नित्य अने सर्वव्यापी छे. ते सर्व भूतमय परमात्मानो अंश छे. जे व्यक्त अने अव्यक्त स्वरुपवाळी प्रकृतिनी वात कही, ते प्रकृति अने आ पुरुष बंन्ने परमात्मामां विलीन थाय छे[2].

---

[1]पुरुष घणा नथी, पण एक छे, ए वातने विष्णुपुराणे टेको आप्यो छे.

[2]माटे विष्णु पुराणमां बीजे ठेकाणे कह्युं छे के--

" स एव क्षोभको ब्रह्मन् क्षोभ्यश्च पुरुषोत्तमः । '
न संकोचविकाशाभ्यां प्रधानत्वेऽपि च स्थितः ॥"

आ उपरथी आपणे जोयुं के, प्रकृति अने पुरुष ए छेल्लुं द्वैत नथी. ए बंन्ने परमात्मानाज मात्र विभाव अथवा प्रकार छे.

श्रुतिए पण आ उपदेशनुं समर्थन कर्युं छे--टेको आप्यो छे.

" क्षरं प्रधानं अमृताक्षरं हरः क्षरात्मनौ ईशतेदेव एकः"

श्वेताश्वतर १-१०.

' क्षरप्रधान छे, अक्षर अमृत छे' ; जे अद्वितीय देव क्षर अने आत्मानो प्रभु छे तेज भगवान् हर.'

आ प्रकृति पुरुषने शास्त्रोमां जुदे जुदे ठेकाणे जुदांजुदां नाम आपवामां आव्यां छे. कोइ ठेकाणे एने क्षेत्र अने क्षेत्रज्ञ नाम आप्यां छे. कोइ ठेकाणे मूल प्रकृति अने प्रत्यगात्मा नाम आप्यां छे, कोइ ठेकाणे अन्न अने अन्नाद; कोइ ठेकाणे स्वधा अने प्रयति ; कोइ ठेकाणे रयि अने प्राण अने कोइ ठे-काणे अप् अने मातरिश्वा एवां नाम आप्यां छे. आम गमे त्यां गमे ते नाम आपवा छतां पण शास्त्रो ए बंने कोइपण ठेकाणे छेवटनां तत्त्वरुपे जणावतां नथी.

" प्रजाकामो वै प्रजापतिः

* * * *

समिथुनमुत्पादयते * * रयिञ्च प्राणञ्चेति

'" स ईश्वरः क्षरात्मनौ प्रधानपुरुषौ ईशते इष्टेदेव एकश्चित् सदानंदाद्वितीयः परमात्मा"--शंकर भाष्य.

एतौ मे बहुधा प्रजा करिष्यत इति" (प्रश्न १-४).

'प्रजापतिए प्रजाउत्पन्न करवानी इच्छाथी रयि अने प्राणनुं जोडुं उत्पन्न कर्युं. तेओज मारे माटे घणा प्रकारनी प्रजा उत्पन्न करशे.

"एतावद् वा इदं सर्वम् । अन्नं चैवान्नादश्च । सोम एवान्नं अग्निरन्नादः" (बृहदारण्यक, १-४-६).

'अन्न अने अन्नाद-ए बंन्ने मळीने आखुं जगत्. सोम अन्न थयो अने अग्नि-अन्नाद थयो.'

"तस्मिन् अपो मातरिश्वा दधाति" ईशोपनिषत्, ४

'मातरिश्वा (प्राण) भगवानमां अप् धारण करे' अप्=कारणार्णव=अव्यक्त प्रकृति.मातरिश्वा=प्राण=पुरुष. प्रलयमां प्रकृति अने पुरुष बंन्ने भगवान्मां विलीन थाय छे.

'अक्षरं तमसि लीयते, तमःपरे देवे एकी भवति'-श्रुति.

मतलबके अक्षर तमः (प्रकृति)मां लीन थाय छे, तमः परमेश्वरमां एकीभूत थाय छे. तमः ए प्रकृतिनुंज एक पारिभाषिक नामछे'. प्रलय वखते प्रकृति पुरुष महेश्वरमां विलीन

'"आसीदिदं तमोभूतम्" (मनु); "तम आसीत् तमसा गूढमग्रे" (ऋग्वेद नासत् सूक्त); 'अग्र तम आसन्' वगरे वाक्यो आ वातने सप्रमाण करेछे. वळी तत्त्वसमासमां तमः शब्द प्रकृतिना पर्यायरुपे वपराएलो जोवामां आवे छे.

थाय छे, एवोज उपदेश श्रुतिए कर्यो. तेथीज भगवाननुं एक नाम नारायण छे. नारायण=नारनुं अयन अथवा आश्रय. नार एटले अप् अथवा कारणार्णव के अव्यक्त प्रकृति (' आपो नारा इति प्रोक्ताः--मनु).

आथी, आ संबंधमां गीताना मतनेज सघळां शास्त्रो अनुमोदन आपे छे, एम जोवामां आवे छे.

प्रकरण ९ मुं.

पातंजल दर्शन

पातंजलदर्शननुं टुंकुं विवरण.

पातंजलदर्शनना प्रणेता भगवान् पतंजलि छे. पातंजलदर्शननां सघळां मळीने १९९ सूत्र छे. आ दर्शन चार पादमां वहेंचाएलुं छे; एनां नाम अनुक्रमे-समाधिपाद, साधनपाद, विभूतिपाद, अने कैवल्यपाद छे. पातंजलदर्शननुं एक प्राचीन अने प्रामाणिक भाष्य प्रचलित छे. दर्शनशास्त्रीओमां ए "व्यासभाष्य" नां नामथी परिचित छे. आ व्यासभाष्यनी वाचस्पतिमिश्रे "तत्त्ववैशारदी" नामनी अने विज्ञानभिक्षुए "योगवार्त्तिक" नामनी टीकाओ रची छे, पातंजलदर्शननी भो-

जराजे करेली एक संक्षिप्त अने सर्वोत्तम वृत्ति प्रचलित छे. आ संबंधमां विज्ञानभिक्षुनो " योगसार संग्रह " पण उल्लेख योग्य छे.

पातंजलदर्शननुं एक नाम सांख्यप्रवचन छे. ए नाम होवानुं कारण ए छे के, भगवान् पतंजलिए सांख्यदर्शनना प्रवर्तक महर्षि कपिलना दार्शनिक सिद्धांतो ग्रहण करी कबुल राख्या छे. सांख्यमां कहेलां पचीशतत्त्व (पुरुष, प्रकृति, महत्तत्त्व, अहंकार, पंचतन्मात्र, अगीआर इंद्रियो अने पंचमहाभूत)नो आ दर्शनमां स्वीकार करवामां आव्यो छे.[1] पण पतंजलिए आ

---

[1] " पातंजल दर्शनमां सांख्यदर्शनमां कहेला पदार्थोनुं अवलंबन करवामां आव्युं छे ते उपरांत सांख्यदर्शने नहि अंगीकार करेला ईश्वरनो पातंजलदर्शनमां अंगीकार करवामां आव्यो छे."—महामहोपाध्याय चंद्रकान्त तर्कालंकारकृत हिंदुदर्शन ; पहेलो भाग, ३२१मुं पृष्ठ. आ प्रसंगे आ पण जणाववा जेवुं छे के ब्रह्मसूत्रमां सांख्यमतनो निरास करी सूत्रकारे लख्युं छे के—अनेन योगः प्रत्युक्तः, मतलबके, आथी योगदर्शननुं पण निराकरण थयुं. आम कहेवानुं तात्पर्य ए छे के, योगदर्शनमां ज्यारे सांख्यमां कहेला पदार्थोनुंज अवलंबन करवामां आव्युं छे, त्यारे सांख्यना निरासथीज पातंजलनुं पण निराकरण थयुं. आ सूत्रनां भाष्यमां भगवान् शंकराचार्ये

पचीश तत्त्व उपरांत एक वधारे तत्त्वनो प्रचार कर्यो छे. ते तत्त्व ईश्वर. ईश्वर ए सांख्यमां कहेलो पुरुष नथी;[1] ते पुरुष विशेष छे. तेटला माटे निरीश्वर सांख्यदर्शनथी पातंजलदर्शनने जूदुं पाडवा माटे एने सेश्वर सांख्य कहेवामां आवे छे, खरुं जोतां पातंजलदर्शनमांथी ईश्वरतत्त्व अने चित्तनिरोधना उपायोनो प्रसंग उठावी लइए तो सांख्यदर्शन करतां पातंजलदर्शननी

कह्युं छे के "एतेन सांख्यस्मृतिप्रत्याख्यानेन योगस्मृतिरपि प्रत्याख्याता दृष्टव्या इत्यादिशति तत्रापि श्रुतिविरोधेन प्रधानं स्वतंत्रमेव कारणं महदादीनि च कार्याणि अलोकवेदप्रसिद्धानि कल्प्यते"—आ संबंधमां मेक्षमुलरे लख्युं छे के.—The Sankhya is always presupposed by the Yoga and Yoga is indeed, as the Brahmans say, sankhya, only modified, particularly in one point, namely in its attempt to develope and systematise an ascetic discipline by which concentration of thought could be attained and by admitting devotion to the Lord as part of that discipline.

—(Indian Philosophy p. 409 and 417).

[1] व्यासभाष्यमां ईश्वरनो प्रसंग आवी रीते उत्थापित कर्यो छे,—"अथ प्रधान पुरुषव्यतिरिक्तः कोऽयं ईश्वरो नाम।" अर्थात्, आ जे ईश्वर, जे प्रकृति अने पुरुषथी स्वतंत्र छे, ते कोण?

विशेषता बताववा कांइ पण बाकी रहेतुं नथी[1].

आ ईश्वरतत्त्व एटले शुं? पतंजलिए ईश्वरनां लक्षणनो आ प्रमाणे निर्देश कर्यो छे.

क्लेशकर्मविपाकाशयैरपरामृष्टः पुरुषविशेष ईश्वरः।(१-२४).

तत्र निरतिशयं सर्वज्ञबीजम्। (१-२६).

स एष पूर्वेषामपि गुरुः कालेनानवच्छेदात्। (१-२६)

'जे पुरुष विशेष क्लेश, कर्म, विपाक अने आशयना संबंध विनानो छे, तेज ईश्वर.'

'तेनामां ज्ञाननो चरम उत्कर्ष छे. ते सर्वज्ञ छे.'

'ते (ब्रह्मा विगेरे) पूर्वना आचार्योनो पण गुरु छे; कारणके, ते काळथी अतीत छे.'

साधारण पुरुष क्लेश, कर्म, विपाक अने आशयना संबंधवाळो छे. क्लेश पांच प्रकारना छे;–अविद्या (मिथ्याज्ञान), अस्मिता (जूदी वस्तुमां अभेद प्रतीति), राग, द्वेष अने अभिनिवेश (मरणभय), कर्म=सुकृत अने दुष्कृत (पुण्य अने पाप); विपाक=कर्मफळ. कर्मनुं फळ त्रण प्रकारनुं छे; जन्म, आयुष्य

---

[1] If we took away these two characteristic features of the yoga, the wish to establish the existence of an Isvara against all comers, and to teach the means of restraining the affections and passions of the soul, as a preparation for true knowledge such as taught by the Sankhya Philosophy, little would seem to remain that is peculiar to Patanjali–(Max Muller's Indian Philosophy pp. 412-13).

अने भोग. आशय=विपाकने अनुरुप संस्कार. साधारण पुरुष आ सघळा संस्कारथी छुटी शकतो नथी. खरी वात छे के, मुक्त पुरुषनो क्लेश वगेरेनी साथे कोइ प्रकारनो संबंध रहेतो नथी; पण मुक्ति पहेलां ते पण क्लेश वगेरेने आधीन हतो. पण पुरुष विशेष ईश्वरनो कोइपण वखते क्लेश वगेरेनी साथे संबंध नहोतो. कारण के, ते नित्य मुक्त छे. पुरुष (जीव) जेम घणा छे, तेम पुरुष विशेष (ईश्वर) घणा नथी. ते एक अने अद्वितीय छे. ईश्वर काळथी अवच्छिन्न नथी. ते भूत, भविष्य अने वर्तमान ए त्रणे काळथी अतीत छे. ब्रह्मा, मनु, सप्तर्षि वगेरे कल्प मन्वन्तरना आरंभमां जे शास्त्र वगेरेनो उपदेश अने प्रचार करे छे, ते शास्त्र ज्ञान तेमने क्यांथी प्राप्त थाय छे? ईश्वर पासेथी. एटला माटे तेने पूर्वना गुरुओनो पण गुरु कह्यो छे.

जगत्मां परिमाणनी न्युनाधिकता जोवामां आवे छे. नानां जळाशय करतां नदीनुं परिमाण मोटुं छे, वळी नदी करतां समुद्रनुं परिमाण मोटुं छे. ए प्रमाणे ज्ञानमां पण न्युनाधिकता छे. मूर्ख करतां पंडितनुं अने पंडित करतां सुपंडितनुं ज्ञान वधारे होय छे. जेनामां ज्ञान पराकाष्टा पाम्युं छे, जे ज्ञाननी छेल्ली हदे पहोंच्या छे, ते सर्वज्ञ छे, तेज ईश्वर छे.

माटे, पातंजल दर्शनना मत प्रमाणे, तत्व २५ नहि पण

२६ छे. पण आ तत्त्वोनो विचार करवो ए पातंजल दर्शननो मुख्य विषय नथी. एतो मात्र गौण विषय छे, आनुषंगिक अथवा अवांतर वात छे. पातंजलदर्शननो मुख्य विषय तो योगज छे, माटेज एनुं बीजुं नाम योग दर्शन छे. वाचस्पतिमिश्रे कह्युं छे के,—

"न चैतानि प्रधानादिसद्भावपराणि किन्तु योगस्वरुप तत्साधन-तदवान्तर फल विभूति—तत्परमफल कैवल्यव्युत्पादनपराणि"। मतलबके, प्रधान वगेरेनुं प्रतिपादन करवुं ए योगशास्त्रनो मुख्य विषय नथी, पण योगनुं स्वरुप, साधन, गौणफळ विभूति अने मुख्य फळ कैवल्यनुं निरुपण एज योग शास्त्रनुं तात्पर्य-विषय छे.

योगशास्त्रनां चार पर्व छे,—हेय, हेयहेतु, हान अने हानोपाय. बीजां दर्शनोनी पेठे पातंजलदर्शनना मतमां पण संसार दुःखमय छे; माटे ते हेय (छोडवा योग्य) छे. (दुःखमेव सर्वं विवेकिनः । हेयम् दुःखम् अनागतम् । २-१५ । १६). आ हेय संसारनुं निदान अथवा हेतु शो? प्रकृति पुरुषनो संयोग; (दृग् दृश्ययोः संयोगो हेयहेतुः), पण आ संसारनो अत्यंत उच्छेद संभवित छे, ए हेयनी निवृत्ति साधी शकाय; एनुंज नाम हान. (तदभावात् संयोगाभावो हानः तद्दृशेः कैवल्यम् । २-२५). आ हाननो उपाय शो? प्रकृति पुरुषनुं

निश्चळभेद ज्ञान (विवेकख्यातिः अविप्लवा हानोपायः २-२६).
मतलबके, " चिकित्साशास्त्र जेम रोग, निदान, आरोग्य अने ओसड ए चार भागमां वहेंचाएलुं छे, तेम योगशास्त्र पण चार भागमां वहेंचाएलुं छे. संसार, संसारनो हेतु, मुक्ति अने मुक्तिनो उपाय. बहु दुःखवाळो संसार हेय, प्रकृति पुरुषनो संयोग ए हेय हेतु, संयोगनी अत्यंत निवृत्ति ए हान, हाननो उपाय सम्यगदर्शन." भगवान् बुद्धदेवे आ चार आर्य सत्यनो प्रचार कर्यो छे, अने जे बौद्ध धर्मना मूळ आधार रुप छे, ते आ मतनोज प्रतिध्वनि छे."

आ जे प्रकृति पुरुषनुं निश्चळ भेद ज्ञान, जे पातंजल मत प्रमाणे मोक्ष प्राप्तिनो अद्वितिय मार्ग छे, ते ज्ञान मेळववानो उपाय शो ? सांख्यो कहे छे के, तेमणे शोधेलां पचीश तत्त्वनी साथे परिचित थइ शकवाथीज ते सम्यग् ज्ञान मळी शके. पण पातंजलना मतमां ए परिचयज बस नथी. माटेज योग

'यथाचिकित्साशास्त्रं चतुर्व्युहं रोगं रोगहेतुः आरोग्यं भैषज्यमिति एवमिदमपिशास्त्रं चतुर्व्युहमेव, तद्यथा संसारः, संसारहेतुः, मोक्षः, मोक्षोपाय, इति । तत्र दुःखवहुलो संसारः हेयः, प्रधानपुरुषयोः संयोगो हेय हेतुः, संयोगस्यात्यन्तिकी निवृतिर्हानम्, हानोपायः सम्यगदर्शनम् । २-२५ सूत्रनुं व्यासभाष्य.

शास्त्र बनाववामा आव्युं छे. कारण के पतंजलिना मत प्रमाणे प्रकृति पुरुषनुं निश्चळ भेदज्ञान मेळववानो मात्र एकज उपाय छे अने ते उपाय योग छे[१]. आ योग ते शुं ?

योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः ।

'चित्तवृत्तिना निरोधनुं नाम योग'. चित्तनी पांच अवस्था जणाय छे. (१) क्षिप्त (ज्यारे रजोगुणनो वधारो होय छे, त्यारे चित्त वधारे चंचळ रहे छे ते), (२) मूढ (ज्यारे तमोगुणनो वधारो होय त्यारे चित्त मोहथी ढंकाएलुं रहे छे ते), (३) विक्षिप्त (ज्यारे सत्त्वगुणनो उद्रेक थाय त्यारे चित्त कोइकवार स्थिर अने पाछुं कोइकवार अस्थिर थाय छे ते). (४) एकाग्र (ज्यारे ध्येय वस्तुमां चित्तनो एक तान प्रवाह

---

[१] Granted that this discrimination, this subduing and drawing away of the Self from all that is not self is the highest object of Philosophy. How it is to be reached? And even when reached, how is it to be maintained? By knowledge chiefly would be the answer of Kapila. By ascetic exercises delivering the self from the fetters of the body and the bodily senses, adds Pantanjali.—(Max Muller's Indian Philosophy. p. 407.

" The chief object it (yoga) had in view was to realize the distinction between the experiencer and the experienced, or as we should call it between the subject and the object.—(Max Muller's Indian Philosophy. pp. 465-466).

थाय छे ते), अने निरुद्ध (ज्यारे वृत्तिनो निरोध थइ वृत्ति थीं उत्पन्न थता संस्कार मात्र बाकी रहे छे ते). क्षिप्त अने मूढ चित्तमां योगनो असंभव छे. विक्षिप्त चित्तने "क्रियायोग"[1] वडे एकाग्र करवुं जोइए. त्यारे साधक योगनो खरो अधिकारी थाय. कारण के, एकाग्र अने निरुद्ध चित्तज योगने उपयोगी छे.

चित्तनी वृत्ति पांच प्रकारनी छे,–प्रमाण, विपर्यय, विकल्प, निद्रा अने स्मृति (१-६ सूत्र). प्रमाण त्रण प्रकारनां छे प्रत्यक्ष, अनुमान, अने आगम. विपर्यय=मिथ्याज्ञान. विषय न होवा छतां पण शब्द ज्ञानना प्रभावथी जे वृत्ति उत्पन्न थाय,

---

[1]तपः स्वाध्यायेश्वरप्राणिधानानि क्रियायोगः। (साधनपाद १)

'तपस्या, स्वाध्याय अने ईश्वर प्रणिधानने क्रियायोग कहे छे.' स्वाध्याय अने ईश्वर प्रणिधान=ॐकार वगेरे मंत्रनो जप अथवा मोक्ष शास्त्रनुं अध्ययन. ईश्वर प्रणिधान=ईश्वरमां सघळां कर्मोनुं अर्पण (फळसंन्यास). साधके, क्रियायोगनुं अवलंबन शा माटे करवुं ? समाधिभावनार्थः क्लेशतनुकरणार्थश्च (२-२ सूत्र). स हि आसेव्यमानः समाधिं भावयति, क्लेशांश्चप्रतनुकरोति (व्यास भाष्य) ते क्रियायोगनुं यथार्थ अनुशीलन थतां समाधि थाय छे अने अविद्या वगेरे पांच क्लेशो निर्बळ थाय छे.

तेनुं नाम विकल्प, जेम आकाशकुसुम, नरशृंग. निद्रा=सुषुप्ति. स्मृति=अनुभवेला विषयनुं स्मरण. आ पांच सिवाय बीजी कोइ चित्तवृत्ति नथी. आ चित्तवृत्तिओनो निरोध करवो जोइए. कारणके, चित्तनी साथे पुरुषनो संयोग थवाथी चित्तनी सघळी वृत्तिओ पुरुषमां उपचरित थाय छे. पुरुष स्वच्छ, केवल अने निर्गुण छे. जेम स्वच्छ स्फटिकनी पासे रातुं जासुसनुं फूल लाववाथी स्फटिक रातो रंग धारण करे छे, वळी आशमानी फुल लाववाथी स्फटिक आशमानी रंग धारण करे छे, पण खरुं जोतां स्फटिकने कोइपण रंग नथी, छतां उपाधिनो रंग तेमां प्रतिफलित थाय छे, तेम केवळ निर्मळ पुरुषमां सुख, दुःख, मोह वगेरे चित्त वृत्तिओ प्रतिबिंबित थतां, पुरुष तेनी साथे सारुप्य (Identification) पामी पोताने सुखी दुःखी माने छे. वास्तविक रीते पुरुषने सुख के दुःख एमांनुं कांइपण नथी. एतो मात्र वृत्तिनो उपराग छे. योगवडे चित्त वृत्तिओ निरुद्ध थतां पुरुषमां वृत्तिनी छाया पडे नहि. त्यारे पुरुष पोतानां स्वस्वरुपमां रहे.

"तदा द्रष्टुः स्वरुपेऽवस्थानं वृत्तिसारूप्यं इतरत्र"

(१,३-४ सूत्र).

चित्तनी वृत्तिओनो आ निरोध शी रीते थाय? पतंजलिए जूदा जूदा आठ उपायो बताव्या छे. एमांना कोइपण एकनुं

अनुसरण करवाथी चित्तवृत्तिनो निरोध करी शकाय.

१. अभ्यास वैराग्याभ्याम् तन्निरोधः। (१-१२ सुत्र).

'अभ्यास अने वैराग्यवडे चित्तवृत्तिनो निरोध थइ शके."

२. ईश्वर प्रणिधानाद् वा।-(१-२३ सूत्र).

अथवा ईश्वर प्रणिधानथी चित्तवृत्तिनो निरोध थाय. आ सूत्रनुं व्यास भाष्य आ प्रमाणे छे;—किम् एतस्मात् एवासन्नतमः समाधिर्भवति। अथास्य लाभे भवति अन्योऽपि कश्चित् उपायो न वेति। ईश्वर प्रणिधानाद् प्रणिधानात् भक्ति विशेषाद् आवर्जित ईश्वर स्तमनुगृह्णाति अभिध्यानमात्रेण, तदाभिध्यानादपि योगिन आसन्नतमः समाधिलाभः फलं च भवतीति। (१-२३ सूत्रनुं व्यास भाष्य).

अर्थात् 'आ अभ्यास वैराग्यथीज तत्काळ समाधि लाभ थाय के एनी प्राप्ति माटे बीजो पण कोइ उपाय छे ? तेना जवाबमां कहे छे के, अत्यंत भक्तिथी आराधेला ईश्वर प्रसन्न थइ "एनुं अभिष्ट सिद्ध थाओ" एवो संकल्प करे अने आवी रीतना संकल्पथी योगीने समाधिनी प्राप्ति सुलभ थाय.'

[१]भगवाने गीतामां चंचळ मनने स्थिर करवानो उपाय अभ्यास-वैराग्य बताव्यो छे.

असंशयं महाबाहो मनो दुर्निग्रहं चलम्।
अभ्यासेन तु कौंतेय, वैराग्येण च गृह्यते॥ (गीता ६।३५)

३. प्रच्छर्दन विधारणाभ्याम् वा प्राणस्य । १-३४ सूत्र.

'अथवा प्राणायमवडे पण चित्तवृत्तिओनो निरोध थइ शके. मतलब के, प्राणायाम पण समाधिलाभना अनेक उपायोमांनो एक उपाय छे.

३. विषयवती वा प्रवृत्तिरुत्पन्ना मनसः स्थितिनिबन्धनी ।
१-३५ सूत्र.

'अथवा इंद्रिय विशेषमां धारणावडे गंध वगेरे विषयनो साक्षात्कार थवाथी पण चित्त स्थिर थाय.' मतलब के, नासाग्र, जिह्वामूल वगेरेमां धारणा करवाथी योगी अलौकिक गन्ध, रस, रुप, शब्द, स्पर्श वगेरेनो अनुभव करे, तेमां तेनुं चित्त स्थिर थइ जाय. माटे, चित्तनी स्थिरतानो आ पण एक उपाय छे.

५. विशोका वा ज्योतिष्मती । १-३६ सूत्र.

'(हृदयकमळमां धारणा करवाथी) जे शोक रहित ज्योतिनो प्रकाश थाय छे, तेनाथी पण चित्तनी स्थिरता थइ शके.' मतलब के आ ज्योतिनो साक्षात्कार पण चित्तनी स्थिरतानो एक उपाय छे.

६. वीतराग विषयं वा चित्तम् । १-३७ सूत्र.

'अथवा जेओ वीतराग (विषयथी विरक्त) थइ गया, तेमनुं ध्यान करवाथी पण चित्त स्थिर थाय;' मतलब के निष्काम

महात्मानुं ध्यान पण चित्तनी स्थिरतानो एक उपाय छे.

७. स्वप्ननिद्राज्ञानावलंबनं वा । १-३८ सूत्र.

'अथवा स्वप्नज्ञान के निद्राज्ञानने अवलंबन करवाथी पण चित्त स्थिर थाय.' मतलब के, स्वप्नमां अमुक मूर्त्तिनो अथवा सात्विक वृत्तिनो आश्रय करवाथी पण चित्त स्थिर करी शकाय छे.

८. यथाभिमतध्यानाद् वा

अथवा कोइपण अभिमत विषयनुं ध्यान करवाथी पण चित्त स्थिर थाय. मतलब के, अभिमत ध्यान पण चित्तनी स्थिरतानो एक उपाय छे.

साधनावस्थामां, योगाभ्यासनां फळथी योगीने केटलीक अलौकिक शक्ति प्राप्त थाय छे; तेने विभूति अथवा सिद्धि कहे छे. पातंजलदर्शनना त्रीजा पादमां आ सिद्धिओनुं लांबुं वर्णन छे. पण ए सिद्धिओ योगने खरी रीते मददगार नथी, पण अडचण रूप छे.

ते समाधावुपसर्गा व्युत्थाने सिद्धयः । ३-३२ सूत्र.

मतलब के, व्युत्थानकाळमां आ विभूति कही शकाय, पण समाधिवाळा योगीना संबंधमां तो ए मात्र उपसर्ग छे.

आ योगनां आठ अंग छे.

यम नियमासन प्राणायम प्रत्याहार धारणाध्यान समाधयो-

ऽष्ठावंगानि । २-२९ सूत्र.

"यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान अने समाधि. आ योगनां आठ अंग छे." एमांनां पहेलां पांच बहिरंग अने छेल्लां त्रण अंतरंग छे.

अहिंसा, सत्य, अस्तेय (चोरीनो अभाव), ब्रह्मचर्य अने अपरिग्रह (विषयनुं अग्रहण) एनुं नाम यम छे. शौच (बहारनी अने अंदरनी शुद्धि) संतोष, तपस्या, स्वाध्याय अने ईश्वर प्रणिधान एनुं नाम नियम छे. पद्मासन, वीरासन वगेरे आसन (स्थिरसुखमासनम् २-४६ सूत्र). प्राणवायुनो संयम-प्राणायाम.(श्वासप्रश्वासयोर्गतिविच्छेदः प्राणायामः-२-४९सूत्र) इंद्रियनिरोधनुं नाम प्रत्याहार. एक देशमां चित्तनी धारणा अथवा बंधनने धारणा कहे छे (देश-बन्धः चित्तस्य धारणा—३—१ सूत्र). चित्त वृत्तिना एकतान प्रवाहनुं नाम ध्यान छे.

तत्र प्रत्ययैकतानता ध्यानम् ३-२ सूत्र.

ध्यान परिपक्व थइने ज्यारे ध्येयाकारज थइ जाय, चित्तवृत्ति होवा छतां पण न होवा जेवी जणाय, त्यारे ते अवस्थानुं नाम समाधि.

तदेवार्थमात्रनिर्भासं स्वरूपशून्यमिव समाधिः ३-३ सूत्र.

आ समाधिना बे प्रकार छे; सबीज अने निर्बीज. सबीज समाधिमां चित्तने अवलंबन होय छे; ते अवस्थामां चित्तनी

सूक्ष्म सात्विकवृत्ति तिरोहित थती नथी तेटलामाटे सबीज समाधिनुं एक बीजुं नाम संप्रज्ञात समाधि छे.

निर्बीज समाधिमां चित्तनी सघळी वृत्तिओ तिरोहित थाय छे, मात्र संस्कारज बाकी रहेछे; तेटला माटे ए समाधिने असंप्रज्ञात समाधि कहे छे.

वितर्कविचारानन्दास्मितारुपानुगमात् सम्प्रज्ञातः
(सूत्र १-१७).

विरामप्रत्ययाभ्यासपूर्वः संस्कारशेषोऽन्यः॥ सूत्र (१-१८).

व्यासभाष्यमां समाधिनुं लक्षण नीचे प्रमाणे आप्युं छे.

ध्यानमेव ध्येयाकारानिर्भासं प्रत्ययात्मकेन स्वरुपेण शून्यमिव यदा भवति ध्येयस्वभावावेशात् तदा समाधिरित्युच्यते।

महा महोपाध्याय पंडित चंद्रकान्त तर्कालंकारे लख्युं छे के,—"योग बे प्रकारनो छे, संप्रज्ञात अने असंप्रज्ञात. एकाग्र चित्तनो योग ते संप्रज्ञात कारणके, ते वखते ध्येयवस्तु यथार्थरूपे जणाय छे. निरुद्धचित्तना योगनुं नाम असंप्रज्ञात कारणके, ते वखते ध्येयविषयक वृत्ति पण निरुद्ध थवाथी कांइपण जणातुं नथी. आ बे प्रकारना योगनुं साधारण नाम समाधियोग छे."

संप्रज्ञात समाधिना चार प्रकार;—सवितर्क, निर्वितर्क, सविचार अने निर्विचार; आने सबीज कहे छे.

" ता एव सबीजः समाधिः" । १-४६ सूत्र.

तस्यापि निरोधे सर्वनिरोधात् निर्बीजः समाधिः ।

१-५१ सूत्र.

'तेना पण निरोधथी सघळुं निरुद्ध थतां निर्बीज समाधि थाय.' आ निर्बीज समाधि एज पातंजलनो अनुमोदेलो योग. आ समाधिसिद्धिने माटे ज पातंजलदर्शननी उत्पत्ति छे.

आ निर्बीज समाधि अथवा योग प्राप्त थतां पुरुषनुं स्वरूपमां अवस्थान थाय छे. ते वखते पुरुषने शुद्ध मुक्त कहे छे[1]. आनुं नामज कैवल्यसिद्धि. आज पातंजलदर्शननुं चरम लक्ष्य छे.

सत्त्वपुरुषयोः शुद्धिसाम्ये कैवल्यमिति ।[2] (३-५५ सूत्र).

---

[1]तस्मिन्निवृत्ते पुरुषः स्वरूपप्रतिष्ठः अतः शुद्धो मुक्त इत्युच्यते।

१-५ सूत्रनुं व्यास भाष्य.

[2]आ सूत्रना व्यासभाष्यमां आ प्रमाणे लख्युं छे,–

" ज्ञानाददर्शनं निवर्तते, तस्मिन्निवृत्ते न सन्त्युत्तरे क्लेशाः, क्लेशाभावात्कर्मविपाकाभावः चरिताधिकाराश्चैतस्यामवस्थायाम् गुणा न पुरुषस्य पुनर्दृश्यत्वेनोपतिष्ठन्ते, तत्पुरुषस्य कैवल्यम्, तदा पुरुषः स्वरूपमात्रज्योतिरमलः केवली भवति ।

(३-५५ सूत्रनुं व्यासभाष्य.)

मतलबके, ज्ञान उत्पन्न थवाथी अविद्यानी निवृत्ति थाय, अ

तदा सर्वावरणमलापेतस्य ज्ञानस्यानन्त्याद् ज्ञेयमल्पम् ।
(४-३१ सूत्र).

पुरुषार्थशून्यानां गुणानां प्रतिप्रसवः कैवल्यं स्वरुपप्रतिष्ठा वा चितिशक्तेरिति. (४-३४ सूत्र).

अर्थात्, ते समाधियोगनी अवस्थामां अविद्या वगेरे सघळा क्लेशो अने कर्म रुप आवरणथी चित्त-सत्त्व विमुक्त थतां तेनो सर्वत्र प्रसार थायछे. ते वखते तेनो प्रकाश सर्व स्थाने परिव्याप्त थायछे. ते अवस्थामां योगीथी कोइ पण विषय अजाण्यो रहेतो नथी. जे योगसिद्धने आवुं तत्त्वज्ञान उत्पन्न थयुं छे, तेना संबंधमां पछी प्रकृति परिणाम पामी भोग अथवा अपवर्ग उत्पन्न करती नथी. आज कैवल्य. आज पातंजलदर्शनमां कहेली मुक्ति. ए अवस्थामां चितिशक्तिनी (पुरुषनी) स्वरूपमां प्रतिष्ठा थाय छे.[1]

विद्यानी निवृति थतां कर्म परिपक्व थइ पछी फल उत्पन्न करी शके नहि. आ अवस्थामां प्रयोजन संपूर्ण थवाथी पछी प्रकृति पुरुषनुं द्रश्य थाय नहि. ते वखते पुरुष केवल (स्वतंत्र) थाय, अने निर्मळ ज्योतिरुपे अवस्थान करे.

[1] Kaivalya, from Kevala, alone, means the isolation of the soul from the universe and its return to itself, and not any other being, whether Isvara, Brahma, or any one else.—

Max Muller's Indian Philosophy P. 438.

अत्यार सुधी पातंजल दर्शननुं संक्षिप्त विवरण आप्युं. हवे पछीना अध्यायमां आ दर्शननी साथे गीताना संबंधनो विचार करीशुं.

प्रकरण १० मुं.

पातंजल दर्शन

पातंजल अने गीता.

पांतजल दर्शने बतावेली योग प्रक्रियाना संबंधमां गीतानो शो उपदेश छे ? गीता योग प्रक्रियाने स्वीकारे छे, अनुमोदन आपे छे, एटलुं ज नहि, पण योगीने तपस्वी, ज्ञानी अने कर्मी करतां पण उत्तम कहे छे.

" तपस्विभ्योऽधिको योगी ज्ञानिभ्योऽपि मतोऽधिकः ।
कर्मिभ्यश्चाधिको योगी तस्माद्योगी भवार्जुन ॥"

गीता ६-४६.

' तपस्वी करतां योगी अधिक छे, ज्ञानी करतां पण योगी अधिक छे, कर्मीथी पण योगी अधिक छे-माटे हे अर्जुन ! योगी था. '

गीताना छठ्ठा अध्यायमां ध्यानयोगनो सविस्तर उपदेश छे.

ते जोतां जणाय छे के, भगवाने पतंजलिए बतावेला अष्टांग-योगने साधारण रीते अनुमोदन आप्युं छे.

" योगी युञ्जीत सतत, मात्मानं रहसि स्थितः ।
एकाकी यतचित्तात्मा, निराशीरपरिग्रहः ॥
शुचौ देशे प्रतिष्ठाप्य, स्थिरमासनमात्मनः ।
नात्युच्छ्रितं नातिनीचं, चैलाजिनकुशोत्तरम् ॥
तत्रैकाग्रं मनः कृत्वा, यतचित्तेंद्रियक्रियः ।
उपविश्यासने युञ्ज्याद्, योगमात्मविशुद्धये ॥
समं कायशिरोग्रीवं, धारयन्नचलं स्थिरः ।
संप्रेक्ष्य नासिकाग्रं स्वं, दिशश्चानवलोकयन् ॥
प्रशांतात्मा विगतभी, र्ब्रह्मचारिव्रते स्थितः ।
मनः संयम्य मच्चित्तो, युक्त आसीत मत्परः ॥"

गीता ६, १०-१४.

" संकल्पप्रभवान् कामां, स्त्यक्त्वा सर्वानशेषतः ।
मनसैवेंद्रियग्रामं, विनियम्य समंततः ॥
शनैः शनैरुपरमेद्, बुद्ध्या धृतिगृहितया ।
आत्मसंस्थं मनः कृत्वा, न किञ्चिदपि चिंतयेत् ॥
यतो यतो निश्चरति, मनश्चंचलमस्थिरम् ।
ततस्ततो नियम्यैत, दात्मन्येव वशं नयेत् ॥"

गीता ६, २४-२६.

" स्पर्शान् कृत्वा बहिर्बाह्या, श्चक्षुश्चैवांतरे भ्रुवोः ।
प्राणापानौ समौ कृत्वा, नासाभ्यंतर चारिणौ ॥
यतेंद्रियमनोबुद्धिर्मुनिर्मोक्षपरायणः ।
विगतेच्छाभयक्रोधो, यः सदा मुक्त एव सः ॥"

गीता ५,२७-२८.

' योगीए एकान्तमां स्थिति करी, एकाकी, यत चित्तात्मा, निराशी, अपरिग्रह थइ आत्माने सतत योजवो.'

' शुचिदेशने विषे, उंचुं पण नहि, अति नीचुं पण नहि, एम कुश उपर आजिन अने चैलनुं पोतानुं आसन स्थिर स्थापी,'

' त्यां मनने एकाग्र करी चित्त अने इंद्रियनी क्रियाने संयमन करी, अचल आसन बांधी बेशी आत्मानी विशुद्धि माटे योग योजवो.'

' काय, शिरस् अने ग्रीवाने सम तथा अचल राखी, स्थिर थइ, अने पोतानी नासिकाना अग्रनुं संप्रेक्षण करी, दिशाओ तरफ दृष्टि न राखतां,'

' प्रशांतात्मा, निर्भय, ब्रह्मचारीव्रतस्थ थइ, मनने संयमन करी, मारामां चित्त अर्पी, युक्त थइ, मारा परायण, बेसे.'

' संकल्पथी पेदा थता काम मात्रने निःशेष त्यजी मनथीज इंद्रियसमुहने सर्व रीते वश करी,'

' धृतिग्रहित बुद्धिथी धीमे धीमे उपरमवुं; मनने आत्मसंस्थ

करी किंचित् पण चिंतन करवुं नहि.'

'चंचल अने अस्थिर मन जे जे पासाथी चले ते ते पासाथी नियमन करी आत्मानेज वश करवुं.'

'बाह्यस्पर्शने बाह्य करी चक्षुने भ्रूना अंतरालमां स्थापी, प्राणापानने नासाभ्यंतरचारी समान करी; इंद्रिय मन बुद्धिने संयमनार, अने मोक्ष परायण, इच्छा, भय क्रोधथी रहित, एवा मुनि जे होय ते सर्वदा मुक्तज छे.

उपरना श्लोकोमां गीताए टुंकामां अष्टांगयोगनो उपदेश कर्यो छे. 'शुचिदेशने विषे स्थिर आसन स्थापे' आ आसन-नो उपदेश छे. 'प्राणापानने नासाभ्यंतरचारी समान करे' —आ प्राणायामनो उपदेश छे. 'बाह्यस्पर्शने बाह्य करे'–आ प्रत्याहारनो उपदेश छे. 'ब्रह्मचारी व्रतस्थ थाय.' अपरिग्रह थाय' इत्यादि यमनो उपदेश छे. 'इंद्रिय समूहने सर्व रीते वश करे, 'चंचळमन आत्मानेज वश करे.' 'आशा परित्याग करे, निराशी थाय' इत्यादि नियमनो उपदेश छे. 'नासिका-ना अग्रनुं संप्रेक्षण करे' 'मनने आत्मामांज स्थापे' इत्यादि धारणानो उपदेश छे. 'भगवान्मां चित्त स्थापवुं' मनने एकाग्र करवुं' इत्यादि ध्याननो उपदेश छे. 'मनने आत्मसंस्थ करी किंचित् पण चिंतन करवुं नहि'–इत्यादि समाधिनो उपदेश छे.

पुरुषनुं स्वरुपमां अवस्थान थवुं ए पातंजल दर्शनना मत प्रमाणे योगनी उत्तमोत्तम अवस्था छे, एम आपणे जोइ आव्या छीये. पुरुष चित्स्वरुप ("द्रष्टा दृशिमात्रः") छे. ए मत प्रमाणे ते आनंदमय नथी, तेथी पातंजल दर्शने कहेली मुक्ति-सुख दुःखनी पारनी कैवल्य अवस्था छे. एथी दुःखनी निवृत्ति थाय छे खरी, पण सुखनी प्राप्ति थती नथी. पण गीताए योगनुं फळ बीजी रीतनुं बताव्युं छे, गीता कहे छे के—

"सुखमात्यन्तिकं यत्तद्बुद्धिग्राह्यमतिंद्रियम् ।
वेत्ति यत्र न चैवायं, स्थितश्चलति तत्त्वतः ॥
यं लब्धा चापरं लाभं, मन्यते नाधिकं ततः ।
यस्मिन् स्थितो न दुःखेन, गुरुणापि विचाल्यते ॥
तं विद्याद्दुःखसंयोग, वियोगं योगसंज्ञितम् ।
. स निश्चयेन योक्तव्यो, योगो निर्विण्णचेतसा ॥"

गीता, ६ । २१-२३.

'ज्यां ते आत्यंतिक सुख केवळ बुद्धिग्राह्य अने अतीन्द्रिय छे तेने अनुभवे छे, ने जेने विषे स्थित थयो सतो महातत्त्वथी कदापि चळतो नथी.

'जेने पामीने बीजो कोइ पण लाभ एथी अधिक मानतो नथी, ने जेमां स्थित थयो सतो महा दुःखथी पण डगतो नथी.'

'तेनेज योग संज्ञावाळो दुःखसंयोगावियोग जाणवो, ने ते

योग अनिर्विण्णचित्तथी निश्चय पूर्वक योजवो.'
आथी गीताना मत प्रमाणे योगनी अवस्थामां अत्यंत सुख मळे छे. योग सिद्ध थतां ए सुख वधारे उत्कृष्ट थइ ब्रह्मानंदमां परिणत थाय छे.

"प्रशांतमनसं ह्येनं योगिनं सुखमुत्तमम् ।
उपैति शांतरजसं, ब्रह्मभूतमकल्मषम् ॥
युंजन्नेवं सदात्मानं, योगी विगतकल्मषः ।
सुखेन ब्रह्मसंस्पर्श, मत्यन्तं सुखमश्नुते" ॥

गीता, ६ । २७-२८.

'आवा प्रशांत मनवाळा अने रजः संस्कार अत्यंत जेना शांत थइ गया छे, एवा, ब्रह्मभूत, योगीने उत्तम सुख आवी मळे छे.'

'आ प्रमाणे सदा आत्माने योजता योगी विगतकल्मष (थइ) ब्रह्मसंस्पर्शनुं अत्यंत सुख तेने सहजमां अनुभवे छे.'

बाह्यस्पर्शेष्वसक्तात्मा, विन्दत्यात्मनि यत् सुखम् ।
स ब्रह्मयोगयुक्तात्मा, सुखमक्षय्यमश्नुते ॥"

गीता ५ । २१.

'बाह्यस्पर्शमां असक्तात्मा आत्मा विषे जे सुख छे (तेने) पामे छे, तेज ब्रह्मयोग युक्तात्मा अक्षय्य सुखने भोगवे छे.'

आपणे जोयुं छे के पातंजलना मतमां जीव अने ईश्वर जुदा

छे; योगनी छेल्ली अवस्था जे निर्बीज समाधि, तेथी मात्र आत्म साक्षात्कार थाय छे, ईश्वर प्राप्ति थती नथी. पण गीताना मत प्रमाणे योगवडे भगवाननो संग अथवा साक्षात्कार थाय छे.

"युञ्जन्नेवं सदात्मानं, योगी नियतमानसः ।
शान्तिं निर्वाणपरमां, मत्संस्थामधिगच्छति" ॥

गीता ६ । १५.

'एम सदा आत्माने योजतो, नियत चित्तवाळो योगी, मारा विषे रहेली एवी परम निर्वाणनी शांतिने पामे छे.'

"सर्वभूतस्थमात्मानं, सर्वभूतानि चात्मनि ।
ईक्षते योगयुक्तात्मा, सर्वत्र समदर्शनः" ॥

गीता ६ । २९.

'सर्वत्र समदर्शन एवो योगयुक्तात्मा सर्व भूतमां आत्माने, ने आत्मामां सर्व भूतने, देखे छे.' भूत मात्रमां जे आत्मा वीराजी रहेलो छे, ते परमात्मा (भगवान्) विना बीजो कोण होय?

आपणे जोयुं छे के, पातंजले जणावेला योगनो अर्थ संयोग नथी—पण वियोग छे. भोजवृत्तिमां कह्युं छे के—

"पुंप्रकृत्योर्वियोगोऽपि योग इत्युदितो यया" ।

'मतलब के, प्रकृति अने पुरुषनो जे वियोग अथवा विवेक

(भेदज्ञान) एनेज पातंजल शास्त्रमां योग कहे छे.' स्वर्गीय राजेंद्रलाल मित्रे आ प्रसंगनो विचार करतां लख्युं छे के, पातंजल शास्त्रमां योग शब्दथी ईश्वरनी साथे जीवनो संयोग समजातो नथी, पण मात्र चित्त निरोधनो उद्योग अथवा व्यापारज समजाय छे,[1]

पण पुराण वगेरे शास्त्र ग्रंथोमां योग शब्दनो अर्थ संयोगज करवामां आव्यो छे. याज्ञवल्क्ये कह्युं छे के—

"संयोगो योग इत्युक्तो जीवात्मपरमात्मनोः"।

"जीवात्मा अने परमात्मानो संयोग तेनुंज नाम योग."

कहेवानी जरुर नथी के ते संयोग, प्रयत्न अथवा उद्योग विना सिद्ध थइ शके नहि.

"आत्मप्रयत्न सापेक्षा विशिष्टा या मनोगतिः।

---

[1] Yoga in the Philosophy of Patanjali does not mean union with God or any thing but effort (udyoga), pulling oneself together, exertion, concentration. The idea of absoraption into the supreme Godhood forms no part of the yoga theory, Patanjali like Kapila rests satisfied with the soul and does not pry into the how and whether the soul abides after separation."

"The highest object of the yogin was freedom, aloneness, aloofness, or self-centredness."—Max Muller's Indian Philosophy. p. 426.

तस्या ब्रह्मणि संयोगो योग इत्यभिधीयते" ॥

विष्णु पुराण; ६-७-३१.

मतलब के 'आत्मानी चेष्टासापेक्ष जे असाधारण मनोवृत्ति तेना भगवान साथेना संयोगनेज योग कहे छे.' गीतामां भगवाने योगनी जे समजण आपी छे, तेथी एम समजाय छे के, ए मतज गीताने मान्य छे, कारण के मननो संयम करीने चित्तने ईश्वरमां स्थापवानो गीताए योगीने उपदेश कर्यो छे.

"मनः संयम्य मच्चितो युक्त आसीत मत्परः।"

गीता १४-६.

'मनने संयमन करी, मारामां चित्त अर्पी युक्त थइ, मारा परायण बेसे.'

गीता बीजुं पण कहे छे के 'मारा विषे रहेली एवी परम निर्वाणनी शांतिने पामे छे.'

"शांतिं निर्वाणपरमां मत् संस्थामधिगच्छति"।

गीता ६-१५.

आपणे जोयुं छे के, पतंजलिए योग सिद्धिने माटे जे उपायो बताव्या छे, तेमांनो एक उपाय "ईश्वरप्रणिधान" छे[1]

---

[1] 'ईश्वरप्रणिधानाद् वा'—आ 'वा' उपर नजर राखीने कोइ कोइ एवो सिद्धांत करे छे के, पतंजलिना मत प्रमाणे ईश्वर प्रणिधानज योगसिद्धिनो मुख्य उपाय छे; पतंजलिए बीजा

ए उपायज अद्वितिय अथवा मुख्य छे, एम पतंजलि स्वीकारता नथी. चित्तना निरोधने माटे योगी जेम बीजा उपायो करे छे, तेम मरजी होय तो ईश्वर प्रणिधान पण करे.'[1]

विक्षिप्त चित्तने एकाग्र करवा माटे पतंजलिए साधकने 'क्रियायोग'नुं अनुष्ठान करवानो उपदेश कर्योछे. तप, स्वाध्याय

जे जे उपायो बताव्या छे, तेतो मात्र गौण उपायो छे. एज छेवटनो मुख्य उपाय छे, पण आ कहेवुं बरावर नथी लागतुं. कारणके, बीजा उपायो बतावती वखते पण पतंजलिए 'वा' शद्बनो उपयोग कर्यो छे. 'प्रच्छर्दनविधारणाभ्याम् वा प्राणस्य' 'यथाभिमतध्यानाद् वा'—ए बधे ठेकाणे पण शुं 'वा' शद्बथी मुख्य उपाय सुचव्यो छे? खरुं जोतां 'वा' शद्बनो अर्थ-विकल्प छे; एमां गौणमुख्यनी कशी वात नथी.

[1] I have given this extract in order to show how subordinate a position is occupied in Patanjali's mind by the devotion to Isvara. It is but one of the means (not even the most efficacious of all p. 426) for steadying the mind and thus realising that Viveka or discrimination between the true man (Purusha) and the objective world (Prakriti). This remains in the yoga as it was in the sankhya, the Summum Bonum of mankind. I do not think, therefore, that Rajendralal Mittra was right when in his abstract of yoga (p. iii) he represented this belief in one supreme God as the first and most important tenet of Patangali's Philosophy. —Max Muller's Indian Philosophy pp. 424-5.

अने ईश्वरप्रणिधान एनुं नाम क्रियायोग छे. (योगसूत्र ;– २-१) क्रियायोग सिद्ध थतां चित्त समाधिने अनुकूल थाय. पतंजलिए जे अष्टांग योगनो प्रचार कर्यो छे, तेमांना एक अंगनुं नाम नियम छे. पतंजलिना मत प्रमाणे नियम ए योगनुं बहिरंग साधन छे. नियम पांच प्रकारना छे ;–शौच, संतोष, तपः, स्वाध्याय अने ईश्वरप्रणिधान.

" शौचसंतोषतपःस्वाध्यायेश्वरप्रणिधानानि नियमाः ।"
(योगसूत्र, २-३२).

आथी पतंजलिना मत प्रमाणे ईश्वरप्रणिधान ए अष्टांग योगना बहिरंग पांच प्रकारना नियममांनो एक छे. तेथी पातंजलदर्शनमां ईश्वरनुं स्थान अतिशय गौण छे, एम समजाय छे. ईश्वरने बाद करवामां आवे तोपण ए मत प्रमाणे योगसिद्ध थवामां कोइपण प्रकारनी विशेष अडचण थाय नहि, कारणके, ईश्वरप्रणिधान ए योगसिद्धिना जुदाजुदा उपायोमांनो मात्र एक उपाय छे.

वळी आ पण कहेवा जेवुं छे के, पतंजलिना मत प्रमाणे ईश्वर प्रणिधाननो अर्थ ईश्वरमां चित्तने जोडवुं एवो नथी, कर्म मात्र ईश्वरने अर्पण करवां एवो छे.[1] ईश्वरपणिधाननो उपदेश क-

[1] ईश्वरप्रणिधान शब्दनो खरो अर्थ आ प्रकरणना परिशिष्टमां विचारवामां आव्यो छे.

रीने पतंजलि योगीने भगवाननुं ध्यान करवानुं कहेता नथी, मात्र तेनामां कर्मसंन्यास करवानुं कहे छे. आज गीतामां कहेलो कर्म योग छे. भगवाने अर्जुनने कह्युं छे के–

"कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन"।

गीता २-४७.

'तने कर्मनोज अधिकार छे, फलनो कदापि नहि.'

"यत्करोषि यदश्नासि यज्जुहोषिददासियत् ।
यत्तपस्यसि कौंतेय तत्कुरुष्व मदर्पणम् ॥"

गीता ९-२७.

'जे तुं करे, जे भोगवे, जे होमे, जे दान करे, जे तप करे, ते सर्व, हे कौंतेय, मने अर्पण कर.'

पातंजलमां कहेलुं ईश्वर प्रणिधान आवुंज छे. ध्यानयोग आनाथी जुदो छे. पतंजलिना मत प्रमाणे कोइपण विषयमां चित्तनो एकतान प्रवाह एज ध्यान छे. भगवान्ज ध्येय (ध्याननो विषय) होवा जोइए, तेनुंज ध्यान करवुं जोइए, एवो कांइपण नियम नथी.[1] आपणे आ पण जोयुं छे के,

---

[1] पातंजलमां कहेवाएल ध्यान धारणानी साथे ईश्वरनो संबंध जरुरनो नथी, ते विज्ञानभिक्षुए पण जणाव्युं छे. "देशबन्धश्चित्तस्यधारणा"। (योगसूत्र, ३-१) आ सूत्रना वार्तिकमां तेणे लख्युं छे के, "इदं च धारणा लक्षणम् प्राथमिक

परिच्छिन्न योगाभिप्रायेण सूचितं यत्र प्रथमत एवेश्वरानुग्रहात् अपरिच्छिन्नतया जीवब्रह्मयोगो भवति तत्र देशालंबन धारणाद्युपयोगात् । अतो धारणाया अन्यदपि लक्षणम् गारुडादाव प्युक्तम्." यथा गारुडे—

" प्राणायामै द्वादशभि र्यावत्कालः कृतो भवेत् ।
स तावत्कालपर्यंतं मनो ब्रह्मणि धारयेत् ." ॥

ध्यानना पाछळ कहेवाइ गयेलां लक्षणने ध्यानमां राखीने विज्ञानभिक्षु कहे छे के—" इदमपि ध्यान लक्षणम् प्राथमिकौत्सर्गिकध्यानाभिप्रायेण सर्वत्र ध्याने देशानियमात् । अतोस्य गारुडे लक्षणांतरमुक्तं तस्यैव ब्रह्मणि प्रोक्तं ध्यानं द्वादशधारणेत्यनेन, तस्यैव द्वादश प्राणायामकालेन धारितचित्तस्य द्वादश धारणा कालावच्छिन्नं चिन्तनं ध्यानं प्रोक्तमित्यर्थः । अनेन च पूर्ववत् सूत्रोक्तं ; विशेष लक्षणम् विशेषणीयम् " ॥

एनो फलितार्थ ए छे के, पातंजलमां ध्यान धारणानुं जे लक्षण बांधवामां आव्युं छे, तेमां जीवात्माना परमात्मानी साथेना संयोगनो उपदेश कर्यो नथी. तेथी ते असंपूर्ण छे. पुराणमां जीव अने ब्रह्मना ऐक्यने साधनार जे भगवान्मां चित्तार्पणनो उपदेश कर्यो छे, ते वडे पतंजलिना लक्षणने पूर्ण करवुं जोइए.

थइने योगी उपर अनुग्रह करे, अने इच्छा करे के, तेने समाधिनो लाभ थाओ. तेथी योगीने तरत समाधिनो लाभ थाय. [“प्रणिधानाद् भक्तिविशेषाद् आवर्जित ईश्वरस्तमनुगृह्णात्यभिध्यानमात्रेण, तद् अभिध्यानादपि योगिन आसन्नतमः समाधिलाभः फलं च भवतीति।”–योगसूत्रना १-२३ सूत्रनुं भाष्य]. मतलबके, पतंजलिए कहेली ईश्वरप्रणिधाननी रीत, ए भगवानमां चित्तार्पण नथी ; अथवा, तेनुं फल ईश्वर प्राप्ति नथी. जो योगी ईश्वर प्रणिधान करे, एटले भक्तिपूर्वक ईश्वरमां सर्व कर्मनो संन्यास करे, तो ईश्वर प्रसन्न थइ प्रकृतिपुरुषनुं विवेक ज्ञान तेने सहेलुं करी दे. तेना फळथी योगीनो आत्मा भगवानमां संयुक्त न थाय, मात्र विवेकज्ञान द्रढ थाय. “ततः प्रत्यक्चेतनाधिगमोऽप्यन्तरायाभावश्च’ (१-२९ सूत्र). मतलबके ईश्वरप्रणिधानथी व्याधि वगेरे विघ्नो दुर थाय अने आत्म साक्षात्कार थाय. ईश्वर साक्षात्कार थाय नहि. (“प्रत्यासत्तिस्तु स्वात्मनि साक्षात्कारहेतुर्न परमात्मनि ”—वाचस्पतिमिश्र, ए सुत्रनी टीकामां–).

आपणे जोयुं छे के, गीताना मत प्रमाणे ईश्वरमां चित्तनो संयोग तेज योग छे. तेथी ए मत प्रमाणे ईश्वरने छोडी देवामां आवे तो योगनो बीलकुल संभवज नथी. तेथी गीतामां ज्यां योगनो प्रसंग छे, त्यां ईश्वरनो उल्लेख छेज. जे श्रद्धा युक्त

थइने भगवानमां चित्त संयुक्त करीने, तेनुं भजन करे तेज श्रेष्ट योगी छे, एवो गीतानो मत छे;

"योगिनामपि सर्वेषां मद्गतेनांतरात्मना।
श्रद्धावान् भजते यो मां स मे युक्ततमो मतः ॥"

गीता ६-४७.

"यो मां पश्यति सर्वत्र सर्वं च मयि पश्यति।
तस्याहं न प्रणश्यामि स च मे न प्रणश्यति ॥
सर्वभूतस्थितं यो मां भजत्येकत्वमास्थितः।
सर्वथा वर्तमानोऽपि स योगी मयि वर्त्तते. ॥"

गीता ६-३०,३१.

'जे मने सर्वत्र देखे छे, ने सर्व मारामां देखे छे; तेथी हुं कदापि जुदो नथी, तेम ते माराथी जुदो नथी.'

'जे एकत्वने अवलंबी सर्वभूतस्थ (जाणी) मने भजे छे, ते योगी सर्वथा वर्तती सतो मारामांज वर्ते छे.'

गीताए बीजुं पण कह्युं छे के–जो योगी देहत्याग करती वखते ॐकार रुप ब्रह्ममंत्रनुं उच्चारण करी भगवानने याद करी देहत्याग करे, तोज परम गतिने प्राप्त थाय छे.

"ओमित्येकाक्षरं ब्रह्म व्याहरन् मामनुस्मरन्।
यः प्रयाति त्यजन् देहं स याति परमां गतिम् ॥"

गीता ८-१३.

તેથી ભગવાને ગીતામાં આ પ્રમાણે ચરમ યોગનો ઉપદેશ આપ્યો છે.

"मन्मना भव मद्भक्तो मद्याजी मां नमस्कुरु ।
मामेवैष्यसि युक्त्वैव मात्मानं मत्परायणः ॥"

ગીતા ૯-૩૪.

'મારામય મન કર, મારો ભક્ત થા, મારું ભજન કરતો થા, મને નમ, એમ મત્પરાયણ રહી આત્માને યોજતાં તું મનેજ પામશે.'

ભગવાનમાં ચિત્ત અર્પણ કરવું એજ શ્રેયો લાભનો ઉપાય છે, તે શાસ્ત્રમાં બીજે ઠેકાણે પણ કહેવામાં આવેલું છે.

"एतावानेव लोकेऽस्मिन् पुंसां निःश्रेयसोदयः ।
तीव्रेण भक्तियोगेन, मनो मय्यर्पितं स्थिरं ॥"

(શ્રીમદ્ ભાગવત, ૩-૨૫-૪૧)

'તીવ્ર ભક્તિ પૂર્વક ભગવાનમાં સ્થિર ચિત્તાર્પણ કરવું એજ આ લોકમાં મૂક્તિનો ઉપાય છે.'

"न युज्यमानया भक्त्या भगवत्यखिलात्मनि ।
सदृशोऽस्ति शिवः पन्था योगिनां ब्रह्मसिद्धये" ॥

(શ્રીમદ્ ભાગવત્, ૩-૨૫-૧૮)

'વિશ્વાધાર ભગવાનમાં ભક્તિ યોગ સિવાય યોગીની બ્રહ્મ સિદ્ધિના સંબંધમાં સારો માર્ગ બીજો નથી.' તેથી યાજ્ઞવલ્ક્યે

कह्युं छे के—

"समाधिः समतावस्था जीवात्म परमात्मनः ।
ब्रह्मण्येव स्थितिर्या सा समाधिः प्रत्यगात्मनः" ॥

'जीवात्मा अने परमात्मानी साम्यावस्थाने समाधि कहे छे; जीवात्मानी ब्रह्ममां जे स्थिति, तेज समाधि.'

अष्टांग योग भगवानमां शी रीते प्रयुक्त थइ शके, तेनो विस्तार पूर्वक उपदेश विष्णुपुराणना ६ ट्ठा अध्यायमां खांडिका-जनक संवादमां आपवामां आव्यो छे. बहिरंग साधनथी चित्तने निर्मळ अने विषयोथी निवृत करीने एकाग्र भावे भगवाननुं ध्यान करवुं जोइए.

"प्राणायामेन पवनैः प्रत्याहारेण चेन्द्रियैः ।
वशीकृतैस्ततः कुर्यात् स्थिरं चेतः शुभाश्रये" ॥

(विष्णुपुराण, ६-७-४५)

'प्राणायमथी पवनने अने प्रत्याहारथी बधी इंद्रियोने वश करी, पछी शुभाश्रय भगवानमां चित्त एकाग्र करवुं.' शुभाश्रय एटले शुं?

"शुभाश्रयः स्वचित्तस्य सर्वगस्य तथात्मनः ।
त्रिभावभावनातीतो मुक्तये योगिनां नृप" ॥

(विष्णुपुराण, ६-७-७५)

मतलबके, 'चित्तनो शुभाश्रय मात्र एक श्री भगवान् छे,

ते त्रिगुणातीत छे, तेनी भावनाथी जीवने मुक्ति मळे छे.'

भागवत पण आ वातनो प्रतिध्वनी करी कहे छे के–

> नियच्छेद्विषयेभ्योऽक्षान् मनसा बुद्धिसारथिः।
> मनः कर्मभिराक्षिप्तं शुभार्थे धारयेद् धिया ॥
> तत्रैकावयवं ध्यायेदव्युच्छिन्नेन चेतसा।
> मनो निर्विषयं युक्त्वा ततः किंचन न स्मरेत्।
> पदं तत्परमं विष्णो मनो यत्र प्रसीदति" ॥
>
> श्रीमद् भागवत, २-१-१८,१९.

'बुद्धिनी मददथी मनवडे विषयमांथी बधी इंद्रियोनो प्रत्याहार करी कर्माक्षिप्त चित्तनी शुभार्थमां धारणा करवी.'

(शुभार्थे=भगवद्रुपे–श्रीधरस्वामी)

धारणाना अभ्यास माटे पहेलां तो भगवाननी मूर्त्तिनो एक एक अवयवनुं ध्यान करी द्रढताथी आखी मूर्त्तिमां चित्त स्थिर करवुं; पछी मनमांथी भगवान्‌नी मूर्त्ति पण काढी नांखीने कांइपण चिंतन करवुं नहि. तेज विष्णुनुं परम पद छे, तेमांज चित्त शांत थाय छे.

योगीनी आ छेल्ली अवस्था भागवतमां आ प्रमाणे वर्णवी छे.–

> "आत्मानमत्र पुरुषोऽव्यवधानमेकम्
> अन्वीक्षते प्रतिनिवृत्त गुणप्रवाहः।

सोऽप्येतया चरमया मनसो निवृत्त्या
तस्मिन् महिम्न्यवसितः सुखदुःखबाह्ये. ॥"
श्रीमद् भागवत ३-२८-७५-७६.

'ते अवस्थामां प्रकृतिनो प्रवाह निवृत्त थवाथी, पुरुष अखंड अव्यवधान (ध्याता अने ध्येयनी एकता) आत्मानुं दर्शन करे छे; अने चित्त वृत्तिनी चरम निवृत्तिमां सुख दुःखथी अतीत महिमामां (ब्रह्मस्वरुपमां) प्रतिष्ठित थाय छे.

प्रकरण दशमानुं परिशिष्ठ.

पतंजलिए "ईश्वर प्रणिधान" शब्द कया अर्थमां वापर्यो छे? पातंजल दर्शनमां ईश्वर प्रणिधान शब्द चार सूत्रमां वपरायो छे.

(१) "तपः स्वाध्यायेश्वरप्रणिधानानि क्रियायोगः"–२-१;
(२) "संतोषतपःस्वाध्यायेश्वरप्रणिधानानि नियमाः"-२-३२;
(३) "समाधिसिद्धिरीश्वरप्रणिधानात्"– २-४५ अने
(४) "ईश्वरप्रणिधानाद् वा"– १-२३.

पहेलां त्रणे स्थळे ईश्वरप्रणिधाननो अर्थ ईश्वरने कर्मो अर्पण करवां एवो छे, अने ते सर्व वादीने कबुल छे. ईश्वरप्रणिधानम्=" सर्व क्रियाणाम् परमगुरौ अर्पणम् तत्फलसं-

न्यासो वा "–(२-१ सूत्रनुं व्यास भाष्य); ईश्वरप्रणिधानम् ="तस्मिन् परमगुरौ सर्वकर्मार्पणम्"–(२-३२ सूत्रनुं व्यास भाष्य); "ईश्वरार्पित सर्वभावस्य समाधि सिद्धिः यथा सर्वम् इप्सिततम् अवितथं जानाति" (२-४५ सूत्रनुं व्यास भाष्य). अहिं भावनो अर्थ व्यापार छे. आ त्रण ठेकाणे ईश्वर प्रणिधानना अर्थ ईश्वरने सर्व कर्म अर्पण करवां एवो छे, आ अर्थ विज्ञानभिक्षुए पण स्वीकार्यो छे. पण ते कहे छे के, "ईश्वरप्रणिधानाद् वा"–आ ठेकाणे ईश्वर प्रणिधान शब्द जुदा अर्थमां वपरायो छे. "प्रथमपादोक्त प्रणिधानात् आह. सर्वक्रियाणाम् इति, लौकिकवैदिका साधारण्येन सर्वकर्मणां परमेश्वरेऽन्तर्यामिणि अर्पणम् इत्यर्थः"–(२-१ सूत्रनुं योग वार्तिक); "तज्जपस्तदर्थभावनमिति प्रथमपादोक्त प्रणिधान व्यावृत्त्यर्थं द्वितियपादाद्यसूत्रवाक्यार्थमेव प्रणिधान शब्दार्थं स्मारयति, तस्मिन् परम गुरौ सर्वकर्मार्पणमिति"–(२-३२ सूत्रनुं योगवार्तिक); ईश्वरेऽर्पितः सर्वभावः सर्वव्यापारो येन तस्य समाधिसिद्धिर्योगनिष्पतिर्यथा येन प्रकारेण ईश्वरानुग्रहतो भवति तदुच्यते * * * ततोऽस्ययोगिनः प्रज्ञा समाधिकालेऽपि यथार्थमेव साक्षात्करोति इत्यर्थः * * * न च ईश्वरप्रणिधानादेव योग निष्पत्तौ इतरांगवैयर्थ्यं इति वाच्यम् ईश्वरप्रणिधानस्य मोहमात्रनिवृत्तिद्वारत्व वचनात्

–(२-४५ सूत्रनुं योग वार्तिक). सर्वदर्शन संग्रहकारे पातंजल दर्शननुं वर्णन आपतां ईश्वरप्रणिधान शब्दोनो आ प्रमाणे अर्थ कर्यो छे. "ईश्वरप्रणिधानं नामाभिहितानां च सर्वाणां क्रियाणाम् परमेश्वरे परमगुरौ फलानपेक्षया समर्पणम्." पण "ईश्वरप्रणिधानाद् वा" आ सूत्रना वार्तिकमां विज्ञान भिक्षुए आ प्रमाणे लख्युं छे–"प्रणिधानं अत्र न द्वितियपादवक्ष्यमाणः, किंतु असंप्रज्ञातकारणीभूत समाधिर्भावनाविशेषएव तज्जपस्तदर्थभावनम् इत्यागामिसूत्रेणैव आत्मप्राणिधानस्य अत्र लक्षणीयत्वात् * * * ब्रह्मात्मना चिन्तनरूपतया प्रेमलक्षण भक्तिरूपाद्वक्ष्यमाणात् प्रणिधानादावर्जितोऽभिमुखीकृत ईश्वरस्तंध्यायिनमभिध्यानमात्रेण अस्य समाधिमोक्षौ आसन्नतमौ भवेतामितीच्छामात्रेण रोगाशक्त्यादिभिरुपायानुष्ठानमान्द्येऽप्यनुगृह्णाति आनुकूल्यं भजते अतस्तस्मादभिध्यानादपि प्रणिधाननिष्पत्याद्द्वारा योगिनाम् आसन्नतमौ समाधिमोक्षौ भवतः।–(१-२३ मा सूत्रनुं योगवार्तिक). आथी विज्ञानभिक्षुना मत प्रमाणे आ सूत्रमां ईश्वरप्रणिधान शब्दनो अर्थ ईश्वरने कर्मो अर्पण करवां एवो नथी–ईश्वरमां चित्त अर्पण करवुं अथवा भावना विशेष एटले भक्ति साथे ब्रह्मचिंतन करवुं एवो अर्थ छे. एकज शब्द योगदर्शनमां जुदे जुदे ठेकाणे जुदा जुदा अर्थमां वपरायो छे, एम मानवुं ए केटले अंशे अयोग्य

छे, ते विचारवा जेवुं छे. दार्शनिक पतंजलिए ईश्वरप्रणिधान शब्द पारिभाषिक शब्द रुपे वापर्यो छे, अने ते शब्द बधे ठेकाणे एकज अर्थनी सुचना करे छे, एम मानवुं ए वधारे ठीक लागे छे. अने आ एक अर्थ ईश्वरमां कर्मो अर्पण करवां ए छे. वळी आ पण कहेवा जेवुं छे के, व्यास भाष्य उपर लक्ष्य राखतां विज्ञान भिक्षुना मतने पुष्टि मळती नथी. व्यास भाष्यमां मात्र आटलुंज लखेलुं छे के–"प्रणिधानाद् भक्तिविशेषाद् आवर्जित ईश्वरस्तम् अनुगृह्णाति" 'भक्ति वडे प्रसन्न थइ ईश्वर योगी उपर अनुग्रह करे.' आनो अर्थ योगी ध्यान योग करीने ईश्वरनां स्वरुपनुं चिंतन करे, अथवा ईश्वरमां चित्त जोडी दे एवो नथी. वाचस्पतिमिश्रे व्यासभाष्यनी टीकामां आ प्रमाणे लख्युं छे.—" प्रणिधानात् भक्तिविशेषान्मानसाद्वाचिकात् कायिकाद् वा."

कोइ कोइ एम कहे छे के, बीजे ठेकाणे ईश्वर प्रणिधाननो उपदेश करवामां आव्यो छे, त्यां ते व्युत्थित चित्तवाळा कनिष्ठ अधिकारीनां संबंधमां कर्यो छे. कनिष्ठ अधिकारी योगीए पहेलां निष्काम कर्मयोग करी ईश्वरमां कर्म संन्यास करवो. आवी साधना करतां करतां ज्यारे ते समाहित थाय, त्यारे ते अवस्थामां तेना प्रत्ये "ईश्वरप्रणिधानाद् वा" ए उपदेश छे. ते अवस्थामां योगी प्रणवजप अने तेना अर्थनी भावना वडे

ईश्वरना स्वरुपनुं चिंतन अने ईश्वरमां चित्त समर्पण रुप ध्यान योगनो आशरो ले. आ साधनपद्धति घणी योग्य छे, एमां जरा पण शक नथी. गीता अने बीजा शास्त्र ग्रंथमां आ पद्धतिनोज उपदेश करवामां आव्यो छे. पण पतंजलिए " ईश्वरप्रणिधानाद् वा " ए सूत्रवडेज उपर कहेली पद्धतिनो उपदेश कर्यो छे एम अमने जणातुं नथी. कारण, आपणे जोयुं छे के, चित्तवृत्तिना निरोध माटे अथवा योगसिद्धि माटे पतंजलिए जे जे उपायो बताव्या छे, तेमांनो एक उपाय ईश्वरप्रणिधान छे. मुख्य उपाय नथी. तेणे ईश्वरप्रणिधानने प्राणायाम, यथाभिमत ध्यान, अभ्यास-वैराग्य, अलौकिक गंध वगेरेनो अनुभव वगेरे उपायोनी साथे एक हारमां मुकेलछे. तेथी तेना मत प्रमाणे ईश्वरप्रणिधान, ए बधाना जेवोज एक मार्ग छे.

प्रकरण ११ मुं.

वेदान्त दर्शन.

वेदान्त दर्शननुं संक्षिप्त विवरण.

पाछळ कहेवाइ गयुं छे के, वेदना बे विभाग छे, कर्मकांड अने ज्ञानकांड. कर्मकांडमां संहिता अने ब्राह्मणोनो समावेश थाय छे, अने ज्ञानकांडमां आरण्यक अने उपनिषद्नो समावेश थाय छे. कर्मकांड पछी ज्ञानकांड छे. ज्ञानकांडज वेदनो छेल्लो-अंत भाग छे, तेथी तेनुं साधारण नाम वेदान्त छे.

पूर्वमीमांसा जेम कर्मकांडनो विचार करे छे, तेम वेदान्त-दर्शन ज्ञानकांडनो विचार करे छे. तेथी ए दर्शननुं बीजुं नाम उत्तरमीमांसा छे. वेदान्त- दर्शननो मुख्य प्रतिपाद्य विषय ब्रह्मज छे, तेथी एने ब्रह्मसूत्र पण कहेवामां आवे छे.

वेदान्त-दर्शनना प्रणेता महर्षि बादरायण छे. आ देशना लोको एम माने छे के, आ बादरायण तेज पराशर पुत्र कृष्ण द्वैपायन वेदव्यास. पाश्चात्यपंडितो आ वात स्वीकारता नथी. बादरायण अने कृष्णद्वैपायन ए जुदा जुदा पुरुषो हता, एम

तेमनी मान्यता छे. पाणिनिना ४-३-११० सूत्रमां पाराशर्य रचित एक भिक्षु-सूत्रनो उल्लेख जोवामां आवे छे. पाराशर्य ए पराशर पुत्र वेदव्यासनीज संज्ञा छे, ए बाबतमां शक लावबानुं कारण नथी. कारणके, तैत्तिरीय ब्राह्मणमां स्पष्ट रीते व्यास पाराशर्यनो उल्लेख छे. वाचस्पतिमिश्रना मत प्रमाणे भिक्षुसूत्र ए वेदान्तदर्शननुंज बीजुं नाम छे. कारण के प्राचीनकाळमां संसारनो त्याग करनारा संन्यासीओज वेदांत-दर्शननो विचार करता. संन्यासीओनुं पारिभाषिक नाम भिक्षु छे. तेथी, वेदान्तदर्शनने भिक्षु-सूत्र कहेवो ते अयोग्य नथी. हमणां पण आपणे जोइए छीए के, दंडी वेदान्तीओ संसारीने वेदान्तदर्शन शीखववाने नाखुश होय छे. तेथी वेदान्तदर्शन प्रणेता महर्षि बादरायणने वेदव्यास मानवानां योग्य कारणो छे.

वेदान्त दर्शननां बधां मळीने ५५६ सूत्र छे. एना चार अध्याय छे. दरेक अध्यायना चार चार पाद छे. पहेला अध्यायनो सामान्य विषय समन्वय, बीजा अध्यायनो—अविरोध, त्रीजा अध्यायनो साधन अने चोथा अध्यायनो विषय फळ छे. पहेला अध्यायमां स्पष्ट, अस्पष्ट अने संदिग्ध श्रुति वाक्योनो ब्रह्ममां समन्वय बताव्यो छे. बीजा अध्यायमां बीजा दार्शनिक मतोना दोष दर्शन पूर्वक युक्ति अने शास्त्रनी साथे वे-

दान्त मतनो अविरोध स्थापन कर्यो छे. त्रीजा अध्यायमां जीव अने ब्रह्मना (सगुण अने निर्गुणना) लक्षण बतावी मुक्तिना बहिरंग अने अंतरंग साधनोनो उपदेश कर्यो छे, अने चोथा अध्यायमां जीवन्मुक्ति, जीवनी उत्क्रांति अने सगुणने निर्गुण उपासनाना फळनी न्युनाधिकतानुं विवेचन कर्युं छे.

वेदान्त दर्शननां घणां भाष्यो प्रचलित छे. तेमां शंकराचार्यनुं शारीरक भाष्य, रामानुजाचार्यनुं श्री भाष्य अने मध्वाचार्यनुं पूर्णप्रज्ञ भाष्य अनुक्रमे अद्वैतवादी, विशिष्टाद्वैतवादी अने द्वैतवादीने आदरणीय छे. शारीरक भाष्य उपर आनन्द गिरि अने वाचस्पति मिश्रे टीकाओ रची छे. वाचस्पति मिश्रनी 'भामति' नामनी टीका दार्शनिक समाजमां मान्य छे. श्री भाष्य उपर सुदर्शननी 'श्रुतप्रकाशिका' टीका सुप्रचलित छे. वेदान्त दर्शनना बीजा भाष्यकारोमां विज्ञानभिक्षु, भास्कर, यादवमिश्र, निम्बार्क, वल्लभ अने श्रीकंठनां नाम उल्लेख योग्य छे. ए उपरांत वेदान्त दर्शननां सांप्रदायिक भाष्योनो पण अभाव नथी. नीलकंठनुं 'शैवभाष्य,' 'वेदान्त पारिजात' नामनुं सौरभाष्य अने बलदेवनां 'गोविंद' (वैष्णव) भाष्यनो पण आ प्रसंगे उल्लेख करी शकाय.

वेदान्त दर्शननी जे व्याख्याओ छे, तेमां अद्वैतमत अने विशिष्टाद्वैत मतज मुख्य छे. अद्वैतमतना मुख्य आचार्य श्री

शंकराचार्य छे अने विशिष्टाद्वैतना मुख्य आचार्य श्री रामानुजाचार्य छे. तेओ मुख्य आचार्यो होवा छतां पण ते ते मतना तेओ प्रवर्तक नथी. शंकराचार्य इ. स. ना आठमा सैकामां थया, पण शंकरनी पहेलां पण अद्वैतमत सारी रीते प्रचलित हतो. तेमना गुरुना गुरु गौडपादे मांडुक्य उपनिषद्नी जे कारिका रची छे, तेमांथी अद्वैतमतनी परिणाम पामेली अवस्थानो परिचय मळी शके छे. शंकराचार्ये ए कारिकानुं भाष्य रच्युं छे. तेमनां शारीरक भाष्यमां तेमणे पोताना मतनी पुष्टि माटे भगवान् उपवर्षनां वचनो प्रमाणरुपे लीधां छे. उपवर्षनी पण पहेलांना योगावशिष्ठ ग्रंथमां अने सूत संहितामां अद्वैतमतनो सुस्पष्ट उपदेश रहेलो छे.[1]

आ प्रमाणे रामानुजने पण विशिष्टाद्वैतमतना प्रवर्तक मानवानुं योग्य जणातुं नथी. कारणके, तेमणे पोतेज तेमनी पहेलांना आचार्योनां नामनो उल्लेख कर्यो छे, अने तेमनुं "श्री भाष्य" ए बोधायननां प्राचीन भाष्यनुं अनुसरण छे, ते पण जणाव्युंछे. रामानुजनी पहेलांना आचार्योमां बोधायन,

[1] Shankara's is one only of the many-traditional interpretations of the Sutra which prevailed at different times in different parts of India and in different schools.

—(Max Meller's Indian Philosophy page 284.)

टंक, द्रमिड, गुहदेव, भारुचि, कपर्दि अने यमुनाचार्ये विशिष्टाद्वैतमतनुं विवरण करीने ग्रंथो रच्या हता. आ बधा ग्रंथो हमणां लगभग नाश पाम्या छे.[1] तोपण यमुनाचार्यकृत सिद्धित्रय ग्रंथ हालमां छपायो छे, तेथी आशा छे के, वखत जतां बीजा ग्रंथो पण वखते प्रसिद्धिमां आवशे. आ प्रमाणे आचार्य परंपराना क्रमथी विशिष्टाद्वैत मत चाल्यो आवे छे. तेथी एम साबीत थाय छे के, रामानुज इ. स. ना बारमा सैकामां थया छतां पण विशिष्टाद्वैत मत घणोज जुनो छे.[2]

---

[1] In former times there existed the following works bearing on the doctrines of Visishtadwaita:— a vritti by the great Rishi Bodhayana, a bhasya of the Brahma Sutras by Dramiracharjya. And a vritti by Tarkachrjya. There were besides other works by Bharuchi, Guhadeva and other Acharjyas; but these too having perished through the distroying agency of time, the Siddhitraya &c. were composed by the venerable Yamunacharjya in order to explain the purport of the lost treatises. In this, viz. Siddhitraya &c. were controverted the Bhashya & other writings of Bhartri × × × . Subsequently the illustrious commentator & holy sage Sri Ramanujacharyya × × × advanced the knowledge of the Vishistadwaita in the world by the composition of his great work called the Shree bhashya—M. M. Ram Mitra Shastri's preface to his edition of Vedartha Sangratha.

[2] There is evidence to shew that it (the Vishistad-

विशिष्टाद्वैत मत सुगम करवा माटे रामानुजे वेदार्थ संग्रह, वेदान्तदीप, वेदांतसार, गद्यत्रय वगेरे केटलाएक ग्रंथो रच्या छे. आ बधा ग्रंथो आजपण विशिष्टाद्वैत वादीओने मूख्य आधारभूत रह्या छे. आ संबंधमां रामानुजना नामथी प्रचलित वेदांत-तत्त्व-सारग्रंथपण उल्लेख योग्य छे.

अद्वैत मत स्पष्ट करवा माटे अद्वैतमतावलंबी पुरुषोए शंकराचार्यने पगले चाली घणा प्रकारना प्रकरणग्रंथोनो प्रचार कर्यो छे. तेमां पंचदशी, अद्वैत-ब्रह्म-सिद्धि, चित्सुखी अथवा प्रदीपिका, खंडनखंडखाद्य, वेदान्त-परिभाषा, वेदान्तसिद्धांत -परिभाषा, वेदान्तसिद्धांत मुक्तावली अने वेदान्तसार विशेषे करीने उल्लेख योग्य छे.

---

waita School) must have come down in the form of an unbroken tradition from very ancient times. (Preface to Rungacharyar's Translation of Shree-Bhashya).

यथोदित-क्रम-परिणतः भक्त्यैकलभ्य एव भगवद्बोधायन-टंक-द्रमिड-गुहदेव-कपर्दि-भारुचि-प्रभृतिभिरवगीतः * * * श्रुतिनिकरनिदर्शितोऽयं पन्थाः (रामानुजकृत वेदार्थ-संग्रह).

आ प्रसंगे प्रोफेसर म्याक्समुलरे कह्युं छे ते विचारवा जेवुंछे.

The individual philosopher is the mouth-piece of tradition and that tradition goes back further and further the more we try to fix it chronologically.

—(Max Muller's Indian Philosophy,—page 245).

अद्वैत अने विशिष्टाद्वैत वादमां केटलीक बाबतमां घणो मोटो भेद छे; छतां पण बंने मतो एकज वेदान्त सूत्र उपर प्रतिष्ठित छे. प्रमाण आपती वखते पण बंनेए उपनिषदोनोज आश्रय ग्रहण कर्यो छे. आचार्योना आवा मत भेदथी, मूल सूत्र अद्वैतवादने अनुकूल छे के विशिष्टाद्वैत वादने अनुकूल छे, ते नक्की करवानुं काम घणुंज कठण छे. तेथी वेदान्त दर्शननुं विवरण करतां बंने मतनो परिचय कराववानी आवश्यकता छे.

अद्वैतमत.

बीजां दर्शनोनी पेठे वेदान्तदर्शननो पण मूल पायो दुःखवाद छे. वेदान्तदर्शनना मतमां पण संसार दुःखमय छे. शंकराचार्ये संसारने मोटां मोटां मोजांवाळा, घणी घुमरीखाता, अनेक जातना मगरोवाळा भयंकर समुद्रनी साथे सरखाव्यो छे. आ संसार समुद्रमां पडीने जीव डबकां खाय छे' एमांथी तेना उद्धारनो कोइ उपाय नथी?

अद्वैत मत प्रमाणे जीवज ब्रह्म छे;-

जीवो बह्मैव नापरः

जीव शुद्ध-बुद्ध-मुक्त-सत्य स्वभाववाळो छे.

'अयमधिकारी जननमरणादि संसारानल संतप्तोदिप्तशिरा जलराशिमिव उपहारपाणिः श्रोत्रियं ब्रह्मनिष्ठं गुरुमुपसृज्य तमनुसरति' वेदान्तसार ११

नित्य शुद्ध-बुद्ध-मुक्त-सत्य-स्वभावं प्रत्यक् चैतन्यमेव आत्मतत्वं
(वेदान्त-सार).

शंकराचार्ये शारीरक भाष्यमां कह्युं छे के, 'वाणी अने मनथी अतीत, विषयनुं विरोधी, नित्य-शुद्ध-बुद्ध-मुक्त स्वभाव ब्रह्मज जीव रुपे रहेलुं छे.'

आ मतनी पुष्टिने माटे शंकराचार्ये जुदां जुदां श्रुति वाक्यो चुंटी काढयां छे तेमां नीचे जणावेली बे श्रुतिओ विशेप ध्यान आपवा जेवी छे.

" एक एव तु भूतात्मा भूते भूते व्यवस्थितः ।
एकधा बहुधा चैव दृश्यते जल चंद्रवत् " ॥

ब्रह्मबिंदु १२.

"यथाह्ययं ज्योतिरात्माविवस्वान्अपोभिन्नाबहुधैकोऽनुगच्छन् ।
उपाधिनाक्रियते भेदरुपो देवः क्षेत्रेष्वेव अजोऽयम् आत्मा" ॥

'एकज भूतात्मा भूत मात्रमां-सर्व भूतोमां-विराजी रहेलो छे, ते पाणीमां चंद्रनी पेठे एक रुपे अने बहु रुपे देखाय छे.'

'जेम ज्योतिःस्वरुप सूर्य एक होवा छतां पण जुदां जुदां

'वाङ्मनसातीत अविषयांतःपातिप्रत्यगात्मभूतं नित्य-शुद्ध-बुद्ध-मुक्त-स्वभावं ब्रह्म.

The true Self, according to the Vedanta is all the time free from all conditions, free from names and forms. —Max Muller's Indian Philosophy p. 207.

जळाशयमां बहु रुपे प्रकाशित थाय छे (तेनो आ भेद उपाधि कृत छे), ते प्रमाणे द्युतिमान् अनादि परमात्मा क्षेत्रना भेदथी (शरीररुप उपाधिथी) बहु होय एम जणाय छे.'

आथीज वेदनां महा वाक्यो जीव अने ब्रह्मनो अभेद प्रतिपादन करे छे. 'तत्त्वमसि,' 'अयमात्माब्रह्म,' 'सोऽहम्,' 'अहं ब्रह्मास्मि'—'ते तुं छे,' 'आ आत्मा ब्रह्म छे,' 'ते हुं छुं,' 'हुं ब्रह्म छुं—वगेरे. मतलबके, जीव, मात्र: ब्रह्मनो सजातीय पदार्थ छे, एम नहि,—जीव पोतेज ब्रह्म छे.' जीव अने ब्रह्ममां

'अद्वैतवादीओए ठेकाणे ठेकाणे जीवनो ब्रह्मना अंशरुपे निर्देश कर्यो छे. जेम अग्निमांथी तणखा नीकळे छे तेम ब्रह्ममांथी जीव नीकळया छे. ए संबंधमां योगवाशिष्ठ आ प्रमाणे उपदेश आपे छेः—

स्वमरीचिवलोद्भूता, ज्वलिताग्नेकणाइव ।
सर्वा एवोत्थिताराम! ब्रह्मणो जीव राशयः ॥
यो. वा. उत्पत्ति, ९४ । २२

मेरुमंदरसंकाशा, बहवो जीवराशयः ।
उत्पत्योत्पत्यसंलीना, तस्मिन्नेवपरेपदे ॥
यो. वा. उत्पत्ति ९५ । ८.

पण गौडपाद आ मतने अनुमोदन आपता नथी. ते कहे छे के, जेम घटाकाश ए महाकाशनो विकार अथवा अंश नथी

कशो भेद नथी; गौडपादे मांडुक्य-कारिकामां लख्युं छे के,—

जीवात्मनोरनन्यत्वम् अभेदेन प्रशस्यते।
नानात्वं निंद्यते यच्च तदेवहि समंजसम्॥
(मांडुक्य कारिका ३-१३)

मायया भिद्यतेह्येतत् न तथाजं कथंचन।
तत्त्वतो भिद्यमानो हि मर्त्यताम् अमृतोव्रजेत्॥
(मां. का. ३-१९)

अजम् अव्ययम् आत्मतत्त्वम् माययैव भिद्यते न परमार्थतः; तस्मान्न परमार्थसत् द्वैतम्-शंकर

मतलबके, 'जीव अने ब्रह्म अभिन्न छे; बंनेनो भेद छे एवी बुद्धि निंदापात्र छे. तो जीव अने ब्रह्म जे जुदा जणाय छे, ते वास्तविक नथी, मात्र मायिक छे. जो वास्तविक भेद होत तो, जे अमृत छे, ते मर्त्य थात. तेथी भेदनी जे प्रतीति थाय छे, ते उपाधि कृत छे.' कोषरूप उपाधिनी अपेक्षाथी

(कारणके आकाश अखंड वस्तु छे) तेम जीव ए ब्रह्मनो विकार अथवा अवयव नथी.

नाकाशस्य घटाकाशो विकारावयवौ यथा।
नैवात्मनः सदाजीवो विकारावयवौ तथा॥
मांडुकयकारिका ३-१

[1] Shankara, as we said, was uncompromising on that point. With him and, as he thinks, with Badara-

तेने जीव कहेवामां आवे छे.

" कोषोपाधि विवक्षायां याति ब्रह्मैव जीवताम् "

(पंचदशी ३-४१)'

पण ब्रह्म स्वरुपे निरुपाधि छे ; एटले सर्व उपाधिथी मुक्त छे. ब्रह्म सच्चिदानंद छे ; जीव ज्यारे ब्रह्म छे, त्यारे जीव पण सच्चिदानंद छे.

अवेद्योऽप्यपरोक्षोतः, स्वप्रकाशोभवत्ययं ।

सत्यं ज्ञानमनन्तश्चे त्यस्तीह ब्रह्म लक्षणम् ॥

पंचदशी; ३ । २८.

'जीव स्वप्रकाश ; अज्ञेय छतां अपरोक्ष ; "सत्य, ज्ञान, अनंत" आ ब्रह्मनां लक्षण जीवमां पण छे.' कारणके जीव

---

yan also, no reatity is allowed to the soul (Atman) as an individual (Jiva) × × × with him the soul's reality is Brahman and Brahman is one only.

—(Max Muller's Indian Philosophy, page 244.)

' गौडपादे मांडुक्य कारिकामां आवीज मतलबनुं लख्युं छे,-

घटादिषु प्रलीनेषु घटाकाशादयो यथा ।

आकाशे संप्रलीयन्ते तद्जीव इहात्मनि ॥

मांडुक्य कारिका, ३ । ४.

देहादिसंघातोत्पत्त्या जीवोत्पत्तिस्तद्प्रलये च जीवानाम् इहात्मनिप्रलयः) शंकर.

अने ब्रह्मनां मात्र नामनो तफावत छे. जेम अभिन्न घटाकाश अने महाकाशनो भेद छे तेम.

कूटस्थ ब्रह्मणोर्भेदो, नाममात्रादृते नहि ।
घटाकाश महाकाशौ, वियुज्येते नहि क्वचित् ॥

पंचदशी ; ६-२७६-७६.

जीव जो ब्रह्म छे, तो पछी तेने संसार दुःख केम छे? ए जीव संसार समुद्रना मोजांना हीलोळाथी शा माटे अत्यंत दुःखी थाय छे? संसार अग्निथी शा माटे संतप्त थाय छे? आ प्रश्नोना उत्तरमां अद्वैतवादीओ कहे छे के, शुद्ध-बुद्ध-मुक्त होवा छतां पण अविद्याने लीधे जीवमां देह वगेरे उपाधिओना धर्मो संक्रामित थाय छे.

एवम् परमार्थतोऽविकृतम् एकरूपमपि सद्ब्रह्म देहाद्युपाध्यन्तर्भावाद् भजत इव उपाधि धर्मान् वृद्धिह्रासादीन्.

(३-२-२० सूत्रनुं शंकर भाष्य.)

सुख दुःख, काम क्रोध, रोग शोक, ए बधा देह मन वगेरेना धर्म छे ;—जीव (आत्मा)ना धर्म नथी. पण जीव देहना संयोगथी पोताने सुखी दुःखी, रोगवाळो शोकवाळो माने छे.

गोडपादे कह्युं छे के—

"यथा भवति बालानां गगनं मलिनं मलैः ।
तथा भवत्यबुद्धानां आत्माऽपि मलिनंमलैः"॥

'जेम बाळको आकाशने मलथी मलिन विचारे छे तेम ज्ञानांधो आत्माने मलथी मलिन विचारे छे.'

तेथी पंचदशीकारे कह्युं छे के, महेश्वरनी मायानी मोह शक्तिना बळथी जीव मोहित थाय छे; अने ते मोहने लीधे इश्वर भाव भूली जइने देह साथे जोडाएलो जीव शोकने वश थाय छे.

> माहेश्वरी तु या माया, तस्या निर्माण शक्तिवत् ।
> विद्यते मोह शक्तिच, तं जीवं मोहयत्यसौ ॥
> मोहादनीशतांमाप्य, मग्नो वपुषिशोचति ।
>
> पंचदशी, ४ । ११-२

अनयावृतस्यात्मनः कर्तृत्व-भोक्तृत्व-सुखित्व-दुःखित्वादि संसार संभावनाऽपिभवति यथा स्वाज्ञानेनावृतायां रज्वाम् सर्पत्व संभावना. (वेदान्त सार)

'आ अविद्यानां आवरणथी ढंकावाथी जीव पोताने कर्त्ता भोक्ता-सुखी-दुःखी वगेरे संसारी धर्मवाळो माने छे; पण वास्तविक जोतां ए भ्रम छे. सींदरीमां जेवो सर्पनो भ्रम छे, तेवो आ पण मोटो भ्रम छे.'

आ भ्रम टाळवानो उपाय शो? अविद्याथीज आ भ्रम थयो छे, त्यारे अविद्यानो नाश करवामां आवे तोज आ भ्रम टळे.'

'जीव पोतानुं स्वरुप भूल्यो छे. ते पोते पोताने जाणतो

जीव ब्रह्मथी अभिन्न छे, ए तत्त्वज्ञान द्रढ थाय तोज अविद्यानी निवृत्ति थाय. तेथी, अद्वैतमत प्रमाणे जीव अने ब्रह्मनी एकतानुं ज्ञान एज मुक्तिनो उपाय छे. गौडपादे कह्युंछे केः--

अनादि माययासुप्तो यदा जीवः प्रबुध्यते ।
अजमनिद्रमस्वप्नं, अद्वैतंबुध्यते तदा ॥

मांडुक्यकारिका १-१६

' अनादि मायाथी सुतेलो जीव ज्यारे जाग्रत थाय छे,

नथी. योगवाशिष्ठ कहे छे के ;—

हेतुर्विहरणेतेषा मात्मविस्मरणादृते ।
न कश्चिल्लक्ष्यतेसाधो जन्मान्तरफलप्रदः ॥

योगवाशिष्ठ, उत्पति प्रकरण; ९५ । ८

'जीवो जन्मो लइ भमता फरे छे, तेनुं मात्र एकज कारण छे. ए कारण आत्मविस्मृति छे. ' आत्मविस्मृति=पोतानां स्वरुपनुं भान भूली जवुं ते.

This is indeed the real object of the Vedanta Philosophy to overcome all Nescience, to become once more what the Atman always has been namely Brahman.—Max Muller's Indian Philosophy, page 236.

This primeval Avidya is left unexplained, it is to be accounted for as little as Brahman can be accounted for. Like Brahman it has to be accepted as existent but it differs from Brahmna in so far as it can be destroyed by Vidya.—Max Muller's Indian Philosophy p. 225.

त्यारे ते समजे छे के, ते पोते जन्मविनानो, उंघ विनानो, स्वप्न विनानो, अद्वैत ब्रह्म छे.'

जीव मुक्त-स्वभाववाळो छे—पूर्वापरमुक्तज छे, तेने जे बंध जणाय छे, ते मात्र कल्पना छे, वास्तविक नथी. तेथी गौडपादे लख्युं छे के—

न निरोधो न चोत्पत्ति, र्न बद्धो न च साधकः ।
न मुमुक्षुर्नवैमुक्त, इत्येपापरमार्थता ॥

" खरुं जोतां आत्मानी उत्पत्ति नथी, विनाश नथी ; बंध-नथी, मोक्ष नथी ; साधना नथी, मुमुक्षा पण नथी.'

आ श्लोक लइने पंचदशीकारे लख्युं छे के.

वास्तवौ बन्धमोक्षौतु, श्रुतिर्नसहतेतराम्
पंचदशी, ६-२३४.

'जीवनो बंध अथवा मोक्ष वास्तविक छे, ए वात श्रुति-सिद्ध नथी.'

तेथी अद्वैत मतमां मुक्ति हवे मळवानी नथी, मळेली ज छे. जीव पोतानी मेळेज मुक्त छे. मुक्तिनी शोध करवी एज तेना संबंधमां विडंबना छे. कारणके जीव सर्वदा मुक्तज छे. आ वात समजाववा माटे अद्वैतवादीओ एक द्रष्टांत कहे छे— " कंठचामीकरवत्." तेओ कहे छे के एक बाळकनी डोकमां एक सोनानो हार हतो. एक दिवस ते बाळकने भ्रम थयो के

तेनो हार कोइ चोरी गयुं छे. ते व्याकुळ थयुं अने बधे ठेकाणे हार शोधवा मांडयो, पण कोइ ठेकाणे हारनो पत्तो लाग्यो नहि. त्यारे तेना एक संबंधीए कह्युं के, जे हारनी शोधमाटे तुं मेहनत करेछे, ते तारी डोकमांज लटकी रहेलो छे. त्यारे अतिपासेनी वस्तु- जेने ते अति दूर मानतुं हतुं—ते मेळवीने ते बाळक कृतार्थ थयुं. मुक्तिनुं पण आवुंज छे. तोपण जीव पोताने संसारनी जाळमां बंधाएलो समजीने हाहाकार करेछे. त्यारे सद्गुरु कृपा करीने तेने प्रकृततत्त्वनो उपदेश करेछे. तेथी तेनी अविद्यानी निवृत्ति थाय छे, अने ते पोताना शुद्ध-बुद्ध-मुक्त स्वभावने पामेछे.

अद्वैतवादीओ आ तत्त्व एक द्रष्टांतथी सुंदररुपे समजावे छे. तेओ कहेछे के एक सिंहनुं बच्चुं कोइ कारणथी एक बकरानां टोळामां भळी गयुं. बकराना सहवासथी पोताने पण ते बकरुं कल्पवा-मानवा-लाग्युं, अने बकरा जेवुं बीकण थइने हाथी अने वाघ आवे त्यारे नासी जवा लाग्युं. एक वखत तेना उपर महेरबानी करीने कोइ तेने तळावने कांठे लइ गयुं, अने पाणीमां तेनुं प्रतिबिंब देखाडीने तेने समजावी दीधुं के तुं बकरुं नथी, सिंह छे. त्यारे ते पोतानुं स्वरुप समज्युं अने सिंहना पराक्रमथी हाथी-वाघनी साथे लढवा तैयार थयुं.

जीवनी स्थीति पण बराबर आवीज छे. उपाधिने लीधे

जीव मोह-वश थइने पोतानुं शुद्ध-बुद्ध-मुक्त स्वरुप भूली गयो छे, अने " अनीशयाशोचातिमुह्यमानः " ' ईश्वरभाव भूली जइने मुंझाइने शोक करेछे. जो कदि सद्‌गुरु तेने कही दे के, " तत्त्वमसि, ' ' अयमात्माब्रह्म,' अने ते जो समजी शके के ' सोऽहम्, ' ' अहंब्रह्मास्मि,' तो तरत ज तेनी अविद्यानुं आवरण दूर थइ जाय, अने ते जीव अने ब्रह्मनी एकता पामीने स्वमहिमामां प्रतिष्ठित थाय. तेथी श्रुति कहे छे के—

तद्विज्ञानार्थं सगुरुमेवाभिगच्छेत् समित्पाणिःश्रोत्रियं ब्रह्मनिष्ठम्
(मुंडकोपनिषद्, १-२-१२).

' ते ज्ञान मेळववामाटे शिष्य हाथमां समिध् लइने गुरुनीज समीप जाय.'

आ ब्रह्म के जेनी साथे जीव एकता पामेछे, तेनुं स्वरुप शुं? उपनिषदोनी आलोचना करतां समजाय छे के श्रुतिब्रह्मना बे विभाव-रुप (aspects) नो उपदेश करेछे. एक-निर्विशेष निर्गुण भाव, बीजो सविशेष-सगुणभाव. ब्रह्मना निर्विशेष भावनुं स्वरुप एवुं छे के, ते भावनुं कांइ विशेषण अथवा लक्षण करी शकाय नहि. कोइपण चिन्ह आपी शकाय नहि, के जेथी तेने ओळखी शकाय; कोइपण गुणनो उल्लेख करी शकाय नहि, के जे वडे तेनो विचार करी शकाय. तेथी ए भावने निर्विकल्प-निरुपाधि कहेवामां आवे छे. आ भावनो परिचय आ-

प्रती वखते श्रुति 'नेति, नेति'-एवुं नहि, एवुं नहि,-एटलुं ज मात्र कही शकी छे.

अस्थूलमनण्वमह्रस्वमदीर्धम्। बृहदारण्यक ३८-८

अशब्दमस्पर्शमरुपमव्ययम्। कठ ३-१५.

तदेतद् ब्रह्मापूर्वमनपरनन्तरमबाह्यम्। बृह. आ २-५-१९.

'ते स्थूल नथी, सूक्ष्म नथी, ह्रस्व नथी, दीर्घ नथी.' 'तेने शब्द नथी, स्पर्श नथी, रुप नथी, क्षय नथी.' 'ते आ ब्रह्म कारणरहित, कार्यरहित, अनंतर (जेना मध्यमां अन्यजातिवाळी वस्तु नथी एवुं;) ने अबाह्य (जेनी बहार कोई वस्तु नथी एवुं) छे.

यत्तदद्रेश्यमग्राह्यमगोत्रमवर्णमचक्षुः श्रोत्रं तदपाणिपादम्

मुंडक १-१-६.

'जे ते अदृश्य, अग्राह्य, अगोत्र, अवर्ण, (ने) चक्षु तथा श्रोत्रथी रहित छे ते हाथ पगथी रहित छे.'

तेथी तेने अनिर्देश्य, अनिरुक्त, अवाच्य इत्यादि नाम आपवामां आव्यां छे.

नान्तः प्रज्ञं न बहिःप्रज्ञं नोभयतःप्रज्ञं न प्रज्ञानघनं।
न प्रज्ञं नाप्रज्ञम्। अदृष्टमव्यवहार्यमग्राह्यमलक्षणम
चिन्त्यमव्यपदेश्य मेकात्मप्रत्ययसारं प्रपञ्चोपशमं शान्तं
शिवमद्वैतं चतुर्थं मन्यन्ते स आत्मा स विज्ञेयः। मांडुक्य ७

'जे अतंःप्रज्ञ नथी, बहिःप्रज्ञ नथी, उभयतः प्रज्ञ नथी, प्रज्ञानघननथी, अप्रज्ञनथी, अदृष्ट, व्यवहार करवाने अयोग्य, अग्राह्य, अलक्षण, अचिंत्य, कहेवाने अयोग्य, एकताना ज्ञाननो सार, प्रपंचना उपशमवाळो, शांत, शिव, ने अद्वैत छे, तेने चतुर्थ माने छे, ते आत्मा छे, ते जाणवा योग्य छे.'

तेथी तेने अनिर्देश्य, अनिरुक्त, अवाच्य इत्यादि नाम आपवामां आवे छे.

एतस्मिन्नदृश्येऽनात्म्येऽनिरुक्ते। तैत्तिरीय, २-७

नैव वाचा न मनसा प्राप्तं शक्यो न चक्षुषा। कठ-६

'ते वाक्य, मन अने इंद्रियथी अतीत छे.' 'ते विदित अने अविदित सघळा पदार्थथी जुदो छे.

अन्यदेव तद्विदितादथो अविदितादधि। केन १-३

तेना उद्देशे आपण कहेवायुं छे के—

अन्यत्र धर्मादन्यत्राधर्मादन्यत्रास्मात् कृताकृतात्।
अन्यत्र भूताच्च भव्याच्च यत्तत्पश्यसि तद्वद॥

कठ; २। १४.

'धर्मथी भिन्न, अधर्मथीभिन्न, आ कार्य अने कारणथी भिन्न, तथा भूत अने भविष्यथी जे भिन्न छे, तेने आप जुओ छो, ते कहो.

तेथी गौडपादाचार्ये लख्युं छे के :—

अजमनिद्रमस्वप्नमनामकमरूपकम् ।
सकृद्विभातं सर्वज्ञं नोपचार कथञ्चन ॥
(मांडुक्य कारिका, ३-३६.

'ब्रह्म जन्म रहित, निद्रा रहित, स्वप्न रहित, नाम रहित, रुप रहित, सर्वदा प्रकाश रुप, ने सर्वज्ञ छे. तेमां कोइपण प्रकारे कर्तव्य नथी.'

(उपचार-भाषांतरद्वारा आवापणानुं निरुपण).

श्री शंकराचार्ये अद्वैतमतनुं स्पष्टीकरण करतां आ अने एवी बीजी श्रुतिओ लइने ब्रह्मनो निर्विशेष भाव स्पष्ट कर्यो छे. पण उपनिषद्‌मां जेम ब्रह्मनो निर्गुण भाव प्रतिपादन करनारी श्रुतिओ छे, तेम सगुण भाव प्रतिपादक श्रुतिओनो पण अभाव नथी, एम तेमणे कह्युं छे.

सन्ति उभयलिंगा श्रुतयो ब्रह्मविषयाः । सर्वकर्मा सर्वकामः सर्वगन्धः सर्वरस इत्येवमाद्याः सविशेषलिंगाः । 'अस्थूलम्, अनणु, अह्रस्वमदीर्धम्' इत्येवमाद्याश्च निर्विशेषलिंगाः

ब्रह्मना संबंधमां बे प्रकारनी श्रुतिओ जोवामां आवे छे; एक सगुण-लिंग श्रुति; जेम ते सर्वकर्मा, सर्वकाम, सर्वगन्ध सर्व रस छे. बीजी निर्गुण-लिंग श्रुति, जेम ते स्थूळ पण नथी सूक्ष्म पण नथी, ह्रस्व पण नथी, दीर्घ पण नथी.

तोपण निर्गुण ब्रह्मज श्रुतिने प्रतिपादन करवानो विषय छे,

एवो मत स्थापन करीने, शंकराचार्ये सगुण ब्रह्मनुं खंडन कर्युं छे.

अतश्चान्यतरलिंगपरिग्रहेऽपि समस्तविशेषरहितं निर्विकल्पकमेव ब्रह्म प्रतिपत्तव्यम्, न तद्विपरीतम् । सर्वत्र हि ब्रह्म स्वरूप प्रतिपादनपरेषु वाक्येषु अशब्दमस्पर्शमरूपमव्ययम् इत्येवमादिषु अपास्तसमस्तविशेषमेव ब्रह्म उपदिश्यते । (ब्रह्मसूत्र शंकर भाष्य, ३ । २ । ११)

आथी उभयलिंगनो निर्देश करेलो होवा छतां पण, बधा विशेष रहित, निर्विकल्प ब्रह्मज प्रतिपाद्य छे; तेथी उलटुं (सविशेष-सगुण ब्रह्म) नहि. कारणके उपनिषद् वाक्यमां ज्यां ब्रह्मनुं स्वरूप प्रतिपादन करवामां आव्युंछे (जेम अशब्द अस्पर्श, अरूप, अव्यय इत्यादि) त्यां ब्रह्म सर्व-विशेष रहित छे, एवोज उपदेश आपवामां आव्यो छे.

ब्रह्मनो निर्विशेषभाव, वचन, लक्षण अने निर्देशनी पारनो छे, पण श्रुति-वाक्यो उपर लक्ष आपतां जणाय छे के, तेनो सविशेष भाव, ते आनाथी विपरीत छे. सविशेष ब्रह्मने लक्षणथी लक्षित, विशेषणथी विशेषित, चिन्हथी चिन्हित करी शकाय छे. ते निर्विशेषनी पेठे मन-बुद्धिने अगोचर, अज्ञेय, अमेय, अचिन्त्य नथी.

एष सर्वेषु भूतेषु गूढोत्मा न प्रकाशते ।

दृश्यते त्वग्रया बुद्ध्या सूक्ष्मया सूक्ष्मदर्शिभिः ॥

(कठोपनिषद्, ३ । १२)

'आ आत्मा सर्व भूतोमां गूढ होइने प्रकाशतो नथी. एकाग्रतावाळी सूक्ष्म बुद्धिवडे सूक्ष्मदर्शिओथी ते देखाय छे.'

अध्यात्म योगाधिगमेन देवं, मत्वा धीरो हर्षशोकौजहाति ।

कठ, २-१२.

'ते आत्मारुप देवने आत्मा विषे चित्तनी एकाग्रतारुप जे अध्यात्म योग छे तेनी प्राप्तिवडे साक्षात्कार करीने बुद्धिमान् पुरुष आत्मानी वृद्धि अने हानिना अभावथी हर्ष अने शोकने त्यजी दे छे.'

हृदा मनीषा मनसाभिक्लृप्तो, य एतद् विदुरमृतास्ते भवन्ति ।

(श्वेताश्वतर उपनिषद्, ४-१७)

'ते संशय रहित बुद्धिवडे हृदयमां देखाय छे; जे आने जाणे छे, ते अमरपणुं पामे छे.'

आ सगुण रुपनो परिचय आपतां उपनिषद् नाना प्रकारना सुंदर गंभीर मंत्रो आप्या छे.

नित्यो नित्यानां चेतनश्चेतनानाम्—बृहदारण्यक, ५-१३.

'ते नित्यनुं नित्य छे, चेतननुं चेतन छे.'

'अणोरणीयान् महतो महीयान्'

'ते अणुथी पण सूक्ष्म छे. अने महत् करतां पण महान् छे.'

सर्वस्य वशी सर्वस्येशानः सर्वस्याधिपतिः स न साधुना कर्मणा भूयान्नो एवासाधुना कनीयानेष सर्वेश्वर एष भूताधिपति रेष भूतपाल एष सेतुर्विधरण एषां लोकानामसंभेराय। (बृह. आ. ४।२२।२२).

'ए सौनो प्रभु, सौनो इश्वर, सौनो अधिपति छे; सारां कर्मोवडे ते वृद्धि पामतो नथी, नठारां कर्मथी तेने हानि थती नथी; ते सर्वेश्वर छे, ते भूताधिपति छे, ते भूतपाल छे; ते लोकोनो विभाग करनार, धारक अने सेतु छे.'

एष सर्वेश्वर एष सर्वज्ञ, एषोन्तर्याम्येष योनिः सर्वस्य प्रभवाप्ययौ हि भूतानाम्—मांडुक्य, ६.

'आ सर्वनो नियंता, आ सर्वज्ञ, आ सर्वनुं कारणने आज भूतोनी उत्पति अने प्रलय छे.'

अपाणिपादो जवनो ग्रहिता पश्यत्यचक्षुः स शृणोत्यकर्णः।
स वेत्ति वेद्यं न च तस्यास्ति वेत्ता तमाहुरग्र्यं पुरुषं महान्तम्॥
श्वेताश्वतर, ३।१९.

'तेने हाथ नथी, छतां ग्रहण करे छे; पग नथी छतां चाले छे; आंखो नथी छतां जुए छे; कान नथी छतां सांभळे छे; ते सर्वज्ञ छे छतां तेने कोइ जाणतुं नथी; तेनेज महान् परम पुरुष कहे छे.'

एष आत्माऽपहतपाप्मा विजरो विमृत्यु र्विशोको विजिघि-

त्सोऽपिपासः सत्य कामः सत्यसंकल्पः—छांदोग्य, ८।१।५

'आ आत्मा पापथी रहित, जरा रहित, मृत्यु रहित, शोक रहित, खानपाननी इच्छाथी रहित, सत्य भोगवाळो अने सत्य संकल्प वाळो छे.'

आ सविशेष अथवा सगुण ब्रह्मने उपनिषद्‌मां महेश्वर कहेवामां आवेल छे. अद्वैतवादीओना मत प्रमाणे आ सगुण ब्रह्म अथवा महेश्वर ए मात्र मायानो विकास छे–एनी पारमार्थिक सत्ता नथी. ते उपाधिना काल्पनिक विलास सिवाय वीजुं कांइ नथी.[1] तेथी पंचदशी-कारे कह्युं छे के–

मायाख्यायाः कामधेनो र्वत्सौ जीवेश्वरावुभौ ।
यथेच्छं पिवतां द्वैतं तत्त्वं त्वद्वैतमेव हि॥ (पंचदशी, ६।२७६)

'मायारुपी कामधेनुना जीव अने इश्वर वाछडा छे, मतलवके ए वंन्ने मायिक अवस्तु छे. तेनाथी द्वैतनी सिद्धि थती होय तो भले थाय, पण तत्त्वतो अद्वैतज छे.'

जेम ब्रह्म माया-उपाधिथी ईश्वररुपे प्रतीत थाय छे, तेम ते अविद्या उपाधिथी जीवरुपे प्रतीत थाय छे. ए प्रतीति पण खोटी छे.

---

[1] The Lord as creator, as Lord or Isvara, depends upon the limiting conditions or the Upadhis of name and these, even in the Lord, are represented as products of nescience.—Max Muller's Indian Phi. p. 207.

सत्यं ज्ञानमन्तम् यत् ब्रह्म तद् वस्तु तस्य तत् ।
ईश्वरत्वञ्च जीवत्वम् उपाधि द्वय कल्पितम् ॥

पंचदशी, ३ । ३.

'सच्चिदानंद ब्रह्मज वस्तु छे, ईश्वर अने जीव उपाधि-कल्पित (अवस्तु) छे.'

उपाधि टळी गया पछी अखंड सच्चिदानंद ब्रह्म सिवाय कांइए रहेतुं नथी.

माया विद्ये विहायैवं उपाधि पर जीवयोः ।
अखण्डं सच्चिदानन्दम् परं ब्रह्मैव लक्ष्यते ॥

पंचदशी, १ । ४७.

'ब्रह्म वस्तुतः निरुपाधिक छे. ज्यारे तेमां मायाशक्तिनी उपाधि संयुक्त थाय, त्यारे ते ईश्वर, अने ज्यारे कोषनी उपाधिनो संयोग थाय, त्यारे ते जीव कहेवाय.'

शक्तिरस्त्यैश्वरी काचित् सर्व वस्तुनियामिका ॥

* * * *

तच्छक्त्युपाधि संयोगाद्, ब्रह्मैवेश्वरतां व्रजेत् ॥
कोषोपाधि विवक्षायां, याति ब्रह्मैव जीवताम् ॥

(पंचदशी, ३ । ३८-४०-४१)

आ जे माया-ते ब्रह्मनी शक्ति छे. जेम अग्निनी दाहिका-शक्ति, (बाळवानी शक्ति), तेम ब्रह्मनी माया शक्ति. शक्ति

अने शक्तिमान अभिन्न छे—" शक्ति-शक्तिमतोरभेदात् "—शंकर. आथी माया अने ब्रह्म अभिन्न छे; कारणके माया ब्रह्मनीज शक्ति छे, ब्रह्मथी भिन्न नथी. मायानो परिचय आपतां अद्वैत-वादीओ कहे छे के—

सदसद्भ्याम् अनिर्वाच्या मिथ्याभूता सनातनी.

'माया सत्य पण नथी, मिथ्या पण नथी,—सत् पण नहि, असत् पण नहि. तेनुं स्वरुप अनिर्वचनीय छे.' तेना स्वरुपनुं निराकरण करी शकातुं नथी. तेथी वेदान्तसार कहे छे के—

सदसद्भ्याम् अनिर्वचनीयम् त्रिगुणात्मकम् ज्ञान-विरोधि-भावरुपं यत् किंचित्.

माया भाव-रुपी कांइक छे; ते त्रिगुणात्मक होइ ज्ञाननी विरोधि छे. ते सत् पण नथी, असत् पण नथी.[१]

---

[१] It sometimes seems as if Shankra × × admitted two Brahmans also: Saguna and Nirguna; with or without quality; but this would again apply to a state of Nescience or Avidya only × × The true Brahman, however, remains always Nirguna or unqualified × × In full reality Brahman is as little affected by qualities, as our true self is by Upadhis (conditions). Having no qualities, this highest Brahman cannot be known by predicates. It is subjective and not liable to any objective attribute. This Isvara exists just as every thing else exists, as phenomenally only, not as absolute-

अद्वैतवादीओ कहे छे के, श्रुतिमां ब्रह्मनुं बे प्रकारनुं लक्षण जोवामां आवे छे. स्वरुप लक्षण अने तटस्थ लक्षण.

सत्यं ज्ञानमनन्तं ब्रह्म—तैत्तिरीय उपनिषद, २।१।१.

विज्ञानं आनंदं ब्रह्म—बृहदारण्यक, ३ । ९ । २८.

वगेरे वाक्यो ब्रह्मनां स्वरुप लक्षणनो निर्देश करे छे. अने तेने जे "तज्जलान्" (सर्वं खल्विदं ब्रह्म तज्जलानिति—छांदोग्य ३ । १४ । १) कहेवामां आवे छे, ए तेनुं तटस्थ लक्षण. "तज्जलान्" एटले तज्ज, तल्ल, तदन;—तेमांथी जगत् उपजेलुं, तेमां स्थित, अने तेमां लय पामनारुं छे.

यतो वा इमानि भूतानि जायन्ते । येन जातानि जीवन्ति यत् प्रयन्त्यभिसंविशन्ति—तैत्तिरीय उपनिषद ३ । १.

'जेनाथी प्रसिद्ध आ (सर्व) भूतो उपजे छे, जे वडे उपजेलां जीवे छे, (ने) जेना प्रतिजाय छे, (तथा) एक भावने पामे छे, तेज ब्रह्म.'

यथोर्णनाभिस्तन्तुनोच्चरेद्यथाऽग्नेः क्षुद्रा विस्फुलिंगा व्युच्चरन्त्येवमेवास्मादात्मनः सर्वे प्राणाः सर्वे लोकाः सर्वे देवाः सर्वाणि भूतानि व्युच्चरन्ति—बृहदारण्यक, २ । १ । २०.

---

ly real. When personified by the power of Avidya or Nescience he rules the world, though it is a phenomenal world and determines though he does not cause rewards and punishments.

—(Max Muller's Indian Philosophy p. 220 to 223).

"जेम करोळीओ (असहाय छतां तंतु रचीने पोताथी वि-भाग नहि पामेला) तंतुवडे उपर जाय छे, जेम (एक रुपवाळा एक) अग्निथी अल्प तणखाओ विविध रीते उडे छे, तेमज (असहाय अने अविक्रिय) आ आत्माथी (वागादि) सर्वे इंद्रिओ, (भूरादि) सर्व लोको, (इंद्रिओ ने लोकोना अधि-ष्ठाता अग्निआदि) सर्वे देवो, (ने ब्रह्माथी मांडीने थुंवडा प-र्यंतनां) सर्व प्राणीओ उत्पन्न थाय छे."

जन्माद्यस्य यतः—ब्रह्मसूत्र, १ । १ । २.

आ सूत्रवडे वेदान्त दर्शने तटस्थ लक्षणनोज निर्देश कर्यो छे. "जे सर्वज्ञ सर्व शक्तिमान कारणथी आ जगत्‌नी उत्पत्ति स्थीति, अने लय सिद्ध थाय छे, तेज ब्रह्म." कहेवानी जरुर नथी के, आ सगुण ब्रह्मनुं लक्षण छे. कारण, परब्रह्म ज्यारे शक्तिवाळुं थाय, त्यारेज ते सर्वज्ञ सर्व शक्तिमान् इत्यादि ल-क्षणवाळुं कहेवाय.

त्यारे शुं अद्वैत मत प्रमाणे ब्रह्मथी भिन्न जगत् नामनी कोइ वस्तु, छे के, जेनां उत्पति स्थिति लय कहेवामां आव्यां छे? अद्वैतवादीओ जगत्‌नी सत्यतानो स्वीकार करता नथी. तेओ कहे छे के, एक ब्रह्मज मात्र सत् वस्तु छे;-बीजुं सघळुंज असत्-अवस्तु छे. ब्रह्मज छे, बीजुं कशुंये-कांइपण नथी.

श्लोकार्द्धेन प्रवक्ष्यामि यदुक्तं ग्रंथ कोटिभिः ।

ब्रह्म सत्यं जगन्मिथ्या जीवो ब्रह्मैवनापरः ॥

अद्वैतवादी कहे छे के, करोडो ग्रंथमां जे कहेवामां आव्युं छे, ते हुं अर्ध श्लोकथी कहुं छुं; ब्रह्म सत्य छे, जगत् मिथ्या छे; जीव ब्रह्मज छे–बीजुं कांइ नथी.' कारणके, अद्वैतमत प्रमाणे "एकमेवाद्वितीयम्" मतलबके ब्रह्मज छे, ते सिवाय बीजुं कांइज नथी.

मात्र ब्रह्मज एक सत् छे. ब्रह्म सिवाय बीजुं जे कांइ छे, ते बधुंज असत् छे. खरी रीते तेनी सत्ता नथी. जे आज छे, ते काल नहोतुं, आवती काले रहेशे नहि. जे गइ काले हतुं, ते आज नथी. एज प्रमाणे, जे जाग्रत अवस्थामां छे, ते स्वप्नावस्थामां रहेतुं नथी. स्वप्नमां जे देखीए छीए, ते जाग्रतमां नहोतुं, सुषुप्तिमां पण रहेवानुं नथी. आम छे तो ते असत् नहि तो बीजुं शुं? पण ब्रह्म बधी अवस्थामां छे, हतुं, अने हशे. तेथी मात्र ब्रह्म एकज सत् छे. तेथी श्रुति कहे छे के,

सदेव सोम्येदमग्र आसीदेक मेवाद्वितीयम्–छांदोग्य। ६।२।१

हे प्रियदर्शन! आ पूर्वे सत्‌ज हतुं, एकज अद्वितीय (हतुं).

आत्मावा इदमेक एवाग्र आसीत्–ऐतरेय १ । १.

'प्रसिद्ध आ पूर्वे एक आत्माज हतुं.'

ब्रह्मैवेदं सर्वम्–नृसिंह-तापनी, ७.

"आ सघळुं ब्रह्मज (छे)."

आत्मैवेदं सर्वम् । छांदोग्य, ७-२५-२.
आ सघळुं आत्मा ज (छे)."
नेहनानास्ति किंचन–बृहदारण्यक ४-४-१९
" अहींयां लेश पण नानात्व नथी."
यस्मात् परंनापरम् अस्तिकिंचित्–श्वेताश्वतर ३-९.
" जे (परमात्मा)थी अन्य कांइ उत्कृष्ट नथी."

स एवाधस्तात्स उपरिष्टात्स पश्चात्स पुरस्तात्स दक्षिणतः स उत्तरतः स एवेदं सर्वम् * * * आत्मैवाधस्तादात्मा परिष्टादात्मा पश्चादात्मा पुरस्तादात्मा दक्षिणत आत्मा उत्तरत आत्मैवेदं सर्वम्–छांदोग्य ७,२५-१-२

' तेज नीचेथी (छे,) ते उपरथी (छे,) ते पश्चिमथी (छे,) ते पूर्वथी (छे,) ते दक्षिणथी (छे,) ते उत्तरथी (छे, ने) तेज आ सर्व छे. * * * आत्माज उपरथी (छे,) आत्मा पश्चिमथी (छे,) आत्मा पूर्वथी (छे,) आत्मा दक्षिणथी (छे,) आत्मा उत्तरथी (छे ने) आत्मा ज आ सर्व (छे).'

"एकमेवाद्वितीयम्" आ वाक्यथी बधा भेद विनानुं छे. सजातीय, विजातीय अने स्वगत ए त्रण प्रकारनो भेद तेने स्पर्श करी शकतो नथी. ते निरुपाधि छे एटले देश, काल अने निमित्त ए त्रण प्रकारना उपाधि वगरनुं छे.[1]

[1] The three ultimate categories of time, space and

तेथी योगवासिष्ठ (उत्पत्ति प्रकरण)मां कह्युं छे के-"ज्यारे देश, काळ अने निमित्त तेनीज अंदर रहेलां छे, त्यारे पछी द्वैत पण शुं? अने अद्वैत पण शुं? ब्रह्म द्वैत पण नथी, अद्वैत पण नथी, जात (उत्पन्न थयेलुं) पण नथी ; अजात पण नथी ; सत् पण नथी, असत् पण नथी ; क्षुब्ध पण नथी, प्रशांत पण नथी." तेमां बधां द्वंद्वनो हमेशां समन्वय छे. सघळां द्वैतनो ए छेल्लो अंत छे.

आपणे जोयुं छे के, अद्वैत मत प्रमाणे ब्रह्मज एक अद्वितीय वस्तु छे—बीजुं जे कांइ छे ते अवस्तु छे. जो तेमज होय एटले जो ब्रह्मसिवाय बीजुं कांइज न होय एम नक्की थाय, तो आ जे विविध विचित्रतावाळुं विशाळ जगत् दरेक क्षणे आपणने प्रत्यक्ष जणाय छे, ते क्यांथी आव्युं? ए जगत्ने मिथ्या शी रीते धारवुं? तेना उत्तरमां अद्वैतवादीओ दृष्टांत आपीने जगत्नुं मिथ्यात्व प्रतिपादन करेछे. तेओ कहे छे के—दोरडीमां जेम सापनो भ्रम थाय छे, छीपमां जेम रुपानी भ्रांति थायछे, मरीचि (सूर्यकिरण)मां जेम झांझवाना पाणीनी भ्रांति थाय छे, तेम ब्रह्ममां जगत्नो भ्रम थयो छे. ए भ्रम मात्र छे. एना

---

causality. Time=काल, Space=देश, अने Causality= निमित्त, कार्य कारण संबंध.

वडे जगतनुं खरुं अस्तित्व साबीत करी शकातुं नथी.' दोरडी-मां सापनो भ्रम थवाथी आपणे भय पामीये छीए, छीपमां रुपानो भ्रम थवाथी आपणे लोभाइए छीए, मरीचिमां झांझ-वानां पाणीनो भ्रम थवाथी आपणे आश्वस्त थइए छीए ; छतां ते भ्रम ज छे, भ्रम सिवाय बीजुं कांइज नथी. कारणके

' ए संबंधमां योगवाशिष्ठनो उपदेश नीचे प्रमाणे छे.

स्वप्ने जाग्रदसद्रुपः स्वप्नो जाग्रत्य सन्मयः।
मृतिर्जन्मन्यसद्रुपा मृत्यां जन्माप्यसन्मयं ॥
यो. उ. प्र., ४४, २५.

न कदाचन यन्नास्ति तद् ब्रह्मैवास्ते तज्जगत् ।
तस्मिन्मध्ये पचन्तीमा भ्रांतयः सृष्टिनामिकाः ॥
(यो. उ. प्र. ४४, २८).

यथा तरंगा जलधौ तथेमाः सृष्टयः परे ।
उत्पत्योत्पत्य लीयन्ते रजांसीव महानिले॥
तस्माद् भ्रान्तिमयाभासे मिथ्यात्वम् अहमात्मनि ।
मृगतृष्णा जलचये कैवास्था सर्ग भस्मनि ॥
भ्रान्तयश्च न तत्रान्यास्तास्तदेव परं पदम् ।
(यो. उ. प्र. ४४, २९-३१).

योगवासिष्ठमां बीजे स्थळे घणां ब्रह्मांडनो उल्लेख कर्यो छे.
यथा सूर्योदये गेहे भ्रमन्ति त्रसरेणवः ।

जे वस्तुमां-आधारमां-ते भ्रमनो अध्यास थयो होय ते आधार-

तथेमे परमाकाशे ब्रह्मांड त्रसरेणवः ॥
(यो. उ. प्र. २९, ३७).

जगत्नां मिथ्यात्व संबंधे गौडपादाचार्ये मांडुक्यकारिकामां आ प्रमाणे लख्युं छे—

स्वतो वा परतो वाऽपि न किंचिद्वस्तु जायते ।
सदसत् सदसद्वापि न किंचिद् वस्तु जायते (४,२२).
आदावन्ते च यन्नास्ति वर्तमानेऽपि तत् तथा । (४,३१).
प्रपंचो यदि विद्येत निवर्तेत न संशयः ।
मायामात्रमिदंद्वैत मद्वैतं परमार्थतः । (१, १७).
आदावन्ते च यन्नास्ति वर्तमानेऽपि तत् तथा ।
वितथैःसदृशाः सन्तोऽवितथा इव लक्षिताः ॥ (२, ६).

(वितथैः=मृगतृष्णिकादिभिः सदृशत्वात्--शंकर).

अनिश्चिता यथा रज्जुरन्धकारे विकल्पिता ।
सर्पधारादिभिर्भावै स्तद्वदात्मा विकल्पितः ॥
निश्चितायां यथा रज्वां विकल्पो विनिवर्तते ।
रज्जुरेवेति चाद्वैतं तद्वदात्मविनिश्चयः ॥
मां. का. २, १७-१८.

स्वप्नमाये यथा दृष्टे गंधर्व नगरं यथा ।
तथाविश्वमिदं दृष्टं वेदान्तेषुविचक्षणैः ॥ (२, ३१).

वस्तुनुं ज्ञान थतांज भ्रम बाधित थाय छे. (बाध=खोटापणां-नो निश्चय थवो ते) त्यारे आपणे समजी शकीए छीए के सर्प, रुपुं, झांझवानुं पाणी ए मात्र भ्रमना विजृम्भण हतां; दोरडी, छीप अने मरीचिज साचा पदार्थ-आ प्रमाणे जीवने ब्रह्मनुं ज्ञान थाय, एटले तरतज ब्रह्ममां अध्यस्त जगद्-भ्रम बाधित थाय त्यारे ब्रह्म सिवाय बीजुं कांइपण प्रतीत थाय नहि.' तेथीज प्र बोध-चंद्रोदय-कारे लख्युं छे के—

यत् तत्त्वं विदुषां निमीलति जगत् स्रग्भोगि भोगोपमम्

'जेम रज्जु ज्ञाननां बळथी सर्प भ्रम तिरोहित थाय छे, तेम ब्रह्म ज्ञानथी जगद्भ्रम बाधित थाय छे.'

त्यारे एम जणाय छे के जगत् न होवा छतां पण छे—एवी प्रतीति थाय छे. एवुं शी रीते थाय छे? तेना जवाबमां

'All this is not real but phenomenal; it belongs to the realm of Avidya-Nescience and vanishes as soon as true wisdom or Vidya has been obtained * * It has been called a general cosmical Nescience * * Shankar looks upon the whole objective world as the result of Nescience, he nevertheless allows it to be real for all practical purposes. (Vyavahara r.ham). But apart from this Concession, the fundamental doctrine of Shankar always remains the same. There is Brahmana and Nothing else.—Max Muller's Indian Philosophy Pages, 199, 201, 202 and 209.

अद्वैतवादीओ कहे छे के ब्रह्मनी मायानी बे प्रकारनी शक्ति छे, आवरण अने विक्षेप. आवरण शक्तिथी जीव पोताने ब्रह्मथी जूदो माने छे, अने विक्षेप शक्तिना बळथी आ जगत्-भ्रम-रुप अघटित घटना घडाय छे. तेथी मायाने तेओए 'अघटित-घटनापटीयसी' एवुं नाम आप्युं छे. मायानुं एटलुं सामर्थ्य छे के, जगत् नथी छतां छे एम देखाडे छे. अद्वैत-वादीओ कहे छे के आम थवुं ए कांइ नवुं नथी. कारण के, इंद्रजाळना खेलमां पण एवी शक्तिनो अनुभव आपणने मळे छे. ऐन्द्रजालिक जोनारनी सामे ज्यारे खेल करे छे त्यारे जोनारने प्रत्यक्ष जोवा सांभळवामां आवे छे, पण ए जोयेलुं सांभळेलुं वधुंज भ्रमरुप होय छे; वस्तुतः त्यां जोवानुं के सांभळवानुं कांइपण नथी होतुं[1].

---

[1]संस्कृतसाहित्यमां घणे ठेकाणे इंद्रजाळनो उल्लेख छे. रामायणमां रावणे इंद्रजाळ शक्तिनां बळथी रामनां खोटां मस्तक अने धनुष्यनो भ्रम उत्पन्न करीने सीताने लोभाववानी महेनत करवानुं वर्णन छे. रत्नावळीमां मंत्री योगंधरायणना एक ऐन्द्रजालिक मित्रे आकाशनी खाली जग्यामां सिंहासन उपर बेठेला ब्रह्मा इंद्र वगेरे देखाडी जोनाराने मोह पमाडी छेल्ले काल्पनिक अग्निनो भय उत्पन्न करीने केदखानामां पुराएली नायिकाना उद्धारनुं साधन कर्युं हतुं.

आ वात स्पष्ट करवामाटे श्रीशंकराचार्ये इंद्रजाळना एक आश्चर्यकारक व्यापारनो उल्लेख कर्यो छे.–शून्यमार्गे सूत्रक्रीडा[1].

---

[1] ए बाजी-रमत-आज पण प्रचलित छे. केटलाक वखत पहेलां एक युरोपीयने ए खेल पोतानी नजरे जोइने अंग्रेजी न्युसपेपरमां एनुं जे वर्णन कर्युं छे, ते नीचे उतारीए छीए. इंद्रजाळनी केवी अघटन-घटन-पटुता-होय छे, ते ए वडे साबीत थाय छे.

Many stories have been printed of the marvellous magic of the Indian fakir, but the *Express* publishes one which it would be difficult to beat. It is interesting to note that the writer says he saw the trick performed. The narative is as follows.

We have all heard of the wonderful trick of the Indian fakirs whereby a person appears to climb up in to the sky on a piece of rope or twine yet comparatively few of us have read detailed accounts of the manner in which it is performed. This is probably the greatest trick ever invented, for it is performed in the open—in any field or square. × × .

The fakirs paraphernalia usually consists of a small boy and a dirty bag with a promiscuous jumble of nuts, shell and what not. Having selected his site the fakir begins operation by producing a ball of string apparently from no where, and, after tossing it about for a while, threws it high into the air, retaining the free end of the

string in his hand. Then up and up goes the ball growing smaller and smaller the higher it goes, until it disappears from observation. To all appearences it has sailed up until it reached the nearest stratum of clouds, vanishing behind them. No sooner has the ball disappeared than the fakir lets go the free end of the string, so that you have a line of twine exstending from about five feet off the ground to Heaven knows where.

The old man will than begin a very clever little pantomime. He sets to work by yelling and gesticulating wildly and apparently being much annoyed that the cord, at which he tugs and tugs remains steadfastly in space. As a last resort he calls the boy, telling him to climb the cord and bring the ball down.

Then you will see the spectacle of a lad of twelve or fourteen summer climbing hand over hand up a line of cotton twine about the thickness of a large pin. Up and up, higher and higher, he goes until he also appears to vanish behind the clouds which hid the ball. When last seen he looks to be just about the size of the ball when it disappeared. Then you have a sample of splendid rage that would make a name for any tragedian, the old man working himself into a perfect fury by yelling, dancing, and gesticulating. "Am I to be made an idiot of by a ball of string and a fool by a broth of a boy ? Allah forbid ! I will teach them both, they may not trifle with one so old and wise." That is the substance

of what he says.

Then he will thrust his arm into his filthy old bag and draw forth the most murderous—looking knife you ever saw, and, placing it between his teeth and grasping the twine in both hands, he deliberately begins to climb up the cord, hand over hand, even as the boy had done before him. And presently, he, too, disappears. By that time his audience, European as well as Native, are gaping skywards like so many idiots. There is half a minute's absolute silence, followed by an agonising yell so piercing that it makes one's flesh creep merely to think of it. A second after—though it seems an age,—a dark object comes hurtling down from the sky until with a sickening thud, it lands on the ground a few feet in front of the audience. When the writer last saw this feat performed an army surgeon formed one of the party, and the medical man cooly examined the mass, which proved to be the head of the boy who had climbed the cord. It was severed from the body at about the middle of the neck. A closer scrutiny showed that the face wore a horrible expression, while blood poured from the devided arteries and veins. The twitching of the newly cut muscles and the wind pipe, and the cleanly severed joints of the cervical vertebrae were quite plain to the army surgeon and to the rest of the party, all of whom knew a little of anatomy from the field hospital. Presently down came an arm cut off through the shoulder joint.

ए आपणी प्रचलित जादु विद्यानुं ज रुपांतर छे.

A moment later the other arm dropped.

The doctor said the fakir carved cleverly enough to have been a surgeon at the Royal College. Then came one leg, then the other, and finally the trunk. A moment later the old man was seen coming down the string, and when he dropped to the ground from the end of it, it was seen that he was literally covered with gore from head to foot. The knife still held between his teeth, was fairly dripping with blood. His eyes appeared wilder than ever, his features drawn and he paced back and forth for a few seconds like a chained tiger. Then he collected the head, limbs, and trunk and tossed them into the old bag. While watching this action his audience lost sight of the string and knife, and never saw them again. Slinging the bag over his shoulder, he walked away. This was only a bluff; he had not yet received any bakshish and he never would depart without that. He had moved off only a few paces when it was plain that something was moving inside the bag.

The old man stopped, assumed a surprised expression, put the bag down on the ground and in a moment out crawled the boy as sound in mind and limb as he had ever been. The boy began to smile, and the old man smiling and salaming came forward for his money. This be got in very liberal amount and off he went, leaving his late audience, standing mystified, confused, flabbergasted.

On lookIng for traces of the recently committed tra-

हिप्नोटीझमना संबंधमां घणीवार परीक्षा करवामां आवी छे. तेना वडे पण मायानी अघटन-घटन-पटुता स्पष्ट रीते साबीत थइ छे.

कोइ माणसने हिप्नोटाइझ करीने जादुगर जो संकल्प वडे तेने भ्रम उत्पन्न करवानी इच्छा करे तो सरलताथी तेने ते भ्रम सत्य प्रतीत करावी शके छे. घणीवार एवुं जोवामां आव्युं छे के, जादुगर हिप्नोटीक उंघमां पडेला माणसने कहे के तारी सामे सिंह अथवा सर्प रहेलो छे, तो तरतज ते माणस भयथी संकुचित थइ जाय छे. घणो ताप पडतो होय त्यारे कहे

gedy, the party became aware that where the ground had been red with blood a moment ago no traces was left. Yet the doctor had picked up and handled the different members of the boy's body as they had come tumbling down from the sky, had examined them, and was perfectly positive that the cutting had been the work of a skilful surgeon or student of anatomy.

There is as far as the writer is aware only one way in which people who have witnessed these genuine Hindu fakir's tricks account for them. The fakirs must mesmerise on hypnotise their audience, placeing them in such a mental state that they imagine the whole performance—even doctor, for instance, being befuddled into believing that he had handled the disinembered limbs. How it is done does not matter. It is the acme of conjuring.

के, आज घणी टाढ छे, तो जादुगरना एवा संकल्प मात्रथी तेनुं शरीर टाढथी कंपवा मांडेछे. कांइ—कशुंए चिन्ह न होय ने कहे के, मूशळधारे वरसाद पडे छे तो ते पलळतो होय एवा चाळा करवा मंडी जाय छे. आ प्रमाणे हीप्नोटीझम वडे अ-घटित-घटना बनती जोवामां आवे छे.

अद्वैत-वादीओ कहे छे के, एज प्रमाणे संकल्पना बळथी ब्रह्म माया-शक्तिवडे जीवने जगत्-भ्रम उत्पन्न करे छे. ते ऐ-न्द्रजालिकोमां मुख्य-चुडामणि छे; इंद्रजाळनो विस्तार करीने जीवने मोहित करे छे.

य एको जालवानीशत ईशनीभिः
सर्वाँल्लोकानीशत ईशनीभिः। श्वेताश्वतर ३-१.

'जे एक मायावी नियामकशक्तिओ वडे नियममां राखे छे, नियामक शक्तिओ वडे सर्व लोकोने नियममां राखे छे.'

आज दार्शनिकोनो परिचित-Idealism—विज्ञानवाद, इं-ग्लांडमां बर्कलीए पहेलवहेलो आ मतनो प्रचार कर्यो; पछी ह्युम, मील वगेरेए ए मतनो विस्तार करीने माध्यमिक बौद्ध ना जेवा शून्यवादमां तेओ पड्या. पण अद्वैत-वाद शून्यवाद नथी. ए मतमां जगत् रुप भ्रमनो आधार शून्य नथी, ब्रह्म छे. अद्वैत-वादीओ कहे छे के, ब्रह्मज जगत् रुपे विवर्त पाम्युं छे. दूध जेम विकार पामीने दहिं रुपे परिणाम पामे छे, तेम नहि.

ब्रह्मनुं पोतानुं स्वरुप एवुं ने एवुंज रहे, तेने कशो विकार के परिणाम थाय नहि. तेनी कूटस्थ अवस्थामां कोइ प्रकारनो फेरफार के व्यत्यय थाय नहि ; छतां ते जगत् रुपे विवर्तित थाय. एनुंज नाम विवर्त.[१]

सतत्त्वतोऽन्यथा प्रथाविकार इत्युदीरितः ।
अतत्त्वतोऽन्यथा प्रथाविवर्त इत्युदाहृतः ॥

तेथी शंकराचार्ये शून्य-वादनो परिहार करवाना हेतुथी आ प्रमाणे लख्युं छे—

न तावद् उभयप्रतिषेध उपपद्यते शून्यवाद प्रसंगात्. किंचित् हिं परमार्थम् आलंब्य अपरमार्थः प्रतिषिध्यते यथा रज्ज्वादिषु सर्पादयः

अथातो आदेशो नेति नेति इति तत्र कल्पित रुप प्रत्याख्यानेन ब्रह्मणः स्वरुपवेदनमिदं इति निर्णीयते. तदास्पदं हीदं समस्त कार्यं 'नेति नेति' इति प्रतिषिद्धम्. युक्तं च कार्यस्य वाचारंभण शद्धादिभ्योऽसत्त्वमिति नेति नेतीति प्रतिषेधनम् न तु ब्रह्मणः सर्व कल्पना मूलत्वात् * * * तस्मात् प्रपं-

[१] As the rope is to the snake, so Brahman is to the world. There is no idea of claiming for the rope a real change into a snake and in the same way no real change can be claimed for the Brahman when perceived as the world.

—Max Muller's Indian Philosophy, p. 209.

चमेव ब्रह्मणि कल्पितं प्रतिषेधति परिशिनष्टि ब्रह्मेति निर्णयः।

मतलबके जगत् अने जगत्नो आधार ए बंनेनो निषेध योग्य नथी, कारणके एम थाय तो शून्य-वादनो प्रसंग आवे. कोइ परमार्थ सत्य वस्तु छे ज. तेना आधारथीज-तेने लीधेज अपरमार्थ-असत्य बाधित थाय छे. "नेतिनेति" वडे कार्यनोज निषेध सुसंगत छे, कारणके कार्य असत्, काल्पित, कहेवा मात्र छे. जेम रज्जुमां सर्पनो निषेध थायछे. "नेतिनेति" आ नथी, आ नथी—एवा उपदेशवडे ब्रह्ममां कल्पाएली अवस्तुनो निषेध करीने तेनुं स्वरुप प्रतिपादन करवामां आव्युं छे. आ समस्त कार्य,—ब्रह्म जेनुं आस्पद अथवा आधार छे,—ते कार्यनोज निषेध करवामां आव्यो छे. पण ब्रह्मनो कदि पण निषेध थइ शकतो नथी[1]. कारणके तेतो कल्पना मात्रनुं मूळ

[1]विवतवादे ए शून्यवाद नथी. ए शंकराचार्ये ब्र. सू. ३। १। ३ अने ब्र. सू. २। १। १४ सूत्रनां भाष्यमां पण प्रतिपादन कर्युं छे.

Creation is not real in the highest sense in which Brahman is real, but it is real in so far as it is phenomenal for nothing can be phenomenal except as the phenomenon of something that is real. × × All that we should call phenomenal, comprehending the phenomena of our inward as well as of our outward experience, was unreal. But as the phenomenal was considered impossible with-

छे. आथी एमज सिद्ध थाय छे के, ब्रह्ममां कल्पित आ असत् प्रपंचज बाधित थाय छे;—ब्रह्म (जे सत् वस्तु छे ते) बाकी रहेछे.

त्यारे शुं जगत् स्वप्ननी पेठे खोटुं छे ? ए वात पण शंकर स्वीकारता नथी. तेमणे ३-२-१ ब्रह्मसूत्रना भाष्यमां आ प्रमा-

---

out the noumenal, that is without the real Brahman, it was in that sense real also, that is, it exists and can only exist, with Brahman behind it. × × × It exists through Brahman and would not be at all but for Brahman. × × The danger with Shanker's Vedantism was that what to him was simply phenomenal should be taken purely fictitious. × × Maya is the cause of a phenomenal, not of a fictitions world.

—(Max Muller's Indian Philosophy, Pages 211-14-15-43.)

Even the apparent and illusory existence of a material world requires a real substratum which is Brahman just as the appearence of the snake in the simile requires the real substratum of a rope. × × Buddhist Philosophers held that every thing is empty and a unreal and that all we have and know are our perceptions only. × × × Shanker himself argues most strongly against this extreme idealism and × × enters into a full argument against the nihilism of the Buddhists. × × × The Vedantist answers that though we perceive perceptions only, these perceptions are always perceived as perceptions of something.

—(Max Muller's Indian Philosophy, page 209-11).

णे लख्युं छे.

किं प्रबोध इव स्वप्नेऽपि पारमार्थिकी सृष्टिराहोस्विन् माया मयीति * * * तस्मात् तथ्य रुपैव संध्ये सृष्टिरिति। एवं प्राप्ते प्रत्याह मायामात्रं तु कात्स्न्येनानभिव्यक्तस्वरुपात् (ब्र. सू. ३-२-३) मायैव संध्ये सृष्टिर्न परमार्थगन्धोप्यास्ति *** तस्मान् मायामात्रं स्वप्नदर्शनम् * * * पारमार्थिकस्तु नायं संध्याश्रयः सर्गो वियदादिसर्गवद् इत्येतावत् प्रतिपाद्यते। न च वियदादि सर्गस्यापि आत्यंतिकं सत्यत्वमस्ति। प्रतिपादितं हि " तदनन्यत्वं आरंभण शब्दादिभ्यः" (ब्र. सूत्र २-१-१४) इत्यत्र समस्तस्य प्रपंचस्य मायामात्रत्वं। प्राक्तु ब्रह्मात्मत्वदर्शनाद् वियदादिप्रपंचो व्यवस्थितरुपोभवति। संध्याश्रयस्तु प्रपंचः प्रतिदिनं बाध्यत इति। अतो वैशेषिकमिदं संध्यस्य मायामात्रत्वमुदितम्। ३-२-४ सूत्रनुं भाष्य.

जाग्रत अवस्थानी पेठे स्वप्नमां पण शुं पारमार्थिक सृष्टि छे, अथवा माया-मय सृष्टि छे? "स्वप्नमां पण सत्य सृष्टि छे" ए मतनुं खंडन करीने सूत्रकार कहे छे के "मायामात्रन्तु" इत्यादि (३। २। ३ सूत्र). स्वप्नमां जे सृष्टि छे ते मात्र मायिक छे; तेमां सत्यनो गंध पण नथी, तेथी स्वप्नदर्शन माया मात्र छे. तेथी जे सृष्टि स्वप्ननो आश्रय करीने उद्भूत थाय छे, ते आकाशादि सृष्टिनी पेठे पारमार्थिक नथी; आ पण सिद्ध थयुं.

मात्र आटलुं कहेवामां आवे तो पछी जगत्‌नी सत्यता स्वीकारवामां आवी जाय, एवी आशंकाथी शंकराचार्य त्यांज कहे छे के "पण आकाशादि सृष्टि आत्यंतिक सत्य छे, एम नथी. २-१-१४ सूत्रमां आखो प्रपंचज मायामात्र छे, एवुं सिद्ध कर्युंछे, त्यारे स्वप्न-सृष्टि अने जाग्रतसृष्टिमां भेद ए छे के, स्वप्नद्रष्ट प्रपंच हमेशांज बाधित थाय छे, पण आकाशादि प्रपंच, ब्रह्मनी साथे आत्माना एकपणानो अनुभव न थाय त्यां सुधी बाधित थतो नथी. आथी स्वप्नसृष्टि विशेष भावे मायिक छे."

पण शंकरना गुरुना गुरु गौडपाद जगत्‌ने स्वप्नसृष्टिनी पेठे मिथ्या कहे छे.

अद्वयंच द्वयाभासं मनः स्वप्ने न संशयः ।
अद्वयंच द्वयाभासं तथा जाग्रन्न संशयः॥
मनोदृश्य मिदं द्वैतं यत्किंचित् सचराचरम्।
मनसो ह्यमनीभावे द्वैतं नैवोपलभ्यते ॥

गौडपादकृत मांडुक्य उपनिषद्‌नीकारिका ३-३०-३१

(जेम) स्वप्नमां अद्वैत (छतां) पण मन द्वैताभास रुप (जणाय छे एमां) संशय नथी. तेम जाग्रतमां पण अद्वैत (छतां मन) द्वैताभास रुप (जणाय छे एमां) संशय नथी.

मनवडे देखवा योग्य जे कांइ चर अचर सहित आ द्वैत (छे ते सर्व मन ज छे,) कारणके मनना अमनी भावमां द्वैत नथी-

जणातुं.

नहि स्वप्ने हस्त्यादिग्राह्यं ग्राहकं चक्षुरादि द्वयं विज्ञान व्यतिरेक नास्ति। जाग्रदपि तथैव। परमार्थ सद्विज्ञान मात्राविशेषात्।

. अर्थात् 'स्वप्नमां ग्राह्य ग्राहक–विषय इंद्रिय, ए द्वैतनी वास्तविक सत्ता नथी ; केवल विज्ञान (Idea) मात्र छे. जाग्रत पण तेवुं छे. बंने अवस्थामां मात्र विज्ञानज सृष्टिरुपे प्रतीत थाय छे. आ विज्ञान परमार्थे सत्–आत्यान्तिक सत् छे.' तेथी जगत्मां विज्ञान सिवाय बीजी कोइ पण सत्ता नथी. विज्ञानज जगत्रुपे प्रतिभात थाय छे ! देखायछे ! गौडपाद नीचे प्रमाणे कहे छे—

जाग्रच्चित्तेक्षणीयास्ते नविद्यन्ते ततःपृथक् ।
तथातद्दृश्यमेवेदं जाग्रतश्चित्तमिष्यते ॥

मांडूक्यउपनिषद्नी गौडपादकारिका ४-६६

'जाग्रद् (अवस्थावाळा पुरुषना) चित्तथी देखवायोग्य ते (शरीरो) तेथी (जाग्रद् अवस्थावाळा पुरुषना चित्तथी) भिन्न नथी, तेम जाग्रद् (अवस्थावाळा पुरुष)नुं चित्त ते वडे (जाग्रतना द्रष्टावडे) जोवा योग्यज अंगीकार कराय छे.'

योगवासिष्ठ पण घणे ठेकाणे एवो मत जणावे छे—

यस्यचित्तमयीलीला जगदेतच्चराचरम् ।

मृगतृष्णातरंगिण्यो यथाभास्करतेजसः ।
सर्वादृश्यदृशोर्द्रष्टु र्व्यतिरिक्तानरूपतः ॥
(योगवासिष्ठ, उत्पत्ति, ९४-२९)

यथा स्थितम् इदम् विश्वम् निजभावक्रमोदितम् ।
नतत् सत्यं न चासत्यं रज्जुसर्पभ्रमोयथा ॥
मिथ्यानुभूतितः सत्यम् असत्यं सत्परीक्षितम् ॥
(योगवासिष्ठ उत्पत्ति, ४०-४१)

'आ चराचर जगत् ब्रह्मनी चिन्मयीलीला (संकल्प) मात्र छे * * जेम मृगजळ ए सूर्यनां किरण सिवाय बीजुं कांइज नथी, तेम बधुं दृश्यदर्शन, द्रष्टा सिवाय बीजुं कांइज नथी. आ आखुं विश्व, द्रष्टाना भाव मात्रथी उदित थयेलुं छे. ते सत्यपण नथी, असत्य पण नथी; जेम रज्जुमां सर्पनो भ्रम छे तेम. मिथ्यानो पण ज्यारे अनुभव थाय छे, त्यारे सत्य छे; पण सत्यनी परीक्षामां अवश्य असत्य छे.

आज मतलबनुं प्रकाशानंदे सिद्धांत-मुक्तावलीमां लख्युं छे

प्रतीतिमात्रमेवैतद् भाति विश्वं चराचरम् ।
ज्ञानज्ञेय प्रभेदेन यथास्वाप्नंप्रतीयते ।
विज्ञानमात्रमेवैतद् तथाजाग्रच्चराचरम् ॥
रज्जुर्यथाभ्रान्तदृष्ट्या सर्परुपाप्रकाशते ।
आत्मा तथा मूढबुद्धया जगद्रूपःप्रकाशते ॥

'आ[1] जे स्थावर जंगमात्मक जगत् देखायछे—ते प्रतीति मात्र छे.' जेम स्वप्नमां देखाएलुं जगत्–ज्ञान अने ज्ञेयना भेदथी जुदे रुपे देखाया छतां पण विज्ञानथी जुदुं नथी, तेम जाग्रतमां देखातुं स्थावर जंगमात्मक जगत् पण विज्ञानथी जुदुं नथी. जेम नजरना दोषथी दोरडी साप रुपे जणाय छे, तेम आत्मा पण बुद्धिना मोहथी जगत्रुपे देखायछे.

अद्वैतवादीओ जगत्नी व्यावहारिक सत्तानो स्वीकार करे छे. व्यवहारभावे जगत् सत्य छे, ए वातमां तेमने कशी आपत्ति-अडचण नथी. जगत्ने परमार्थे सत्य मानवामां तेमने वांधोछे.[2] "प्राक् ब्रह्मात्मनाप्रतिबोधात् उपपन्नः सर्वो लौकिको वैदिकश्चव्यवहारः" 'जीवब्रह्मनी एकतानुं ज्ञान थाय त्यां सुधी लौकिक अने वैदिकव्यवहार उपपन्न छे.' पण एम कहेवाथी जगत् परमार्थे सत् नथी. शंकराचार्य कहे छे के "एक रुपेणह्यवस्थितो योऽर्थः सपरमार्थः" जे वस्तु सर्वत्र सर्वदा एकज रुपे रहे, तेज सत्य, तेज परमार्थ ;" मतलबके जेनो कोइ पण वखते कोइपण अवस्थामां बाध न थाय तेज परमार्थ. ब्रह्म सिवाय बीजो कयो पदार्थ परमार्थ सत् होइ शके ? तेज सर्व

---

[1] Its essi is percipi.

[2] व्यवहार अने परमार्थनो भेद जर्मन दर्शनना noumenon अने phenomenon ना भेदने घणे भागे मळतो छे.

काले सर्व स्थले निर्बाध छे. ते एक अने अद्वितीय छे. तेज परमार्थ सत् छे. "एकत्वमेव एवं पारमार्थिकं दर्शयति"-शंकर. 'अद्वैतज पारमार्थिक छे, जूदापणुं भिन्नता-व्यावहारिक छे. पंचदशीकार कहेछे के--

मासाब्दयुगकल्पेषु गताऽगम्येष्वनेकधा ।
नोदेति नास्तमायाति संविदेषास्वयंप्रभा ॥

अनेक प्रकारे गएला अने आवता महिना, वर्ष, युग अने कल्पमां ज्ञान एक (जछे). ज्ञान उदय पामतुं नथी, अस्त पामतुं नथी. ए (ज्ञान) स्वप्रकाशरुप (छे).

अद्वैत-वादीओ कहेछे के,–सत्य असत्यनुं लक्षण शुं? कोइ पदार्थ सत्य छे के असत्य छे, ते आपणे क्यां चिन्हपरथी जाणवुं? तेमना मत प्रमाणे जेनो बाध न थाय ते सत्य[1]. रस्ता उपर एक कटको दोरडी पडी छे; अंधारामां ए रस्ते जतां ते साप छे एवो भ्रम थयो; अने भयथी नासवा मांडयुं. ए वखते हाथमां दीवो लइ एक मुसाफर आवी चडयो. ते दीवाना अजवाळाथी जोयुं, तो में जेने सर्प मान्यो हतो, ते सर्प नहोतो पण मात्र दोरडी हती, एम जाणतां मारो भय गयो. आ प-

[1]पाश्चात्य दार्शनिक हर्बर्टस्पेन्सरे पण पोताना First Principles नामना ग्रंथमां सत्य-मिथ्यानुं आवुं लक्षण बताव्युं छे, के जे persistent (निर्बाध) तेज सत्य.

माणे मारो सर्प भ्रम रज्जुज्ञानथी बाधित थयो. आथी, आ ठे-काणे मारो सर्पानुभव असत्य समजवो.

बीजुं, एक दिवस रस्ते चालतां फेण विस्तारीने देडकां खाइ जतो एक अजगर नजरे चडयो. कुतूहळथी हुं त्यां उभो रही जोवा लाग्यो. सर्पराजे केटलाक वखत सुधी आज काम कर्युं ते में जोया कर्युं. छेल्ले तेणे मारा तरफ नजर करी. मारा हाथमां लाकडी हती ते लाकडी वडे हुं तेने मारवा तैयार थयो. मारी आ तैयारी जोइ तेणे त्यांथी नासवा मांड्युं. आ ठेकाणे मारुं सर्प ज्ञान कोइ रीते बाधित थयुं नहि. तेथी आ ज्ञानने सत्य कहेवुं,

सत्य असत्यनो आ साधारण परिचय छे. पण एमां विशेष छे. वर्तमान, भूत, भविष्य ए त्रणे काळ साथे आपणे परिचित छीए. कोइ वस्तु आज छे, पण जो काल न रहेतो शुं तेने सत्य कहेवाय? कोइ वस्तु एक महिना पहेलां नहोती, आज थइ छे, तेने पण शुं सत्य कही शकाय? आ आपणुं शरीर ; केटलां एक वरस पहेलां ते नहोतुं, वळी केटलांक वरस पछी पण ते हशे नहि ; तो ए सत्य के असत्य? आग्रानो ताजमहेल, जे आपणी आंखने आनंद आपे छे, ते अकब-र बादशाहना वखतमां नहोतो, अने भविष्यमां कोइ वखते कोइ राजाना समयमां हशे नहि ; तो ए ताजमहेलने शुं सत्य

कही शकाय ? अद्वैतवादीओना मत प्रमाणे जे त्रणे काळमां निर्बाध नथी, एटले जे पदार्थनो वर्तमान काळमां, भूतकाळमां के भविष्यकाळमां बाधछे, बाध हतो अथवा बाध थशे, ते सत्य नथी, असत्य छे.

बीजी पण एक वात छे. माणसनी चार अवस्था छे--जाग्रत, स्वप्न,सुषुप्ति अने तुरीया. जाग्रत अवस्थामां आपणने जे अनुभव थाय छे, ते अनुभव स्वप्न अथवा सुषुप्तिमां थतो नथी. वळी स्वप्नमां जेनो अनुभव थाय छे, तेनो अनुभव जाग्रत अथवा सुषुप्ति वखते थतो नथी. अद्वैत-वादीओ कहेछे के, जे वस्तु जाग्रत , स्वप्न, सुषुप्ति अने तुरीय ए चारे अवस्थामां निर्बाध-कोइ वखते, कोइ अवस्थामां जेनो बाध थाय नहि,--तेज परमार्थ वस्तु. एक ब्रह्मामांज सत्यनुं आ लक्षण जोवामां आवे छे ; तेथी ब्रह्मज सत्य ;--बीजुं सघळुं असत्य.

जगत् ज्यारे मायामात्र, काल्पनिक, असत्य छे त्यारे अद्वैतमत प्रमाणे सृष्टिनी वातज थइ शके नहि, कारणके जेने माथुंज नथी, तेने वळी माथानुं दरद थायज शी रीते ? आथी जगत्‌नी रचनानी वात "राहोःशिरः"--माथा विनाना राहुना माथा जेवी छे[१].

[१] The fact being that strictly speaking there is with the Vedantist no matter at all in our sense of the word. Creation in our sense can not exist for the Vedantist.

शंकराचार्य कहे छे के--

ब्रह्म-व्यतिरेकेण कार्यजालस्या भावः। विवेकजातस्यानृता भिधानात् * * मिथ्याज्ञानविजृंभित नानात्वं।

(२-१-१४ सूत्रनुं भाष्य.)

'ब्रह्म-सिवाय बीजुं कांइ पण नथी. कार्य, विकार,-असत्य छे ; मिथ्याज्ञाननुं विजृंभण छे. तोपण व्यवहारिक भावे शास्त्रोमां जगत्नी उत्पत्ति स्थिति वगेरेनी वात कहेवामां आवी छे. ए भावे ब्रह्मज जगतनुं उपादान अने निमित्त कारण छे. सांख्यो एकली प्रकृतिनेज जगत्नुं कारण कहेछे, ते योग्य नथी.'

ब्रह्म सिवाय बीजुं कांइपण नथी. जगत नामनोजे भ्रम थयो छे तेमां अने ब्रह्ममां मात्र नामरुपनो भेद छे. जगत्मां जे कांइ

The effect is always supposed to be latest in the cause. Hence Brahman is every thing and nothing exist besides Brahman. —Max Muller's Indian Philosophy.

' " ईक्षते नाशिद्धम् " आ ब्रह्मसूत्रना भाष्यमां अने २-१-१४ सूत्रना भाष्यमां शंकराचार्ये ए विषयनो विस्तार कर्यो छे. ' नित्य शुद्ध बुद्ध मुक्त स्वरुपात् सर्वज्ञात् सर्वशक्ते रीश्वरात्–जगज्जनिस्थितिप्रलया नाचेतनात् प्रधानाद् अन्यस्माद्वा. '

पदार्थ छे, ते ब्रह्म सिवाय बीजुं कांइ पण नथी[1]. जेम कुंडळ, वलय, हार वगेरे बाह्यद्रष्टिथी जुदां होवा छतां पण रसायननी नजरे जोतां एक सोना सिवाय बीजुं कांइ पण नथी, तेम आ जुदी जुदी विचित्रतावाळुं जगत् वस्तुतः ब्रह्म सिवाय बीजुं कांइपण नथी. मात्र नामरुपनोज तफावत छे. कोइनुं नाम हार कोइनुं नाम वलय; कोइनुं नाम पर्वत, कोइनुं नाम नदी. हारनुं रुप एक प्रकारनुं, वलयनुं रुप एक बीजा प्रकारनुं, पर्वतनुं रुप एक प्रकारनुं; नदीनुं रुप एक बीजा प्रकारनुं;--- मात्र आज भेद. नाम अने रुपनो भेद, वस्तुगत कोइ-पण भेद नहि. जेम हार अने वलयमां नाम अने रु-पनो भेद होवा छतां पण बंने वस्तुतः सुवर्णज छे, तेम जगत्‌ना पदार्थ मात्रमां पण नाम अने रुपनो प्रभेद छे. कोइनुं नाम नदी, कोइनुं नाम पर्वत; कोइनुं रुप माणसना जेवुं, कोइनुं वृक्षना जेवुं होवा छतां पण सघळुं ब्रह्मज छे. का-रणके, जगत्‌मां ब्रह्म सिवाय बीजुं कांई छे नहि. तेथीज क-हेवामां आव्युं छे के—वाचारंभणं विकारो नामधेयं मृत्तिका इत्येव सत्यं (छां. ६-१-४).

'वाणीनो विषय, कार्य नाम (ज छे, सत्य नथी,) मृत्तिका ज सत्य छे.'

---

[1] The substance of the world can be nothing but Brahman. It exists through Brahman and would not be at all but for Brahman.—(Max Muller's Indian Philosophy).

अनेनैव जीवेनात्मनाऽनुप्रविश्य नामरूपे व्याकरोत् ।
(छांदोग्य ६ । ३ । ३.)

'आणे जीव रुपवडेज अनुप्रवेश करीने नामरुपने प्रगट कर्यां.'

तन्नामरुपाभ्यां व्याक्रियत । बृहदारण्यक-१ । ४ । ७.

'ते नामरुप वडेज विस्पष्ट थयुं.'

आकाशो वैनाम नामरुपयोनिरहिता। छांदोग्य,८ । १४। १

'आकाशज [ब्रह्म] प्रसिद्ध नामरुपने स्पष्ट करनार छे.'

अद्वैतमत प्रमाणे जीव अने जड ए बंने असत्य छे, एम उपरना उताराओथी समजाय छे. बंनेनी अविद्याथी उत्पन्न थयेली व्यावहारिक [Phenomenal] सत्ता मात्र छे--पारमार्थिक [Real] सत्ता नथी.' शंकराचार्य कहे छे के सूत्रकारनो पण आवोज अभिप्राय छे, तेथीज तेणे पारमार्थिक भावे जीव अने जडनी असत्ता अने व्यवहारिक भावे बंनेनी

' The soul and the world both belong to the realm of things which are not real and have little if any thing to do with the true Vedanta. It rests chiefly on the tremendous synthesis of subject and object, the identification of cause and effect, of the I and the it.

If there is one Brahman and nothing beside it × × how then are an to account for the many fold. Thus, the many individuals and the immense variety of the objection world? × × It can therefore be due only to what is called Avidya, Niscience.

—Max Muller's Indian Philosophy (p. 223).

सत्ता प्रदिपादन करी छे. "सूत्रकारोऽपि परमार्थाभिप्रायेण 'तदनन्यत्वम्' इत्याह। व्यवहाराभियेनप्रातु 'स्याल्लोकवद' इति महासमुद्र स्थानीयतां ब्रह्मणः कथयाति"---२।१।१४ ब्रह्मसूत्रनुं शांकरभाष्य.

आपणे जोयुं छे के, अद्वैत मत प्रमाणे ईश्वर अथवा सगुण ब्रह्मनी पण पारमार्थिक सत्ता नथी. तेपण मात्र व्यवहारिक (Phenomenal) छे.[1]

अद्वैत वेदान्त मतमां ज्यारे जीव अने ब्रह्म अभिन्न छे,–जे जीव तेज ब्रह्म छे, त्यारे तेमां भक्तिनुं स्थान नथी. कारणके,

---

[1] श्रीशंकराचार्ये (२-१-१४ सूत्रना भाष्यमां) कह्युं छे के– एवमविद्याकृत नामरूपोपाध्यनुरोधीईश्वरो भवति, व्योमेव घटकरकाद्युपाध्यनुरोधी। स च आत्मभूतान् घटाकाशस्थानी यान् अविद्याप्रत्युपस्थापितनामरूपकृतकार्यकरण संघातानु रोधिनो जीवाख्यान् विज्ञानात्मनः प्रतीष्टे व्यवहारविषयो। तदेवं अविद्यात्मकोपाधिपरिच्छेदापेक्षमेव ईश्वरस्य ईश्वरत्वं सर्वज्ञत्वं सर्वशक्तित्वञ्च ; न परमार्थतो विद्ययापास्तसर्वोपाधि-स्वरूप आत्मनि ईशित्रीशितव्य सर्वज्ञत्वादि व्यवहार उपपद्यते * * परमार्थावस्थायाम् ईशित्रीशितव्यादिव्यवहारभावः प्रदर्शते। व्यवहारावस्थायां तूक्तः श्रुतावपि ईश्वरव्यवहारः एष सर्वेश्वर एष भूताधिपतिः इत्यादि

भक्त अने भजनीय जुदा जुदा न होय त्यारे भक्तिनो विकास शी रीते थाय ? तेथी अद्वैतमतावलंबी निश्चळदास पोताना रचेला " विचार सागर " ग्रंथना आरंभमां शिष्योनी नमस्कार करवानी रीतनुं रक्षण करवा जतां महा मुंझवणमां पड्या छे. ते कहे छे के, ज्यारे हुं जते—" सोहं आपे आप," ज्यारे,—

अब्धि अपार स्वरुपमम, लहरीविष्णु महेश ।
विधि रवि चंदा वरुणयम, शक्तिधनेश गणेश ॥

जे समुद्रनी, ब्रह्मा, विष्णु, शंकर, सूर्य, चंद्र, वरुण, यम, शक्ति, कुबेर, गणेश वगेरे लहेरो मात्र छे, ते अपार समुद्र हुं पोते छुं–त्यारे " काकुंकरुं प्रणाय "—' कोने प्रणाय करुं ? जो कहोके जीव अने ईश्वरमां व्यवहारिक भेद छे, ते भेदनो आश्रय लइने इश्वरने प्रणाम करवा, तो तेपण संभवतुं नथी कारण—

जा कृपालु सर्वज्ञको, हियधारत मुनिध्यान।
ताको होत उपाधितें, मोंमें मिथ्या भान ॥

मुनीओ एक कृपाळु सर्वज्ञ (ईश्वर)नुं चित्तमां ध्यान धरे छे खरा, तण तेतो मात्र उपाधिनो अपघात छे—असत्य पदार्थ छे; मिथ्याज्ञाननी रचना छे ; तेने शी रीते प्रणाम कराय ? आ बधो विचार करीने पछी निश्चळदासे प्रणाम कर्या नथी.

पण भक्तिनो अवकाश न होवा छतांये अद्वैतवादमां उपासनानुं निर्दिष्ट स्थान छे. पण आपणे उपासनानो जे अर्थ समजीए छीए, ते उपासना नथी. अद्वैतवादीनी उपासना-"विशिष्टचिंतन प्रकार" छे. आ उपासना त्रण प्रकारनी छे,— अंगाववद्ध, प्रतीक अने अहंग्रह उपासना. साधक यज्ञनां बधा अंगोमां ब्रह्म भावना करी शके, "इदं उद्गीथं ब्रह्मइत्युपासीत" आ उद्गीथनी (यज्ञनां अंग विशेषनी) ब्रह्म भावनाथी उपासना करवी'. आ अंगाववद्ध उपासनानो उपदेश छे. ए प्रमाणे " लोकेशुपंचविधंसामोपासीत " (छांदोग्य २-२-१) वाचिसप्तविधं सामोपासीत " (छांदोग्य २-८-१) वगेरे घणा उपदेश उपनिषद्मां जोवामां आवे छे. आवी उपासनाना संबंधमां गीता कहेछे के—

ब्रह्मार्पणं ब्रह्महविः ब्रह्माग्नौ ब्रह्मणा हुतम् ।
ब्रह्मैव तेन गंतव्यं ब्रह्मकर्म समाधिना ॥

अर्पणब्रह्म, हविब्रह्म, अग्निब्रह्म, होम्युंब्रह्म, ने ते जवानुं ब्रह्ममांज, ब्रह्मकर्म समाधिथी करीने.

बीजी प्रतीक उपासना—" मनोब्रह्मइत्युपासीत " " आदित्यो ब्रह्म इत्युपासीत," 'मन ब्रह्म छे एम धारीने उपासना करवी.' 'सूर्यने ब्रह्म धारीने जपासना करवी,'—इत्यादि प्रतीक उपासनानो उपदेश, छांदोग्य उपनिषद्ना ७ मा अ-

ध्यायमां घणीवार करवामां आव्यो छे. जे ब्रह्म नथी, तेने ब्रह्म धारीने तेमां ब्रह्मनी भावना करीने–उपासना करवी, ए प्रतीक उपासनानो मर्म छे.

अद्वैतवादीओ कहेछे के, ए संगत–युक्तियुक्त नथी. तेमना मत प्रमाणे तो अहंग्रह उपासनाज खरी उपासना छे. आत्मा ब्रह्मथी अभिन्न छे,---" सोऽहं" " अहं ब्रह्मास्मि "--इत्यादि भाव साधन एज आत्म-ग्रह उपासना " तत्वमसि," " अयमात्माब्रह्म "–वगेरे श्रुतिवाक्योमां अहंग्रह उपासनानो उपदेश आपेलो छे.

आत्मेति तूपगच्छन्ति ग्राहयन्तिच
न प्रतीके न हि सः
ब्रह्मदृष्टिरुत्कर्षात्
आदित्यादि मतयश्चांग उपपत्तेः ब्र. सूत्र ४-१-३६

तेथी न्यायमाळामां कहेलुं छे के–

वास्तव विरोधाभावाद् आत्मत्वेनैव ब्रह्मगृह्यताम्

" आत्मा अने ब्रह्म अभिन्न छे, माटे आत्माज ब्रह्म एवी भावना करवी."

शंकराचार्ये लख्युं छे के–

आत्मेत्येव परमेश्वरः प्रतिपत्तव्यः। यदुक्तं न विरुद्धगुणयोरन्योन्यात्मत्वसंभव इति । नायंदोषः । विरुद्धगुणताया

मिथ्यात्वोपपत्तेः (४-१-३ सूत्रनुं भाष्य).

'आत्माने परमेश्वर समजीने ग्रहण करवो. जो कहोके, ईश्वर अने जीवमां विरुद्ध गुणने लीधे एकपणुं संभवे नहि, तो तेना जवाबमां कहेवानुं के, ए बेमां गुणनुं विरुद्धपणुं खोटुं (मात्रमायिक) छे.'

अभ्यासनां बळथी ज्यारे आ भावना द्रढ अने निश्चळ थाय, त्यारे जीवने ब्रह्मनो अपरोक्ष अनुभव थाय, अने तेथी जीवनमुक्ति थाय. कारणके,

तं यथा यथोपासते तदेव भवाति

श्रुति कहे छे के 'जे जेनी उपासना करे, ते तेज थाय.' तेथी ब्रह्मभावना रुप विचारथी ब्रह्म प्राप्ति अवश्य थायज.

आ प्रमाणे ब्रह्म प्राप्ति थतां तत्त्वज्ञानी जीवन मुक्तनां बधां संचित कर्मोनो विनाश थाय अने क्रियमाण कर्मोनो अटकाव थाय.' तेना संबंधमां श्रुति नीचे प्रमाणे कहे छे,—

यथापुष्करपलाशे आपोनश्लिष्यन्त एवम् एवं विदि पापं कर्म न श्लिष्यते ।

'तदधीन उत्तरपूर्वाघयोरश्लेषविनाशौ तद्व्यपदेशात् ।
इतरस्याप्येवम् असंश्लेषः पातेतु
अनारब्ध कार्ये एवतु पूर्वे तदवधेः ॥

ब्रह्मसूत्र ४-१-१३-१९ सूत्र.

तद्यथा ईषिकातूलम् अग्नौप्रोतं प्रदूयेत एवं ह्यस्य सर्वे पाप्मानः प्रदूयन्ते ।

सर्वे पाप्मानोऽतोनिवर्तन्ते । उभेउहैवैषएतेतरति ।

'जेम कमळपत्रने पाणी स्पर्श करतुं नथी, तेम तत्वज्ञानीने पाप स्पर्श करतुं नथी.'

'जेम इषीकातूल (एक जातनुं कुमळुं घास) अग्निमां नांखवाथी बळी जाय छे, तेम तत्वज्ञानीनां बधां पाप बळी जाय छे.'

'तत्वज्ञानी पाप पुण्य ए बंनेने ओळंगी जाय छे ज.'

मात्र प्रारब्ध कर्मो भोगववामाटे जीवन्मुक्त देह धारण करी राखे छे.–जीवे छे. कारणके, भोगव्या सिवाय प्रारब्ध कर्मनो नाश थतो नथी. प्रारब्ध कर्मो भोगवाइ रहेतां ज्यारे तेनुं शरीर पडे, त्यारे ते ब्रह्म साथे एकीभूत थाय छे.

तस्य तावदेव चिरं यावन्न विमोक्ष्येऽथ संपत्स्ये ।

जीवन्मुक्तने प्रारब्ध कर्मनो क्षय थाय त्यांसुधी विलंब थायछे, पछी तरतज ते ब्रह्ममां जोडाइ जायछे.

देह पडे त्यारे साधारण जीवनी उत्क्रांति थाय छे, एटले ते सूक्ष्म देहने आधारे बीजा लोकमां जायछे. वेदान्तदर्शनना चोथा अध्यायना बीजा पादमां आ उत्क्रांतिनी रीत अने प्रकार बतावचामां आव्या छे. साधारण कर्मी दक्षिण मार्गे धू-

मयानमां जाय छे. कर्म प्रमाणे बीजा लोकमां पुण्य पाप भोगवीने तेने पाछुं पृथ्वी उपर आववुं पडे छे, पण जेओ उच्च साधक, सगुण ब्रह्मना उपासक होय, तेओ उत्तरमार्गे देवयान वाटे सूर्य मंडळमां जायछे. पछी त्यांथी क्रमे क्रमे ब्रह्मलोकमां जायछे. तेओने त्यांथी पाछुं फरवुं पडतुं नथी,—पछी मनुष्य लोकमां फरवुं पडतुं नथी. सत्य लोकमां वसती वखते तेओ स्वाराज्य सिद्धिना अधिकारी थइ जुदी जुदी जातनां ऐश्वर्य भोगवे छे.

आप्नोति स्वाराज्यम् आप्नोति मनसस्पतिं सर्वे देवातस्मै बलिम् आहरन्ति ।

संकल्पादेवास्य पितरः समुत्तिष्ठन्ते । सर्वेषु लोकेषु कामचारो भवति ।

मनसैतान् कामान् पश्यन् रमते य एते ब्रह्मलोके ।

एकधा भवति त्रिधाभवति पञ्चधा सप्तधी नवधा भवति ।

ते स्वराट् थाय, ते मननो अधिपति थाय, बधा देवो तेने बलि आपे.'

'संकल्प मात्रथीज पितृओ तेनी आगळ हाजर थाय.'

'सघळा लोकमां ते इच्छा प्रमाणे फरे.'

'ब्रह्मलोकमां इच्छामात्रथी सर्व इच्छाओ सिद्ध थइ रमण करे, अने मरजी प्रमाणे काय-व्यूहरचीने एक अथवा एकथी

वधारे रुपे थाय.'

आ सत्य लोकमां सगुणब्रह्मोपासक क्रमशः तत्त्वज्ञान पामे अने महाप्रलयमां ज्यारे ब्रह्मानो दिवस पूरो थाय, त्यारे ब्रह्मानी साथे परब्रह्ममां विलीन थाय. आनुं नाम क्रममुक्ति.

ब्रह्मणा सह ते सर्वे संप्राप्ते प्रतिसंचरे ।
परस्यान्ते कृतात्मानः प्रविशन्ति परं पदम् ॥

'ज्यारे प्रलय थाय, त्यारे तेओ तत्त्वज्ञान थवाथी कृतार्थ थइ ब्रह्मानी साथे कल्पना अंतमां परमपदमां लीन थाय.

पण जे जीवनमुक्त—निर्गुणब्रह्मना उपासक—होय तेओनो देह पडे त्यारे तेमनी उत्क्रान्ति थती नथी.

न तस्य प्राणाउत्क्रामन्ति अत्रैव समवलीयन्ते

'तेना (ब्रह्मज्ञानीना) प्राण बहार जता नथी; अहींयांज विलीन थइ जाय छे.' तेना संबंधमां श्रुति कहेछे के,—

एष संप्रसादोऽस्मात् शरीरात् समुत्थाय परं ज्योतिरुप संपद्य स्वेन रुपेनाभि निष्पद्यते ।

'आ जीव आ शरीरमांथी नीकळीने परमज्योतिने प्राप्त थइने स्वस्वरुपे रहे.'

'ये सगुण ब्रह्मोपासनात् सहैव मनसा ईश्वरसायुज्यं व्रजन्ति * * जगदुत्पत्ति व्यापारं वर्जयित्वाऽन्यद् अणिमाद्यैश्वर्यं मुक्तानां भवितुमर्हति' ।

‘ सगुण ब्रह्मनी उपासनाथी साधक मनवडे ईश्वरनुं सायुज्य पामे छे, मुक्तपुरुषोने अणिमा वगेरे बधुं ऐश्वर्य सिद्ध थाय छे, मात्र जगद् व्यापार (जगत्‌नी उत्पत्ति, स्थिति, प्रलय कार्य) मां अधिकार उत्पन्न थतो नथी.’

एवा साधकनी उपर लख्या क्रम प्रमाणे क्रम-मुक्ति थायछे पण

विदुष ऐकान्तिकी कैवल्यसिद्धिः ३-३-३३ सूत्र

‘ ब्रह्मज्ञानीनी कैवल्य सिद्धि (विदेह-मुक्ति) थाय छे, तेथी विद्या एज एक मात्र पुरुषार्थ छे.

पुरुषार्थोऽतः शब्दादिति बादरायणः ॥ ३-४-१ सूत्र.

मतलबके अद्वैतमत प्रमाणे निर्गुण उपासना के जेनावडे ब्रह्मज्ञान सिद्ध थाय छे, तेज सौथी श्रेष्ठ छे.

कारणके, एवा निर्गुण साधकनी क्रम--मुक्ति थती नथी, जीवनमुक्ति पछी शरीर पडतां ते एकदम विदेह-मुक्ति पामे छे अने त्यारे ते ब्रह्मथी अभिन्न थायछे.

अविभागो लोकवत् । ब्रह्मसूत्र ४-२-१६.

अविभागेन दृष्टत्वात् । ब्रह्मसूत्र ४-२-२.

आनां भाष्यमां श्रीशंकराचार्य कहे छे के,—

यथोदकं शुद्धे शुद्धमासिक्तं तादृगेव भवति । एवं मुनेर्विजानत आत्मां भवति गौतम (कठ, ४-१५) इति चैवमादीनि मुक्तस्वरुपनिरुपणपराणि वाक्यानि अविभागमेय दर्शयन्ति।

नदी समुद्रादि निदर्शनानि च ।

हे गौतम् ! जेम शुद्धमां नांखेलुं शुद्ध (जळ) तेवुंज रहेछे, तेम जाणनार मुनिनो आत्मा रहेछे. कठ उपनिषद्नुं आ वाक्य अने बीजां श्रुति वाक्यो (जेमां मुक्त आत्माना स्वरुपनुं निरुपण कर्युं छे) मुक्त जीव अने ब्रह्मनुं एकपणुं प्रतिपादन करे छे. नदी अने समुद्रनुं द्रष्टांत (नदी समुद्रमां मळतां जेम समुद्रनी साथे एकता पामे छे) आ तत्त्वनोज उपदेश आपे छे.'

बीजे ठेकाणे श्रुतिमां कहेलुं छे के-

भिद्येते तासां नामरूपे पुरुष इत्येवं प्रोच्यते । सएषोऽकलोऽमृतो भवति—प्रश्न. ६-५.

' तेमनां नाम रुप नाश पामे छे, (ने) पुरुष एम कहेवाय छे ते आ कला रहित (ने) मरण रहित थाय छे.'

आ अवस्थाने लक्षमां राखीनेज श्रुति कहे छे के—

" ब्रह्म वेद ब्रह्मैव भवति "

' जे ब्रह्मने जाणे ते ब्रह्मज थायछे."

आज अद्वैतवादीओनी मुक्ति.

[1]मुक्तस्वरुपं ब्रह्माभिन्नम्—न्यायमाला ४-४-४

नतु तद् द्वितीयमस्ति ततोऽन्यद् विभक्तं यत् पश्येत्
बृहदारण्यक, ४-४-२३

' मुक्तनुं स्वरुप ब्रह्मथी अभिन्न.'

विशिष्टाद्वैतमत.

विशिष्टाद्वैत मत घणी बाबतमां अद्वैत मतनो विरोधी छे. अद्वैत मत प्रमाणे ब्रह्मनुं स्वरुप निर्विकल्प, निर्गुण, सर्वविशेष रहित छे, ए आपणे जोइ गया छीए. श्री रामानुजाचार्ये ए मतनो पूर्व-पक्षरुपे निरास करीने पोताना मतनो आ प्रमाणे प्रचार कर्यो छे के, श्रुति-स्मृति ए बधामां, सर्व दोष रहित अने सर्व कल्याण गुणना भंडाररुप सगुण ब्रह्मनुंज प्रतिपादन कर्युं छे.

यतः सर्वत्र श्रुतिस्मृतिषु परं ब्रह्मोभयलिंगं उभयलक्षणमभिधीयते ; निरस्त-निखिल-दोषत्व कल्याण-गुणाकरत्व लक्षणोपेतमित्यर्थः— श्रीभाष्य ३-२-११.

रामानुजे आ प्रमाणे पूर्व-पक्ष उपस्थित कर्यो छे.

ननु च सत्यं ज्ञानमनन्तं ब्रह्मेत्यादिभि र्निर्विशेषप्रकाशैकस्वरुपं ब्रह्मावगम्यते, अन्यत्तु सर्वज्ञत्वसत्यकामत्वादिकं नेति नेतीत्यादिभिः प्रतिसिध्यमानत्वेन मिथ्याभूतमित्यवगंतव्यम्, तत्कथं कल्याणगुणाकरत्वानिरस्तानिखिलदोषत्वरुपोभयलिं-

---

'तेनाथी जुदुं—ब्रह्मथी जुदुं, बीजुं कांइ नथी, के जेनी इच्छा करवामां आवे.'

गत्वं ब्रह्मण इतितत्राह–　　　श्रीभाष्य, ३-२-१४,१७.

कोइ कोइ कहे छे के ' ब्रह्म सत्य-स्वरुप, ज्ञान-स्वरुप अने अनंत ' वगेरे वाक्यमां निर्विशेष स्व-प्रकाश ब्रह्मज जाणवुं. अने ज्यारे श्रुतिए 'नेति नेति' ए रुपे ब्रह्मनो निर्देश कर्यो छे, अने ए वडे तेनुं सर्वज्ञपणुं, सत्यसंकल्पपणुं, जगत् कारणपणुं, अंतर्यामिपणुं, सत्य-कामपणुं इत्यादि सगुण भावनो निषेध कर्यो छे, त्यारे ते भाव अवांतरज छे, एम समजवुं जोइए. त्यारे वळी ते कल्याण गुणनुं भंडार छे अने बधा दोष रहित छे, आ तेनुं उभय लिंगपणुं केवी रीने प्रतिपन्न थाय ?'

आ पूर्व-पक्षनो निरास करीने रामानुजाचार्ये पोतानो मत स्थाप्यो छे के, श्रुति-स्मृति ए बधामां ब्रह्मने उभय-लिंगरूपे (सर्व दोष रहित अने कल्याण गुणनो भंडार ए बे लक्षणथी) जणाव्युं छे.

आथी शंकरना मत प्रमाणे निर्गुण ब्रह्मज सत्य छे, सगुण सत्य नथी अने रामानुजना मत प्रमाणे सगुण ब्रह्मज सत्य छे, निर्गुण सत्य नथी एम समजाय छे.

विशिष्टाद्वैत वादीओ कहे छे के, निर्गुण ब्रह्ममां प्रमाणनो अभाव छे; सगुण ब्रह्मज प्रमाण वाळुं छे.[१] ब्रह्म हमेशां मा–

---

[१] किंच सर्वप्रमाणस्य सविशेषविषयतया निर्विशेषवस्तुनि न किमपि प्रमाणमस्ति निर्विकल्पक प्रत्यक्षेऽपि सविशेषमेव प्रती–

या विशिष्ठज छे.

मायिनस्तु महेश्वरम्— श्वेताश्वतरोपनिषद्

आ मायानो अर्थ अद्वैत-वादीनुं अनिर्वचनीय अनादि भाव-रुप अज्ञान नथी, पण विचित्र पदार्थोने बनावनारी गुणात्मिका प्रकृति छे.

मायान्तु प्रकृतिं विद्यात्— श्वेताश्वतरोपनिषद्.

रामानुजनी भाषामां ब्रह्म "सर्व-हेयनुंदुश्मन" अने "कल्याण गुण समुहनो भंडार" छे. तेम छतां ए ब्रह्मने निर्गुण कहेवामां आवेछे, तेनुं तात्पर्य एवुं छे के, तेनामां प्राकृत हेय गुणनो लेश मात्र पण नथी.[1]

वासुदेवः परं ब्रह्म कल्याणगुणसंयुतः ।
कैवल्यादःपरं ब्रह्म विष्णुरेव सनातनः ॥

इत्यादिभि र्निखिल हेय प्रत्यनीकत्वं कल्याणगुणगणाकरत्वंच अवगम्यते. * * *

यते— सर्वदर्शनसंग्रहमां रामानुज दर्शन.

अग्रेऽपि मायाशबलमेव ब्रह्म अतश्च सर्वदा विशिष्ठमेव इति सिद्धं * * * तर्हि सर्वदा सविशेषमेव इति सिद्धं—

वेदान्ततत्व सार.

[1] निर्गुणवादाश्च प्राकृतहेयगुणनिषेधविषयतया व्यवस्थिताः

सर्वदर्शनसंग्रह.

सत्वादयो न सन्तीशे यत्र च प्राकृता गुणाः । * *
सगुणो निर्गुणो विष्णु र्ज्ञानगम्यो ह्यसौ स्मृतः ॥
न हि तस्य गुणाः सर्वे सर्वैर्मुनिगणैरपि ।
वक्तुं शक्या वियुक्तस्य सत्वाद्यैरखिलैर्गुणैः ॥

" एष आत्मा अपहतपाप्मा," " पराऽस्य शक्ति र्विविधैव श्रूयते," " तत्त्वं नारायणः परं " इत्यादि श्रुतिस्मृतिभि र्नारायणस्यैव परतत्त्वं दिव्यकल्याणगुणयोगेन सगुणत्वं प्राकृत हेय गुणरहितत्वेन निर्गुणत्वमिति विषयभेदवर्णनेनैकस्यैवावगमाद् ब्रह्मद्वैविध्यम् दुर्वचनमिति दिक्

वेदान्तसार.

कल्याण गुणवाळा वासुदेव ज परब्रह्म छे, मुक्तिदाता सनातन विष्णुज परब्रह्म छे,—वगेरे वाक्योथी भगवान्मां हेय गुणो नथी, अने ते कल्याण गुणना आधार छे एमज समजाय छे. अने नीचे आपेलां श्रुति अने स्मृतिनां वचनो वडे नारायणज परतत्त्व छे, तेज दिव्य कल्याण गुणना संयोगथी सगुण छे, अने प्राकृत हेय गुण तेनामां न होवाथी निर्गुण छे ; मतलबके—एकज ब्रह्म सगुणे छे अने निर्गुणे छे, एम सूचव्युंछे. पण ब्रह्म बे प्रकारनुं छे, एम कहेवुं योग्य नथी. आ संबंधमां श्रुति स्मृतिनां वाक्यो छे के " विष्णुज सगुण अने निर्गुण छे, ते ज्ञानगम्य छे." " ते सत्त्व वगेरे बधा गुणोथी रहित छे."

"तेना बधा गुणोनुं वर्णन मुनिगण पण करी शके नहि." "ते परमात्मा पापना स्पर्श वगरना छे." "तेनी जुदी जुदी पराशक्ति संभळाय छे." "नारायण ज परतत्त्व छे" वगेरे'

---

[9] With Ramanuja also, Brahman is the highest reality omnipotent, omniscient; but this Brahman is at the same time full of Compassion or love. × × × According to Ramanuja, Brahman is not Nirguna—without quality. Such qualities as intelligence, power and mercy are ascribed to him ; while with Shankar, even intelligence was not a quality of Brahman, but Brahmana was pure thought and pure being. Besides these qualities Brahmana is supposed to possess as constituent elements, the material world and the individual souls, and to act as the inward ruler (Antaryamin) of them. Hence neither the world nor the individual souls will ever cease to exist. All that Ramanuja admits is that they pass through different stages as Avyakta and Vyakta. × × × Brahmana is to be looked on and worshipped as a personal God, the Creater and ruler of a real world. Thus, Isvara, the Lord, is not to be taken as a phenomenal God and the difference between Brahman and Isvara vanishes as much as the difference between a qualified and unqualified Brahman.

—(Max Muller's Indian Philosophy, p. 245-247-248).

Ramanuja's Brahman is always one and the same, and, according to him, the knowledge of Brahman is likewise but one ; but his Brahman is in consequence

विशिष्टाद्वैत मत प्रमाणे ब्रह्म ज जगत्कर्त्ता अने उपादान छे.

वासुदेवः परं ब्रह्म कल्याणगुणसंयुतः ।
भुवननामुपादानं कर्त्ता जीवनियामकः ॥

'कल्याणगुणान्वित वासुदेव ज परब्रह्म छे. तेज बधां भुवनोनुं उपादान छे, तेज कर्त्ता छे अने अंतर्यामी रुपे जीवने नियममां राखनार छे.

मतलबके ईश्वरज जगत्नुं उपादान अने निमित्त कारण छे. तेमांथी जगत्नी उत्पत्ति थाय छे, तेनामां ज जगत्नी स्थीति छे, अने तेनामांज जगत्नो लय छे.

यतो वा इमानि भूतानि जायन्ते येन जातानि जीवन्ति यत् प्रयन्त्यभिसंविशन्ति, तत् विजिज्ञासस्व तद् ब्रह्म ।

मतलबके 'जेनाथी जगत्नी उत्पत्ति, स्थीति अने लय थाय छे. तेने ज जाणवुं जोइए, तेज ब्रह्म छे.' आज ब्रह्मनुं लक्षण. तेथी सूत्रकार बादरायणे सूत्र बनाव्युं छे.'

जन्माद्यस्य यतः ब्रह्म सूत्र १-१-२.

'जेनाथी जगत्नां जन्मादि सिद्ध थाय छे, तेज ब्रह्म.'

यतो यस्मात् सर्वेश्वरात् निखिलहेयप्रत्यनीकस्वरुपात् सत्य संकल्पाद्यनवधिकातिशयासंख्येयकल्याणगुणात् सर्वज्ञात् सर्वश-

hardly more than an exalted Isvara. He is able to perform the work of creation without any help from Maya or Avidya—Ibid p. 251.

क्तेः पुंसः सृष्टिस्थितिप्रलयाः प्रवर्तन्त इति सूत्रार्थः

सर्वदर्शन संग्रह.

ए सूत्रनो अर्थ आ प्रमाणे छे. 'जे सर्वेश्वर बधा हेय गुणथी रहित, सत्य संकल्प वगेरे निरतिशय अनेक कल्याण गुणना भंडार, सर्वज्ञ, सर्व शक्तिमान पुरुषथी उत्पत्ति, स्थीति, लय साधित थाय छे, ('तेज परब्रह्म')

अद्वैतवादीओए आने ब्रह्मनुं तटस्थ लक्षण कह्युं छे, अने "सत्यं ज्ञानं अनन्तं ब्रह्म" एज तेमना मत प्रमाणे ब्रह्मनुं स्वरुप लक्षण छे. विशिष्टाद्वैत वादीओ तटस्थ अने स्वरुप लक्षणनो भेद स्वीकारता नथी. तेओ तो कहेछे के आ ज ब्रह्मनुं प्रकृत-वास्तविक-खरुं-लक्षण छे.

विशिष्टाद्वैत मत प्रमाणे ईश्वर जीव अने जड ए त्रण पदार्थ छे.

द्रव्यं द्वेधा विभक्तं जडमजडमिति * * तत्रजीवेशभेदात्

द्रव्य बे प्रकारनुं छे. जड अने अजड. अजड एटले चेतनना जीव अने ईश्वर एवा बे विभाग छे.

अद्वैतवादी कहे छे के परमार्थे ब्रह्म ए एकज पदार्थ छे, अने जीव तेमज जगत् एतो दोरडीमां सापनी पेठे मात्र अविद्यानी कल्पना छे ; विशिष्टाद्वैतमतवाळा आ वात कबुल राखता नथी.

एषो हि तस्य सिद्धान्तः चिदचिद् ईश्वरभेदेन भोक्तृभोग्य-

नियामक भेदेन व्यवस्थितास्त्रयः पदार्था इति तदुक्तम्

ईश्वर श्चिदचिच्चेति पदार्थत्रितयं हरिः ।
ईश्वराश्रित इत्युक्तो जीवो दृश्यमचित् पुनरिति ॥

(सर्वदर्शन संग्रहमां रामानुज दर्शन.)

रामानुजाचार्यनो सिद्धांत आवो छे. पदार्थ त्रण छे.–चित्, अचित् अने ईश्वर. चित्=भोक्ता, अचित्=भोग्य अने ईश्वर= नियामक. आ सिद्धांतनां समर्थन माटे तेमणे नीचेनां वचनो उतार्यां छे. ईश्वर, चित् अने अचित्–आ त्रण पदार्थो छे, हरि ईश्वर छे, जीव चित् छे अने दृश्य (जड) अचित् छे.

आ संबंधमां श्वेताश्वतर उपनिषद्मां नीचे प्रमाणे कहेलुं छे.

उद्गीत मेतत् परमन्तु ब्रह्म तास्मिन् त्रयं सुप्रतिष्ठाक्षरंच।

‘ आ जे परब्रह्म ते अक्षर, तेमां त्रण सुप्रतिष्ठित छे, आ प्रमाणे उंचेथी गवाएलुं छे.’

आ त्रण क्यां ? क्यां ? भोक्ता (जीव), भोग्य (जड) अने प्रेरिता-प्रेरणा करनार (ईश्वर). कारणके बीजे ठेकाणे श्वेताश्वतरमां कहेलुं छे के,–

भोक्ता भोग्यं प्रेरितारं च मत्वा, सर्वप्रोक्तं त्रिविधं ब्रह्ममेतत् ॥

आनां भाष्यमां शंकराचार्ये लख्युं छे के—

भोक्ता जीवः भोग्यम् इतरत् सर्वम्, प्रेरिता अन्तर्यामी परमेश्वर एतत् त्रिविधं प्रोक्तं ब्रह्मैव इति ।

मतलबके ' पुरुष, प्रकृति अने परमेश्वर, ए ब्रह्मना त्रण भाव छे.'

पण प्रकृति अने पुरुष स्वतंत्र पदार्थ होवा छतां विशिष्टाद्वैत मत प्रमाणे तेओ ईश्वरने संपूर्ण आधीन छे, कारणके ईश्वर ज भोक्ता अने भोग्य-पुरुष अने प्रकृति-ए बंनेमां अंतर्यामी रुपे रहेलो छे.

परमेश्वरस्यैव भोक्तृभोग्ययो रुभयोरन्तर्यामिरुपेणावस्थानम्
सर्व दर्शन संग्रह.

' भोक्ता अने भोग्य ए बंनेमां अंतर्यामीरुपे ईश्वरज रहेलो छे.' मतलबके जीव अने जड ए बंनेमां तेज अंतर्यामी छे.

तेथी विशिष्टाद्वैत वादीओए आ बंनेने तेनुं शरीर कहीने वर्णन कर्युंछे.[1]

तदेतत् कार्यावस्थस्य च कारणावस्थस्य च चिदचिद्वस्तुनः सकलस्य स्थूलस्य सूक्ष्मस्य च परब्रह्मशरीरत्वम्
(२-१-१५ सूत्रनुं श्रीभाष्य).

कार्यावस्थावाळुं अने कारणावस्थावाळुं चित् अने अचित् -स्थूल अने सूक्ष्म ए बधी वस्तुमात्र ज परब्रह्मनुं शरीर छे.

[1] Chit and Achit, what perceives and what does not perceive—soul and matter, form, as it were, the body of Brahmna are in fact modes (Prakar) of Brahman.
—(Max Muller's Indian Philosophy).

आ वातना समर्थन माटे श्रीरामानुज नीचे लखेला श्रुति अने स्मृति वाक्यना उतारा आपे छे.

यः पृथिव्यां तिष्ठन् * * यस्य पृथिवी शरीरम् * * यो विज्ञाने तिष्ठन् * * यस्य विज्ञानं शरीरं य आत्मनि तिष्ठन् यस्यात्मा शरीरम् इत्यादि-अंतर्यामी ब्राह्मण.

'जगत् सर्वं शरीरं ते,' 'यदम्बु वैष्णवः कायः' 'तत्सर्वं वै हरेस्तनुः'; 'तानि सर्वाणि तद् वपुः'; सोऽभिध्याय शरीरात् स्वात्.'

'जे (अंतर्यामी रुपे) पृथ्वीमां रहेलो छे, पृथ्वी जेनुं शरीर छे ; जे विज्ञानमां रहेलो छे, विज्ञान जेलुं शरीर छे ; जे आत्मामां रहेलो छे, आत्मा जेलुं शरीर छे.'

'आखुं जगत् तारुं शरीर छे ;' 'जे अंबु (कारणार्णव) ते विष्णुलुं शरीर छे.' 'ते बधुं ज श्री हरिनुं शरीर छे;' 'ते सघळुं तेनुं शरीर छे.' 'तेणे चिंतन करीने पोतानां शरीरमांथी (प्रजा) उत्पन्न करी.'

जो एमज होय,–जो पुरुष, प्रकृति अने परमेश्वर ए त्रण पदार्थ कबुल राखवामां आवे तो नीचेनी श्रुतिओ–

नेह नानास्ति किंचन। एकमेवाद्वितीयम्। आत्मा वा इदमेकाग्र आसीत्।

" एमां लेश पण नानात्व नथी," " ब्रह्म एक अने अद्वि-

तीय" "पहेलां आ परमात्मा ज हता" वगेरे उपदेश अ-
पाएलो छे, तेनुं तात्पर्य शुं? आ बधां एकत्व-प्रतिपादक श्रुति-
वाक्योनी शी गति थशे ? तेना उत्तरमां विशिष्टाद्वैतवादीओ
कहे छे के, "नेह नानास्ति किंचन" आ नानात्वना निषे-
धनो उद्देश आ जड अने जीव मात्र मिथ्या कल्पना छे, एवो
नथी. पण ए श्रुतिनुं वास्तविक तात्पर्य प्रकृति अने पुरुष ए
तो मात्र भगवान्नाज प्रकार अथवा विधा (aspect) छे.

एकमेव ब्रह्म नानाभूतचिदचित्प्रकारं नानात्वेनावस्थितम्
सर्वदर्शन संग्रह.

'जुदां जुदां भूत, चित् अने अचित् ए एकज ब्रह्मना प्र-
कार छे ते जुदे जुदे रुपे रहेलुं छे.'

एकस्यैव ब्रह्मणः शरीरतया प्रकारभूतं सर्वं चेतनाचेतना-
त्मकं वस्तु— सर्वदर्शनसंग्रह.

चित् अने जड ए, एक ब्रह्म पदार्थनुंज शरीर छे, तेथी ते
मात्र तेना प्रकार छे.'

श्रुतिमां ब्रह्मने "एकमेवाद्वितीयम्" कह्युंछे, तेनो अभिप्राय
ब्रह्म सिवाय बीजी वस्तु नथी, एवो नथी. ते श्रुतिनो अभि-
प्राय एवो छे के, प्रलयमां ज्यारे प्रकृति-पुरुष नाम-रुपना भेद
विनानां थइ अनिर्देश्य भावे ब्रह्ममां विलीन रहे छे त्यारे ते
अव्याकृत अवस्थामां ते "एकमेवाद्वितीयम्" छे.

तद्धेतत् तर्हि अव्याकृतमासीत् । नामरुपाभ्यां व्याक्रियते

'प्रलयमां जगत् अव्याकृत अवस्थामां रहे छे ; पछी (उत्पत्ति वखते) ते नामरुप द्वारा व्यक्त थाय छे.'

विशिष्टाद्वैतवादीओ कहे छे के–

वस्त्वन्तर विशिष्ठस्यैव अद्वितीयत्वं श्रुत्यभिप्रायः ।

अने तेओ ए वातना टेकामां नीचलां शास्त्र वाक्यो बतावेछे.

एको नारायणो देवः पूर्वसृष्टिं स्वमायया ।
संहृत्य कालकलया कल्पान्त इदमीश्वरः ॥
एक एवाद्वितीयोऽभूदात्माधारोऽखिलाश्रयः ।

* * * *

मय्येव सकलं जातं मयि सर्वं प्रतिष्ठितम् ।
मयि सर्वं लयं याति तद् ब्रह्माद्वयमस्म्यहम् ॥
अक्षरं तमसि लीयते तमः परेदेवे एकीभवति ।
ब्रह्मादिषु प्रलीनेषु नष्टे लोके चराचरे ।
आभूतसंप्लवेप्राप्ते प्रलीने प्रकृतौ महान् ॥
एकस्तिष्ठति सर्वात्मा स तु नारायणः प्रभु ॥

'नारायण देव एक अने अद्वितीय छे, ते पोतानी मायाना बळथी पूर्वे रचेलां जगत्नो काळनी कलावडे कल्पान्ते संहार करीने एक अद्वितीय ईश्वर रुपे रहे छे. बधा आत्माओ तेमां रहे छे, अने आखुं जगत् तेमां विलीन रहे छे.'

मारामांथीज सघळुं उत्पन्न थायछे, मारामांज बधुं स्थिति करी रहेछे, मारामां ज बधुं विलीन थायछे, अद्वितीय ब्रह्म हुंज छुं.'

' अक्षर प्रकृतिमां लीन थाय छे, प्रकृति परमेश्वरमां एकी भूत थाय छे'

ज्यारे ब्रह्मादि लय पामे छे, ज्यारे चराचर विनष्ट थायछे, ज्यारे भूतमात्रनो प्रलय थाय छे, ज्यारे महत्तत्त्व प्रकृतिमां विलीन थइ जाय छे; त्यारे सर्वात्मा एक अद्वितीय ईश्वर रहे छे, तेज नारायण प्रभु छे.

आ बधां प्रमाणो उपर आधार राखीने विशिष्टाद्वैतवादीओ " एकमेवाद्वितीयम् " श्रुतिनो अर्थ आ प्रमाणे करेछे.

तदानीं सूक्ष्म चिदचिद्विशिष्टस्य ब्रह्मणः सिद्धत्वाद् विशिष्टस्यैव अद्वितीयत्वं सिद्धम्। * * तदनादित्वेऽपि अविभाग उपपद्यते, यतस्तत् क्षेत्रज्ञत्वस्तु तदानीं परित्यक्त नामरुपं ब्रह्मशरीरतयापि पृथग् व्यपदेशानर्हमतिसूक्ष्मम्।

(वेदान्त तत्त्वसार).

' प्रलयमां सूक्ष्म थयेलां जीव अने जड ब्रह्ममां विलीन रहे छे. ते विशिष्ट ब्रह्म सिवाय बीजुं कांइ पण रहेतुं नथी. तेथी तेने अद्वितीय कहेवामां आवे छे. जोके जगत् अनादि छे, तोपण प्रलयमां जगत् ब्रह्मथी अभिन्न थइ जाय छे, कारण के, ते वखते क्षेत्रज्ञ (जीव) नामरुप छोडी दइने अति सूक्ष्मरुपे

रहे छे, ब्रह्मनुं शरीर होवा छतां पण ते जुदो जणातो नथी.

आ तत्त्व स्पष्ट करवा माटे विशिष्टाद्वैतवादीओ ब्रह्मनी बे अवस्था,—कार्यावस्था अने कारणावस्था—स्वीकारे छे. प्रलयमां ज्यारे जीव अने जडात्मक जगत् ब्रह्ममां प्रलीन थइ जाय छे, त्यारे सूक्ष्म अवस्थामां तेना नाम-रुपना विभाग तिरोहित थइ जाय छे, त्यारे ब्रह्मनी कारणावस्था छे. वळी ज्यारे सृष्टिमां चित् अने जड नाम-रुपना विभागमां वहेंचाइने व्यक्त स्थूल अवस्था धारण करे छे, त्यारे ब्रह्मनी कार्यावस्था छे, ते अवस्थामां अचित् (.दृश्य-जड जडत्),—भोग्य (विषय) भोगोपकरण (इंद्रिय) अने भोगायतन (देह) आ त्रण प्रकारना आकार धारण करे छे.

नामरुप-विभागानर्ह-सूक्ष्म-दशावत् प्रकृतिपुरुषशरीरम् ब्रह्म कारणावस्थं जगतस्तदापत्तिरेव प्रलयः नामरुपविभागविभक्त स्थूल-चिदचिद्-वस्तु-शरीरम् ब्रह्म कार्यावस्थं ब्रह्मणस्तथाविध-स्थूलभावश्च सृष्टिरित्यभिधीयते।

सर्वदर्शनसंग्रहमां रामानुज दर्शन.

'कारणावस्थावाळा ब्रह्मनुं नामरुपना भेद वगरनुं सूक्ष्म दशावाळुं प्रकृति अने पुरुषरुप शरीर जे जगत् तेनुं ब्रह्ममां लीन थवुं तेनुं नामज प्रलय. अने कार्यावस्थावाळा ब्रह्मनुं नामरुपना विभागथी वहेंचाएलुं, स्थूळदशाने पामेलुं चित्

अने अचित् (जीव ने जड) शरीर ; ब्रह्मना आवा स्थूळ भावने ज उत्पत्ति कहे छे.'

परब्रह्म हि कारणावस्थं कार्यावस्थं सूक्ष्मस्थूलचिदचिद् वस्तु शरीरतया सर्वदा सर्वात्मभूतम् । १-२-१ सूत्रनुं श्रीभाष्य.

'परब्रह्मनी बे अवस्था,–कारणावस्था अने कार्यावस्था. कारणावस्थामां सूक्ष्म-भाववाळां प्रकृति पुरुष तेनुं शरीर छे ; अने कार्यावस्थामां स्थूळ भाव पामेलां प्रकृति पुरुष तेनुं शरीर छे तेथी, ते हमेशां सौना आत्मारुपे रहेलुं छे.'

आथी,–

आत्मा वा इदमग्र आसीत् ।

'आरंभमां' आत्मा सिवाय बीजुं कांइ नहोतुं '–इत्यादि श्रुति वाक्य, एवा भावनां समजवां जोइए के, प्रलय वखते आखुं जगत् ब्रह्ममां लीन हतुं–एकीभूत हतुं ; ए वडे स्वरुपनिवृत्ति समजवानी नथी. जगत् स्थूलरुप छोडी दइने सूक्ष्म रुपे ब्रह्ममां हतुं-एमज समजवानुं छे. आथी, सूक्ष्म चित् अने जड विशिष्ठ ब्रह्मज जगत्नुं कारण छे.'

'ननु ' आत्मा वा इदमग्र आसीत् ' इति प्राक् सृष्टेरेकत्वावधारणात् कथं सूक्ष्म चिदचिद् विशिष्ठस्य नारायणस्य कारणत्वं । उच्यते। यतो वा इमानि भूतानि जायन्ते येन जातानि जीवन्ति यत् प्रयन्त्यभिसंविशन्ति ' इति परित्यक्त स्थूलाका-

त्यारे जगत्‌ने ब्रह्मथी अभिन्न कहेवामां आवे छे, (तदनन्यत्वम् आरंभणशब्दादिभ्यः–ब्रह्मसूत्र २-१-१५), अने ब्रह्मने जाणवाथी बधुं जाणेलुं थाय छे, एम कहेवामां आव्युं छे, तेनी मतलब ए छे के, जगत् ज्यारे ब्रह्मनुं शरीर छे, ब्रह्मनो

राणां सूक्ष्माकारापत्याब्रह्मणि वृत्तिः प्रतिपाद्यते, नतुस्वरुपनिवृत्तिः, 'अक्षरं तमसि लीयते, तमः परेदेवे एकीभवति' इति तमःशब्दवाच्यायाः प्रकृतेः परमात्मन्येकीभावश्रवणात् पृथग्ग्रहणरहितत्वेन वृत्तिरेकीभावः।

'आरंभमां आ जगत् आत्मा हतुं' ए श्रुतिवडे सृष्टि पहेलां एक आत्माज हतो, एम प्रतिपन्न थाय छे. त्यारे सूक्ष्मचिदचिद्विशिष्ट नारायणनुं कारणपणुं शी रीते घटे? आ शंकानां समाधानमां कहे छे के "जेमांथी आ जगत्‌नी उत्पत्ति थाय छे, जेमां तेनी स्थिति छे, अने जेना वडे प्रलय थाय छे, तेज ब्रह्म."–आ श्रुतिवाक्यमां जगत् स्थूल अवस्था छोडी दइने सूक्ष्म अवस्थामां ब्रह्ममां विलीन रहे, एमज सिद्ध थाय छे, जगत्‌नी अत्यंत निवृत्तिनुं प्रतिपादन थतुं नथी. "तमः परमेश्वरमां एकीभूत थाय"–ए वाक्यमां तमः शब्द वाच्य प्रकृति परमेश्वरमां विलीन थइ एकीभूत थाय, एमज कहेवामां आव्युं छे. एकीभाव एटले-जे अवस्थामां वस्तुनुं प्रथक् रुपे ग्रहण करी शकाय नहि ते अवस्था.

प्रकार छे, त्यारे तेने जाणवाथी पछी शुं अजाण्युं रही शके?

कार्यमपि सर्वं ब्रह्मैव इति कारणभूतब्रह्मात्मज्ञानादेव सर्वविज्ञानं भवतीति एक विज्ञानेन सर्वविज्ञानस्य उपपन्नतरत्वात्।

(सर्वदर्शनसंग्रहमां रामानुज दर्शन).

'सर्व कार्यपण ब्रह्मज छे, तेमनां कारणभूत ब्रह्मनुं ज्ञान थवाथी ज कार्यनुं पण ज्ञान थाय छे. 'एक वस्तु जाणवाथी बधुं जाणेलुं थाय छे,' एम जे श्रुति कहे छे, ते पण आ रीते संगत थाय छे.'

अत्रेदं तत्त्वं चिदचिद्वस्तुशरीरतया तत्प्रकारं ब्रह्मैव सर्वदा सर्वशब्दाभिधेयं। तत् कदाचित् स्वस्मात् स्वशरीरतयाऽपि पृथग् व्यपदेशानर्हं सूक्ष्मदशापन्न चिदचिद्वस्तुशरीरं तत् कारणावस्थंब्रह्म। कदाचिद् च विभक्तनामरुप व्यवहारार्ह स्थूलदशापन्न चिदचिद् वस्तुशरीरं तच्च कार्यावस्थमितिकारणात् परस्मात् ब्रह्मणः कार्यरुपं जगदनन्यत्।

(२-१-१५ ब्रह्मसूत्रनुं श्रीभाष्य).

अतः सर्वावस्थं ब्रह्म चिदचिद्वस्तुशरीरमिति सूक्ष्मचिदचिद्वस्तुशरीरं ब्रह्म कारणं तदेव ब्रह्म स्थूलचिदचिद्वस्तुशरीरम् जगदाख्यं कार्यमिति जगद् ब्रह्मणोः सामानाधिकरण्योपपत्तिः। (२-१-२३ ब्रह्मसूत्रनुं श्रीभाष्य).

'अहिंआ आ तत्त्व छे. ब्रह्मज सर्वदा "सर्व" शब्दनुं

वाच्य छे ; कारणके, चित् अने जड तेनां शरीररुपे तेनोज प्रकार छे. तेनी कोइवार कारणावस्था अने कोइवार कार्यावस्थामां सूक्ष्मस्थितिवाळुं, स्वतंत्रनामरुप वगरनुं जीव अने जड तेनुं शरीर छे अने कार्यावस्थामां स्थूळदशावाळुं जीव अने जड तेनुं शरीर छे कारणके परब्रह्मथी, तेनुं कार्य जे जगत् अभिन्न छे.'

आथी बधी अवस्थामां जीव अने जड ब्रह्मनुं शरीर छे. कारणब्रह्मनुं सूक्ष्म जीव अने जड शरीर ; कार्यब्रह्मनुं (जेनुं नाम जगत् छे) स्थूल जीव अने जड शरीर. आ रीते जगत् अने ब्रह्मनी अभिन्नता उपपन्न थाय छे.'

शास्त्रमां घणे ठेकाणे जगत्‌ने असत् कहेलुं छे खरुं, पण जगत् मात्र विज्ञान एटले मायिक अवस्तु छे, एवो एनो अर्थ नथी. जगत्‌ने असत् कहेवानुं खरुं तात्पर्य आवुं छे के, जगत् ज्यारे परिणामी अने विकारशील छे, ज्यारे एक रुपे रहेतुं नथी, त्यारे निर्विकार ब्रह्मनी सरखामणीमां ते अवस्तु नहिं तो बीजुं शुं ?

" विकारजननीमज्ञाम् ", " नित्यं सतत् विक्रियामि " त्यादिभिरस्याः सविकारत्वेन सततपरिणामत्वेन चैकरुपाभावान्न ब्रह्मसमानसत्ताकत्वम् । अत एवेयमनृतादिपदैरुपचर्यते ।

(वेदान्ततत्वसार).

'जगत्‌ने खोटुं कहेवामां आवे छे, तेनुं तात्पर्य एवुं छे के, प्रकृति ज्यारे विकारी जड वस्तु छे, प्रकृति ज्यारे निरंतर परिणामी छे, प्रकृति ज्यारे एक रुपे रही ज शकती नथी (ब्रह्मएक रुपे ज रहेछे); त्यारे तेनी सत्ता ब्रह्मना जेवी शी रीते होय'?

जगत् ए भ्रम नथी,—मायानुं विजृंभण-विज्ञान मात्र नथी, ए वातनुं प्रतिपादन करवा माटे विशिष्टाद्वैतवादीओए अनेक युक्तिओ बतावी छे, अनेक तर्को कर्या छे.

अतो विज्ञानमात्रमेव तत्त्वं नबाह्यार्थोऽस्तिइत्येवं प्राप्ते प्रचक्ष्महे नाभाव उपलब्धेरिति। (ब्रह्मसूत्र २-२-२७).

ज्ञानव्यतिरिक्तस्य अभावो वक्तुं न शक्यते कुतः उपलब्धेः ज्ञातुरात्मनोऽर्थविशेषव्यवहारयोग्यताऽपादानरुपेण ज्ञानस्योपलब्धेः * * * ज्ञानवैचित्र्यमप्यर्थवैचित्र्यकृतमेव * * * यत् परैः स्वप्नज्ञानदृष्टांतेन जागरितज्ञानानामपि निरालंबनत्वमुक्तं तत्राह * * * वैधर्माच्च न स्वप्नादिवत्।

(ब्रह्मसूत्र २-२-२८).

स्वप्नज्ञानवैधर्माज्जागरितज्ञानानाम् अर्थशून्यत्वं न युज्यते वक्तुं—* * * न भावोऽनुपलब्धेः। (ब्रह्मसूत्र २-२-२९).

न केवलस्यार्थ शून्यस्य ज्ञानस्य भावः संभवाति कुतः क्वचिदप्यनुपलब्धेः।

जो कोइ कहे के बाह्यार्थ (External world) नथी—मात्र

विज्ञान ज छे, तो तेना जवाबमां अमे कहीए छीए के–" ना- भावः " आ ब्रह्मसूत्रमां स्पष्ट कहेलुं छे के ज्यारे जगत्नी उ- पलब्धि थाय छे, त्यारे विज्ञान सिवाय पदार्थनी सत्ता नथी, एम कहेवुं ए संगत-योग्य नथी. कारणके–विषयने ज्ञाताना व्यवहारने योग्य करवाथी ज ज्ञाननी उपलब्धि थाय छे, वि- षय नहोय तो एवुं शी रीते थाय ? *** वळी विषय विचित्र होवाथी ज्ञान पण विचित्र थायछे. *** विरुद्धवादीओ क- हे छे के ज्यारे स्वप्न ज्ञान निरालंबन (आधार विनानुं) छे— त्यारे जाग्रतमां थतुं ज्ञान पण आलंबन विनानुं छे, तेनो उ- त्तरके–" वैधर्माच्च " (सूत्र २-२-२८). स्वप्नज्ञान अने जाग्रत ज्ञान एक धर्मवाळुं नथी. तेथी स्वप्न-ज्ञानना द्रष्टांतथी जाग्रत ज्ञानने पण अर्थ शून्य (निरालंबन) कहेवुं ए संगत-योग्य- नथी. * * केवल अर्थ शून्य ज्ञाननो " भाव " संभवे ज नहि. कारणके कोइने कोइ ठेकाणे तेनो बाध थाय ज.[1]

अद्वैत-वादीओना मत प्रमाणे जीव अने ब्रह्म स्वरुपथीज

---

[1]भावे च उपलब्धेः । ब्रह्मसूत्र २-१-१६.

असदिति चेत् न प्रतिषेधमात्रत्वात्–ब्रह्मसूत्र २-१-७.

तदनन्यत्वम् आरंभणशब्दादिभ्यः–ब्रह्मसूत्र २-१-१५.

इत्यादि सूत्रोनां भाष्यमां श्रीरामानुजचार्ये पोतानो मत विशेष स्पष्ट कर्यो छे.

अभिन्न छे. विशिष्टाद्वैत-वादीओ आ वात स्वीकारता नथी. तेओ कहे छे के, ब्रह्म अने जीव ए एक बीजाथी तद्दन जुदी वस्तु छे.'[1] × ×

जीवपरयोरपि स्वरूपैक्यं देहात्मनाविव न संभवति । तथा च श्रुतिः—द्वा सुपर्णा सयुजा सखायां समानं वृक्षं परिषस्वजाते तयोरन्यः पिप्पलं स्वाद्वत्ति अनश्नन् अन्योऽभिचाकशीति । ऋतं पिबन्तौ सुकृतस्य लोके गुहां प्रविष्टौ परमे परार्ध्ये × × × अन्तःप्रविष्टः शास्ता जनानाम् सर्वात्मा इत्याद्याः "भेदव्यपदेशात्" उभयेऽपि भेदेनैनमधीयते भेदव्यपदेशाच्चान्यः, अधिकंतु भेदनिर्देशात् " इत्यादिषु सूत्रेषु च ' य आत्मनि तिष्ठन् आत्मनोऽन्तरो यमात्मा न वेद यस्यात्मा शरीरं य आत्मानं अन्तरो यमयति' प्राज्ञेनात्मना संपरिष्वक्तः प्राज्ञेनात्मनाऽन्वारूढः इत्यादिभिरुभयोरन्योन्य प्रत्यनीकाकारेण स्वरूपनिर्णयात्.[2] (१-१-१ ब्रह्मसूत्रनुं श्रीभाष्य).

---

[1] The souls as individuals posses reality.
The human spirit is distinct from the Divine spirit.

[2] जीव अने ब्रह्म एकबीजाथी तद्दन जुदी ज वस्तु छे ए मतना टेकामां विशिष्टाद्वैत-वादीओ नीचेनां सूत्रोउपर पण भार दे छे.
इतरव्यपदेशात् हिताकारणादिदोषप्रसक्तिः २-१-२० सूत्र.
प्रकाशादिवत्तु नैवं परः २-३-४६ सूत्र.
सुषुप्त्युत्क्रांत्योर्भेदेन १-३-४३ सूत्र.

अर्थात् 'देह अने आत्मानुं जेम स्वरुपथी ऐक्य संभवतुं नथी, तेम जीव अने ब्रह्मनुं पण ऐक्य संभवतुं नथी. कारणके, नीचे जणावेल श्रुति स्मृति अने सूत्रोए जीव अने ब्रह्मनां स्वरुपनो जे निर्णय कर्यो छे, तेथी ए बंने एक बीजाथी उलटा छे, एम समजाय छे. श्रुति स्मृति जेमके-साथे रहेनारां मैत्रीवाळां बे पक्षी एक झाड उपर रहेलांछे. तमांनुं एक पक्षी स्वादवाळो खोराक खाय छे बीजुं खोराक न खातां मात्र जुए छे. लोकमां सुकृतनां "ऋत" ने पीनारां बे जणां परम परात्पर स्थानमां गुफामां पेठेलां छे. ते सर्वात्मा माणसोने शासनमां राखनार अन्तर्यामि छे. भेदव्यपदेशने माटे बंनेए उपदेश आप्यो छे. भेदव्यपदेशहेतु भिन्न छे. भेद निर्देश हेतु अधिक इत्यादि ब्रह्मसूत्र "जे आत्मामां रहीने आत्मानी अंदर छे–जेने आत्मा जणातो नथी–आत्मा जेनुं शरीर छे—जे आत्मानो अंतर्यामी छे." "प्राज्ञ आत्मावडे आलिंगीत छे, प्राज्ञआत्मावडे अधिष्ठित छे." वगेरे, विशिष्टाद्वैत-वादीओ जीव ब्रह्मना भेदने टेको आपवा नीचेनां शास्त्र वाक्यो बतावे छे. "पतिं विश्वस्यात्मेश्वरं" "आत्माधारोऽखिलाश्रयः"–विश्वनो पति, आत्मानो ईश्वर, आत्मानो आधार, सर्वनो आश्रय.'

पत्यादि शब्देभ्यश्च १-३-४४ सूत्र.

बीजे ठेकाणे रामानुजाचार्ये आ प्रमाणे लख्युं छे,–

आध्यात्मिकादिदुःखयोगार्हात् प्रत्यगात्मनोऽधिकम् अर्थान्तरभूतं ब्रह्म कुतः भेदनिर्देशात् प्रत्यगात्मनो हि भेदेन निर्दिश्यते पर ब्रह्म × × × 'य आत्मानि तिष्ठन् × × × य आत्मानं अंतरो यमयति स त आत्मा अन्तर्यामी अमृतः' 'पृथगात्मानं प्रेरितारं च मत्वा' 'स कारणं करणाधिपाधिपः' 'ज्ञाज्ञौ द्वावजावीशानीशौ × × 'प्रधानक्षेत्रज्ञपतिर्गुणेशः' योऽव्यक्तमन्तरे संचरन् यस्याव्यक्तं शरीरं यम् अव्यक्तं न वेद, योऽक्षरम् अन्तरे संचरन् यस्याक्षरं शरीरं यमक्षरं न वेद एष सर्व भूतान्तरात्मा, अपहतपाप्मा दिव्यो देव एको नारायण इत्यादिभिः

मतलबके 'ब्रह्म जीवथी जुदुं छे. जीव आध्यात्मिक आधिभौतिक अने आधिदैविक ए त्रण प्रकारनां दुःखने आधीन छे, ते जीव अने ब्रह्म एक वस्तु शी रीते होइ शके? तेथी श्रु-

---

'आ वातनो प्रतिध्वनि करी वेदांत तत्त्वसार कर्ताए लख्युंछे के-

"नैवं परः" इति यथाभूतोजीवस्तथाभूतो न परः यथैव हि प्रभायाः प्रभावान् अन्यथाभूतस्तथा प्रभास्थानीय तदंशात् जीवाद् अंशी परोप्यर्थान्तरभूतः। "नैवं परः" आथी एम कह्युं के, जेवो जीव छे, तेवा परमेश्वर नथी. जेम प्रभा अने प्रभावानमां भेद छे तेम प्रभाने ठेकाणे जीव अंश अने परमात्मा अंशी, तेथी ते जुदुं तत्त्व छे.

तिमां परब्रह्मनो जीवथी भेद निर्दिष्ट थयो छे. ' जे आत्मामां रहीने आत्मानी अंदर, जे आत्माने अंदर यमन करे, ते अंतर्यामी अमृत तारो आत्मा; जीव अने नियामक (ईश्वर) प्रथक् मनन करीने; तेज कारण अने करणाधिपति (जीव) अधिपति इश अने अनीश, प्राज्ञ अने अज्ञ बंने अज ते प्रधान अने क्षेत्रज्ञ (प्रकृति अने पुरुष)नो अधिपति—गुणनो प्रभु जे प्रकृतिनी अंदर संचरण करे, प्रकृति जेनुं शरीर ; प्रकृति जेने जाणे नहि ; जे अक्षर (जीव)नी अंदर संचरण करे, अक्षर जेनुं शरीर, अक्षर जेने जाणे नहि ; ते सर्व भूतनो अंतरात्मा पापना स्पर्श विनानो एक मात्र दिव्य देव (अद्वितीय ईश्वर) नारायण.'

वळी विशिष्टाद्वैत-वादीओ कहे छे के, ब्रह्म ज्यारे अखंड वस्तु छे, त्यारे जीव ए ब्रह्मनो खंड-अंशपण थइ-होइ शके नहि. न च ब्रह्मखण्डो जीवः—(वेदान्त तत्त्वसार) त्यारे जीवने जे ब्रह्मनो अंश कहेवामां आव्यो छे—

अंशो नानाव्यपदेशात् । ब्रह्मसूत्र २-३-४२

एनो अर्थ जीव ब्रह्मनी विभूति. जेम प्रभाने आग्निनो अंश कही शकाय, जेम देहने देहीनो अंश कही शकाय, तेम-तेवी रीते-जीव ब्रह्मनो अंश.'

---

[१]प्रकाशादिवत्तु नैवं परः (२-३-४५) सूत्रनां भाष्यमां रामानुजे लख्युं छे के प्रकाशादिवत् जीवः परमात्मनोऽशः

श्रुतिमां ठेक ठेकाणे जीव अने ब्रह्मना अभेदनो निर्देश कर्यो छे खरो, जेमके " सोऽहं " तत्त्वमसि " इत्यादि. पण ए बधां वाक्योनुं तात्पर्य एवुं छे के जीव ब्रह्म-व्याप्य छे. जीव ब्रह्मनुं शरीर छे, जीवब्रह्मात्मक छे.

ततश्च जीवव्यापित्वेनाभेदो व्यपादिश्यते'—वेदान्त तत्त्वसार.

सर्व दर्शनसंग्रह-कार रामानुज दर्शनविशे लखतां आ प्रसंगे आ प्रमाणे लखे छे,—

तथाहि तत्पदं निरस्तसमस्तदोषमनवधिकातिशयासंख्येय-कल्याणगुणास्पदं जगदुदयविभवलयलीलं ब्रह्म प्रतिपादयति तदैक्षत बहुस्यां प्रजायेयेत्यादिषु तस्यैव प्रकृतत्वात् समानाधिकरण्यं ; त्वं पदं वा चिद् विशिष्टं जीवशरीरं ब्रह्माचष्टे प्रकारद्वयविशिष्टैकवस्तुपरत्वात् समानाधिकरणयस्य ।

मतलबके 'तत्त्वमसि—ए वाक्यमां तत्पदर्थी, जे सर्व प्रकारना दोष विनानुं घणा कल्याण गुणोना आधार रुप, जगत्नी उत्प-

---

यथाग्न्यादित्याद् भास्वतो भारुपः प्रकाशोंऽशः भवति. यथा वा देहिनो देवमनुष्या देर्देहोंऽशस्तद्वत् * * एवं जीवपरयो र्विशेष्यविशेषणारेवं शांशित्वं स्वभावभेदश्चोपपद्यते.

'तत्त्वमसि अयमात्मा ब्रह्म इत्यादिषु तच्छद्ध ब्रह्मशद्धवत् ' त्वम् ' ' अयम् ' ' आत्मा ' शद्धोऽपि जीवशरीरकब्रह्मवाचकत्वेन एकार्थाभिधायित्वात् ।

त्ति स्थिति अने लय ए जेनो लीला-विलास छे,ते ब्रह्मने जाणवुं. कारण, तत् ऐक्षत-ए ठेकाणे तत्पदथी ब्रह्मनेज जणाववानुं छे. तत्त्वमसिमां पण तत् पदथी ते एकज वस्तु समजवानी छे. त्वंपद वडे चे चिद्विशिष्ठ, अने जीव जेनुं शरीर छे, ते ब्रह्म ज समजवानुं छे. वस्तु एकज होवा छतां तेना प्रकारना भेद छे-समानाधिकरणवडे आ वातनुं सूचन थाय छे.' विशिष्टाद्वैत मत प्रमाणे, जीव अवश्ये करीने नित्य वस्तु छे.

न जायते म्रियते वा विपश्चित् ।

'जीव जन्मतो पण नथी, मरतो पण नथी.'

आ श्रुतिनां बळथी तेओ कहे छे के जीवनो जन्म पण नथी मरण पण नथी. आ संबंधमां अद्वैत-वादीओ साथे तेमनो मत मळतो छे. पण अद्वैत-वादीओ जीवने विभु (सर्व-व्यापी) कहे छे, ते बाबतमां तेमनो मत जुदो छे. तेओ कहे छे के जीव अणु छे. अने ए वातनी साबीती माटे नीचली श्रुतिओ जणावेछे;-

एषोऽणुरात्मा चेतसा वेदितव्यः ।

'आ अणु आत्मा चित्तवडे जाणवा योग्य छे.'

वालाग्रशतभागस्य शतधाकल्पितस्य च ।
भोगो जीवः सविज्ञेयः स आनन्त्याय कल्पत इति
आराग्रभावः पुरुषोऽणुरात्मा चेतसावेदितव्य इतिच ।

'वाळना अग्रभागना सोभाग करी तेमांना दरेक भागना

पाछा सोभाग करवामां आवे तो ते दरेक भाग जेवडो जीव छे, ते जीवने जाणवाथी अमर थइ जवाय.'

'जीव आराग्र भाग—अणु परिणाम, तेने चित्तवडे जाणवो.' जीव ज्यारे अणु, त्यारे एक जीव कदि पण घणां शरीरमां अधिष्ठित थइ शके नहि. तेथी जीव घणा छे. दरेक शरीरमां जुदो जुदो छे.

विशिष्टाद्वैतमत प्रमाणे ईश्वरनी प्राप्ति करवी एज जीवनो परम-पुरुषार्थ छे. जीव ज्यारे पुरुषोत्तमने मेळवी शके, त्यारे तेने परमासिद्धिनो लाभ थाय. पुनरावृत्ति विनानो भगवत्-पदनो लाभ ते आ सिद्धि समजवी.

स्व भक्तं वासुदेवोपि संप्राप्यानन्दमक्षयम् ।
पुनरावृत्तिरहितं स्वीयं धामं प्रयच्छति ॥

'वासुदेव पोताना भक्तने अक्षय आनंद आपीने पुनरावृत्ति रहित पोतानुं धाम आपे.'

तेने मेळववानो उपाय शो ? एना जवाबमां श्रीरामानुजाचार्ये वेदान्त-संग्रहमां आ प्रमाणे लख्युं छे—

सोऽयं परब्रह्मभूतः पुरुषोत्तमो निरतिशयपुण्यसंचयक्षीणाशेषजन्मोपचितपापराशेः परमपुरुषचरणारविंद शरणागनिजनित-तदाभिमुख्यस्य सदाचार्योपदेशोपबृंहितशास्त्राधिगत-तत्त्वयाथात्म्याऽवबोधपूर्वकाहरहरुपचीयमानशमदमतपःशौच-

क्षमार्ज्जवभयाभयस्थानविवेकदयाहिंसाद्यात्मगुणोपेतस्य वर्णाश्रमोचितपरमपुरुषाराधनवेषनित्यनैमित्तिककर्मोयसंहृतिनिषिद्धपरिहारनिष्ठस्यपरमपुरुपचरणारविंदयुगलन्यस्तात्मात्मीयस्य तद्भक्तिकारितानवरतस्तुति-स्मृति-नमस्कृति-वन्दन-यतन-कीर्तन-गुणश्रवण-वचन-प्रणामादिप्रीतपरमकारुणिक-पुरुषोत्तमप्रसाद-विध्वस्तखान्त-ध्वान्तस्यानन्यप्रयोजनानवरत-निरतिशयप्रियविशदतम-प्रत्यक्षतापन्नानुध्यानरुपभक्तैकलभ्यः । तदुक्तं परमगुरुभिर्भगवद्यामुनाचार्यपादैः—उभयपरिकर्मितस्वान्त स्यैकन्तिकात्यन्तिक-भक्तियोग्यलभ्यइति॥

ते परब्रह्मरुप पुरुषोत्तम, नीचे जणावेला साधकना संबंधमां बीजां प्रयोजन विनानी, विराम-रहित, अतिशय-रहित, प्रिय, सुविशद, प्रत्यक्ष सिद्ध, अनुध्यान रुप जे भक्ति, ते वडे ज मेळवी शकाय एम छे. (तेने पामवानो बीजो उपाय नथी) केवो साधक ? जेनां पूर्व जन्मना पापनो ढगलो (आ जन्ममां) मोटा पुण्यना ढगला वडे नाश पाम्यो छे ; जे परमपुरुषनां चरणारविंदमां शरणागत थएलो होवाथी तेना तरफ अनुकूळ थयो छे ; हमेशां आचार्यना उपदेशथी शास्त्रना यथार्थ तत्त्वबोधनां फळ रुपे शम, दम, तपः, शौच, भय, अभय, विवेक, दया, अहिंसा वगेरे सद्गुणवाळो थयो छे, परमपुरुषनी आराधना करीने जे वर्णाश्रमने उपयोगी नित्य अ-

ने नैमित्तिक कर्मना उपसंहारमां अने निषिद्धकर्मना परिहार-मां संयुक्त थएलो छे, जेणे पुरुषोत्तमना बे चरण कमळमां पोता-ने अने पोतानुं जे कांइ होय ते बधांने समर्पण करेलुंछे, भग-वद्भक्ति-प्रणोदित अवारित स्तवन, शरण, नमस्कार, वंदन यतन, कीर्तन, गुण-श्रवण, वचन, ध्यान, अर्चन, प्रणाम व-गेरे वडे प्रसन्न थएल परम कारुणिक परमेश्वरना प्रसादथी जेनां हृदयनो सघळो अंधकार नाश पाम्यो छे,—आवो साध-क होवो जोइए. आवीज मतलबनुं भगवान् यामुनाचार्ये कहे-लुं छे के जे साधकनुं अंतःकरण, ज्ञान कर्म ए बंने प्रकारना योग वडे संस्कृत थयुं छे, तेज एकान्तिक अने आत्यन्तिक भक्तियोग वडे भगवान्‌ने पामे छे.

विशिष्टाद्वैतवादीओ—

विद्यांचाविद्यांच यस्तद्वेदोभयंसह।
अविद्यया मृत्युं तीर्त्वा विद्ययामृतमश्नुते॥

‘जे विद्या अने अविद्या बंनेने जाणे छे. ते अविद्यावडे मृत्युने तरी जइने विद्यावडे अमरत्व पामे छे’—आ श्रुतिने आधारे कहे छे के, अविद्या (कर्म) अने विद्या (भक्तिरुपा-पन्नध्यान) ए बंनेनो समुच्चयज मुक्तिनुं साधन छे.

उपासना कर्मसमुच्चितेन विज्ञानेन दृष्टृदर्शने नष्टेभगवद्-भक्तस्य तन्निष्ठस्य भक्तवत्सलः परमकारुणिकः पुरुषोत्तमः

स्वयाथात्म्यानुभवानुगुणनिरवधिकानन्तरूपं पुनरावृत्तिरहितं स्वपदं प्रयच्छति ।

'उपासना रुप कर्म सहित जे विज्ञान, ते वडे जे भगवद्भक्तनुं द्रष्टा दर्शन विनष्ट थयुं छे, तेनेज भक्तवत्सल, परमकारुणिक, पुरुषोत्तम, अनन्तकाल रहे तेवुं, पुनरावृत्ति विनानुं पोतानुं पद आपे छे.' त्यारे ते भक्त भगवान्नां स्वरुपनो अनुभव करे छे. आ ज्ञान, वाक्यथी उत्पन्न थयेलुं आकस्मिकज्ञान नथी. ए ध्यान-उपासना वगेरे शब्दथी कहेलुं वेदन अथवा साक्षात्कार छे. आ वातनुं समर्थन करवा माटे विशिष्टाद्वैत-वादीओ नीचे लखेली श्रुतिओ बतावे छे—

नायमात्मा प्रवचनेन लभ्यो न मेधया न बहुना श्रुतेन । यमेवैष वृणुते स तेन लभ्यस्तस्यैष आत्मा विवृणुते तनुं स्वामिति ।

'आ आत्मा शास्त्र ज्ञानवडे के बुद्धिवडे के घणां शास्त्रनां अध्ययनवडे पमातो नथी. जे तेने वरे छे, तेने ज मळे छे. तेने ज आत्मा पोतानुं स्वरुप प्रगट करे छे.' मतलबके रामानुजनी भाषामां—

योऽयं मुमुक्षुर्वेदान्तविदितवेदनरुपध्यानादिविशिष्टः यदा तस्य तस्मिन्नेवानुध्याने:निरधिकातिशया प्रीति र्जायते तदैव तेन लभ्यते परः पुरुष इति ।

'ज्यारे वेदान्तमां कहेलां विज्ञानरुप ध्यान वगेरेनुं अनुष्ठान करनार मुमुक्षुनी ते ध्यानमां अत्यंत प्रीति थाय ते प्रीतिनो अनुभव करे-त्यारे ज ते मुमुक्षु ते परम पुरुषने पामे.'

विशिष्टाद्वैतवादीना मत प्रमाणे ए परम पुरुष परम-कारुणिक अने भक्तवत्सल छे. ते लीलाने लीधे अर्चा, विभव, व्यूह, सूक्ष्म अने अन्तर्यामी ए पांच रुपे रहेलो छे. अर्चा=प्रतिमा वगेरे; विभव=रामादि अवतार; व्यूह=वासुदेव, संकर्षण, प्रद्युम्न अने अनिरुद्ध—ए चतूर्व्यूह; सूक्ष्म=संपूर्णषड्गुणवाळो[1] परब्रह्म अने अंतर्यामी=जीव मात्रना नियामक. साधक क्रमे क्रमे स्तवन वगेरे नीचलां पगथीयां ओळंगीने अंतर्यामीनी उपासनानो अधिकारी थाय छे.

अर्च्चोपासनयाक्षिप्ते कल्मषेऽधि ततो भवेत् ॥
विभवोपासनेपश्चाद् व्यूहोपास्तौ ततः परम् ।
सूक्ष्मे तदनुशक्तः स्यादन्तर्यामिणमीक्षितुमिति ॥
(सर्वदर्शन-संग्रह).

---

[1] षड्गुणम्—गुणाः अपहत पाप्मात्वादयः । सोऽपहतपाप्मा विजरोविमृत्युर्विशोकोविजिघत्सः सत्यकामः सत्यसंकल्प इति श्रुतेः

'षड्गुण कया कया? पाप हीनता, रजो शून्यता, अमरत्व, विशोकत्व, अक्षरत्व अने सत्यकाम-सत्यसंकल्पत्व.'

'अर्चा एटले प्रतिमानी उपासना वडे पापनो क्षय थवाथी साधक विभवनी उपासनानो अधिकारी थाय; त्यार पछी व्यूह उपासनानो अधिकारी थाय; त्यारपछी सूक्ष्मनी उपासनामां आसक्त थाय; छेल्ली उपासना—अन्तर्यामीनी.'

अद्वैत-वादीओ सगुण अने निर्गुण एम बे प्रकारनी उपासना कहे छे अने तेनां फळमां न्युनाधिकता बतावे छे, ते विशिष्टाद्वैत-वादीओ कबुल राखता नथी. तेमने ते कबुल नथी. तेथी रामानुजाचार्ये पहेलां सूत्रनां भाष्यमां कह्युं छे के,—

परविद्यासु सर्वासु सगुणमेव ब्रह्म उपास्यम् । फलंच एक रूपमेव

मतलबके 'बधे ठेकाणे पराविद्यामां सगुण ब्रह्म ज उपासनानो विषय छे, अने उपासनानुं फळ एक प्रकारनुं ज कहेवामां आव्युं छे.' अने तेमणे प्रमाण-साबीती-माटे प्राचीन भाष्यकार बोधायन अने वाक्यकार टंकनो मत लीधो छे.

विशिष्टाद्वैत-वादीना मत प्रमाणे मुक्तिनुं स्वरुप शुं? मुक्त पुरुष क्यारे पण ब्रह्मनां स्वरुपनी एकताने पामतो नथी. तेने ब्रह्मना स्वभावनी प्राप्ति थाय खरी, ब्रह्मने योग्य एवा गुणो (सत्यसंकल्पत्व)नी प्राप्ति थाय खरी, पण ब्रह्मनी साथे एकी भूत थाय नहि.

एवं गुणाः समानाः स्यु र्मुक्तानामीश्वरस्य च ।

सर्व कर्तृत्वमेवैकं तेभ्यो देवे विशिष्यते ॥

'मुक्त पुरुषोना गुणो ईश्वरना गुणो जेवा थाय ; पण ईश्वरमां विशेषता ए के सर्व कर्तृत्व मात्र ईश्वरमांज संभवे.'

नापि साधनानुष्ठानेन निरस्ताविद्यस्य परेण स्वरुपैक्यसंभवः, अविद्याश्रयत्वयोग्यस्य तदनन्यत्वासंभवात् ।

१ला सूत्रनुं श्रीभाष्य.

आ प्रमाणे साधननां अनुष्ठानवडे अविद्यानो बाध थया छतां पण परमेश्वरनी साथे साधकनां स्वरुपनी एकता संभवे नहि ; अविद्याना आधारना संबंधमां एवुं थवानी संभावना क्यांथी ? शी ?

तेओ कहे छे के, शास्त्रमां जे मुक्तने आत्मभाव अथवा ब्रह्मभावनी प्राप्तिनी वात छे, तेथी ब्रह्म अथवा आत्माना स्वभावनी प्राप्ति समजवी. मुक्तनुं ऐश्वर्य जणावनारी जे श्रुतिओ छे, ते वडे ते स्वराट्, अनन्याधिपति, संकल्पसिद्ध थाय, एटलुं ज वर्णववामां आव्युं छे.' पण जगत्नी उत्पत्ति-स्थिति अने लयना व्यापारमां तेनो अधिकार उत्पन्न थतो नथी. वेदान्तनां " जगद्व्यापारवर्ज्जनम् " सूत्रमां (४-४-१७) ए विषयनो उल्लेख छे.

'संकल्पादेव तच्छुतेः । ब्रह्मसूत्र ४-४-८.

अत एव चानन्याधिपतिः । ब्रह्मसूत्र ४-४-९.

सर्वंऽपश्यः पश्याति सर्वमाप्नोति सर्वशः। स वा एष दिव्ये-
न चक्षुषा मनसैतान् कामान् पश्यन् रमते य एते ब्रह्मलोके।
स यदि पितृलोक कामो भवाति संकल्पादेवास्य पितरः समु-
त्तिष्ठन्ति सर्वे अस्मै देवाः वलिम् आहरन्ति।

'पश्य (मुक्तपुरुष) सघळुं जुए छे, सघळुं प्राप्त करे छे, ते
ब्रह्मलोकमां दिव्य चक्षुवडे ए बधी कामनानी वस्तु जोइने
रमण करे छे. जो ते पितृओनी कामना करे छे, तो मात्र सं-
कल्प करवाथी पितृओ आवे छे. सघळा देवताओ तेने माटे
बलि आहरण करे छे.'

आज विशिष्टाद्वैतवादीओनी मुक्ति; अद्वैत-वादीओ कहे

---

[1] The souls of the departed if only their life has been pure and holy, are able to approach this Brahman, sitting on his throne, and to enjoy their rewards in a heavenly paradise. —(M. M.'s I. Phi. p. 251).

While the very idea of an approach of the souls of the departed to the throne of Brahman or of their souls being merged in Brahman, was incompatible with the fundamental tenet that the two were and always remain, one and the same, never seperated except by Nescience. The idea of an approach of the souls to Brahman, nay, even of the individual soul being a separate part of Brahmna, to be again joined to Brahman after death, runs counter to the conception of Brahman as explained by Shamkara however prominent it may be in the Upanishads and in the system of Ramanuja,—Ibid p. 252.

छे ते मुक्तिथी आ जुदी छे. कारणके, ते मत प्रमाणे मुक्तनुं ब्रह्मनी साथे एकत्व थाय छे.

गंतव्यं च परमं साम्यं ३-३-२८ सूत्रनुं शांकरभाष्य.
' ब्रह्मनी साथे परम साम्य एज (मुमुक्षुनुं)लक्ष्य छे.'

प्रकरण १२ मुं.

वेदान्त दर्शन.

वेदान्त अने गीता.

उपनिषद्, गीता अने ब्रह्मसूत्र ए त्रणने प्रस्थानत्रय कहेवामां आवे छे. प्रस्थान कहेवानो मर्म ए छे के, ए त्रण ध्रुव तारा उपर लक्ष राखीने संसार समुद्रनी यात्रा करनारे " गम्यस्थान " (विष्णवाख्यं परमं धाम) तरफ महापथे प्रस्थान करवुं. गीता ए उपनिषद्नो सारोद्धार छे.

" सर्वोपनिषदोगावो दोग्धा गोपालनंदनः।
पार्थो वत्सः सुधीर्भोक्ता दुग्धं गीतामृतं महत् "॥

" सर्व उपनिषदो गायो छे, गोवाळने आनंद आपनार श्री कृष्ण दोहनार छे, अर्जुन वाछडो छे, बुद्धिमान पुरुष भोक्ता

अने मोटुं गीतारुपी अमृत ते दूध छे."

आथी उपनिषद् अने गीतामां कशो विरोध होइ शके नहि. उपनिषद् वेदनो छेल्लो अथवा शिरोभाग—प्रकृत वेदान्त अथवा ब्रह्मविद्या छे, तेथी वेदान्तनी साथे भेद होवा योग्य नथी. कारणके, गीता पोते ज उपनिषद्, पोते ज ब्रह्मविद्या छे. तेटलामाटे गीताना दरेक अध्यायने अंते आ प्रमाणे बोलातुं जोवामां आवे छे :—

श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायाम् इत्यादि ।

ब्रह्मसूत्र गौणरुपे वेदान्त छे.' मुख्य वेदान्तने उपकारक होवाथी ज तेनुं नाम वेदान्त दर्शन छे. वेदान्त दर्शन अने गीता ए बंने जो पराशरतनय वेदव्यासेज रच्यां होय, तो तेमनो एक बीजांनी साथे अविरोध होवो ए योग्य छे. पण मूळ दर्शननुं खरुं तात्पर्य निरुपण करवानुं काम अत्यंत कठण होवाथी, अने भाष्यकार आचार्योनो एक बीजामां घणो मतभेद होवाथी, प्रचलित वेदान्त दर्शननी साथे घणी बाबतोमां गीतामां जुदापणुं देखाय छे, आ प्रकरणमां ए विषयनो ज

'वेदान्तो नाम उपनिषत् प्रमाणम्। तदुपकारीणि शारीरक सूत्राणिच । वेदान्तसार, २.

वेदान्त वाक्य कुसुमग्रथनार्थत्वात् सूत्राणाम् । वेदान्तवाक्यानि हि सूत्रैरुदाहृत्य विचार्यन्ते। १-१-२ सूत्रनुं शंकरभाष्य.

विचार करवामां आवशे. ए विचारथी गीता कइ कइ बाबत-मां अद्वैतमतने पुष्टि आपेछे, अने कइ कइ बाबतमां विशिष्टाद्वै-तमतने अनुमोदन आपे छे, ते आपणे जोइ शकीशुं.

पाछळ कहेवाइ गयुं छे के, अद्वैत अने विशिष्टाद्वैतमतो अ-नुक्रमे श्रीशंकराचार्य अने रामानुजाचार्ये फेलाव्या छतां पण तेओ घणा जुना वखतना छे. गीता रचावाने वखते ए बंने मतो प्रचलित होवानो असंभव नथी.

गीताना नीचला श्लोकने आधारे पश्चिमना पंडितोए नक्की कर्युं छे के, गीता वेदान्तदर्शन पछीनो ग्रंथ छे. तेमनो आधार-भूत आ श्लोक छे–

" ऋषिभिर्बहुधा गीतं छन्दोभिर्विविधैः पृथक् ।
ब्रह्मसूत्रपदैश्चैव हेतुमद्भिर्विनिश्चितैः ॥

गीता १३-४.

'विविध छन्दथी ऋषिओए बहु प्रकारे विगीत छे ने हेतु-वाळां तथा विनिश्चित एवां ब्रह्मसूत्रपदथी पण ते विगीत छे.'

पश्चिमना पंडितोना मत प्रमाणे वेदान्तदर्शन एज " ब्रह्म-सूत्र पद" छे; तेथी अवश्ये करीने गीता वेदान्तदर्शन पछी र-चाइ छे, एम तेमनुं मानवुं छे.

आ मत छेक अमूलक नथी. शंकराचार्य " ब्रह्मसूत्रपद " ए शब्दनो अर्थ ब्रह्मप्रतिपादक वाक्य करेछे. पण तेमना शि-

ष्य अने टीकाकार आनंदगिरि विकल्पे वेदान्तदर्शन पण समजावे छे. श्रीधरस्वामीनो मत पण एवोज छे.[1]

पण आ बाबते विचारवानी छे के, गीतामां जेम ब्रह्मसूत्रनो उल्लेख मळी आवे छे, तेम ब्रह्मसूत्रमां पण ओछामां ओछुं एक ठेकाणे स्पष्ट रीते गीताना श्लोक विशेष प्रत्ये लक्ष्य आपवामां आव्युं छे. ते सूत्र आ छे—

" अतश्चायनेऽपि दक्षिणे ।
योगिनः प्रति च स्मर्यते स्मार्ते चैते " ॥

(ब्रह्मसूत्र, ४-२-२०, २१).

उपर कहेलां सूत्रमां—

" नैतेसृती पार्थजानन् योगी मुह्यति कश्चन ।
तस्मात् सर्वेषु कालेषु योगयुक्तो भवार्जुन ॥

गीता ८-२७.

गीताना आ श्लोक उपर लक्ष राखवामां आव्युं छे, ए एक

[1] "अथातो ब्रह्मजिज्ञासा" इत्यादीन्यपि सूत्राण्यत्र गृहितानि । अन्यथा छन्दोभिरित्यादिनी पौनरुक्त्यात् । आनंदगिरि

यद्वा " अथातो ब्रह्म जिज्ञासा " इत्यादीनि ब्रह्मसूत्राणि गृह्यन्ते । तान्येव, ब्रह्मपद्यते निश्चीयते एभिः इति पदानि । तैः हेतुमद्भिः " ईक्षते नाशद्धम् " " आनंदामयोऽभ्यासात् " इत्यादिभि र्युक्तिमद्भिः विनिश्चितार्थैः—श्रीधर.

प्रकारे चोक्कस वातछे.[1] आथी आ प्रमाण उपर आधार राखीने कही शकायछे के, वेदान्तसूत्र ए गीता पछी रचाएलो ग्रंथ छे.[2]

---

[1] आ प्रसंगे श्री शंकराचार्ये लख्युं छे के—ननु च
" यत्र काले त्वनावृत्तिमावृत्तिं चैव योगिनः ।
प्रयाता यान्ति तं कालं वक्ष्यामिभरतर्षभ"॥ गीता ८-२३.
इति कालप्राधान्येनोपक्रम्याहरादिकालविशेषः स्मृतावनावृत्तये नियतः कथं रात्रौ दक्षिणायने वा प्रयातोऽनावृत्तिं यायादिति । अत्रोच्यते—

योगिनः प्रति च स्मर्यते स्मार्ते चैते । २१ ।

योगिनः प्रति चायमहरादिकालविनियोगोऽनावृत्तये स्मर्यते। स्मार्ते चैते योग सांख्ये न श्रौते। अतो विषयभेदात् प्रमाणविशेषाच्च नास्य स्मार्तस्य कालविनियोगस्य श्रौतेषु विज्ञानेषु अवतारः ।

[2] स्वर्गस्थ विद्वान् काशीनाथ त्र्यंबक तेलंगे पोते करेलां गीतानां अंग्रेजी भाषांतरनी प्रस्तावना (Secred book of the East Series)मां ब्रह्मसूत्र गीता पछी रचायां छे, ए वातने पुष्टि आपतां लख्युं छे के, नीचे जणावेलां सूत्रोमां पण गीता तरफ लक्ष राखवामां आव्युंछे. स्मृतेश्च १-२-६; अपि च स्मर्यते १-३-२३;अपि च स्मर्यते २-३-४५;स्मरन्तिच४-१-१०;निशि नेति चेन्न संबंधस्य यावद्देह भावित्वाद्दर्शयतिच ४-२-१९.

अहिंयां त्यारे चोक्कस वात कइ मानवी ? गीता पहेली के वेदान्तदर्शन पहेलुं ? पण खरुं जोतां आ जातनां प्रमाणवडे ए वातनो निर्णय थवानो संभव नथी. कारणके, शुं गीता के शुं ब्रह्मसूत्र, ए बंनेनां वखत जतां रुप बदलाइ गयां छे. बादरायणकृत ब्रह्मसूत्रमां पाछळना वखतमां तेना शिष्यो अने शिष्योना शिष्योए नवां नवां सूत्रो उमेर्यां छे. एज प्रमाणे वेद व्यासे रचेली प्राचीन भारत-संहितामां एटले महाभारतमां समाएली गीतामां ठेकाणे ठेकाणे फेरफार अने नवा श्लोकोनी रचनावडे वधारो थयो छे.

अद्वैतमत अने विशिष्टाद्वैत मतनुं विवरण करती वखत आपणे जोयुं छे के, आचार्योए मुख्यत्वे नीचे लखेला पांच विषयोनो विचार कर्यो छे, अने एज विषयोनुं निरुपण कर्युं छे.

१. जगत् सत्य के खोटुं एटले वास्तविक छे के काल्पनिक ?
२. जीवब्रह्मथी भिन्न छे के अभिन्न छे ? जीव एक छे के घणा ?
३. ब्रह्मनुं स्वरुप केवुं छे ? ते निर्विशेष, निरुपाधि, निर्गुण छे के सविशेष, सोपाधि, सगुण छे? अने तेनी साधना सगुण के निर्गुण ए बेमांथी केवी रीते करवी योग्य छे?
४. ब्रह्मप्राप्तिनो उपाय शुं ? कर्म, के ज्ञान, के ध्यान, के भक्ति ?

५. ब्रह्मप्राप्तिनुं फळ शुं ? ब्रह्मनी साथे सायुज्य (जोडाइ जवुं ते) के ब्रह्मना जेवां ऐश्वर्यनो लाभ ?

आपणे जोइ गया छीए के, उपर कहेला पांच प्रसंगना दरेके दरेक विषयमां अद्वैत अने विशिष्टाद्वैत मतमां मोटो तफावत छे. हवे ए दरेक विषयना संबंधमां गीतानो उपदेश शो छे, तेनो विचार करीए.

१. जगत् सत्य छे के खोटुं छे ?

आपणे जोइ गया छीए के, अद्वैतमत प्रमाणे मात्र ब्रह्म ए एकज सत् वस्तु छे ; बीजुं बधुं ज असत्---अवस्तु छे. केवळ एकमेवाद्वितीयं ब्रह्म ज छे, बीजुं कशुंए नथी. तेथी ए मत प्रमाणे जगत् असत्य, काल्पनिक, मात्र मायानुं विजृंभण; रज्जु-सर्पनी पेठे, शुक्ति-रजतनी पेठे, झांझवानां पाणीनी पेठे मिथ्या छे ; "एकमेवाद्वितीयं" ब्रह्म वस्तुनो मायाथी थयेलो विवर्त छे, इंद्रजाळनी पेठे सत्य ब्रह्ममां अध्यस्त छे ; भ्रम मात्र संकल्पथी सिद्ध अवस्तु छे. विज्ञान सिवाय तेणी कशी सत्ता नथी. बीजा मत प्रमाणे एटले विशिष्टाद्वैत मत प्रमाणे जगत् सत् वस्तु छे. जगत्-परतंत्र खरुं, जगत् ब्रह्मने आधीन; ब्रह्मनो प्रकार मात्र खरुं; पण जगत् मिथ्या के काल्पनिक नहि. जगत् प्रकृतिना परिणामथी रचाएलो, विकारथी उत्पन्न थएलो वास्तविक पदार्थ छे. निर्विकार ब्रह्मनी साथे सरखावतां

असत् होवा छतां पण जगत् विज्ञान मात्र नथी. जगत्नी वास्तविक सत्ता छे. आ मतभेदने ठेकाणे गीता कया मतने अनुमोदन आपे छे ?

भगवान् गीतामां कहे छे के, ते पोते सर्व भूतनुं सनातन बीज छे.

"बीजं मां सर्वभूतानां विद्धि पार्थ सनातनम्"

गीता ७-१०.

आ बीज शब्द उपर ध्यान आपवानी जरुर छे. बीजमांथी वृक्षनी उत्पत्ति थाय ; वृक्ष बीजमां विलीन थाय. पाछुं बीजमांथी वृक्ष उत्पन्न थाय, वळी बीजमां वृक्ष विलीन थाय. आ प्रमाणे क्रमान्वये-वाराफरती-बीजमांथी वृक्षनो आविर्भाव अने बीजमां वृक्षनो तिरोभाव थाय छे. तेथी, भगवान् जगत्नुं बीज छे एम कहेलुं छे तेथी एमज समजाय के तेमांथी फरीफरीने जगत्नो आविर्भाव अने तेमांज वारेवारे जगत्नो तिरोभाव थाय छे. एनुं ज नाम उत्पत्ति अने प्रलय. क्रम प्रमाणे जगत्नी उत्पत्ति अने प्रलय थाय छे. उत्पत्ति वखते जगत् अव्यक्तमांथी व्यक्त थाय छे, अने प्रलय वखते जगत् व्यक्तमांथी अव्यक्त थाय छे.[1] तेथी भगवाने कह्युं छे के, ते पोते

[1]गीतामां बीजे ठेकाणे कह्युं छे के–

"अव्यक्तादीति भूतानि व्यक्तमध्यानि भारत ।

"प्रभवः प्रलवः स्थानं निधानं बीजमव्ययम्" गीता ९-१८.

मतलबके—ते जगत्नुं अक्षय बीज ; जगत्नी तेमांथी उत्पत्ति, तेनावडे स्थिति अने तेमांज लय थाय छे; तेज जगत्नुं निधान-आधार अने आश्रय छे.'

अव्यक्त निधनान्येव तत्र का परिदेवना " ॥

गीता २-२८.

' भूतमात्रनुं आदि अव्यक्त छे, मध्य, हे भारत ! व्यक्त छे अने अंततो अव्यक्त ज छे--त्यारे तेमनी परिदेवना शानी ' ?

'गीतामां बीजे ठेकाणे पण भगवान्मांथी सृष्टि थवानी वात छे.

' अहं सर्वस्य प्रभवः मत्तः सर्वं प्रवर्तते ' । गीता १०-८.

' हुं सर्वनुं उत्पत्ति स्थान छुं ; माराथी ज सर्वे प्रवर्ते छे.'

गीतामां बीजे ठेकाणे पण कह्युं छे के—

" ये चैव सात्त्विका भावा राजसा स्तामसाश्च ये ।
मत्त एवेति तान् विद्धि न त्वहं तेषु ते मयि॥"गीता ७-१२.

भावाः=पदार्थाः—शंकर.

वळी पण जे जे सात्त्विकभाव छे, के जे जे राजसभाव छे, तेम तामस छे, ते सर्व माराथी ज छे, एम जाण, हुं तेमनामां नथी, ते मारामां छे.

एवी ज मतलबनुं तैत्तिरीय उपनिषद् कहे छे,–

" यतो वा इमानि भूतानि जायन्ते। येन जातानि जीवन्ति। यत्प्रयन्त्यभिसंविशन्ति "—तैत्तिरीय उपनिषद् ३-१

' जेनाथी प्रसिद्ध आ (सर्व) भूतो उपजे छे, जे वडे उपजेलां जीवे छे, (ने) जेना प्रति जाय छे, (तथा) एक भावने पामे छे,' तेज ब्रह्म छे. "जन्माद्यस्य यतः" (ब्रह्मसूत्र १-१-२) ए ब्रह्मसूत्रमां ए भावज जणाव्यो छे. तेथी छान्दोग्य उपनिषद्मां भगवानने "तज्जलान्"–एवी संज्ञा आपवामां आवी छे.

' सर्वं खल्विदं ब्रह्म तज्जलान् इति'—छांदोग्य ३-१४-१. तज्जलान् एटले तज्ज, तल्ल, तदन ; तेमांथी जगत् उत्पन्न थयुं छे ; तेमां जगत् रहेलुं छे ; तेमांज जगत् लीन थाय छे. बीजे ठेकाणे शास्त्रमां कह्युं छे,—

" यतो भूतानि जायन्ते येन जीवन्ति सर्वतः ।
यस्मिंश्च विलयंयान्ति नमस्तस्मैपरात्मने ॥ ७ "

' जेमांथी भूतो उत्पन्न थाय छे, जेनावडे जीवे छे, अने जेमां लय पामे छे, ते परमात्माने नमस्कार.'

जगत्ना आ आविर्भाव काळने पुराणनी भाषामां ब्रह्मानो दिवस अने जगत्ना तिरोभाव काळने--जे काळे जगत् अव्यक्त अवस्थामां रहे—ते काळने ब्रह्मानी रात्रि कहेवामां आवे छे. ब्रह्मानी रात्रिमां जगत्नो प्रलय अने ब्रह्माना दिवसमां

जगत्‌नी उत्पत्ति थाय छे. गीता आ मतने पुष्टि आपतां कहे छे के–

" अव्यक्ताद्व्यक्तयः सर्वाः प्रभवन्त्यहरागमे ।
रात्र्यागमे प्रलीयन्ते तत्रैवाव्यक्तसंज्ञके ॥
भूतग्रामः स एवायं भूत्वा भूत्वा प्रलीयते ।
रात्र्यागमेऽवशः पार्थ प्रभवत्यहरागमे ॥ "

गीता ८-१८-१९.

" सर्वभूतानि कौंतेय प्रकृतिं यान्ति मामिकाम् ।
कल्पक्षयेपुनस्तानि कल्पादौ विसृजाम्यहम् ॥
प्रकृतिं स्वामवष्टभ्य विसृजामिपुनः पुनः ।
भूतग्रामम् इमं कृत्स्न मवशं प्रकृते र्वशात् ॥

गीता ९-७-८.

' सर्वे व्यक्तिओ दिवसागमे अव्यक्तमांथी थाय छे, ने रात्र्यागमे ए अव्यक्तमांज प्रलय पामे छे. एनो एज आ भूत ग्राम थाय छे ने जाय छे. ए अवश छतो रात्र्यागमे प्रलयं पामे छे. ने दिवसागमे उद्‌भवे छे.'

' कल्पक्षये सर्वभूत, हे कौंतेय ! मारी प्रकृतिने पामे छे, ने तेमने पाछां कल्पादिए सर्जु छुं, मारी प्रकृतिने अवलंबी, प्रकृतिना वशथी अवश जेवो थइ, हुं वारंवार अखिलभूत समुहने सर्जु छुं.'

मतलब के प्रकृतिमां भगवान् अधिष्ठित थइने जगत् रचना करे, एनुं नाम 'ईक्षण'.

"मयाध्यक्षेण प्रकृतिः सूयते सचराचरम् ।
हेतुनानेन कौंतेय जगद्विपरिवर्तते." गीता ९,१०.

भगवान्नां अधिष्ठानने लीधेज प्रकृति आ चराचर विश्वने उत्पन्न करे छे. अने तेथीज जगत्नो परिणाम थाय छे.

गीता कहे छे के, भगवान्नी बे प्रकृति छे-अपरा अने परा. आ बेना संयोगथी सृष्टि थाय छे.

"भूमिरापोऽनलो वायुः खं मनो बुद्धिरेव च ।
अहंकार इतीयं मे भिन्ना प्रकृतिरष्टधा ॥
अपरेयमितस्त्वन्यां प्रकृतिं विद्धि मे पराम् ।
जीवभूतां महाबाहो ययेदं धार्यते जगत् ॥
एतद्योनीनि भूतानि सर्वाणीत्युपधारय ।
अहं कृत्स्नस्य जगतः प्रभवः प्रलयस्तथा ॥"

गीता ७,४-६.

'पृथ्वी, पाणी, अग्नि, वायु, आकाश, मन अने बुद्धि पण, तथा अहंकार आटली मारी भिन्न प्रकृत्ति आठ प्रकारे छे. आतो अपर, (पण) एथी बीजी मारी पर प्रकृति समज, जे जीवरुप छे, ने जेनाथी हे महाबाहो ! आ जगत् धारण थाय छे. सर्व भूत एमांथीज उत्पन्न थायछे, एम ग्रहण कर, हुं आ-

खा जगत्नो प्रभव तेम प्रलय छुं.'

भगवाने जे रीते अपरा प्रकृतिनो परिचय आप्यो छे, ते उपरथी एम लागे छे के, ते वडे तेमणे सांख्यमां कहेली प्रधान अथवा मूळ प्रकृतिने लक्षमां राखेली होय. बीजे ठेकाणे भगवाने कह्युं छे के--

" मम योनिर्महद्ब्रह्म तस्मिन्गर्भं दधाम्यहं ।
संभवः सर्वभूतानां ततो भवति भारत ॥
सर्वयोनिषु कौंतेयः मूर्तयः संभवन्ति याः ।
तासां ब्रह्म महद्योनिरहं बीजप्रदः पिता ॥ "

गीता १४,३-४.

मतलबके " मारी योनि महद्ब्रह्म (प्रकृति) छे. तेमां हुं गर्भ मुकुं छुं. तेथी हे भारत ! सर्व भूतनो संभव थाय छे. सर्व योनिमां हे कौंतेय ! जे जे मूर्तिओ थाय छे तेमनी महत् योनि ब्रह्म छे ने हुं बीजप्रद पिता छुं.'

आवीज मतलबथी बीजे पण गीतामां कहेलुं छे.

" यावत् संजायते किंचित् सत्वं स्थावर जंगमम् । "
क्षेत्रक्षेत्रज्ञसंयोगात्तद्विद्धि भारतर्षभ ॥ गीता १३-२६.

' स्थावर जंगम जे कांइ पदार्थ उत्पन्न थाय छे तेनो हेतु क्षेत्र अने क्षेत्रज्ञनो संयोग जाण.'

क्षेत्र=अपराप्रकृति अथवा प्रधान ने क्षेत्रज्ञ=पराप्रकृति के जीव.

जगत् अने जगदीश्वरनां संबंधनो निर्णयकरतां बीजे ठेकाणे भगवाने कह्युं छे के–

" मया ततमिदं सर्वं जगदव्यक्तमूर्तिना ।
मत्स्थानि सर्वभूतानि न चाहं तेष्ववस्थितः ॥
न च मत्स्थानि भूतानि पश्यमे योगमैश्वरं ।
भूतभृन्न च भूतस्थो ममात्मा भूतभावनः ॥"

गीता ९,४-५.

'में अव्यक्त मूर्त्तिए आ आखुं जगत् व्यापेलुं छे, भूत मात्र मारामां छे, हुं तेमनामां नथी. वळी भूत मारामां छे एम नथी, मारो ऐश्वर्यवाळो योग जो भूतनुं पोषण करवावाळो तथा भूतभाव न छतां मारो आत्मा भूतस्थ नथी.'

गीतानां आ वधां वचनोमां कोइपण ठेकाणे जगत्ना मिथ्यात्वनो उपदेश मळतो नथी. जगत् काल्पनिक पदार्थ छे के मात्र विज्ञाननुं विजृंभ्रण छे. एवुं इंगित पण कोइ ठेकाणे जोवामां आवतुं नथी. उलटुं गीतातो कहे छे के—

" नासतो विद्यते भावो नाभावो विद्यते सतः । "

'सत्नो अभाव न थाय, अने असत्नो भाव न थाय,'– ए स्थळे परिणामवादनुंज समर्थन कर्युं छे. आ सांख्य मतने मळतुं छे. सांख्योनो उपदेश आ छे के—

" नासद् उपपद्यते न सद् विनश्यति "

'असत् उत्पन्न थतुं नथी ; सत्नो विनाश नथी.'

आथी, जगत्ना सत्य-मिथ्यापणाना संबंधमां गीताए मुख्यत्वे विशिष्टाद्वैत मत प्रमाणेना परिणामवादनुं ज अनुमोदन करेलुं छे. गीता अद्वैतमतानुयायी विवर्त-वादनो समादर करती नथी.

ब्रह्मसूत्रमां जे रीते जगत्नो प्रसंग उत्थापित करीने विचार्यो छे ते जोतां ते मुख्यत्वे करीने परिणामवादानुयायी छे, एम मानवुं असंगत नथी; हवे तेनो विचार करीए छीए.

मुंडकउपनिषद्नो एक मंत्र आ प्रमाणे छे.

"यत्तद्द्रेश्य मग्राह्य मगोत्र मवर्ण मचक्षुः श्रोत्रं तदपाणिपादम् । नित्यं विभु सर्वगतं सुसूक्ष्म तदव्ययं यद्भूतयोनिं परिपश्यन्ति धीराः ॥" (मुंडकोपनिषद् १-१-६)

जे ते अद्रश्य, अग्राह्य, अगोत्र, अवर्ण (ने) चक्षु तथा श्रोत्रथी रहित (छे) ते हाथ पगथी रहित, नित्य, विभु, व्यापक, (ने) अतिसूक्ष्म (छे), ते अव्यय (छे तथा) जे भूतोनुं कारण (छे, तेने) विवेकीओ सर्व भणीथी जुए छे.

बादरायणे ब्रह्मसूत्रना पहेला अध्यायना बीजा पादमां आ विषयनो विचार कर्यो छे.

"अदृश्यादिगुणको धर्मोक्तेः ।" १-२-२१ ब्रह्मसूत्र.

आ (मुंडकोक्त) भूतयोनि, ते शुं? सांख्योक्त प्रधान अथवा

जीव, के परमेश्वर ? बादरायणनो सिद्धांत छे के ते परमेश्वर.

मतलबके तेवा मत प्रमाणे ईश्वरज भूतयोनि छे.

योनि एटले कारण. कारण बे प्रकारनां, उपादान अने निमित्त. जेम अलंकारनुं उपादान कारण सोनुं अने निमित्त कारण सोनी. घडानुं उपादान कारण माटी अने निमित्त कारण कुंभार. ब्रह्म ए जगत्नुं निमित्त कारण छे के उपादान कारण? ब्रह्म ए जगत्नुं निमित्त अने उपादान ए बंने कारण छे. ए बादरायणनो सिद्धांत छे.

ब्रह्म जगत्नुं निमित्त कारण छे, ए वात बादरायणे नीचेनां सूत्रमां प्रतिपादन करेली छे—

" जगद्वाचित्वात् " ब्रह्मसूत्र १-४-१६

आना भाष्यमां श्री शंकराचार्ये लख्युं छे के—

" परमेश्वरश्च सर्वजगतः कर्ता सर्ववेदान्तेष्ववधारितः "

शंकर मतने अनुसरनारा भारती तीर्थे लख्युं छे के—

"एतत् कृत्स्न जगद् यस्य कार्यं स एव वेदितव्य इति। कृत्स्नजगत्कर्तृत्वंच परमात्मन एव।"

मतलबके, परमेश्वर-परमात्माज-जगत् कार्यना कर्ता एटले निमित्त कारण.

ते मात्र निमित्त कारण ज नथी, उपादान कारण पण छे, ए प्रतिपादन करवा माटे बादरायणे एक वधारे सूत्र रच्युं छे.

" प्रकृतिश्च प्रतिज्ञादृष्टान्तानुरोधात् इत्यादि " ॥

(ब्रह्मसूत्र १,४,२३-२७).

आ सूत्रना भाष्यमां शंकराचार्ये लख्युं छे के–

" एवं प्राप्ते ऋमः । प्रकृतिश्चोपादानकारणं च ब्रह्माभ्युपगंतव्यम् निमित्तकारणं च । न केवलं निमित्तकारणमेव । "

मतलबके ब्रह्म ए जगत्नुं मात्र निमित्त कारण छे, एम नथी ते निमित्त कारण अने उपादान कारण बंन्ने ज छे.

आ संबंधमां भारतीतीर्थनुं अधिकरण आम छे,---

निमित्तमेव ब्रह्म स्यादुपादानं च वीक्षणात् ।
कुलालवन्निमितं तन्नोपादानं मृदादिवत् ॥
बहु स्यामित्युपादान भावोऽपि श्रुत ईक्षितुः ।
एक बुद्धया सर्वधीशश्च तस्माद् ब्रह्मोभयात्वकम् ॥

बादरायणे बीजा अध्यायना बीजा पादमां आकाश, वायु, अग्नि, पाणी अने पृथ्वी ए पांच भूत ए ब्रह्मनुं कार्य छे---ब्रह्ममांथी उत्पन्न थयां छे, एम प्रतिपादन कर्युं छे.

" तस्माद् ब्रह्मकार्यं वियदिति सिद्धम्

(२-३-७ ब्र. सू. नुं शांकरभाष्य).

२-३-१३ सूत्रना भाष्यमां शंकर कहे छे के---

" स एव परमेश्वरस्तेन तेनात्मनावतिष्ठमानोऽभिध्यायन् तं तं विकारं सृजति । * * सोऽकामयत बहुस्यां प्रजायेय ।

इतिप्रस्तुत्य सच्चत्यच्चाभवत् "।

सत्=पुरुषः, त्यत्=प्रकृतिः

मतलबके 'परमेश्वरने ज्यारे सृष्टि करवानी इच्छा थई, त्यारे ते सत् (पुरुष) अने त्यत् (प्रकृति) रुपे संभिन्न थया तेणे अभिध्यान करीने ते ते विकारनी सृष्टि करी. अनुलोम (सवळुं) क्रमथी सृष्टि अने विलोम (अवळुं) क्रमथी प्रलय साधित थाय छे, ए पण वादरायणे उपदेश आप्यो छे ;—

" विपर्ययेण तु क्रमोऽत उपपद्यते च." ।

(ब्रह्मसूत्र २, ३, १४).

मतलबके आकाशमांथी वायु, वायुमांथी अग्नि, अग्निमांथी पाणी, पाणीमांथी पृथ्वी—आज सृष्टिनो क्रम.

" तस्माद् वा एतस्माद् आकाशः संभूत
आकाशाद् वायु र्वायोरग्नि रग्नेः
रापः अभ्द्यश्च पृथिवी उत्पद्यते " ।

प्रलयनो क्रम आनाथी बरावर विपरीत-उंधो-छे. प्रलय वखते पहेलां पृथ्वी पाणीतत्त्वमां, पाणी अग्नितत्त्वमां, अग्नि वायुतत्त्वमां, वायु आकाशतत्त्वमां विलीन थाय अने सौथी छेल्लुं आकाश ब्रह्ममां विलीन थाय. आज प्रलयनो क्रम.

जो जगत् खोटुं, मायिक-एवीज वादरायणनी मान्यता होत, तो ब्रह्मसूत्रना बीजा अध्यायना पहेला पादमां नीचेनी

शंकाओनां उत्थापन अने खंडनमां एटलां बधां सूत्र शा माटे नियोजित करत? बादरायणनी विचार पद्धति आ प्रमाणे छे—(क) जगत् अचेतन, ब्रह्मचेतन. तेथी आम शंका थइ शके के, चेतन ब्रह्ममांथी अचेतन जगत्नी उत्पत्ति संभवे नहि. तेना उत्तरमां बादरायण कहे छे के, ए व्याप्तिनो व्यभिचार जोवामां आवे छे. चेतनमांथी अचेतननी उत्पत्तिनां द्रष्टांत विरल नथी, एटले छे. चेतन पुरुषमांथी अचेतन केश, नख बनता जोवामां आवे छे. (२, १, ४-११ ब्रह्मसूत्र).

(ख) कुंभार घडो बनावे छे, ते दंड, चक्र वगेरे चीजो–साहित्यो–नी मददथी बनावे छे. ब्रह्मने ज्यारे उपकरण (साधन–साहित्य) नथी, त्यारे ते शी रीते आ विचित्र जगत् रची शके? आ शंकानां समाधानमां बादरायण कहे छे के, उपकरण सिवाय पण रचना जोवामां आवे छे—

" क्षीरवद्धि ।

देवादिवदपिलोके।"–२, १, २४-२५ सूत्र एना भाष्यमां श्री शंकराचार्ये लख्युं छे के–

'यथा हि लोके क्षीरं जलं वा स्वयमेव दधिहिमभावेन परिणमते, अनपेक्ष्य बाह्यं साधनं तथेहापि भविष्यति। एकस्यापि ब्रह्मणो विचित्रशक्तियोगात् क्षीरादिवद् विचित्रपरिणाम उपपद्यते यथा लोके देवाः पितर ऋषय इत्येवमादयो

महाप्रभावाश्चेतना अपि सन्तोऽपेक्ष्यैव किंचिद् बाह्यं साधनम् ऐश्वर्यविशेषयोगाद् अभिध्यानमात्रेण स्वत एव बहूनि नाना-संस्थानानि शरीराणि प्रासादादीनि रथादीनि च निर्मिमाणा उपलभ्यन्ते * * एवं चेतनमपि ब्रह्माऽनपेक्ष्य बाह्यं साधनं स्वत एव जगत् स्रक्ष्यति ।'

'जेम दुध अथवा पाणी बहारनां कोइपण साधननी अपेक्षा न करतां पोताथी ज-पोतानी मेळे ज (स्वयं) दहिं अने बरफना रुपमां आवे छे, तेम ज ब्रह्म. ब्रह्म एक छे खरुं, पण ते जुदी जुदी विचित्र शक्तिवाळुं छे तेथी तेनुं विचित्र परिणाम असंगत नथी * * * बीजुं पण जेम देव पितृ ऋषि वगेरे महा प्रभाव चेतन (पुरुष) बहारनां कोइपण साधननी अपेक्षा न करतां पोत-पोतानां ऐश्वर्यनां बळथी संकल्प मात्रथी घणी जातनां शरीर, महेलो, रथ वगेरे रचे छे * * ते प्रमाणे चेतन ब्रह्म पण बहारनां कशां साधननी अपेक्षा न राखतां स्वतःज-पोताथी ज-जगत् रचे छे.'

(ग) जगत् जो ब्रह्मनुं परिणाम छे, अने ब्रह्म जो निरवयव छे, त्यारे तो आखुं ब्रह्म ज कार्यरुपे परिणत-विकारग्रस्त थशे, अथवा तेने सावयव कहेवुं जोशे. आवी शंका थाय छे.

" कृत्स्न प्रसक्ति निरवयवत्वशब्दकोपो वा ॥ "

२-१-१६ सूत्र.

आना समाधानमां बादरायण कहे छे के---

" श्रुतेश्च शब्दमूलत्वात् ।" २-१-२७ सूत्र.

न तावत् कृत्स्नप्रसक्तिरस्ति कुतः। श्रुतेः। यथैव हि ब्रह्मणो जगदुत्पत्तिः श्रुयते एवं विकारव्यतिरेकेणापि ब्रह्मणोऽवस्थानं श्रुयते। * * " पादोस्य विश्वाभूतानि त्रिपादस्यामृतं दिवि " इति चैवं जातीयकात्। "---शंकरभाष्य.

' जे श्रुति ब्रह्ममांथी जगत्नी उत्पत्ति कहे छे, तेज श्रुति कहे छे के, ब्रह्म विकारग्रस्त थया विना अवस्थान करे छे. " तेना एक अंशमां सघळां भूत छे ; बाकीना त्रण अंश अमृत छे ;" तेथी, ब्रह्मना विकारनी आशंका निर्मूळ छे.

(घ) वळी एक बीजी शंका थशे के, ब्रह्म ज्यारे करणविनानुं (निरवयव) छे, त्यारे ते सृष्टि रचवानुं काम शी रीते करी शके ? बादरायणे उत्तरमां नीचेनी श्रुतिओ उपर लक्ष राख्युं छे,---

" विकरणत्वाद् इति चेत् तदुक्तम्।" २,३,३१ सूत्र.

" अपाणिपादोजवनो गृहीता
पश्यत्यचक्षुः स श्रुणोत्यकर्णः। " श्वेताश्वतर ३-१९.

' तेने हाथ नथी छतां ग्रहण करे छे ; पग नथी छतां चाले छे ; चक्षु नथी, छतां जुए छे ; कर्ण नथी छतां सांभळे छे.'

(ङ) वळी शंका थशे के, भगवान् ज्यारे आप्त काम छे, त्या

रे शा हेतुथी-कयो अभाव पूर्ण करवा-ते सृष्टि कार्यमां प्रवृत्त थाय ? बादरायण कहे छे---

" लोकवत्तु लीला कैवल्यम् । " २-१-३३ सूत्र.

'सृष्टि ए मात्र तेनो लीला विलास छे, जेम बाळक प्रयोजन सिवाय पण क्रीडा करे छे, तेम तेनुं सृष्टि कार्य पण छे.'

(च) वळी शंका थइ शके के, जगत् ज्यारे विषमतानो आधार छे--विषमतावाळुं छे--अहीं ज्यारे कोइ सुखी, कोइ दुःखी कोइ धनवान् कोइ दरिद्र छे त्यारे आ जगत् ईश्वरे रचेलुं होय तो कांतो ते पक्षपाती होय अथवा ते निर्दय होय. आनां समाधानमां बादरायण कहे छे के---

" वैषम्यनैर्घृण्ये न, सापेक्षत्वात् तथा हि दर्शयति । "

(२-१-३४ सूत्र).

' सापेक्षो हीश्वरो विषमां सृष्टिं निर्मिमीते । किम् अपेक्षत इति चेत् । धर्माधर्मौ अपेक्षत इति वदामः " (शंकरभाष्य).

' भगवान जीवनां कर्मो प्रमाणे सृष्टि करे छे. जेनां सुकृत होय तेने सुखी करे, जेनां दुष्कृत होय तेने दुःखी करे. आथी तेनामां पक्षपात के निर्दयता आवी शके नहि.'

जे बादरायणे आवि युक्तिओ, तर्कों अने आ बधां प्रमाण प्रयोगोनी रचना करी छे, ते जगत्ने विज्ञान मात्र अथवा खोटुं कइ रीते कल्पी शके ? विषेशे करीने, ज्यारे तेणे त्रीजा

अध्यायना बीजा पादना आरंभमांज (१-६ सूत्रमां) स्वप्न-सृष्टि अने जाग्रत्-सृष्टिनो भेद बताव्यो छे.[1] त्यां तेणे स्पष्टाक्षरे लख्युं छे के स्वप्नसृष्टिज मायामय छे.

" मायामात्रन्तु कार्त्स्न्येनानाभिव्यक्तस्वरुपात्वात् " ।

३-२-३ सूत्र.

आनां भाष्यमां शंकराचार्ये लख्युं छे के,--

' स्वप्नमां जे सृष्टि छे, ते मात्र मायिक छे. तेमां सत्यनो गंध पण नथी. तेथी स्वप्नदर्शन माया मात्र छे. तेथी जे सृष्टि स्वप्नने आशरे उत्पन्न थाय छे, ते आकाश वगेरेनी सृष्टिनी पेठे पारमार्थिक नथी---एम सिद्ध थयुं.' त्यारे हवे जगत्ने मिथ्या शी रीते कही शकाय ?

जगत् सत्य के मिथ्या---ए संबंधे बादरायणे पोतानो मत बीजे ठेकाणे भाषामां व्यक्त कर्यो छे. तेथी, ए संबंधमां विवाद करवो योग्य नथी. बादरायणे कह्युं छे के,---

" नाभाव उपलब्धेः । " २-२-२८ सूत्र.

आनां भाष्यमां शंकरे कह्युं छे के,---

" न खल्वभावो ब्राह्यस्यार्थस्य अध्यवसातुं शक्यते । कस्मात् । उपलब्धेः । उपलभ्यते हि प्रतिपत्ययं बाह्योऽर्थः स्तंभः कुडयं घटः पट इति । "

---

[1] आ प्रसंगे आ ग्रंथना वेदांत दर्शन प्रकरणनां पृष्ठ जुओ.

'जगत्नो अभाव छे--जगत् नथी, एवो निश्चय करी शकाय नहिं. केम? दरेक चित्तवृत्ति बाह्य वस्तुनी उपलब्धि करे छे--स्थंभ, भींत, घट, पट इत्यादि' बीजे ठेकाणे बादरायणे कह्युं छे,---

'भावे चोपलब्धेः ।' २-१-१९ सूत्र.

'न भावोऽनुपलब्धेः ।' २-२-३० सूत्र.

'जे वस्तु छे, तेनीज उपलब्धि थाय; जे वस्तु नथी, तेनी उपलब्धि थाय नहिं.' आथी ज्यारे जगत्नी उपलब्धि थाय छे, त्यारे जगत् छे ज, एवो बादरायणनो सिद्धांत छे. जगत् जे रुपे आपणने प्रतीत थाय छे, ते रुपे ज वस्तुतः छे, एवो आनो अर्थ नथी. फूल अथवा पर्वतने आपणे जेवां जोइए छीए, तेवां ज ते वास्तविक रीते छे-ए वात कोइ दार्शनिक पण कही शके नहिं. पण ज्यारे पर्वत अथवा फूलनी उपलब्धि थाय छे, त्यारे आपणे फूल अथवा पर्वत रुपे ओळखीये छीए ते कांइक वस्तु छे. ए वात सुनिश्चित छे[1] खरुं छे के बादरायण--

'तदनन्यत्वम् आरंभण शब्दादिभ्यः'। २-१-१४ सूत्र.

---

[1] जर्मन दार्शनिकोए जे Noumenon अने Phenomenon ना भेदनो निर्देश कर्यो छे, ते मत आने अनुरुप छे. हरबर्ट स्पेन्सरे अनुमोदेल--Transfigured Realism आनोज प्रतिध्वनि छे. शंकराचार्ये अनेक ठेकाणे व्यवहार अथवा व्यावर्त अने

आ सूत्रमां जगत् अने ब्रह्म अनन्य (अभिन्न) छे--एम कहे छे ; अहीं तेनुं लक्ष्य नीचेनी छांदोग्य-श्रुति छे.

" यथा सोम्यैकेन मृत्पिंडेन सर्वं मृण्मयं विज्ञातं स्यात् । वाचारंभणं विकारो नामधेयं मृत्तिकेत्येव सत्यं । एवं सोम्य स आदेशः ॥ "

जेम मात्र एक माटीना पिंडने जाणवाथी माटीना बधा पदार्थो जाणी शकाय, कारणके वाक्यनो आरंभ-विकार ए मात्र नामनो प्रभेद छे--माटी एज सत्य छे ; ब्रह्मना संबंधमां पण एवो ज उपदेश. मतलबके एक ब्रह्मने जाणवाथी बधा पदार्थ जणाय. आथी जगत् विज्ञान मात्र के खोटा अवस्तु रुप पदार्थ छे एमतो कहेवाय नहिं. एटलुं मात्र कही शकाय के, जगत् अने ब्रह्ममां नाम रुपनो प्रभेद छे--बंने स्वरुपथी अभिन्न छे.

जेम कुंडल, वलय वगेरे सोनानां घरेणामां आकार अने नामनो प्रभेद होवा छतां वास्तविक रीते जोतां ते सोना सिवाय बीजुं कांइज नथी,--तेओमां मात्र नाम अने रुपनोज भेद छे---पण ते प्रभेद छतां ए सोना सिवाय बीजुं कशुंए नथी. ते प्रमाणे जगत् जुदी जुदी विचित्रतावाळुं होवा छतां पण ब्रह्म

परमार्थमां जे प्रभेद वताव्यो छे, तेनी साथे आ मतनुं सामंजस्य कराय.

सिवाय बीजुं कांइ नथी. जगत्‌ने ब्रह्मनी ' प्रकृति '--ब्रह्मनो प्रकार अथवा विधा (Aspect)--स्वीकारीए तोपण आ वा-वातनुं यथेष्ठ समर्थन थाय; तेथी जगत्‌ने अलीक-खोटुं-कहेवानुं प्रयोजन शुं?

आपणे पाछळ जोयुं छे के, प्रधान (Matter) अने पुरुष (Spirit अथवा force) –जेना संयोगथी आ जगत् थयुं छे, ते प्रधान अने पुरुष–ए मात्र ब्रह्मनीज परा अने अपरा प्रकृति छे.

' या परापर संभिन्ना प्रकृतिस्ते सिसृक्षया । '

ब्रह्मने ज्यारे सृष्टि रचवानो संकल्प थाय, त्यारे तेनी प्रकृति परा अने अपरा रुपे–प्रधान अने पुरुष रुपे–संभिन्न थाय. पण तेम थतांए ते तो ब्रह्मनी प्रकृति अथवा प्रकार (Aspect) सिवाय बीजुं कांइये नथी. जे जेनो प्रकार, ते तेनाथी भिन्न शी रीते होइ शके? तेने तो तेनाथी अभिन्न कहेवुं एज संगत-युक्ति युक्त-छे. आथी, जगत् ने ब्रह्मने अभिन्न कहेवुं ए लेश पण असंगत नथी, अने एम कहेवाथी जगत्‌नुं मिथ्यात्व सूचित थतुं नथी. आ रीते जोतां, बादरायणे बीजे ठेकाणे पण कह्युं छे के, ब्रह्म सिवाय बीजी वस्तु नथी,—

तथान्य प्रतिषेधात्--३, २, ३६ सूत्र.

तेनी पण सुंदर मीमांसा थाय. जगत्मां जे कांइ छे, ते कां तो प्रकृति, नहि तो पुरुष; आ बेमांनी कोइपण एक कोटिमां पदार्थ मात्र पडवानाज. ते प्रकृति अने पुरुष ज्यारे ब्रह्मनाज प्रकार छे, त्यारे एक ब्रह्म सिवाय बीजुं शुं छे, अथवा शुं होइ शके? तेज "एकमेवाद्वितीयम्" तेना सिवाय 'नाना' (जुदुं) कांइ नथी; आ वडे पण जगत्नुं मिथ्यात्व प्रतिपादन थतुं नथी.

आ पछीना सूत्रमां बादरायणे विशेष करीने कह्युं छे के--

अनेन सर्वगतत्वम् आयामशब्दादिभ्यः-३, २, ३७ सूत्र.

मतलबके, "ब्रह्मसर्वगत-श्रुतिए आ उपदेश आपेलो छे" हवे सर्व (जगत्) जो खोटुं विज्ञान मात्र होय तो ब्रह्म सर्व व्यापी शी रीते थाय? छतां शास्त्रे तो फरीफरीने तेने सर्व व्यापी कह्युं छे.

"आकाशवत् सर्वगतश्च नित्यः।"

'आकाशनी पेठे सर्व व्यापी अने नित्य।'

"नित्यः सर्वगतः स्थाणु रचलोऽयं सनातनः"

'ते नित्य, ते सनातन; ते स्थाणु, अचल अने सर्वगत.'

२. जीव एक के घणा? ब्रह्मथी भिन्न के अभिन्न?

आपणे जोयुं छे के, अद्वैतमत प्रमाणे जीव ज ब्रह्म छे. जीव नित्य, शुद्ध, बुद्ध, मुक्त, सत्य-स्वभाव, विभु अने सर्वव्यापी;

सच्चिदानंद ; एक अने अद्वितीय वस्तु छे. जीव अने ब्रह्म स्वरुपथी अभिन्न छे ;—बंनेनो भेद मात्र उपाधिकृत, अविद्या कल्पित छे. मायानी मोह शक्ति जीवने मोहित करे, अने तेने तावे थईने जीव ईश्वर भाव भूली जइने शोक दुःखने आधीन थाय.

विशिष्टाद्वैत मत प्रमाणे जीव अने ब्रह्म एक बीजाथी जुदी-स्वतंत्र-वस्तु छे ; जीव ब्रह्मथी विपरीत छे. जीव त्रण प्रकारनां दुःखोने आधीन छे,--ब्रह्मक्लेशना लेश विनानुं छे. जीव नियम्य, ब्रह्मनियामक छे. जीव व्याप्य ब्रह्म व्यापक छे. ब्रह्म विभु (सर्वव्यापी), अने जीव अणु-परिमाण दरेक शरीरमां जुदो जुदो छे---तेथी एक नथी, घणा छे. आ मतभेदने ठेकाणे गीताए कया मतनुं अनुमोदन कर्युं छे ?

गीताना बीजा अध्यायमां भगवाने अर्जुनने आत्मानुं अविनाशीपणुं समजावतां आ प्रमाणे कह्युं छे—

" अविनाशि तु तद् विद्धि येन सर्वमिदं ततम् ।
विनाशमव्ययस्यास्य न कश्चित् कर्तुमर्हति ॥
अन्तवन्त इमे देहा नित्यस्योक्ताः शरीरिणः ।
अनाशिनोऽप्रमेयस्य तस्माद् युद्ध्यस्व भारत ॥
य एनं वेत्ति हन्तारं यश्चैनं मन्यते हतम् ।
उभौ तौ न विजानीतो नायं हन्ति न हन्यते ॥

न जायते म्रियते वा कदाचित् नायं भूत्वा भविता वा न भूयः।
अजो नित्यः शाश्वतोऽयं पुराणो न हन्यते हन्यमाने शरीरे ॥
गीता २,१७-२०.

" अच्छेद्योऽयमदाह्योयमक्लेद्योऽशोष्यएव च।
नित्यः सर्वगतः स्थाणु रचलोऽयं सनातनः ॥
अव्यक्तोऽयमचिंत्योऽयमविकार्योऽयमुच्यते ॥
गीता २,२४.

उपरना श्लोकोना भावार्थ नीचे प्रमाणे छे.

'जेनावडे आखुं जगत् व्याप्त छे, ते अविनाशी, अव्यय छे, तेनो कोइ विनाश करी शके नहि. देह अनित्य छे, पण देहाश्रयी आत्मा नित्य, अविनाशी अने अप्रमेय छे. जे आत्माने हणनार माने छे अथवा हणाएलो माने छे, ते बंने अज्ञ छे. आत्मा हणतोए नथी, हणातोए नथी. आत्मा जन्म मृत्यु रहित, क्षय-वृद्धिविनानो, अज, नित्य, शाश्वत अने पुराण (जुनो) छे. शरीरना विनाशमां आत्मानो विनाश थतो नथी. * * * आत्माने कापी शकातो नथी, बाळी शकातो नथी, भींजवी शकातो नथी, शोषातो नथी. आत्मा नित्य, सर्वगत, स्थाणु, अचल अने सनातन छे; आत्मा अव्यक्त, अचिंत्य अने अविकार्य छे.'

आ उपरथी नीचे प्रमाणे जीवनुं लक्षण कही शकाय.----

जीव अज, पुराण, जीव नित्य, सनातन, अविनाशी ; जीव स्थाणु, अचल, शाश्वत, अविकारी ; जीव सर्वगत, अप्रमेय ; जीव अव्यक्त अने अचिन्त्य. अर्थात्,

(क) जीवनां उत्पत्ति-विनाश-आदि-अंत नथी.

(ख) जीवने विकार-विक्रिया नथी.

(ग) जीव सर्वव्यापी.

(घ) जीव अमेय.

उत्पत्ति विनाश रहितत्व, विकार शून्यता, सर्व व्यापीत्व अने अमेयपणुं–आ बधां ब्रह्मनां लक्षणो छे. तेथी, ब्रह्मनां लक्षणथी जीवने लक्षित करीने भगवाने जीव ब्रह्मनां ऐक्यनो ज उपदेश कर्यो छे. आ वात सिद्ध करवाने कांइ युक्ति के तर्क करवानी जरुर नथी, कारणके भगवाने पोते ए वात स्पष्टाक्षरे विवृता (खुल्ली) करी छे जेम—

" अहमात्मा गुडाकेश ! सर्वभूताशयस्थितः । "

गीता १०,२०.

' हे अर्जुन ! सर्वभूतनी बुद्धिमां रहेलो आत्मा (जीव) हुं ज छुं.'

" क्षेत्रज्ञंचापि मां विद्धि सर्वक्षेत्रेषु भारत ॥ "

गीता १३, २.

' हे अर्जुन ! सर्व क्षेत्रमां मने क्षेत्रज्ञ जाण.'

" इदं शरीरं कौंतेय क्षेत्रमित्यभिधीयते ।
एतद् यो वेत्तितं प्राहुः क्षेत्रज्ञ इति तद्विदः ॥ "
गीता १३,१.

'हे कुंतीपुत्र आ शरीर क्षेत्रनां नामथी ओळखाय छे, अने ए क्षेत्रनो जाणनार छे तेने क्षेत्रज्ञ कहे छे.' क्षेत्रनो जाणनार एटले-जे देहमां "अहंमम" एवुं अभिमान करे ते, एटले जीव.

वळी पंदरमा अध्यायमां भगवाने जीवने पोतानो अंश कह्यो छे.

" ममैवांशो जीवलोके जीवभूतः सनातनः "
गीता १५, ७.

'जीवलोकमां सनातन जीव मारोज अंश छे.' अंश अने अंशी कदीपण भिन्न थइ शके नहिं.

भगवान् निरवयव छे ; वस्तुतः तेनो अंश संभवे नहि, तोपण उपाधिना अवच्छेदथी तेना अंशत्वनी कल्पना करी शकाय. जेम पाणीनी अंदर डुबेला घडानी अंदरना पाणीना भागने लक्ष्य करीने तेने जुदुं मानी शकाय तेम. कारणके वास्तविक रीते भगवान् अविभक्त होवा छतां पण उपाधि (देह वगेरे)ना भेदथी तेने विभक्त कही शकाय.

" अविभक्तंच भूतेषु विभक्तमिव च स्थितम् " ॥
गीता १३, १६.

भगवान् ज जीवरुपे रह्या छे, ए वात शास्त्रमां बीजे ठेकाणे पण स्पष्ट जोवामां आवे छे.

" मनसैतानिं भूतानि प्रणमेद् बहुमानयन् ।
ईश्वरो जीवकलया प्रविष्ठो भगवानिति ॥ "

(भागवत, ३,२९,२९).

" आ बधां भूतोने बहु मानथी मनथी प्रणाम करवा ; कारणके भगवान पोते ज अंशवडे जीवरुपे तेमां रहेला छे." बीजे ठेकाणे पण उपदेश करवामां आव्यो छे के—

' प्रपूज्य पुरुषं देहे देहिनं चांशरुपिणम् ।

' भगवान्ना अंशरुपी देही (जीव)ने देहमां पूजवो.' देहमां देहीरुपे भगवानज रहेला छे, ए गीतामां बीजे ठेकाणे पण जोवामां आवे छे.

" उपदृष्टानुमन्ताच भर्त्ताभोक्ता महेश्वरः ।
परमात्मेतिचाप्युक्तो देहेऽस्मिन् पुरुषः परः ॥ "

गीता १३-२२.

' आ देहमां परम पुरुष परमात्मा बीराजमान छे, ते साक्षी अनुमंता, भर्त्ता अने भोक्ता छे.'

" कर्षयन्तः शरीरस्थं भूतग्राममचेतसः ।
मांचैवान्तः शरीरस्थं तान् विद्धयासुरनिश्चयान् ॥ "

गीता १७,६.

'जे राक्षसी निश्चयनो साधक छे ते, शरीरना भूतमात्र अने शरीरस्थ (जीवरुपी) मने (ईश्वरने), दुर्बुद्धिने लीधे क्लेश आपे छे.'

" यतन्तो योगिनश्चैनं पश्यन्त्यात्मन्यवस्थितम् । "

(गीता १५,११).

आत्मनि=स्वस्यां बुद्धौ—शंकर.

'यत्नशील योगीओ बुद्धिमां रहेला (जीवरुपी) परमात्मानुं दर्शन करे छे.'

आत्माना निर्लेपत्वनो गीताए एवी रीते उपदेश कर्यो छे के ते उपरथी आत्मानी ब्रह्मरुपताज गीताने अभिप्रेत छे, एम समजाय छे.

" अनादित्वात् निर्गुणत्वात् परमात्मायमव्ययः ।
शरीरस्थोऽपि कौंतेय न करोति न लिप्यते ॥
यथा सर्वगतं सौक्ष्म्यादाकाशं नोपलिप्यते ।
सर्वत्रावस्थितोदेहे तथात्मा नोपलिप्यते ॥ "

गीता १५,३१-३२.

'ते अव्यय परमात्मा अनादि अने निर्गुण छे ; तेथी देहमां रहेला छतां पण ते निष्क्रिय अने निर्लेप छे. जेम सर्वगत होवा छतां पण सूक्ष्मताने लीधे आकाश उपलिप्त थतुं नथी, तेम बधा देहमां अवस्थित थया छतां पण आत्मा उपलिप्त

थतो नथी.'

आत्मा घणा नथी–एक छे, ते उपदेश पण गीतामां स्पष्ट रीते आपवामां आव्यो छे—

" यथा प्रकाशयत्येकः कृत्स्नं लोकमिमं रविः ।
क्षेत्रं क्षेत्री तथा कृत्स्नं प्रकाशयति भारत ॥ "

गीता १३-३३.

' जेम एक सूर्य बधा लोकने प्रकाशे छे. तेम एक क्षेत्रज्ञ (जीव) बधां क्षेत्रने प्रकाशित करे छे.'

भागवत पण एमज कहे छे,—

" स्वयोनिषु यथा ज्योतिरेकं नाना प्रतीयते ।
योनीनां गुणवैषम्यात् तथात्मा प्रकृतौ स्थितः ॥ "

(भागवत, ३, २८-४३).

प्रकृतौ—देहे—श्रीधर.

' जेम एक अग्नि आधारना गुणभेदथी बहु रुपे देखाय छे, तेम देहमां रहेलो आत्मा गुणोनी विषमताथी बहु रुपे देखाय छे.'

गीताना २जा अध्यायना १७मा श्लोकमां पण जीव ब्रह्मनुं ऐक्य अत्यंत स्पष्ट रुपे सूचित करवामां आव्युं छे. अर्जुन धर्मयुद्धमां कौरवोनां शरीर उपर अस्त्र चलाववा असंमत थयो (तेथी तेमनो विनाश थशे, एवी बीकथी), त्यारे भग-

वाने तेने कह्युं,—

" अविनाशी तु तद्विद्धि येन सर्वमिदं ततम् ।
विनाशमव्ययस्यास्य न कश्चित् कर्तु मर्हति ॥ "

' जेना वडे आ जगत् व्याप्त छे, ते अविनाशी छे, अव्ययनो कोण विनाश करी शके ?

ब्रह्मज जगद्व्यापी छे ; तेथी, जीवना विनाशने प्रसंगे तेने सर्व व्यापी सर्वगत इत्यादि कहेवाथी, तेनी साथे ब्रह्मनुं ऐक्य सूचित थयुं. भगवान् जगद्व्यापी छे, ए गीतामां अनेक ठेकाणे उपदेशाएलुं जोवामां आवे छे.–

" समं सर्वेषु भूतेषु तिष्ठन्तं परमेश्वरम् ।
विनश्यत् स्वविनश्यन्तं यः पश्यति स पश्यति ॥
समं पश्यन् हि सर्वत्र समवस्थितमीश्वरम् ।
न हिनस्त्यात्मनात्मानं ततो याति परां गतिम् ॥ "

गीता १३,२७-२८.

' विनाशी भूतोना समूहमां समभावे रहेला, अविनाशी परमेश्वरने जे देखे छे तेज दृष्टिशील (जोनार) छे ; सर्वत्र समभावे रहेला ईश्वरने उपलब्ध करीने ते पोते पोतानी हिंसा करतो नथी ; अने तेनां फळमां परम गतिने पामे छे.'

बीजे ठेकाणे गीता कहे छे के,–

" मयाततमिदं सर्वं जगदव्यक्तमूर्तिना । " (गीता ९, ८)

" मयि सर्वमिदं प्रोतं सूत्रे मणिगणाइव ।" गीता ७, ७.

" यस्यान्तःस्थानि भूतानि येन सर्व मिदं ततम् । "

(गीता ८, २२).

मतलव के ' अव्यक्त रुपे हुं जगत्मां व्यापी रहेलो छुं.' ' सूत्रमां जेम मणिओ, तेम मारामां जगत् परोवाएलुं छे,' ' बधां भूतो जेनी अंदर छे, जे बधांने व्यापी रह्यो छे.'

उपनिषद्मां जे रीते जीवतत्त्वनुं विवरण करवामां आव्युंछे, ते जोतां आ संबंधमां गीता अने उपनिषद्ना उपदेशमां जरा पण भेद नथी. गीतानां वचनथी जीव आदि-अंत विनानो, उत्पत्ति विनाश वगरनो छे, एम आपणे जाण्युं छे, आ संबंधमां उपनिषदोनां प्रमाण नीचे प्रमाणे छे.—

"स वा एप महान् अज आत्मा अजरोऽमरोऽमृतोऽभयः"

(बृहदारण्यक , ८, ८-२२).

" अजो नित्यः शाश्वतोऽयं पुराणः । " (कठ, २, १८).

" न जायते म्रियते वा विपश्चित् । " (कठ, २, १७).

" न जीवो म्रियते । इत्यादि । " (छांदोग्य ६, ११, ३).

' आ आत्मा (जीव) महान्, अज, अजर, अमर मृत्युहीन, अभय छे. आ जीव जन्मरहित, नित्य, शाश्वत अने पुराण छे. जीव जन्मतो पण नथी, मरतो पण नथी. जीव मरतो नथी, इत्यादि. जीव निर्विकार, विक्रिया विनानो छे,

एनुं प्रमाण पहेलां वाक्यमांज मळे छे. नित्य, शाश्वत, पुराण. अजर, अमर वगेरे शब्दोथी एनुंज प्रतिपादन करवामां आव्युं छे. उपनिषद्नां नीचेनां बीजां वाक्योमां पण स्पष्ट उपदेश छे.—

एतद्वै तदक्षरं ब्राह्मणा अभिवदन्त्यस्थूलमनण्व हृस्वमदीर्घम् । (बृहदारण्यक ३, ८, ८).

अथ परा यया तदक्षरमधिगम्यते ।

(मुंडक १, १, ५.)

नित्यो नित्यानां चेतनश्चेतनानां ।

(श्वेत, ६, १३).

'ते आ प्रसिद्ध अक्षर, जेने ब्राह्मणो अस्थूल, अनणु, अहृस्व, अदीर्घ कहे छे.'

' अने जे वडे ते अक्षर प्राप्त थाय छे ते पराविद्या छे.' जे विद्या वडे अक्षरने जाणी शकाय, ते परा.'

'जे नित्योनी मध्ये नित्य छे, जे चेतनोनी मध्ये चेतन छे.'

गीताना वाक्योथी जीव सर्व व्यापी छे. ए आपणे जाण्युं छे. ए संबंधमां उपनिषदोनां प्रमाण नीचे प्रमाणे छे.

आकाशवत् सर्वगतश्च नित्यः॥

स वा एष महान् अज आत्मा । (बृहदा० ४,४,२२).

सर्वव्यापी सर्वभूतांतरात्मा । (श्वेत ६,११) इत्यादि.

'जीव आकाशनी पेठे सर्वगत अने नित्य छे. ते आत्मा (जीव) महान् अने अज छे. ते सर्वव्यापी, सर्व भूतनो अंतरात्मा छे.' इत्यादि.

गीताना मत प्रमाणे जीव अमेय; बुद्धि, मन, इंद्रियोथी अगोचर, अचिन्त्य अने अव्यक्त छे, ए आपणे जाण्युं छे. ए संबंधमां उपनिषदोनां प्रमाण नीचे प्रमाणे–

तं दुर्दर्शं गूढमनुप्रविष्टं
गुहाहितं गह्वरेष्ठं पुराणम्। कठ १,२,१२.
साक्षी चेता केवलो निर्गुणश्च। (श्वेत ६-११)
नैव वाचा न मनसा प्राप्तुं शक्यो न चक्षुषा।(कठ३,१२)

'ते दुर्दर्श, गूढ, ढंकाएल, गुहामांस्थित, संकटमां स्थित, पुरातन देव.'

'ते साक्षी, चित्स्वरुप केवल (निरुपाधि), निर्गुण.'

'वाक्य, मन, ने आंखवडे ते पामवाने शक्य नथी.'

एषोऽणुरात्मा चेतसावेदितव्यः। मुंडक ३,१,९.

'आ आत्मा सूक्ष्म छे, (योगसिद्ध) चित्तवडे जाणवा योग्य छे.'

'आ सूक्ष्म आत्मा विशुद्ध चित्तथी जाणवा योग्य छे.'

अध्यात्मयोगाधिगमेनदेवं।
मत्वा धीरो हर्षशोकौ जहाति ॥ कठ, २,१२.

'निदिध्यासननी प्राप्तिवडे देवनो साक्षात्कार करीने बुद्धिमान् हर्ष शोकने त्यजे छे.'

हृदा मनिषा मनसाऽभिक्लृप्ता
य एतद् विदुरमृतास्ते भवन्ति—कठ ६,९

ते हृदयमां संशय रहित बुद्धिवडे देखाय छे ; तेने जाणवाथी अमरत्व मळे छे.

कश्चिद्धीरः प्रत्यगात्मानमैक्ष
दावृत्तचक्षुरमृतत्वमिच्छन् । कठ ८,२.

'कोइ अमृतने इच्छतो धीर पुरुष आवृत्त चक्षु थइने (बहारना विषयोथी इंद्रियोनो प्रत्याहार करीने) प्रत्यगात्माने जुए छे.'

आत्मा अकर्त्ता छे, अने तेथी अभोक्ता छे, ए आपणे गीतामां जोइ गया छीए. आ विषयमां उपनिषद्नो उपदेश नीचे प्रमाणे छे—

ध्यायतीव लेलायतीव—बृहद् ४,३,७.

'जाणे ध्यान करतो होय, जाणे चलायमान थतो होय तेवो.'

आत्मेन्द्रियमनोयुक्तं भोक्तेत्याहुर्मनीषिणः । कठ ३,४.

'इंद्रिय, मन वगेरे उपाधियुक्त थवाथीज आत्मा भोक्ता होय एम जणाय छे, पण वास्तविक रीते जीव असंग, नि-

लेप छे.'

असंगोह्ययं पुरुषः । बृहद् ४,३,१५.

'आ पुरुष (जीव) असंग छे.'

आत्मा घणा नथी, पण एक छे, ए आपणे गीतानां प्रमाण थी जाण्युं छे. उपनिषदे पण स्पष्टभाषामां एवोज उपदेश आप्यो छे.

आकाशमेकं हि यथा घटादिषु पृथग् भवेत् ।
तथात्मैको ह्यनेकस्थो जलाधारेष्विवांशुमान् ॥
एक एव हि भूतात्मा भूते भूते व्यवस्थितः ।
एकधा बहुधा चैव दृश्यते जलचंद्रवत् ॥

ब्रह्मबिन्दु ११-१२.

'जेम एक आकाश घट वगेरेना भेदथी पृथक् थाय छे. जेम एक सूर्य जळना आधारना भेदथी अनेक थाय छे, तेम एक आत्मा अनेक (देहोमां) रहीने जुदो थयो छे.

'एकज (अद्वितीय) भूतात्मा जुदां जुदां भूतमां रहेलो छे. पाणीमां चंद्रनां प्रतिबिंबनी माफक ते एक अने घणेरूपे देखायछे.' आ आभास अथवा प्रतिबिंबवादनुं समर्थन करीने बादरायणे सूत्र रच्युं छे.

आभास एव च । २,३,५० सूत्र.

बीजे ठेकाणे तेणे कह्युं छे के—

अत एव चोपमा सूर्यकादिवत् । ३,२,१८ सूत्र.

शंकर अने रामानुज बंने कबुल करे छे के, आ सूत्र रचतां बादरायणे उपरनी ज श्रुतिओ उपर लक्ष राखेलुं छे. जो तेम होय, तो तेना मत प्रमाणे आत्मा एक छे, घणा नथी, एम निश्चय करी शकाय छे.

गीता उपरथी आपणे जाण्युं छे के, जीव अने ब्रह्म अभिन्न छे. वेदनां महावाक्योए ए सत्यनो ज प्रचार कर्यो छे. " सोऽहं " " तत्त्वमसि," " अहं ब्रह्मास्मि," " अयमात्मा ब्रह्म "—चार वेदनां आ चार महावाक्योए एक अवाजे जीव ब्रह्मनुं ऐक्य स्वीकारेलुं छे.

बादरायणे आ प्रसंगनी आलोचना-चर्चा-करी छे, ते परथी ते पण जीव ब्रह्मना अभेदने ज अनुमोदन आपे छे, एम समजाय छे. पहेलां तो बादरायण कहे छे के, जीव ब्रह्मनो अंश छे—

अंशो नानाव्यपदेशात् इत्यादि । २,३,४३ सूत्र.

अंश अने अंशीमां कशो पण स्वगत भेद संभवे नहि, मात्र उपाधिगत भेदज होय. तेथी आ वाक्यथी पण जीव अने ब्रह्म अभिन्न छे, एम कही शकाय.

आम कहेतां शंका थाय के, जो जीव अने ब्रह्म अभिन्न होय, तो जीवनां दुःख अने दीनताथी ब्रह्म पण दुःखी थाय.

तेना समाधानमां बादरायण कहे छे के–

प्रकाशादिवत् नैवं परः। २,३,४६ सूत्र.

‘ जेम सूर्यनां किरणो उपाधिने लीधे सीधां वांकां जणाया छतां पण सूर्य सीधो वांको थाय नहि, तेम ब्रह्मनो जीवांश दुःखी जणाया छतां पण ब्रह्म दुःखी थाय नहि.’

एवमविद्याप्रत्युपस्थापिते बुद्ध्याद्युपहिते जीवाख्येंऽशे दुःखायमानेऽपि न तद्वान् ईश्वरो दुःखायते–शंकर.

वळी शंका थशे के, जो जीव ब्रह्मनो अंश छे, तो शास्त्रोमां तेना संबंधमां विधि-निषेधनो उपदेश केम करवामां आव्यो छे ? आना समाधानमां बादरायण कहे छे के,–एवो उपदेश देहना संबंधने लक्षमां राखीने कर्यो छे. जेम अग्नि एक होवा छतां पण स्मशानाग्नि हेय [छोडवायोग्य], अने होमाग्नि उपादेय [ग्रहण करवा योग्य] छे तेम अहींया पण समजवुं.

अनुज्ञापरिहारौ देहसंबंधात् ज्योतिरादिवत् ।

२,३,४८ सूत्र.

फरीने पण शंका थशे के, जीव जो ब्रह्म छे, तो कर्म सांकर्य केम थतुं नथी. एक जीवनुं कर्म बीजा जीवनां कर्म साथे मिश्रित केम थइ जतुं नथी ? आनां समाधानमां बादरायण कहेछे के----

असंततेश्चाव्यतिकरः ।

आभासएवच । २, ३, ३९-५० ब्रह्मसूत्र.

उपाधितंत्रो हि जीव इत्युक्तम् । उपाध्यासंतानाच्च नास्ति जीवसंतानः । ततश्च कर्मव्यतिकरः फलव्यतिकरो वा न भविष्यति । आभास एव चैष जीवः परस्यात्मनो जल सूर्यकादिवत् प्रतिपत्तव्यः । न स एव साक्षान्नापि वस्त्वन्तरम् । अतश्च यथा नैकस्मिन् जलसूर्यकेकम्पमाने जलसूर्यकान्तरं कम्पते । एवं नैकस्मिन् जीवे कर्मफलसंबंधीनी जीवांतरस्य तत्संबंधः । एवमव्यतिकर एव कर्मफलयोः । शंकरभाष्य.

जीव उपाधितंत्र एटले उपाधिने वश छे. उपाधिओ ज्यारे जुदी जुदी छे, परस्पर मळी जती नथी, त्यारे जीवो पण शी रीते मिश्रित थाय? आथी, जीवोनां कर्मो अने फळो मिश्रित थइ जतां नथी. जेम पाणीमां सूर्यनुं प्रतिबिंब, तेम जीवमां ब्रह्मनुं प्रतिबिंब. जीव साक्षात् ब्रह्म नथी, तेम ब्रह्मथी भिन्न पदार्थ पण नथी. जेम अमुक पाणीमां कंपनथी कंपित थया छतां पण, बीजां पाणीमां प्रतिबिंबित थयेलो सूर्य कंपित थतो नथी, तेम एक जीवने कर्मफळनो संबंध थया छतां पण बीजा जीवने तेवो संबंध थतो नथी. तेथी जीवोनां कर्म सांकर्यनी शंका पाया वगरनी छे.

बादरायणे बीजे ठेकाणे ब्रह्मने जीव करतां श्रेष्ठ कहेलुं छे खरुं, पण तेथी जीव ए ब्रह्मथी भिन्नतत्त्व छे, एम कही श-

काय नहि; बादरायणे पहेलां तो नीचे प्रमाणे पूर्वपक्ष उभो कर्यो छे.

इतरव्यपदेशात् हिताकरणादिदोपप्रसक्तिः । २,१,२१ सूत्र.

'जीव जो ब्रह्मथी अभिन्न होय, तो पछी तेज सृष्टिकर्त्ता छे. तेणे पोतानां केदखानां रुप देह शा माटे बनाव्यो? ते पवित्र छे, तेणे आ मलिन देहमां शा माटे प्रवेश कर्यो? कदाच प्रवेश पण कर्यो तो आ दुःखकर वस्तुओ छोडी दइने सुखकर वस्तुओनी रचना शा माटे न करी? आथी जीवने ब्रह्म रुपे स्वीकारीए तो तेणे हित न कर्युं अने अहित कर्युं ए पण स्वीकारवुं पडे. आ शंकानां समाधानमां बादरायण कहे छे के–

अधिकन्तु भेदनिर्देशात्–२,१,२२. सूत्र.

यत् सर्वज्ञं सर्वशक्ति ब्रह्म नित्यशुद्धबुद्धमुक्तस्वभावं शारीरादधिकम् अन्यत् तद् वयं जगतः स्रष्टृ ब्रूमः। न तस्मिन् हिताकरणादयो दोषाः प्रसज्यन्ते * * * न तु तं (शारीरं) वयं जगतः स्रष्टारं ब्रूमः । कुत एतत्? भेद निर्देशात्।

शंकरभाष्य.

'सर्वज्ञ, सर्वशक्तिवान्, नित्य-शुद्ध-बुद्ध-मुक्त-स्वभाव ब्रह्म (सगुण), जे जीवथी अधिक छे, तेज जगत् बनावनार छे. जीव ते जगत्नो रचनार नथी. कारणके जीवथी तेने

भिन्न कहेलुं छे. आथी ब्रह्ममां हीतनुं अकरण वगेरे दोषो आवी शकता नथी.' आगळ आवतां एक सूत्रमां पण बादरायण ब्रह्मने जीवथी अधिक कहे छे; तेनो पण आ प्रमाणे समन्वय थइ शके. बादरायणनुं सूत्र नीचे प्रमाणे ---

अधिकोपदेशात् तु बादरायणस्यैवं तद् दर्शनात् ।

३, ४, ८ सूत्र.

'अधिकस्तावत् शारीराद् आत्मनोऽसंसारी ईश्वरः कर्तृत्वादिसंसारीधर्मरहितोऽपहतपाप्मात्वादिविशेषणः परमात्मा वेद्यत्वेनोपदिश्यते वेदान्तेषु * * * तथाहि तमधिकं शारीराद् ईश्वरं आत्मानं दर्शयन्ति श्रुतयः'—शंकरभाष्य.

'जीव [देहधारी आत्मा] करतां ईश्वर [परमात्मा] अधिक छे. कारणके वेदान्त वाक्योए तेने असंसारी, कर्तृत्वादि संसार धर्म-रहित, अपहतपाप्मा वगेरे विशेषणवाळो जाणवा योग्य कही उपदेश्यो छे. श्रुतिए ईश्वरने जीव करतां श्रेष्ठ देखाड्यो छे.

जीव अने ईश्वरमां आ जे भेद छे, ते स्वरुप-गतभेद नथी, उपाधि-गतभेद छे. आ रीते जीव अने ईश्वर भिन्न छे खरा; पण अंशी अने अंशमां, बिंब अने प्रतिबिंबमां स्वरुपथी भेद होइ शके नहि. अंश करतां अंशी अधिक खरो, प्रतिबिंब करतां बिंब अधिक खरुं, छाया करतां काया अधिक खरी,

पण तेओमां शुं स्वरूपनो भेद होइ शके? ए प्रमाणे जीव अने ईश्वरनो भेद छे. तेथी आ सूत्रनां भाष्यमां शंकराचार्ये कह्युं छे के,–

"आत्मा वा अरे द्रष्टव्यः श्रोतव्यो मन्तव्यः" "सोऽन्वेष्टव्यः स विजिज्ञासितव्यः" "सता सोम्य तदा संपन्नो भवति" "शारीर आत्मा प्राज्ञेनात्मनाऽन्वारूढः" इत्येवं जातीयकः कर्तृकर्मादिभेदनिर्देशो जीवादधिकं ब्रह्म दर्शयति। ननु अभेद निर्देषोऽपि दर्शितः 'तत्त्वमसि' इत्येवंजातीयकः। कथं भेदाभेदौ विरुद्धौ संभवेयाताम्। नैष दोषः। आकाश घटाकाशन्यायेनोभय संभवस्य तत्र तत्र प्रतिष्ठापितत्वात्। अपि च यदा तत्त्वमसीत्येवं जातीयकेन अभेदनिर्देशेनाभेदः प्रतिबोधितो भवति अपगतं भवति तदा जीवस्य संसारित्वं ब्रह्मणश्च स्रष्टृत्वम्"

मतलबके 'श्रुतिमां कोइ कोइ ठेकाणे "तत्त्वमसि" वगेरे उपदेश आपीने जीव ब्रह्मना अभेदनो निर्देश कर्यो छे, वळी कोइ ठेकाणे कर्त्ता कर्मादिनो निर्देश करीने, ब्रह्म ए जीव करतां अधिक छे, एवो उपदेश आप्यो छे, जेमके–

"आत्मानुंज दर्शन, श्रवण, मनन, निदिध्यासन करवुं योग्य छे," "आत्मानुंज अन्वेषण, अनुसंधान करवुं योग्य छे," "हे सोम्य! त्यारे [जीव] सत्यनी [ब्रह्मनी] साथे

संयुक्त थाय, देही आत्मा [जीव] प्राज्ञआत्मा [ब्रह्म] वडे वींटाएलो छे," इत्यादि. जीव अने ब्रह्म भिन्न अने अभिन्न-ए केम संभवे? समाधान के--एम थवुं असंभवित नथी. जेम महाकाश अने घटाकाश भिन्न अने अभिन्न छे, तेज प्रमाणे जीव अने ब्रह्म भिन्न अने अभिन्न छे. ज्यारे 'तत्त्वमसि' वगेरे अभेद प्रतिपादक उपदेश वडे अभेदनी प्राप्ति थाय, त्यारे जीवनुं संसारीपणुं अने ब्रह्मनुं स्रष्टापणुं नाश पामे.' त्यारे आज सिद्ध थयुं के जीव अने ब्रह्म वस्तुतः अभिन्न छे, तेमनामां मात्र उपाधिनो भेद छे.

पण आ वात पण लक्षमां राखवानी छे के, जीव-ब्रह्मनी एकता प्रतिपादन करनारी आ बधी श्रुतिओनो यथार्थ मर्म न समजवाथी अज्ञ, दुर्बळ, दुःखक्लिष्ट, महा पापी जीवो शुद्ध, बुद्ध, मुक्त, सर्वज्ञ, निर्मळ, सच्चिदानंद ब्रह्मनी साथे पोतानी सरखामणी करे छे. तेथी समाजमां जुदी जुदी जातना उपद्रव थाय छे. कर्महीनता, कठोरता. दांभिकता, आध्यात्मिकस्वार्थपरता, अनधिकारीनी संसारविमुखता वगेरे आ बीजनां ज फळवाळां झाड छे.[1] शास्त्रे उपदेश आप्यो छे

[1] आवुं एक सुंदर दृष्टांत एक संस्कृत कविए हास्यरूपे आप्युं छे. ते कहे छे के, एक व्यभिचारिणिने एक सारी पाडोशणे ए दुर्व्यसन तजवानो उपदेश आप्यो, त्यारे तेणे

के,---ब्रह्मअग्नि, जीव विस्फुल्लिंग (Spark) छे.

यथा सुदिप्तात् पावकात् विस्फुल्लिंगाः
सहस्रशः प्रभवन्ते सरूपाः।
तथाक्षरात् विविधाः सोम्यभावाः
प्रजायन्ते तत्र चैवापि यन्ति ॥ मुंडक, २, १, १.

यथाअग्नेः [भावाः जीवाः] क्षुद्रा विस्फुल्लिंगा व्युच्चरन्त्येवमेवास्मादात्मनः सर्वेप्राणाः सर्वेलोकाः सर्वेदेवाः सर्वाणि भूतानि व्युच्चरन्ति---बृहदारण्यक, २, १, २०.

'जेम सारी रीते प्रज्वलित अग्निमांथी अनेक [अग्निना] समानरुपवाळा तणखाओ नीकळे छे, तेम हे प्रियदर्शन! अक्षर [भगवान्] थी विविध भावो उपजे छे, अने तेमांज लीन थाय छे.'

'जेम अग्निथी अल्प तणखाओ विविध रीते उडे छे, तेमज आ आत्माथी सर्वे इंद्रिओ, सर्वे लोको, सर्वे देवो अने सर्वे प्राणीओ उत्पन्न थाय छे.'

जीव ए ब्रह्मनो अंश छे, ए वात गीतामां पण स्पष्टाक्षरे कहेली छे.

अद्वैत मतनो आधार आपीने उत्तर आप्यो के, पति अने उपपति ए बंन्नेमां ज्यारे एकज ब्रह्म रहेलुं छे, त्यारे ते बंन्नेमां भेद समजवो ए अत्यंत मूर्खतानुं काम छे.

ममैवांशो जीवलोके जीवभूतः सनातनः ।
[गीता १५, ७].

'मारोज [भगवान्नोज] अंश जीवलोकमां सनातन जीवभूत छे.'

ब्रह्मसूत्रनो पण एज मत छे;---

अंशो नानाव्यपदेशात् । २, ३, ४३ सूत्र.

ब्रह्म सच्चिदानंद छे, जीव ज्यारे ब्रह्म छे, त्यारे जीव पण सच्चिदानंद छे.

सच्चिदानंदरूपोऽहं नित्य मुक्त स्वभाववान् ।

'जीव नित्य मुक्त स्वभाववाळो छे, सच्चिदानंदरुप छे.'

जीव अने ब्रह्मना स्वरुपमां कशो भेद नथी, बंनेमां भेद एटलो ज छे के, ब्रह्ममां सत्-भाव, चित्-भाव अने आनंद-भाव सुव्यक्त छे, पण जीवमां सत्-भाव, चित्-भाव अने आनंद-भाव अव्यक्त छे. तेथी बादरायणे सूत्र रच्युं छे के---

अधिकं तु भेदनिर्देशात्---२, १, २२ सूत्र.

'ब्रह्म जीव करतां अधिक छे, कारणके बंनेना भेदनो श्रुतिए निर्देश कर्यो छे.'

सत्-भावनो प्रकाश जे शक्तिथी थाय छे, तेनुं नाम संधिनी, चित्-भावनो प्रकाश जे शक्तिथी थाय छे, तेनुं नाम संवित्, अने आनंद-भावनो प्रकाश जे शक्तिथी थाय छे, तेनुं नाम

ह्लादिनी. आ शक्तिओनांज वीजां नाम ज्ञानशक्ति, इच्छा-शक्ति अने क्रियाशक्ति छे. संवित्=ज्ञानशक्ति, ह्लादिनी=इच्छाशक्ति अने संधिनी=क्रियाशक्ति.

श्वेताश्वतर उपनिषद्‌मां भगवान्‌नो परिचय आपतां कह्युं छे के---

परास्य शक्ति र्विविधैव श्रूयते।

स्वाभाविकी ज्ञान वल क्रिया च॥ श्वेत ६, ८.

'आनी उत्कृष्ट शक्ति विविधज संभळाय छे, अने ते अनादि सिद्ध ज्ञानक्रिया अने वळक्रिया छे.'

'तेनी उत्कृष्ट शक्ति वहु संभळाइ छे, तेनी ज्ञानशक्ति, वळ---इच्छाशक्ति अने क्रियाशक्ति स्वाभाविक छे.'

विष्णु पुराण कहे छे के--

ह्लादिनी सन्धिनी संवित् त्वय्येके सर्व संस्थितौ।

'आ त्रण शक्तिओ ह्लादिनी, संधिनी अने संवित्---अद्वितिय विश्वाधार भगवानमां प्रगट छे.' 'पण जीवमां ए शक्तिओ अव्यक्त छे. जीवमां आ त्रण शक्तिओनो ज्यारे पूर्ण प्रकाश थाय, जीवमां ज्यारे सत्-भाव, चित्-भाव अने आनंद-भाव संपूर्ण सुव्यक्त थाय, त्यारे जीव ईश्वर थाय.' त्यारे ज जीव कही शके के----

सोऽहम्, अहं ब्रह्मास्मि।

'ते हुं [छुं]', 'हुं ब्रह्म छुं'
श्रुति कहे छे ते खरुं ज छे के---
ब्रह्मवेद ब्रह्मैव भवति।
जीव, ब्रह्म जाणवाथी ब्रह्म थाय छे.'

पण ब्रह्म थयाथी ज ब्रह्मने जाणी शकाय, एम पण श्रुतिए कहेलुं छे.

ब्रह्म सन् ब्रह्म अवैति।

आनुं तात्पर्य आम छे के, ब्रह्मने जाणतां पहेलां जीवे ब्रह्म थवुं जोइए. जीवमां जे अव्यक्त शक्ति छे, अव्यक्त सच्चिदानंद भाव छे, तेने सुव्यक्त [प्रगट] करवो जोइए. टुंकामां कहीए तो क्षुद्रविस्फुलिंगे [नाना तणखाए] मोटो अग्नि थवुं जोइए. त्यारे ज जीव ब्रह्म थइ शके. त्यारे ज जीव "सोऽहं," "अहं ब्रह्मास्मि" कहेवानो अधिकारी थाय.

कहेवानी जरुर नथी के, साधारण जीवो जेने आत्मा कहे छे, ते प्रकृत-खरो-आत्मा नथी ; ते उपाधिमां स्वरुप-आत्माना प्रतिबिंबनी मात्र छाया छे. ए आत्मा कदी पण ब्रह्म नथी. ब्रह्मथी तेने अभिन्न मानवो ए विषम विडंबना छे. पण आपणा हृदयनां दहराकाशमां जे भगवान् निगूढ रहेला छे, जेने उपनिषदे गुहातीत, गह्वरस्थ, पुराण वगेरे कह्या छे, (गुहातीतं गह्वरेष्टं पुराणम्—कठ), तेज खरो आत्मा छे.

आ आत्माज ब्रह्म छे. आ आत्माने वसवानुं स्थान देह छे, माटे ज देहने ब्रह्मपुर कहे छे.[1]'

अथ यदिदस्मिन् ब्रह्मपुरे दहरं पुण्डरीकं वेश्म, दहरोऽस्मिन्नन्ताकाश स्तस्मिन् यदन्तस्तदन्वेष्टव्यं तद् विजिज्ञासितव्यम् ।—छांदोग्य ८, १, १.

'आ ब्रह्मपुरमां (शरीरमां) जे आ अल्प कमळ रुप घर छे, आमां अल्पतर अंतराकाश छे, तेमां जे अंतर छे, ते शोधवा योग्य छे ने तेज साक्षात्कार करवा योग्य छे.'

आ अंतराकाश ते शु? शंकराचार्य कहे छे, ए आकाशज ब्रह्म. वेदान्त परिभाषामां हृदयमां रहेला आत्मानुं नाम दहराकाश. आ आकाश ते आत्मा, एम उपनिषद् पण स्पष्टाक्षरे कहे छे—

एष आत्माऽपहतपाप्मा विजरो विमृत्यु र्विशोको विजिघित्सोऽपिपासः सत्यकामः सत्यसंकल्पः ।

छांदोग्य ८, १, ५.

'आ आत्मा पापथी रहित, जरा रहित, मृत्यु रहित, मानस संतापथी रहित, भक्षणनी इच्छाथी रहित, पीवानी इच्छाथी रहित, सत्य भोगवाळो अने सत्य संकल्पवाळो (छे).'

---

[1] जर्मन तत्त्ववित् नोव्यालीशे (Novalis) शरीरने Tabernacle of God कह्युं छे.

उपाधिनी सूक्ष्मताने लक्षमां लइने ए आत्माने ज अणु कही शकाय.

अणुरेष आत्मा ।

एनेज लक्ष्यमां राखीने कहेलुं छे के—

अणोरणीयान्—

'ते अणुथी पण अणु छे'; वळी ते ज

महतोमहीयान् ।

'महान् करतां पण महान् छे.'

कारण के, जे आत्मा दहर-पुंडरिकमां एटले हृदयकमळमां रहेलो छे, तेज जगत्मां सर्वत्र अनुस्युत छे. तेथी छांदोग्य उपनिषद् कहे छे के-

यावान्वा अयमाकाश स्तावानेषोऽन्तर्हृदय आकाशः। उभे अस्मिन्द्यावा पृथिवी अंतरेव समाहिते उभावग्निश्च वायुश्च सूर्याचंद्रमसावुभौ विद्युन्नक्षत्राणि यच्चास्येहास्ति यच्च नास्ति सर्वं तदस्मिन्समाहितमिति—छांदोग्य ८, १, १३.

'ते अंतर-हृदयनुं आकाश, आ आकाशनी पेठे मोटुं छे. तेमां स्वर्ग, पृथ्वी, अग्नि, वायु, चंद्र, सूर्य, विजळी, नक्षत्र छे. जे कांइ छे, जे कांइ नथी, ते बधुं ज तेनी अंदर छे.'

ब्रह्म आत्मा-रुपे हृदयमां रहेलुं छे, एवो श्रुतिए बीजे ठकाणे पण उपदेश आप्यो छे—

कतम आत्मा सोऽयं विज्ञानमयः प्राणेषु दृष्टि अन्तर्ज्योति पुरुषः ।–वाजसनेय संहिता.

'आत्मा कोण? एना जवाबमां कह्युं छे के, जे चिन्मय अंतर्ज्योति पुरुष, प्राणोमां हृदयमां छे ते.'

सँ वा एष आत्मा हृदि । तस्यैतदेव निरुक्तम् ।
हृदि अयमिति । तस्मात् हृदयम् ।

(छांदोग्य ८, ३, ३).

'ते आ प्रसिद्ध आत्मा हृदयमां (छे), एम तेनुं आज निर्वचन (छे). तेथी हृदयमां (छे, एम जाणवुं).'

'ते आत्मा हृदयमां विराजीत छे. तेनुं निरुक्त (etymology) आम छे. हृदयमां ते छे, तेथी हृदयने हृदय कहे छे.'

हृदयना दहराकाशमां ब्रह्म अधिष्टित छे, एवो बादरायणे पण स्पष्ट उपदेश आप्यो छे;

दहर उत्तरेभ्यः ।– १, ३-१४ सूत्र.

आनां भाष्यमां शंकराचार्ये लख्युं छे के,--आ हृदयकमळमां जे दहराकाश छे, एथी शुं भौतिक आकाश समजाव्युं छे के जीव समजाव्यो छे के परमात्मा समजाव्यो छे? तेनो सिद्धांत आ छे के, ते परमात्मा. (स उत्तरेभ्यः हेतुभ्यः परमेश्वरः इति)

अभ्युपगमात् हृदि हि–२, ३,२९ ब्रह्मसूत्र.

गीतामां पण आ वातनो फरी फरीने उपदेश अपाएलो छे.

हृदि सर्वस्यधिष्ठितम् ।---गीता १३, १७.

सर्वस्य चाहं हृदि संन्निविष्टः ।-.-गीता १५, १५.

ईश्वरः सर्वभूतानां हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति । गीता १८-६१.

'ते सर्वनां हृदयमां अधिष्ठित छे.'

'हुं सर्वना हृदयमां निविष्ट छुं.'

'ईश्वर सर्व भूतना हृदयमां रहे छे.'

अहमात्मा गुडाकेश ! सर्व भूताशयस्थितः।-गीता १०,२०.

'हे गुडाकेश ! हुं सर्व भूताशयस्थित आत्मा छुं.'

जेम प्रकाशवाळा सूर्यनुं दर्पणमांनुं प्रतिबिंब बीजा स्वच्छ पदार्थमां प्रतिफलित थइने ते प्रकाश फेंके ; जे प्रकाश सूर्य पण नथी, सूर्यनुं प्रतिबिंब पण नथी, तेम हृदयमां रहेलो (गुहाहित) आत्मा, पहेलां तो बुद्धिमां अथवा आनंदमय कोशमां प्रतिबिंबित थाय छे. आ लक्षनां राखीने बादरायणे सूत्र रच्युं छे---

आभास एव च---२, ३, ५० सूत्र.

अतएव चोपमा सूर्यकादिवत्-३, २, १८ ब्र. सूत्र.

मतलब के पाणीमां जेम सूर्यनुं प्रतिबिंब पडे छे, तेम बुद्धि-मां परमात्मानुं प्रतिबिंब पडे छे ; आ प्रतिबिंब ते ज जीव.

आ जीवरुपी प्रतिबिंबनी छाया पाछी विज्ञानमय, मनोमय,

प्राणमय अने अन्नमय कोषमां पडीने आत्मा रुपे आभासित थाय छे.[1]

आत्माना प्रतिबिंबनी छायाना आ आभासने आपणे खरो आत्मा मानीए छीए. साधारण रीते अन्नमयकोषनाचिदाभास (जेने Brain-consciousness कहे छे.) तेनेज आपणे आत्मा समजीए छीए. वळी जो वधारे विचार करीने आगळज-

[1] Suppose, for instance we compare the Logos itself to the Sun. Suppose I take a clear mirror in my hand, catch a reflection of a sun, make the rays reflect from the surface of the mirror—say upon a polished metallic plate—and make the rays which are reflected in their turn from the plate fall upon a wall. Now we have three images, one being clearer than the other, and one being more resplendent than the other. I can compare the clear mirror to Karan sharir the metallic plate to the astral body, and the wall to the physical body. In each case a definite bimbum is formed and that bimbum or reflected image is for the time being considered as the self. The bimbum formed in the astral body gives rise to the idea of self in it when considered apart from the physical body; the bimbum formed in the Karan sharir gives rise to the most prominent form of individuality that man possesses.

(" Notes on the Bhagvadgita " by T. Subba Row—p. 19).

इए छीए तो प्राणमय मनोमय अथवा विज्ञानमयकोषनाचिदाभासने (Mind intellect अथवा will ने) आत्मा मानीए छीए. एथी आगळ आपणे जइ शकता नथी. पण एमांनो कोइ खरो आत्मा नथी. तेओ lower self छे, higher self नथी; तेओ चिदाभास छे,--चिन्मात्र नथी. आ चिदाभास जो चिन्मात्रनी साथे एक थइ शके, ए प्रतिबिंब जो बिंबनी साथे मळी जइ शके, ए lower self जो higher self मां निमज्जित थइ शके, तोज ते "सोऽहं" "अहं ब्रह्मास्मि" एम कही शके.[१]

बादरायण कहे छे के, प्रतिबिंबभूत जीव हमेशां सुषुप्तिमां बिंबभूत ब्रह्मनी साथे मळी जाय छे. पाछो जाग्रत थइने ब्रह्मथी विविक्त थाय छे.

तदभावो नाडीषु तच्छ्रुतेरात्मनिच ।

---

[१] आवीज मतलबनुं "Voice of Silence" (Translated by H. P. B.) मां कहेवामां आव्युं छे---And now—thyself is lost in self, thyself unto Thyself, merged in that self from which thou first didst radiate.

Where is thy individuality Lanoo, where the Lanoo himself? It is the spark lost in the fire, the drop within the ocean, the ever present rays become the All and Eternal Radiance.

अतः प्रबोधोऽस्मात्। ब्रह्मसूत्र ३,२,७-८.

बादरायणनो आ मत श्रुतिसिद्ध छे. उपनिषद्मां जुदी जुदी रीते आ उपदेश आपवामां आव्यो छे.

स एषोऽन्तर्हृदये आकाशस्तस्मिञ्शेते। बृहद् २,१,१७.

सता सोम्य तदा संपन्नो भवति। छांदोग्य ३-८-१.

सत आगम्य न विदुः सत आगच्छामहे। छांदोग्य ३,१०,२

सर्वाः प्रजा अहरह र्गच्छन्त्य एतं ब्रह्मलोकं न विन्दन्ति।

छांदोग्य ८,३,२.

'अंतर् हृदयमां जे आकाश (ब्रह्म) छे. तेमां जीव सुवे छे', त्यारे सत् (ब्रह्म)नी साथे मळी जाय छे. बधा जीवो हमेशां आ ब्रह्मलोकने पामे छे. ते सत् (ब्रह्म)मांथी पाछा फरीने आवे छे, ते तेओ जाणता नथी.'

पण आ मेळापमां विच्छेद छे. सुषुप्तिमां जीव ब्रह्ममां मळी जाय, जाग्रत्मां पाछो विच्छिन्न थाय. जेम पाणीमां डुबकी मारनार माणस पाछो बहार नीकळे छे तेम जे जीव सुषुप्तिमां ब्रह्ममां निमज्जित हतो, ते पाछो सुषुप्तिनो भंग थतां उठे छे.

स एव तु कर्मानुस्मृतिशब्दविधिभ्यः। ब्रह्मसूत्र ३,२,९.

पण आ भंगुर-नाशवंत-मेळापथी जीवनुं कल्याण नथी. जे सुषुप्तिनुं जाग्रत् नथी, जे मेळापनो विच्छेद नथी, जे निमज्जननुं उत्थान नथी, तेज जीवने इच्छवा योग्य छे. जीवने

आ अखंड मेळापनो लाभ थाय, त्यारे जीव ब्रह्मनी साथेनां पोतानां एकपणांनो साक्षात् अनुभव करे.

आत्मेति तूपगच्छन्ति ग्राहयन्तिच । ४,१,३ ब्रह्मसूत्र.

" अहं ब्रह्मास्मि " " अयमात्मा ब्रह्म " इत्यादि महावाक्यै स्तत्त्वविद् आत्मत्वेनैव ब्रह्मगृह्णन्ति । तथा " तत्त्वमसि " इत्यादि महावाक्यैः स्वशिष्यान् ग्राहयन्त्यपि---भारती तीर्थ.

' तत्त्वज्ञानीओ " हुं ब्रह्म छुं," " आ आत्मा ब्रह्म छे," इत्यादि महावाक्यो वडे ब्रह्मने आत्मारुपे ग्रहण करे छे, अने "तत्त्वमसि" वगेरे महा वाक्यवडे शिष्योने ग्रहण करावे छे.'

तृतीय मुंडकमां आ तत्त्व रुपकनी भाषामां उपदेश्युं छे.

द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया समानं वृक्षं परिषस्वजाते ।
तयोरन्यः पिप्पलं स्वादु अत्ति अनश्नन् अन्योऽभिचाकशीति॥
समाने वृक्षे पुरुषो निमग्नः अनीशया शोचति मुह्यमानः ।
जुष्टं यदा पश्यति अन्यमीशम् अस्य महिमानमिति वीतशोकः॥

' बे सुंदर पक्षीओ एकज झाड उपर रहेलां छे. तेओ एक बीजाना मित्र छे तेमांनुं एक स्वादिष्ट फळ खायछे, बीजुं खातुं नथी. मात्र जुए छे. एकज झाड उपर एक (जीव) निमग्न थइने अनीशपणावडे मोहाच्छन्न थइ शोक करे छे, पण ज्यारे ते बीजा (ईश्वर)ने जुए छे, त्यारे ते तेना महिमाने अनुभवीने शोक विनानुं थाय छे.

जे अनीश (ईश्वर नहि), शोकने आधीन, तेज जीव (lower self); जे ईश (महिमावाळुं); तेज कूटस्थ हृदयकमळमां रहेलुं ब्रह्म (higher self). एने लक्षमां राखीने श्रुति कहे छे के—

'ज्ञाज्ञौ द्वौ ईशानीशौ'॥

'एक अज्ञ, एक प्राज्ञ; एक अनीश एक ईश.'[9]

आ प्रसंगमां बादरायणे सूत्र रच्युं छे—

पराभिध्यानात् तु तिरोहितं ततो ह्यस्य बन्धविपर्ययौ।

(३। २। ५। सूत्र.)

देह योगाद् वा सोऽपि—३। २। ६। सूत्र.

'देहना संबंधमां जोडायला जीवने बंध, अने परमेश्वरनां अभिध्यानथी मोक्ष, अथवा परमेश्वरथीज जीवनो बंध-मोक्ष.'

---

[9] This spiritual triad, as it is called, Atma. Buddhi, Manas, the Jivatma, is described as a seed, a germ, of divine life, containing the potentialities of its own heavenly Father, its Monad, to be unfolded into powers in the course of evolution. × × He is therein as a mere germ an embryo, powerless, senseless, helpless, while the Monad on his own plane is strong, conscious, capable, so far as his internal life is concerned, the one is the Monad in eternity, the other is the Monad in time and space, the context of the Monad eternal is to become the extent of the Monad temporal and spatial—Annie Beasant's "A study of consciousness"—page 65.

आना भाष्यमां शंकराचार्ये कह्युं छे के—

कस्मात् पुनर्जीवः परमात्मांश एव संतिरस्कृत ज्ञानैश्वर्यो भवति ? * * सोपि तु ज्ञानैश्वर्यतिरोभावो देहयोगाद् देहेन्द्रियमनोबुद्धिविषयवेदनादियोगाद् भवति । अस्ति चात्र चोपमा । यथा चाग्नेर्दहनप्रकाशनसंपन्नस्यापि अरणिगतस्य दहनप्रकाशने तिरोहिते भवतो यथा वा भस्माच्छन्नस्य । * * अतोऽनन्य एवेश्वराज्जीव सन् देहयोगात् तिरोहित ज्ञानैश्वर्यो भवति * * तत् पुनास्तिरोहितं सत् परमेश्वरं अभिध्यायतो यतमानस्य जन्तो विंधूत ध्वान्तस्य तिमिर तिरस्कृतेव दृक्शक्तिरौषधवीर्यात् ईश्वर प्रसादात् संसिद्धस्य कस्यचिद् आविर्भवति न स्वभावत एव सर्वेषां जंतुनाम् । कुतः । ततो हि ईश्वराद्धेतोरस्यजीवस्य बंधमोक्षौ भवतः । ईश्वरस्वरूपापरिज्ञानाद् बन्ध स्तत्स्वरूपपरिज्ञानात् तु मोक्षः ।

मतलब—' जीव जो ब्रह्मनो अंश छे, तो तेनां ज्ञानैश्वर्य तिरोहित केम जोवामां आवे छे ? उत्तर---देहना संबंधने लीधे. देह, इंद्रिय, मन, बुद्धि वगेरेनी साथे जोडावाथी जीवनो ईश्वर भाव तिरोहित थाय छे, जेम लाकडामां रहेला अथवा भस्मथी ढंकाएला अग्निनी बाळवानी अने प्रकाश करवानी शक्तिनो तिरोभाव थाय छे तेम. आथी जीव ईश्वर करतां जूदो न होवा छतां पण देहना संबंधने लीधे अनीश्वर थाय छे. जेम

तिमिर रोगथी आंधळा थयेला माणसनी जोवानी शक्ति ओसडना गुणथी पाछी फरी आवे छे, पोतानी मेळे आवती नथी, तेम तिरोहित शक्तिवाळो जीव ब्रह्मना अभिध्यानमां यत्नशील थवाथी तेनी कृपाथी सिद्धि पामे एटले पोतानुं नाश पामेलुं ऐश्वर्य फरी मेळवे. कारणके ईश्वरथीज जीवना बंध मोक्ष छे. ईश्वरनां स्वरुपनां अज्ञानथी बंध अने ईश्वरनां स्वरुपनां ज्ञानथी मोक्ष.'

नीचे जणावेला श्लोकोमां त्रण पुरुषनो उपदेश आपी आ तत्त्व गीतामां सुविशद करवामां आव्युं छे.

द्वाविमौ पुरुषौलोके क्षरश्चाक्षर एवच ।
क्षरः सर्वाणि भूतानि कूटस्थोऽक्षर उच्यते ॥
उत्तमः पुरुषस्त्वन्यः परमात्मेत्युदाहृतः ।
यो लोकत्रयमाविश्य बिभर्त्यव्यय ईश्वरः ॥
यस्मात् क्षरमतीतोऽहमक्षरादपि चोत्तमः ।
अतोऽस्मि लोके वेदे च प्रथितः पुरुषोत्तमः ॥

गीता १५ । १६-१७-१८.

लोकमां आ बे पुरुष छे; क्षर अने अक्षर, क्षर ते सर्व भूतने कूटस्थ ते अक्षर कहेवाय छे. जे उत्तम पुरुष छे ते तो अन्य छे, परमात्मा कहेवाय छे, त्रिलोकमां पेशी तेज अव्यय ईश्वर भरण करे छे. हुं क्षरथी अतीत छुं, तेम अक्षरथी पण उत्तम

छुं, माटेज मने लोकमां तेम वेदमां पुरुषोत्तम कहेलो छे.'

आथी गीताना मत प्रमाणे पुरुष त्रण; क्षर पुरुष, अक्षर पुरुष अने उत्तम पुरुष. उत्तम पुरुष=परमात्मा, भगवान्. अक्षर पुरुष=अध्यात्म, कूटस्थ. क्षर पुरुष=जीवात्मा, सर्व भूत. उत्तम पुरुष=चिदाकाश, अक्षर पुरुष=चिन्मात्र (Monad) क्षर पुरुष=चिदाभास. उत्तम पुरुष जाणे दरीओ, अक्षर पुरुष अथवा चिन्मात्र जाणे तेनुंज बिंदु. दरीयामां अने बिंदुमां स्वरूपथी कशो भेद नथी. जीव ज्यां सुधी परमात्माने अने अध्यात्माने अभिन्न न जाणे त्यां सुधीज तेने शोक मोह थाय; संसार चक्रमां फेरा फरे. पण ज्यारे ते आत्मा ए ईश्वरनोज हृदयमां रहेलो अंश छे एम जाणी शके, त्यारे तेनुं संसार बंधन तुटी जाय. ते पोताना महिमामां प्रतिष्ठित थइने "तत्त्वमसि" "अयमात्मा ब्रह्म" इत्यादि महावाक्यनां तात्पर्यनो अनुभव करे. श्वेताश्वतर उपनिषद्मां एवीज मतलबनुं कहेलुं छे—

* * तस्मिन्हंसो भ्राम्यते ब्रह्मचक्रे * * पृथगात्मानं प्रेरितारं च मत्वा जुष्टन्तस्तेनामृतत्वमेति. ।

हंस=जीवः ।

आत्मानं जीवं, प्रेरितारं ईश्वरम् । शंकर.

' जीव, आतमा अने परमात्माने जुदा समजीने आ संसार

चक्रमां भमे छे. ज्यारे ते भगवान्‌नो वरणीय थाय छे, त्यारे अमरत्व पामे छे.'

आपणे जोयुं छे के, गीताए पण देहमां रहेला आत्मानो परमात्मानी साथे अभिन्न कहीने निर्देश कर्यो छे.

उपद्रष्टानुमंता च भर्त्ता भोक्ता महेश्वरः ।
परमात्मेति चाप्युक्तो देहेऽस्मिन् पुरुषःपरः ॥

गीता १३ । २२.

आ देहमां परम पुरुष परमात्मा महेश्वर रहेला छे, ते साक्षी, अनुमन्ता, भर्त्ता अने भोक्ता छे.

३ ब्रह्म सगुण के निर्गुण ?

आपणे जोयुं छे के, अद्वैतमत प्रमाणे ब्रह्म सर्व-विशेष-रहित, निर्विकल्प, निरुपाधि, निर्गुण छे; मतलबके ब्रह्मने कोइ विशेषणथी विशेषित कराय नहि; कोइ लक्षणथी लक्षित कराय नहि; कोइ चिन्हथी चिन्हित कराय नहि. कोइ गुणथी ओळखावी शकाय नहि; ते वचनथी, लक्षणथी, निर्देशथी अतीत छे; ते मन बुद्धिथी अगोचर छे, अज्ञेय, अमेय अने अचिंत्य छे. बीजी तरफ विशिष्टाद्वैत मत प्रमाणे सविशेष ब्रह्मज श्रुति-सिद्ध छे. ते निर्गुण नथी, सगुण छे; सर्व दोष र-

हित अने सर्व कल्याणगुणना समुद्ररुप छे, तेने लक्षणथी लक्षित, विशेषणे विशेषित, चिन्हे चिन्हित करी शकाय छे; ते अज्ञेय अने अचिंत्य नथी. आपणे जोयुं छे के, अद्वैतमत प्रमाणे आ सगुण ब्रह्म एतो मात्र मायानुं विजृम्भण छे; तेनी पारमार्थिक सत्ता नथी, ते उपाधिना काल्पनिक विलास सिवाय बीजुं कांइ ज नथी. स्वरुपथी उपाधि विनानुं ब्रह्म ज्यारे माया-शक्तिनी उपाधिवाळुं थाय छे, त्यारेज ते महेश्वर छे. पण विशिष्टाद्वैत मत प्रमाणे ब्रह्म पूर्वापर (हमेशांज) मायाशवल, सदाज माया-विशिष्ट छे; वळी आ माया ते अद्वैतवादीनुं अनादि भावरुप अज्ञान नथी, पण विचित्रार्थ रचनारी गुणात्मिका प्रकृति छे. आपणे जोइ गया छीए के, अद्वैतवादीओ ब्रह्मनां तटस्थ अने स्वरुप एवां वे लक्षण माने छे, अने स्वरुप लक्षणने ज (सत्यं ज्ञानमनंतं ब्रह्म) ब्रह्मनुं वास्तविक लक्षण कहे छे; बीजी तरफ विशिष्टाद्वैतवादीओ आ प्रमाणे तटस्थ अने स्वरुप लक्षणना भेदने कबुल राखता नथी; तेओ कहे छे के, "जन्माद्यस्य यतः" (जेमांथी जगत्नी उत्पत्ति थाय ते ब्रह्म)-आज ब्रह्मनुं वास्तविक लक्षण छे. कारणके ए मत प्रमाणे ब्रह्मज जगत्कर्त्ता अने जगत्नुं उपादान छे. आ मोटा मत-भेदने ठेकाणे गीतानो उपदेश शो छे?

आपणे जोइ गया छीए के, उपनिषद्मां ब्रह्मनां वंने स्वरुप

नो उपदेश करवामां आव्यो छे. एक निर्विशेष-निर्गुणरुप अने बीजुं सविशेष-सगुणरुप. निर्गुणरुप बतावतां श्रुतिए " नेति नेति"-एवुं नहि, एवुं नहि-एटलुं ज मात्र कहेलुंछे अने निर्विशेष ब्रह्मनो बोध करतां नकारनो अति प्रयोग कर्यो छे. ब्रह्मनो सविशेष अथवा सगुण भाव ते आनाथी उलटो छे. ए भाव समजावतां श्रुतिए ब्रह्मने अशेष कल्याण.गुणाकर, सर्वज्ञ, सर्ववित्, सत्यकाम, सत्य संकल्प इत्यादिरुपे कहेलुं छे. उपनिषदोनुं लक्षपूर्वक मनन करवाथी आ पण जोइ शकाय छे के, घणुं करीने उपनिषद्‌मां निर्गुण ब्रह्मने नपुंसकलिंग -नान्यतरजाति-मां अने सगुणब्रह्मने पुल्लिंग-नरजाति-मां बतावेलुं छे. जेमके—

अशब्दमस्पर्शमरूपमव्ययम् । कठ ३,१५.

आ निर्गुणनो निर्देश छे ; वळी—

सर्वकर्मा सर्वकामः सर्वगन्धः सर्वरसः ।

(छांदोग्य ३,१४,२).

आ सगुणनो निर्देश छे. पण कोइ कोइ ठेकाणे श्रुतिए आ बंने रुपनो स्पष्ट उल्लेख कर्यो छे.

द्वे वाव ब्रह्मणो रुपे । बृहदारण्यक, २,३,१.

ब्रह्मनां बे रुप छे.

एतद्वै सत्यकाम परं अपरंच ब्रह्म । प्रश्न ५,२.

'हे सत्यकाम ! आ पर अने अपर ब्रह्म.'

आ सगुण अने निर्गुण ब्रह्म एकज वस्तु छे, एम पण उपनिषद्नी आलोचना करतां समजी शकाय छे. सगुण अने निर्गुणमां मात्र भावनो ज प्रभेद छे, वस्तुगत जराए भेद नथी. कारणके निर्गुण परब्रह्म ज्यारे माया उपाधिनो अंगीकार करीने पोताने संकुचित कर्या जेवुं करे छे, त्यारे तेनो जे विभाव थाय, तेज सगुण भाव छे.

यस्तूर्णनाभ इव तन्तुभिः प्रधानजैः ।
स्वभावतो देव एकः स्वमावृणोत् ॥ श्वेताश्वतर ६,१०.

'जेम करोळीयो जाळ रचीने पोताने ढांकी दे छे, तेम स्वभावथी अद्वितीय ब्रह्म प्रकृतिथी उत्पन्न थयेली जाळमां पोताने ढांकी दे छे.'

जेम अत्यंत तेजस्वी दीवाने फानसमां मुकवाथी तेनुं तेज कांइक अंशे संकुचित थया जेवुं लागे छे, तेम परब्रह्मनो पण त्यारे तेवो भाव थाय छे. तेथी मायाने ब्रह्मनी यवनिका (पडदो) अथवा तिरस्करणी कहेवामां आवे छे. परब्रह्म ज्यारे मायाथी उपहित थाय, त्यारे तेने महेश्वर कहेवामां आवे छे.

मायिनन्तु महेश्वरम् । श्वेताश्वतर उपनिषद्.

'जे मायायुक्त, तेज महेश्वर.'

अनंत सागरनी जे निर्वात, निष्कंप, प्रशांत, निस्वर अव-

स्था-तेज ब्रह्मनो निर्गुणभाव; अने समुद्रनी जे लहरी-संकूल, वीचि-विक्षुब्ध, सफेन-तरंगित अवस्था—एज ब्रह्मनो सगुण-भाव. एकज समुद्र क्यारेक प्रशांत, क्यारेक विक्षुब्ध ; एकज ब्रह्म क्यारेक निर्गुण, क्यारेक सगुण. प्रशांत समुद्र विक्षुब्ध थाय छे, वळी विक्षुब्ध समुद्र प्रशांत भाव धारण करे छे ; परब्रह्म मायाना पडदाना आवरणथी सगुण-सकुंचित थाय छे, मायानुं आवरण तिरोहित करीने निर्गुण-निस्तरंग थाय छे. महा समुद्रनी अनुक्रमे आ बे अवस्था छे, तेम अनुक्रमे ब्रह्मना पण आ बे विभाव-स्वरुप छे. तिरस्करणीय आवरणथी कोइवार ब्रह्मज्योति संकीर्ण-ससीम थाय छे, वळी तिरस्कर-णीय तिरोधान थतां ब्रह्मज्योति फरीने असीम अनंत अनावृत्त थाय छे.

तेथी श्रुतिए कहेलुं छे के—

न सत् न चासत् शिव एव केवलः । श्वेत. ४,१९.

' ते—सत् पण नथी, असत् पण नथी—केवल शिव छे.'

जो के श्रुति निर्गुणब्रह्मनो निर्देश करतां नान्यतर जाति अने सगुण ब्रह्मनो निर्देश करतां नरजाति वापरे छे, तोपण कोइ कोइ ठेकाणे एकज मंत्रमां नर अने नान्यतर ए बंने जाति नो प्रयोग करेलो पण जोवामां आवे छे. जेमके—

स पर्यगाच्छुक्रमकायमव्रण

मस्नाविरं शुद्धमपापविद्धम् ।
कविर्मनीषी परिभूः स्वयंभू
र्याथातथ्यतोऽर्थान् व्यदधाच्छाश्वतीभ्यः समाभ्यः ॥
(इश. ८).

अहीं पहेलो भाग निर्गुण ब्रह्मनो निर्देशक छे, तेथी नान्यतरजातिनो प्रयोग छे ; छेल्लो भाग सगुणब्रह्मनो निर्देशक छे, तेथी नरजातिनो प्रयोग छे. एकज मंत्रमां सगुण अने निर्गुण ए बंने भावनो निर्देश करीने श्रुतिए एम उपदेश कर्यो छे के, सगुण अने निर्गुणमां मात्र भावनोज प्रभेद छे ; सगुण अने निर्गुण ए मात्र एकज वस्तु छे. तेथी श्रुतिए ब्रह्मनुं परावर एवुं एक नाम आप्युं छे.

तस्मिन् दृष्टे परावरे । मुंडक. २,२,८.

पर अने अवर=निर्गुण अने सगुण बंनेनो समास करीने श्रुतिए बताव्युं छे के पर अने अवर एकज वस्तु छे.

श्रुतिए सगुण ब्रह्म अथवा महेश्वरनुं बे प्रकारनुं लक्षण बताव्युं छे—स्वरुप लक्षण अने तटस्थ लक्षण ; ते सत्‌चित् अने आनंद, ते सच्चिदानंद (सत्यं ज्ञान मनंतं ब्रह्म-तैत्तिरीय २,१,१) आ तेनुं स्वरुप लक्षण ; अने ते “ तज्जलान् ” (ब्रह्म तज्जलान् इति-छांदोग्य ३,१४,१) मतलबके ते जगत्‌नी सृष्टि, स्थिति अने लयनो हेतु छे, आज तेनुं तटस्थ लक्षण,

ब्रह्म माया अंगीकार करीने सोपाधिक थाय छतां पण ते ससीम थतुं नथी, एम पण श्रुतिए कहेलुं छे. कारणके ते विश्वानुग(Immanent)होवाछतां पण विश्वातिग (Transcedent); प्रपंचाभिमानी होवा छतां पण प्रपंचातीत छे. तेथी श्रुति कहे छे—

तदन्तरस्य सर्वस्य तदु सर्वस्यास्य बाह्यतः। श्वेत ५.

'ते आखां जगत्नी अंदर छे, वळी जगत्नी बहार पण छे'.

बृहदारण्यक पण एमज कहे छे;

अयमात्माऽन्तरोऽबाह्यः। बृहदारण्यक ४, ५, १३.

पादोऽस्य विश्वा भूतानि त्रिपादस्यामृतं दिवि।

(पुरुषसूक्त ३).

'बधां भूत ए मात्र तेनो एक पाद एटले ¼ छे. तेना बीजा त्रण पाद अमृत-विश्वातीत छे.'

गीताए उपनिषद्ना आ बधा उपदेशनुं समर्थन कर्युं छे, एम गीतानुं मनन करतां समजाय छे. पर-ब्रह्मनो परिचय आपतां गीता कहे छे के—

अनादिमत् परंब्रह्म न सत्तन्नासदुच्यते।

गीता १३, १२.

'अनादि परब्रह्म सत् पण नथी, असत् पण नथी.'

परब्रह्म सत् असत्थी अतीत छे, ए वात गीतामां बीजे ठे-

काणे पण कहेवामां आवी छे.

त्वमक्षरं सदसत् तत्परं यत् । गीता ११, ३७.

‘ ते अक्षर, सत् अने असत् तेमज सत् असत्थी पण पर.’ बीजे ठेकाणे गीता परब्रह्मने “ निर्दोषसम ” (absolutely homogeneous) कहे छे,–

निर्दोषं हि समं ब्रह्म । गीता ५, १९.

ब्रह्मने निर्दोष रुपे सम कहेवाथी एमज समजाय के, ते बधा प्रकारना भेद विनानुं छे. सजातीय, विजातीय अने स्वगत ए त्रणमांना कोइ भेदनो तेनामां अवकाश नथी ; मतलबके ते “ एकमेवाद्वितीयम् ” छे. आज उपनिषदे कहेलुं निर्विशेष, निरुपाधि एटले निर्गुण ब्रह्म.

ब्रह्मना सगुण रुपनो उपदेश आपतां गीताए घणा रुचिर सुंदर श्लोको योज्या छे. ए बधा उपदेशनो संग्रह करीए, तो गीताए उपदेशेला सगुण ब्रह्म अथवा महेश्वरनुं स्वरुप नीचे कह्या प्रमाणे उपलब्ध थाय.

गीताना मत प्रमाणे भगवान्नो आदि नथी, मध्य नथी, अंत नथी. तेथी गीता अनेक स्थळे तेने अनादि, अमध्य, अनंत कहे छे.

नान्तं न मध्यं न पुनस्तवादिं पश्यामि विश्वेश्वर विश्वरूप ।

‘ हे विश्वेश्वर, विश्वरुप! तारो अंत, मध्य, आदि, कांइए

मने देखातुं नथी. वळी गीताए कह्युं छे के,-

अनादिमध्यान्तमनंतवीर्य मनन्तबाहुं शशिसूर्यनेत्रम् ।
पश्यामि त्वां दीप्तहुताशवक्त्रं स्वतेजसा विश्वमिदं तपन्तम् ।।
गीता ११, १९.

'तमने आदि, मध्य के अंत विनाना, अनंत वीर्यवाळा, अनंत बाहुवाळा, शशिसूर्य जेनां नेत्र छे एवा, दीप्तहुताश-वक्त्रवाळा, अने स्वतेज थकी आ विश्वने तपता एवा जोउं छुं.'

ते अजर, अक्षर, अमर, अमेय, अव्यय, सनातन, पुराण परमपुरुष छे.

दीप्तानलार्कद्युतिमप्रमेयम् । गीता ११, १७.
त्वमक्षरं परमं वेदितव्यं त्वमस्य विश्वस्यपरं निधानम् ।
त्वमव्ययः शाश्वतधर्मगोप्ता, सनातनस्त्वं पुरुषो मतो मे.
गीता ११ । १८.

'दीप्तानलार्कद्युति तथा अप्रमेय देखुं छुं.'

'तमेज अक्षर, परम वेदितव्य, आ विश्वना परमाश्रय, अ-व्यय, शाश्वत धर्म गोप्ता, अने सनातन पुरुष छो, एम हुं मानुं छुं.'

ते विश्व-बीज, विश्वनुं परम निधान, विश्व व्याप्त, विश्वरुप छे. चराचर विश्व तेनामां रहेलुं छे; सूत्रमां जेम मणि गुंथाया होय छे, तेम तेनामां बधुं गुंथाएलुं छे. स्थावर, जंगम,—तेने

छोडीने कशुंये नथी, कशुंये रही शके नहि.

बीजं मां सर्व भूतानां विद्धि पार्थ सनातनम् । ७ । १०.

त्वमस्य विश्वस्य परं निधानं । गीता ११ । १८.

निधानं बीजमव्ययम् । –गीता ९ । १८.

सर्वं समाप्नोषि ततोऽसि सर्वः । गीता ११ । ४०.

येन सर्वमिदं ततम् । गीता १८ । ४६.

त्वया ततं विश्वमनन्तरूप । गीता ११ । ३८.

इहैकस्थं जगत् कृत्स्नं पश्याद्य सचराचरम् ।
मम देहे गुडाकेश यच्चान्यद् द्रष्टुमिच्छसि ॥ गीता ११ । ७

मत्तः परतरं नान्यत् किंचिदस्तिधनंजय ।
मयि सर्वमिदं प्रोतं सूत्रे मणि गणा इव ॥ गीता ७ । ७

न तदस्ति विना यत्स्यात् मयाभूतं चराचरम् ।
यच्चापि सर्वभूतानां बीजं तदहमर्जुन. ॥ गीता १० । ३९.

'हे पार्थ ! मने सर्व भूतोनुं सनातन बीज जाण.'

'तमेज आ विश्वना परमाश्रय छो.'

'निधान अने नित्य बीज छुं.'

'तमे सर्वमां छो माटे ज सर्व छो.'

'जेणे आ बधुं व्याप्त छे.'

'हे अनंतरुप विश्व तमथी वितत छे.'

'अत्र सचराचर अखिल जगत् एकस्थ जो, अने जे जे जो-

चानी इच्छा होय ते (पण) हे गुडाकेश ! मारा देहमां जो.'

'हे परंतप ! माराथी पर अन्य कांइ नथी, आ बधुं मारामां परोवाएलुं छे, सूत्रमां मणि गणनी पेठे.'

'सर्व भूतनुं जे कांइ बीज छे, ते हे अर्जुन ! हुं छुं, एवुं कोइ चर के अचर भूत नथी के जे मारा विना होइ शके.'

'तेनाथीज जगत्‌नी प्रवृत्ति, जगत्‌नी उत्पत्ति, विश्वनां सृष्टि स्थिति लय छे. ते भूतनो आदि अंत मध्य छे.

यतःप्रवृत्ति र्भूतानाम् । – गीता १८ । ४६.

भूतभर्तृ च तज्ज्ञेयं ग्रसिष्णु प्रभविष्णु च । गीता १३।१६.

अहं सर्वस्य प्रभवो मत्तः सर्वं प्रवर्तते । गीता १० । ८.

ज्ञात्वा भूतादिमव्ययं । गीता ९ । १३.

अहमादिश्च मध्यं च भूतानामंत एव च । गीता १० । २०.

सर्गानामादिरन्तश्च मध्यं चैवाहमर्जुन । गीता १० । ३२.

' जे थकी भूत मात्रनी प्रवृत्ति छे.'

' तेने भूत भर्त्ता जाणवुं. ग्रसिष्णु अने प्रभविष्णु जाणवुं.'

' हुं सर्वनो प्रभव छुं, माराथीज सर्व प्रवर्ते छे.'

' मने भूत मात्रना नित्य निदानरूप जाणीने.'

' हुं भूतनो आदि मध्य अने अन्त छुं.'

' सर्ग मात्रनो आदि अंत अने मध्य हे अर्जुन हुं छुं.'

अनन्त वीर्यामितविक्रमस्तवं । गीता ११ । ४०.

लोकत्रयेऽप्यप्रतिमप्रभाव। ११। ४३.

'तमे अनन्त वीर्य अने अमित विक्रमवाळा छो.'

'त्रणे लोकमां तमे अमित प्रभाववाळा छो.'

त्वमादिदेवः पुरुषः पुराणः । गीता ११ । ३८.

गरीयसे ब्रह्मणोऽप्यादिकर्त्रे ।

अनन्त देवेश जगन्निवास । गीता ११ । ३७.

न मे विदुः सुरगणाः प्रभवं न महर्षयः ।

अहमादिर्हि देवानां महर्षीणां च सर्वशः ॥ गीता १० । २.

महर्षयः सप्तपूर्वे चत्वारो मनवस्तथा ।

मद्भावा मानसा जाता येषां लोक इमाः प्रजाः॥गीता१०।६.

'तमे आदि देव पुराण पुरुष छो.'

'सर्वथी महान् अने ब्रह्माना पण आदि कर्ता, हे अनंत ! हे देवेश ! हे जगन्निवास !' (तमे छो).

'सुरगण के महर्षि कोइ मारा प्रभावनी वात जाणतुं नथी, केमके हुं सर्वथा देव अने महर्षि सर्वनो आदि छुं.'

'पूर्वे सप्त महर्षि अने चार मनु जे मारामांज तल्लीन हता, ते मारा संकल्पथी थयेला छे, तेमनीज आ लोक प्रजा छे.'

पितासि लोकस्य चराचरस्य त्वमस्य पूज्यश्च गुरुर्गरीयान् ।
न त्वत्समोऽस्त्यभ्यधिकःकुतोऽन्यो लोकत्रयेऽप्यप्रतिमप्रभावः॥
गीता १०, ४३.

'चराचर लोकना पिता छो, तमे तेना पूज्य छो, महागुरु छो, त्रणे लोकमां तमारा समान ज कोइ नथी, तो हे अप्रतिम प्रभाव! तमाराथी अधिक एवो अन्य तो होय ज कोण?'

अहमेवाक्षयः कालो धाताहं विश्वतोमुखः। गीता १०, ३३.

ब्रह्मणो हि प्रतिष्ठाहममृतस्याव्ययस्य च।
शाश्वतस्य च धर्मस्य सुखस्यैकांतिकस्य च॥
गीता १४, २७.

'अक्षयकाळ अने विश्वनो मुख्य धाता हुंज छुं.'

'केमके अमृत अने अव्यय एवा तेम शाश्वत, धर्म, अने ऐकांतिक सुख एवा ब्रह्मनी प्रतिष्ठा हुं छुं.' ते—

कविं पुराणमनुशासितारं
अणोरणीयांसमनुस्मरेद्यः।
विश्वस्य धातारमचिन्त्यरूपम्
आदित्यवर्णः तमसः परस्तात्॥ गीता ८, ९.

'कवि, पुराण, अनुशासिता, अणुथी पण अणु, विश्वना धाता, अचिन्त्यरुप, आदित्यवर्ण, तमथी पार, एवानुं ज नित्य स्मरण करे छे.'

त्वमक्षरं परमं वेदितव्यं। गीता ११, १८.

वेदैश्च सर्वैरहमेव वेद्यो वेदान्तकृत् वेदविदेव चाहम्॥
गीता १५, १५.

वेत्तासि वेद्यं च परं च धाम। गीता ११, ३८.

'तमेज अक्षर, परम, वेदितव्य छो'.

'सर्व वेद थकी जे वेद्य ते हुं ज छुं, वेदान्तकृत अने वेदविद् पण हुं ज छुं.'

'वेत्ता अने वेद्य तमे छो, अने परम धाम तमे छो.'

ते दुर अने पासे छे, बहार अने अंदर छे, वेत्ता छे अने वेद्य छे; ते अव्यक्त, अविभक्त तेमज विभक्त, अने सगुण तेमज निर्गुण छे. ते तमस्नी पार छे. ज्योतिनुं ज्योति छे, परम ज्योति छे.

बहिरंतश्च भूतानां दूरस्थं चान्तिके च तत्। गीता १३,१५,
वेत्तासि वेद्यं च परं च धाम। गीता ११,३८.
ज्ञानं ज्ञेयं ज्ञानगम्यम्। गीता १३,१७.
अविभक्तं च भूतेषु, विभक्तमिव च स्थितम्। गीता १३,१६.
ज्योतिषामपि तज्ज्योति स्तमसः परमुच्यते। गीता १३,१७.
आदित्यवर्ण तमसः परस्तात्। गीता ८-९.

'भूतनी बहार अंतर ते छे, दूर रहेलुं छतां समीप छे.'
'वेत्ता अने वेद्य तमे छो.'
'ज्ञान छे, ज्ञेय छे, ज्ञान गम्य छे.'
'अविभक्त छतां भूतमां विभक्त होय तेम रहेलुं छे.'
'ज्योतिनुं पण ते ज्योति छे, तमस्थी पर कहेवाय छे.'

'आदित्यवर्ण, तमथी पार छे.'

ते लोक महेश्वर छे, आखा जगत्‌ना अद्वितीय प्रभु छे.

यो मामजमनादिं च वेत्ति लोक महेश्वरम् । गीता १०,३.

'जे अज अने अनादि एवा मने लोक महेश्वर जाणे छे.'

ते विश्वेश्वर रुप छे, विश्वरुप छे.

पश्यामि विश्वेश्वर विश्वरूपम् । गीता ११,१६.

'हे विश्वेश्वर ! विश्वरुप हुं जोउंछुं.'

ते अनन्त रुप छे.

त्वया ततं विश्वमन्तरूप । गीता ११,३८.

'हे अनंत रुप ! विश्व तमथी वितत छे.'

अनादिमध्यान्तमनन्तवीर्य मनन्तवाहुं शशिसूर्यनेत्रम् ।
पश्यामि त्वां दीप्तहुताशवक्त्रं स्वतेजसाविश्वमिदं तपन्तम् ॥
गीता ११,१९.

'तमने आदि मध्य के अंत विनाना, अनंत वीर्यवाळा, अनंत वाहुवाळा, शशि सूर्य जेनां नेत्र छे एवा, दीप्त हुताशवक्त्रवाळा, अने स्वतेज थकी आ विश्वने तपता, एवा जोउंछुं.

सर्वतः पाणिपादं तत्सर्वतोऽक्षिशिरोमुखम् ।
सर्वतः श्रुतिमल्लोके सर्वमावृत्य तिष्ठति ॥
सर्वेन्द्रियगुणाभासं सर्वेन्द्रियविवर्जितम् ।
असक्तं सर्वभृच्चैव, निर्गुणं गुणभोक्तृ च॥ गीता १३,१३-१४.

'ते सर्वत्र पाणिपादवाळुं छे, सर्वत्र अक्षि शिरोमुखवाळुं छे, सर्वत्र श्रुतिमान् छे, लोकमां सर्वने आवरीने रहेलुं छे. सर्वेन्द्रिय गुणाभास छे, सर्वेन्द्रिय रहित छे, असक्त छे, सर्व भृत छे, वळी निर्गुण अने गुण भोक्ता छे.'

यदादित्यगतं तेजो जगद्भासयतेऽखिलम् ।
यच्चन्द्रमसि यच्चाग्नौ तत्तेजो विद्धि मामकम् ॥
गामाविश्य च भूतानि धारयाम्यहमोजसा ।
पुष्णामि चौषधीः सर्वाः सोमो भूत्वा रसात्मकः ॥
अहं वैश्वानरो भूत्वा प्राणिनां देहमाश्रितः ।
प्राणापानसमायुक्तः पचाम्यन्नं चतुर्विधं. ॥

गीता १५, १२-१४.

रसोऽहमप्सु कौंतेय प्रभास्मिशशिसूर्ययोः ।
प्रणवः सर्व वेदेषु शब्दः खे पौरुषं नृषु ॥
पुण्यो गंधः पृथिव्यां च तेजश्चास्मि विभावसौ ।
जीवनं सर्वभूतेषु तपश्चास्मि तपस्विषु ॥
बीजं मां सर्वभूतानां विद्धि पार्थ सनातनम् ।
बुद्धिर्बुद्धिमतामस्मि तेजस्तेजस्विनामहम् ॥
बलं बलवतामस्मि कामरागविवर्जितम् ।
धर्माविरुद्धो भूतेषु कामोऽस्मि भरतर्षभ ॥

गीता ७, ८-९-१०-११.

अहं क्रतुरहं यज्ञः स्वधाहमहमौषधम् ।
मन्त्रोऽहमहमेवाज्यमहमग्निरहं हुतम् ॥
गीता ९, १६.

तपाम्यहमहं वर्षं निगृह्णाम्युत्सृजामि च ।
अमृतं चैव मृत्युश्च सदसच्चाहमर्जुन ॥
गीता ९, १९.

पिताहमस्य जगतो माता धाता पितामहः ।
वेद्यं पवित्रमोंकार ऋक्साम यजुरेव च ॥
गतिर्भर्त्ता प्रभुः साक्षी निवासः शरणं सुहृत् ।
प्रभवः प्रलयः स्थानं निधनं बीजमव्ययम् ॥
गीता ९, १७-१८.

सर्वस्य चाहं हृदि सन्निविष्टो
मत्तः स्मृतिर्ज्ञानमपोहनं च ।
वेदैश्च सर्वैरहमेव वेद्यो
वेदान्तकृद्वेदविदेव चाहम् ॥ गीता १५, १५.

'आदित्यगत जे तेज अखिल जगत्‌ने भास करे छे, ते जे चंद्रमामां तेम अग्निमां, ते तेज मारुं जाण. हुं पृथ्वीमां पेशीने भूतने ओज थकी धारण करुं छुं. अने रसात्मक सोम थइने सर्व औषधिने पोषुं छुं. हुं वैश्वानर थइने प्राणीना देहमां रहुं छुं, अने प्राणापान समायुक्त थइ चतुर्विध अन्नोपरिपाक

करुंछुं.'

'हे कौंतेय ! हुं जलमां रस छुं, शशिसूर्यनी प्रभा छुं, सर्व वेदमां प्रणवछुं. आकाशमां शब्द, नरमां पौरुष छुं. वळी पृथ्वीमां पुण्यगंध छुं, ने विभावसुनुं तेज छुं, सर्व भूतनुं जीवन छुं, ने तपस्विओनुं तप छुं. हे पार्थ ! मने सर्व भूतनुं सनातन बीज जाण ; बुद्धिमान्‌नी बुद्धि छुं, तेजस्विनुं तेज छुं. बळवाननुं कामराग विवर्जित बळ छुं, हे भरतर्षभ ! भूतमात्रमां धर्माविरुद्ध काम छुं.'

हुं क्रतु छुं, हुं यज्ञ छुं, स्वधाछुं, औषध छुं, मंत्र छुं, घृत छुं, अग्नि छुं, ने हुं हुत छुं.'

'हुं तपुं छुं, ने हुं वर्षनो ग्रहण अने उत्सर्ग करुंछुं, ने हे अर्जुन ! अमृत तेम मृत्यु, सत् तथा असत् हुं छुं.'

'आ जगत्‌नो तो हुं पिता, माता, धाता, पितामह छुं, हुं पवित्र वेद्य छुं, ओंकार छुं, ऋक्‌सामयजु छुं, गति छुं, भर्त्ता प्रभु, साक्षी, निवास, शरण, मित्र, प्रभव, प्रलय, स्थान, निधान, ने नित्य बीज, छुं.'

'वळी हुं सर्वना हृदयमां निविष्ट छुं, स्मृति, ज्ञान, अपोहन बधुं माराथीज थाय छे, सर्व वेद थकी जे पवित्र वेद्य ते हुं ज छुं, वेदान्तकृत् अने वेदविद् पण हुं ज छुं.'

गीतामां दशमा अध्यायमां भगवान्‌ना विश्वरुपनो परि-

चय आपीने अगीआरमा अध्यायमां ते विश्वरुपनुं वर्णन कर्युं छे. भाषांतर करतां ए वर्णननी सुंदरतानुं रक्षण थइ शकतुं नथी. ध्यानमग्न थइ फरी फरीने आवृत्ति करवाथी तेनो कांइक अंश हृदयंगम करी शकाय छे. वेदोमां अने उपनिषदोमां पण भगवान्‌ना विराटस्वरुपनुं वर्णन छे, पण गीताना जेटलुं मर्मस्पर्शी नथी—असरकारक नथी.

ऋग्वेदनां पुरुषसूक्तनुं वर्णन नीचे प्रमाणे छेः—

सहस्र शीर्षापुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात्।
स भूमिं विश्वतो वृत्वाऽत्यतिष्ठद्दशांगुलम् ॥
पुरुष एवेदंसर्वं यद्भूतम् यच्चभव्यम्।
उतामृतत्वस्येशानो यदन्नेनाधिरोहति ॥ इत्यादि.

'विराट पुरुषने हजार माथां, हजार आंखो अने हजार पग छे; ते आखा जगत्‌ने व्यापी रह्यो छे अने जगत्‌नी बहार पण छे. भूत, भविष्य, वर्तमान–जे कांइ छे, आ बधुं ज ते पुरुष छे; मर्त्य अने अमर्त्य ए बधांनो ज ते अधीश्वर छे.'

ए विराट पुरुषने ज लक्ष्य करीने श्वेताश्वतर उपनिषद् कहे छे के–

सर्वतः पाणिपादं तत्सर्वतोक्षिशिरोमुखम्।
सर्वतः श्रुतिमल्लोके सर्वमावृत्यातिष्ठति ॥ (श्वेत ३, १६).

'ते सर्वभणी हाथो तथा पगोवाळुं, सर्व भणी नेत्रो मस्त-

को तथा मुखोवाळुं, ने सर्वभणी श्रोत्रवाळुं छे, ते प्राणीना शरीरमां सर्वने ढांकीने रहे छे.

विश्वतश्चक्षुरुत विश्वतोमुखो विश्वतोबाहुरुत विश्वतस्पात्।
सं बाहुभ्यां धमति संपतत्रै र्द्यावाभूमि जनयन्देव एकः ॥
(श्वेताश्वतर ३, ३).

'सर्वभणी नेत्रवाळा, तथा सर्वभणी मुखवाळा, सर्वभणी हाथवाळा, ने सर्वभणी पगवाळा (जे परमात्मा मनुष्योने) हाथोनी (साथे) जोडे छे, (अने पक्षिओने) पांखोनी (साथे जो॰ छे, ते) एक परमात्मा स्वर्ग तथा पृथ्विने रचता हवा.'

आ संबंधमां मुंडकोपनिषद्‌मां लख्युं छे के, स्वर्ग जेनुं मस्तक छे, चंद्र सूर्य जेनी आंखो छे, दिशाओ जेना कान छे, वेद जेनी वाणी छे, वायु जेना प्राण छे, आखुं जगत्-विश्व जेनुं हृदय छे, जेना पगथी पृथ्वी थइ छे, आ सर्व भूतोना अंतरात्मा छे.

अग्निर्मूर्धा चक्षुषी चंद्रसूर्यौ दिशः श्रोत्रे वाग्विवृताश्च वेदाः ।
वायुःप्राणो हृदयंविश्वमस्य पद्‌भ्यां पृथिवीह्येषसर्वभूतान्तरात्मा
(मुंडक; २, १, ४).

आ विराटरुपनेज विश्वरुप कहेवाय. कारणके, जगत् एज जगदीश्वरनी मूर्ति छे. अहींयां जगत्‌नो अर्थ आपणी आ नानकडी पृथ्वी जेटलो ज समजवानो नथी. भूर्,भूवः, स्वः, जनः, तपः,

महः, सत्य—आ सात उपरना लोक अने पाताल, रसातल,म-हातल, तलातल, सूतल, वितल अने अतल—आ सात नीचेना लोक जगत् शब्दमां समाय छे. आ आखुं जगत् अने जगत्ना पदार्थो—स्थावर जंगम, छोड अने वेलाओ, कीडा-पतंगीयां-साप, पशु-पक्षी-मनुष्य, देव-दानव, यक्ष, राक्षस, किन्नर, गंधर्व, सिद्ध, साध्य, जे कांइ पदार्थो छे, हता अथवा हशे, ते बधानी आ विराट समष्टि-आ प्रकान्ड संयोग-तेज भगवाननुं विश्वरुप छे. आ विश्वरुप अगीआरमा अध्यायमां विस्तारथी वर्णववामां आव्युं छे. तेना आरंभ मात्रनो ज अहीं उतारो करीशुं.

पश्यामि देवांस्तव देव देहे, सर्वांस्तथा भूतविशेषसंघान् ।
ब्रह्माणमीशं कमलासनस्थ मृषींश्च सर्वानुरगांश्च दिव्यान् ॥
अनेकबाहूदरवक्त्रनेत्रं पश्यामि त्वां सर्वतोऽनंतरूपम् ।
नान्तं न मध्यं न पुनस्तवादिं पश्यामि विश्वेश्वर विश्वरूपम् ॥
गीता ११ । १५-१६.

अर्जुन कहे छे;—हे देव! तमारा देहने विषे सर्व देवने तथा भूत विशेष संघने जोउं छुं, ईश एवा कमलासनस्थ ब्रह्माने, सर्व ऋषिओने तेम सर्व दिव्य सर्पोने जोउं छुं. तमने अनेक बाहु, अनेक उदर, अनेक वदन, अनेक नेत्र, एम सर्वतः अनंत रुप जोउं छुं, तमारो अंत के मध्य के आदि हे विश्वरुप!

विश्वेश्वर! हुं जोइ शकतो नथी.

गीतामां बीजुं पण कह्युं छे के—

त्वमादिदेवः पुरुषः पुराणस्त्वमस्य विश्वस्यपरं निधानम् ।
वेत्तासिवेद्यं च परं च धाम त्वया ततं विश्वमनन्तरूप ॥
वायुर्यमोऽग्निर्वरुणः शशांकः प्रजापतिस्त्वं प्रपितामहश्च ।
नमो नमोस्तेऽतु सहस्रकृत्वः पुनश्चभूयोपि नमो नमस्ते ॥
नमः पुरस्तादथ पृष्ठस्ते नमोऽस्तु ते सर्वत एव सर्व ।
अनन्त वीर्यामितविक्रमस्त्वं सर्वं समाप्नोषि ततोऽसि सर्व ॥

गीता ११ । ३८ थी ४०.

'तमे आदि देव पुराण पुरुष छो, तमे आ विश्वना पर निधान छो, वेत्ता अने वेद्य तमे छो, ने हे अनंतरुप! विश्व तमथी वितत छे. तमे वायु, यम, अग्नि, वरुण, शशांक, प्रजापति, प्रपितामह छो; तमने सहस्रवार नमो नमः ने पुनः वारंवार तमने नमोनमः. तमने अग्रे नमस्कार, पृष्ठे नमस्कार, ने हे सर्व! तमने सर्वतः नमस्कार, तमे अनन्त वीर्य अने अमित विक्रम वाळा होइ सर्वमां छो, माटेज सर्व छो!

भगवान्‌ना विश्वरुपनो अनुभव करवामां सहायता करवाना हेतुथी गीताना दशमा अध्यायमां भगवाने विभूतियोगनुं वर्णन कर्युं छे, तेनो केटलोक परिचय पाछला भागमां अपाइ गयो छे. ते उपदेशनो सार आ छे के, ज्यां ज्यां शक्ति, महि-

मा अथवा ऐश्वर्य जणाय, त्यां त्यां भगवान्नोज प्रभाव जाणवो—समजवो. तेथी गीता कहे छे के—

यद्यद्विभूतिमत्सत्त्वं श्रीमदूर्जितमेव वा ।
तत्तदेवावगच्छ त्वं मम तेजोंऽशसंभवम् ॥

गीता १०।४१.

'जे जे विभूतिमान् के श्रीमान् के महत्तम सत्त्व छे, ते ते माराज तेजनो अंश छे, एम जाण.'

एकज ब्रह्म वस्तु सगुण अने निर्गुण छे, ए वात गीताए स्पष्ट रीत कहेली छे.

सर्वेन्द्रियगुणाभासं सर्वसंगविवर्जितम् ।
असक्तं सर्वभृच्चैव निर्गुणं गुणभोक्तृच ॥

गीता १३ । १४.

'सर्वेन्द्रिय गुणाभास छे, सर्वेन्द्रिय रहित छे, असक्त छे, सर्व भृत् छे, वळी निर्गुण अने गुण भोक्ता छे.'

बीजे ठेकाणे गीता भगवान्नेज परब्रह्म अने अपर ब्रह्म (पुरुष) रुपे वर्णवे छे;

परं ब्रह्म परं धाम पवित्रं परमं भवान् ।
पुरुषं शाश्वतंदिव्यमादिदेवमजं विभुम् ॥

गीता १० । १२.

अर्जुन श्री कृष्णने कहे छे.—' आप परब्रह्म, श्रेष्ठधाम,

परम पवित्र, शाश्वत पुरुष, अज, विभु, दिव्य, आदि देव छो.'

गीताए बीजुं पण कह्युं छे–

सर्वतः पाणिपादस्तत् सर्वतोऽक्षिशिरोमुखम् ।
सर्वतः श्रुतिमल्लोके सर्वमावृत्यतिष्ठति ॥

गीता १३ । १३

'ते सर्वत्र पाणिपादवाळुं छे, सर्वत्र अक्षिशिरो मुखवाळुं छे, सर्वत्र श्रुतिमान् छे, लोकमां सर्वने आवरीने ते रहेलुं छे.

शास्त्रमां बीजे ठेकाणे पण आ तत्त्वनो उपदेश मळी आवे छे. बधांनो उपदेश एकज छे के सगुण निर्गुण एकज वस्तु छे, मात्र भावनो ज तफावत छे.

सगुणो निर्गुणो विष्णु र्ज्ञानगम्यो ह्यसौ स्मृतः ।

'भगवान् सगुण अने निर्गुण छे, ते ज्ञानगम्य संभळाएलो छे. विष्णु पुराण कहे छे के–

सदक्षरं ब्रह्म य ईश्वरः पुमान् गुणोर्मिसृष्टिस्थितिकालसंलयः।

विष्णुपुराण १,१,२.

'जे प्रकृतिना क्षोभथी थती सृष्टि, स्थिति प्रलयना हेतु भूत ईश्वर, तेज सत् अक्षर ब्रह्म छे.'

भागवतमां जुदी जदी रीते आ उपदेश आप्यो छे.'

वदन्ति तत् तत्त्वविदस्तत्त्वं यज्ज्ञानमद्वयं ।
ब्रह्मेति परमात्मेति भगवान् इति शब्द्यते ॥ १,२,११.

'ते अद्वितीय चित् वस्तुने तत्त्वज्ञानीओए तत्त्व एवुं नाम आपेलुं छे, तेज ब्रह्म, तेज परमात्मा, तेज भगवान् (महेश्वर).'

सर्वं त्वमेव सगुणो विगुणश्च भूमन् ।
नान्यत् त्वदस्त्यपि मनोवचसा निरुक्तम् ॥

भागवत, ७,९,४८.

'हे भूमा ! तमे ज सगुण छो, तमे ज निर्गुण छो ; तमे ज सर्व छो. मन बुद्धि समजी शके एवुं तमारा सिवाय बीजुं कांइ पण नथी.'

लीलया वापि युंजरेन निर्गुणस्य गुणाः क्रियाः ।

भागवत, ३,७.२.

निर्गुण ब्रह्ममां लीलावडे गुण अने क्रियानो संयोग थाय छे.'

आ सगुण अने निर्गुण भावनुं खरुं स्वरुप न समजी शकवाथी अने सगुण निर्गुण ब्रह्मनो अभेद न करी शकवाथी अनेक वेदान्तीओए नास्तिकताने प्रश्रय दीधो छे. तेओ कहे छे के, सगुण ब्रह्म अथवा महेश्वर ए मायानुं विजृम्भण छे, खोटो पदार्थ छे, मात्र उपाधिनो उपघात छे. जेम झाडोनी समष्टि ते वन, पाणीनी समष्टि ते जळाशय, तेम तेओना मत प्रमाणे कारण शरीरनुं समष्टि-उपहित चैतन्य एज ईश्वर.

इदमज्ञानं समष्टिव्यष्ट्यभिप्रायेण एकमनेकम् इति च व्यवह्रियते । तथाहि यथा वृक्षाणां समष्ट्यभिप्रायेण वनम् इत्येकत्व व्यपदेशः यथा वा जलानाम् समष्ट्यभिप्रायेण जलाशय इति, तथा नानात्वेन प्रतिभासमानजीवगताज्ञानानां समष्ट्यभिप्रायेण तदेकत्वव्यपदेशः । "अजामेकामित्यादि" श्रुतेः । इयं समष्टिरुत्कृष्टोपाधितया विशुद्धसत्वप्रधाना, एतदुपहितं चैतन्यं सर्वज्ञत्व सर्वेश्वरत्व-सर्वनियन्तृत्व-गुणकं, सदसद्व्यक्तमन्तर्यामि, जगत् कारणमीश्वर इति च व्यपादिश्यते । वेदान्तसार, १३.

मतलबके—'वृक्षनी समष्टि वन ; तेथी वृक्षव्यष्टि, वनसमष्टि. जळनी समष्टि जळाशय ; तेथी जळव्यष्टि, जळाशय समष्टि. वृक्ष घणां, वन एक ; जळ घणां, जळाशय एक, ए प्रमाणे जीव-गत व्यष्टि अज्ञान अनेक, पण तेमनी समष्टि एक, आ समष्टि-अज्ञान-उपहित चैतन्यनेज ईश्वर कहेवामां आवे छे, तेने ज सर्वज्ञ, सर्वेश्वर, सर्व नियन्ता, सदसत्, अव्यक्त, अन्तर्यामी, अने जगत् कारण कहेवामां आवे छे.'

आ वन अने जळाशयना द्रष्टांतथी घणे ठेकाणे नास्तिकता उत्पन्न थइ छे, वृक्ष करतां स्वतंत्र वननी, पाणी करतां स्वतंत्र जळाशयनी हयातीज क्यांथी होय? पश्चिमनी विद्यानी मददथी आपणने आ विषयमां एक घणुं सारुं द्रष्टांत मळ्युं छे, तेथी समजाय छे के, समष्टि ए मात्र एक काल्पनिक पदार्थ नथी.

समष्टिनुं स्वतंत्र अने स्वाधीन अस्तित्व छे. ते द्रष्टांत कोषाणुनुं (Cell) द्रष्टांत छे, कोषाणुनी समष्टिमांथी जीवनो देह रचाय छे. प्रत्येक कोषाणुनुं स्वतंत्र अने स्वाधीन अस्तित्व छे. जेम कोषाणुनी समष्टिथी एक एक शरीर रचायुं छे, तेम जीवगत व्यष्टिथी-आ समष्टि उपाधि निर्मित थइ छे. परब्रह्म ज्यारे आ उपाधि अंगीकार करे, ज्यारे ते मायावडे उपहित थाय, त्यारे ते सगुणब्रह्म अथवा महेश्वर थाय. जेम स्थूळ देहनो प्रत्येक कोषाणु पोतानुं स्वातंत्र्य अने व्यक्तित्व अक्षुण्ण राखीने, समष्टिनी पुष्टि अने परिणतिने माटे नियोजीत थाय छे तेम प्रत्येक जीवनी उपाधि पोतानुं व्यक्तित्व अने स्वातंत्र्य अक्षुण्ण राखीने सर्व प्रकारे भगवाननी विराट समष्टि उपाधिने माटे उपयोगी थाय. व्यष्टि-समष्टिनी वास्तविक वात आ ज छे. सगुण अने निर्गुण भावनी जुदाइ उपर आ वात प्रतिष्ठित छे. आ पाया उपर नास्तिकतानी प्रतिष्ठा करवी ए योग्य नथी.

भगवान् विश्वनी अंदर अने बहार रहेलो छे—ए वात पण गीता स्पष्ट रीते कहे छे,—

बहिरन्तश्च भूतानामचरं चरमेव च । गीता १३,१५.

ते चराचर भूतोनी बहार अने अंदर रहेलो छे.'

बीजे स्थळे भगवाने कह्युं छे के—

अथवा बहुनैतेन किंज्ञातेन तवार्जुन ।
विष्टभ्याहमिदं कृत्स्नमेकांशेन स्थितो जगत् ॥गीता १०,४०.
' अथवा एवुं बहु जाणवाथी शो लाभ छे ? हे अर्जुन ! हुं एकज अंशथी आखा जगत्ने धारण करीने रहेलो छुं.

पुरुष सूक्तमां कहेलुं छे के, ब्रह्मना एक पादमां जगत् छे अने बीजा त्रण पाद जगत्थी उंचे छे, ए आना जेवी ज वात छे. जेम सूर्यना एक भागमां वादळानुं आवरण, बाकीनो भाग वादळां वगरनो प्रकाशमय छे, तेमज भगवान्नुं पण समजवुं. तेनो मात्र एक अंश--तेज योगमायाथी ढंकाएलो छे ;--- ते अंशमां ते व्यक्त, ते तेनो अपर भाव. पण तेनो बीजो (विश्वातिग) अंश हमेशां अव्यक्त ज होय छे, ते तेनो पर भाव. तेथी भगवान् कहे छे के—

नाहं प्रकाशः सर्वस्य योगमायासमावृतः । गीता ७,२५.
' योगमायाथी आवृत थएलो हुं सर्वने प्रकाश नथी.'
अव्यक्तं व्यक्तिमापन्नं मन्यन्ते मामबुद्धयः ।
परं भावमजानन्तो ममाव्ययमनुत्तमम् ॥ गीता ॥ ७,२४.
परं भावमजानन्तो मम भूतमहेश्वरम् ।
त्रिभिर्गुणमयैर्भावैरेभिः सर्वमिदं जगत् ।
मोहितं नाभिजानाति, मामेभ्यः परमव्ययम् ॥
गीता ७ । १३.

'बुद्धि विनाना लोक, मारो अव्यय अने अनुत्तम परम भाव न जाणी, मने अव्यक्तने व्यक्त थएलो माने छे.'

'मारो भूत महेश्वर परम भाव (मूढो) जाणता नथी.'

'आ आखुं जगत् आ त्रिगुणमय भावथी मोह पामेलुं होइ अने ए सर्वथी पर अज अने अव्यय जाणतुं नथी.'

आ पर भावने लक्षमां राखीने गीता बीजुं पण कहे छे के—

परस्तस्मात्तु भावोऽन्योऽव्यक्तोऽव्यक्त सनातनः
यः स सर्वेषु भुतेषु नश्यत्सुन विनश्यति ॥
अव्यक्तोऽक्षर इत्युक्तस्तमाहुः परमां गतिम् ।
यं प्राप्य न निवर्तंते तद्धाम परमं मम् ॥
पुरुषः स परः पार्थ भक्त्या लभ्यस्त्वनन्यया ।
यस्यान्तःस्थानिभूतानि येन सर्वमिदं ततम् ॥

गीता ८ । २० थी २२.

'एनाथी पण पर, अने अव्यक्तथी पण अव्यक्त, एवो अन्य सनातन भाव छे. जे नाश पामतां सर्व भूतमां नाश पामतो नथी, अव्यक्त छे ते अक्षर कहेवाय छे एनेज परम गति कहे छे, जेने पामीने पाछुं अवातुं नथी तेज ए मारुं परम धाम छे. ए पर पुरुष हे पार्थ! अनन्य भक्तिथी लभ्य छे, जेने विषे सर्व भूत रहेलां छे, जेणे आ सर्व विस्तार्युं छे.'

गीताना मत प्रमाणे भगवान्ज छेवटनुं तत्त्व छे, एम आपणे

जोइ गया छीए. जड वर्गनुं उपादान कारण जे प्रकृति, ते तेनी अपरा प्रकृति छे, अने जीवरुपी पुरुष ए तेनी परा प्रकृति छे.

भूमिरापोऽनलोवायुः खं मनोबुद्धिरेव च ।
अहंकार इतीयं मे भिन्ना प्रकृतिरष्टधा ॥
अपरेयमितस्त्वन्यां प्रकृतिं विद्धि मे पराम् ।
जीवभूतां महाबाहो ययेदं धार्यते जगत् ॥
एतद्योनीनि भूतानि सर्वाणीत्युपधारय ।
अहं कृत्स्नस्य जगतः प्रभवः प्रलयस्तथा ॥
मत्तः परतरं नान्यत् किंचिदस्ति धनंजय ।
मयि सर्वमिदं प्रोतं सूत्रे मणिगणा इव ॥

गीता ७ । ४ थी ७.

भूमिं, आप, अनल, वायु, ख, मन, अने बुद्धि पण तथा अहंकार ए आटली मारी भिन्न प्रकृति अष्टधा छे. आतो अपर, (पण) एथी बीजी मारी पर प्रकृति समज, जे जीवरुप छे, ने जेनाथी हे महाबाहो! आ जगत् धारण थाय छे. सर्व भूत एमांथीज उत्पन्न थाय छे, एम ग्रहण कर. हुं आखा जगत्नो प्रभव तेम प्रलय छुं. हे धनंजय! माराथी पर अन्य कांइ नथी, आ बधुं मारामां परोवायलुं छे, सूत्रमां मणिगणनी पेठे.

गीतामां बीजे ठेकाणे आ अपराने परा प्रकृतिने क्षर पुरुष अने अक्षर पुरुष कहीने उल्लेख कर्यो छे. क्षर पुरुष =प्रधान अने अक्षर पुरुष=क्षेत्रज्ञ; भगवान् क्षरने ओळंगी गयेला अने अक्षरथी उत्तम—परमात्मा पुरुषोत्तम छे.

> द्वाविमौ पुरुषौ लोके क्षरश्चाक्षर एव च।
> क्षरः सर्वाणि भूतानि कूटस्थोऽक्षर उच्यते ॥
> उत्तमः पुरुषस्त्वन्यः परमात्मेत्युदाहृतः।
> यो लोकत्रयमाविश्य बिभर्त्यव्यय ईश्वरः ॥
> यस्मात्क्षरमतीतोऽह मक्षरादपि चोत्तमः।
> अतोऽस्मि लोके वेदे च प्रथितः पुरुषोत्तमः ॥
>
> गीता १५,१६-१८.

'लोकमां आ बे पुरुष छे; क्षर अने अक्षर; क्षर ते सर्व भूत अने कूटस्थ ते अक्षर कहेवाय छे. जे उत्तम पुरुष ते तो अन्य छे, परमात्मा कहेवाय छे. त्रिलोकमां पेशी ते ज अव्यय ईश्वर भरण करे छे. हुं क्षरथी अतीत छुं, तेम अक्षरथी पण उत्तम छुं, माटे ज मने लोकमां तेम वेदमां पुरुषोत्तम कहेलो छे.'

आवी ज मतलबनुं श्वेताश्वतर उपनिषद्मां लख्युं छे,—

> संयुक्तमेतत् क्षरमक्षरं च व्यक्ताव्यक्तं भरते विश्वमीशः।
>
> श्वेताश्वतर १,८.

क्षरं प्रधानममृताक्षरं हरः क्षरात्मनौ ईशते देव एकः ॥

श्वेताश्वतर १,१०.

'आ व्यक्त अने अव्यक्त, क्षर अने अक्षर (प्रकृति अने पुरुष)–(नित्य संबंधमां) जोडायेलां छे. ईश्वर ते विश्व पालन करे.'

'क्षर प्रधान (प्रकृति), अक्षर अमृत (पुरुष); एक अद्वितीय ईश्वर हर ते आ प्रकृतिने पुरुषनो अधीश्वर छे.'

आथी गीताना मत प्रमाणे जड अने चेतननो समन्वय भगवान्मां छे. प्रधान अने क्षेत्रज्ञ, पुरुष अने प्रकृति--भगवान्‌ना विभाव, विधा अथवा प्रकार मात्र छे.

वळी गीता कहे छे के, भगवान् धर्म संस्थापन करवा माटे युगेयुगे अवतार ले छे.

अजोऽपि सन्नव्ययात्मा भुतानामीश्वरोऽपि सन् ।
प्रकृतिं स्वामधिष्ठाय संभवाम्यात्ममायया ॥
यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत ।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम् ॥
परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम् ।
धर्मसंस्थापनार्थाय संभवामि युगे युगे ॥

गीता ४,६-८.

'अज छतां, अव्ययात्मा छतां, भूतमात्रनो ईश्वर छतां,

मारी प्रकृतिनो अधिष्ठाता थइ मारी मायाथी ज हुं संभवुं छुं. ज्यारे ज्यारे धर्मनी ग्लानि थाय छे, ने अधर्मनुं अभ्युत्थान थाय छे, त्यारे त्यारे हुं पोताने सर्जुंछुं; साधुओना परित्राणार्थे, दुष्टोना विनाशार्थे–धर्म संस्थापनार्थे, हुं युगे युगे संभवुं छुं.'

उपनिषदोमां ठेकाणे ठेकाणे अवतारवादनो प्रसंग छे खरो, पण वेदान्तदर्शनमां एनो कशो पण आभास के इंगित नथी. पण गीता आपणने शीखवे छे के ईश्वर एटलातो करुणामय छे के तेणे जीवोनां हितने माटे–जगत्‌नी उन्नतिने माटे एकवार नहि, पण अनेकवार अवतार लीधा छे..

भगवान् कहे छे–

बहूनि मे व्यतीतानि जन्मानि तव चार्जुन। गीता ४,५

'हे अर्जुन! तारा ने मारा घणा जन्म थइ गया.'

अवतार रुपे तेनो जन्म अने अवतार रुपी तेनुं कर्म–ए बंने अप्राकृत, असाधारण छे.

जन्म कर्म च मे दिव्यम्। गीता ४,९.

कहेवानी जरुर नथी के, आ बधा जन्मकर्मथी तेना अव्यय निर्लिप्त भावमां कशो फेरफार थतो नथी. कारणके--

न मां कर्माणि लिम्पन्ति न मे कर्मफले स्पृहा।

गीता ४, १४.

'मने कर्म लेपतां नथी, मारे कर्मफलनी स्पृहा नथी.'
तेथी भगवान् कहे छे---

न च मां तानि कर्माणि निबध्नान्ति धनंजय ।
उदासीनवदासीनम् असक्तं तेषु कर्मसु ॥

गीता ९, ९.

'ते ते कर्म, हे धनंजय ! ते ते कर्ममां असक्त रही उदासीननी पेठे करे तेमने बंधन करतां नथी.'

गीताए बीजुं पण कह्युं छे के, भगवान् पक्षपात विनाना छे, तेनी पासे प्रिय अप्रियनो भेद नथी.

समोऽहं सर्वभूतेषु न मे द्वेष्योऽस्ति न प्रियः ।

गीता ९, २९.

'हुं सर्व भूतप्रति समानछुं, मारे द्वेष्य नथी के प्रिय नथी.'
वेदान्त सूत्रमां पण एवी ज मतलबनी वात छे–

वैषम्य नैर्घृण्ये न सापेक्षत्वात् । (ब्रह्मसूत्र २,१,३४).

ब्रह्मतत्त्वना विचारमां बादरायणनो सर्व विषयमां गीतानी साथे एक मत छे, एम समजाय छे. गीताना मत प्रमाणे भगवान् ज परमतत्त्व, तेज परात्पर, तेनाथी पर बीजुं कांइ नथी, एम आपणे जोयुं छे.

मत्तः परतरं नान्यत् किंचिदस्ति धनंजय । गीता ७,७.

'हे धनंजय ! माराथी पर अन्य कांइ नथी.'

बादरायणे आ वात सिद्ध करवा अनेक युक्तिओ करी छे, ते कहे छे के, कोइ शंका करे::के, ब्रह्मथी पण उत्कृष्ट तत्त्व बीजुं कांइक छे, कारणके श्रुति कोइ कोइ ठेकाणे ब्रह्मने सेतु कहीने वर्णवे छे. सेतु शब्दथी एम समजी शकाय के, तेने आ धारे तेनाथी कांइक उत्कृष्ट तत्त्व पासे पहोंची शकाय.

परमतः सेतुन्मानसं बन्धभेदव्यपदेशेभ्यः ।

(ब्रह्मसूत्र, ३,२, ३१).

परम् अतो ब्रह्मणः अन्यत् तत्त्वं भवितुमर्हति । कुतः सेतु व्यपदेशात ।—शंकरभाष्य.

आ पूर्व पक्ष छे. एना समाधानमां बादरायण दरेक शंकानुं खंडन करीने कहे छे ;–

सामान्यात् तु । बुद्ध्यर्थः पादवत् ।स्थानविशेषात् प्रकाशादिवत् । उपपत्तेश्च ।– ब्रह्मसूत्र ३,२,३२-३५.

तेथी ब्रह्मज छेवटनुं तत्त्व छे, तेना सिवाय बीजुं कांइ ज नथी, ए सिद्धांत छे.

तथान्यप्रतिषेधात् । ब्रह्मसूत्र, ३,२,३६.

‘ ब्रह्म सिवाय बीजी वस्तुनो निषेध करवामां आव्यो छे.’ आवीज मतलबनुं श्वेताश्वतर उपनिषद् कहे छे.

यस्मात् परं नापरम् अस्ति किंचित् । श्वेत ३,९.

‘ तेनाथी पर, अपर कांइज नथी.’

ब्रह्म सगुण के निर्गुण ? सविशेष के निर्विशेष ? आ प्रश्नना जवाबमां बादरायण कहे छे,—

न स्थानतोऽपि परस्य उभयलिंगं सर्वत्र हि ।

(ब्रह्मसूत्र ३,२,११).

'सर्वत्र ब्रह्मना उभयलिंग (निर्गुण अने सगुण भाव)नो उपदेश करवामां आव्यो छे.' उपाधिनो संबंध थया छतां पण तेना निर्गुण भावनो विलोप थतो नथी.

अहीं शंका थशे के, ज्यारे शास्त्रमां सगुण अने निर्गुण भावना भेदनो उपदेश करवामां आव्यो छे, त्यारे ब्रह्म उभयलिंग होइ शके नहि. एना समाधानमां बादरायण कहे छे के—

प्रत्येकमतद्वचनात् । अपिच एवम् एके ।

(ब्रह्मसूत्र ३,२,१२-१३).

'बधे ठेकाणे भेद कह्यो नथी. कोइ काइ वेद शाखामां आ रीते (अभिन्न रुपे निर्देश) छेः—

एतद्वै सत्यकाम परं च अपरं च ब्रह्म ।

'हे सत्यकाम ! ब्रह्मना पर अने अपर—ए बे विभावप्रकार-छे.'

शंका थशे के, ब्रह्म जो सगुण (सोपाधिक) होय, तो ते साकार (ससीम) थइ जशे.

एनां समाधानमां बादरायण कहे छे–

अरुपवद् एव हि तत्प्रधानत्वात् ।

[ब्रह्मसूत्र ३,२,१४].

रुपाद्याकाररहितमेव ब्रह्म अवधारयितव्यं न रुपादिमत् ।
** निराकारमेव ब्रह्म अवधारयितव्यम्—शांकरभाष्य.

'ब्रह्मने निराकार मानवुं एज योग्य छे. उपाधिनो संबंध थया छतां पण ते साकार (ससीम) थतुं नथी; कारण के तेनी उपाधि स्वेच्छाकृत छे, जो कहो के तो सगुणलिंग श्रुतिनी शी गति थशे? तो तेना जवाबमां बादरायण कहे छे के;—

प्रकाशवत् चावैयर्थ्यम् । ब्रह्मसूत्र, ३ । २ । १५.

सगुणभाव उपाधिकृत छे. जेम सूर्यनो प्रकाश, वारी वगेरे उपाधिने लीधे सीधो, वांको थाय छे, तेम ब्रह्म पण जुदो जुदो भाव धारण करे छे. ब्रह्म ज्यारे प्रकाश स्वरुप अने चिन्मछे, त्यारे ते साकार शीरीते होइ शके ?

आह च तन्मात्रम् । ब्रह्मसूत्र, ३ । २ । १६.

आ तत्त्व स्पष्ट करवा माटे पाणीमां सूर्यनां प्रतिबिंबनुं द्रष्टांत आपवामां आवे छे.

अतएव चोपमा सूर्यकादिवत् । ब्रह्मसूत्र, ३ । २ । १८.

जो कहो के द्रष्टांत उपपन्न (युक्तियुक्त) नथी, तो तेना जवाबमां बादरायण कहे छे,—

वृद्धिह्रासभाक्त्वमन्तर्भावादुभयसामंजस्यादेवम् ॥

दर्शनाच्च ॥ ब्रह्मसूत्र, ३,२,२०-२१.

उपाधिथी ब्रह्मना अंतर्भाव हेतु गौणभावमां तेनो वृद्धिह्रास उपपन्न छे. जेम पाणीमां प्रतिबिंबित सूर्यनो पाणी हालवाथी कंप अने पाणी स्थीर थवाथी निष्पन्द भाव थाय छे. आ प्रमाणे सगुण अने निर्गुण बंने लिंगनुं सामंजस्य थाय छे,' श्रुतिए पण आमज देखाडयुं छे ;

अनेन जीवेनात्मनानुप्रविश्य ।

'प्रत्यगात्मरुपे तेणे (उपाधिथी) प्रवेश कर्यो.'

पछी आवतां सूत्रमां बादरायण कहे छे के, ब्रह्म सोपाधिक थयाछतां पण वास्तविक रीते ससीम नथी ; एज श्रुतिने समजाववानुं छे.

प्रकृतैतावत्त्वं हि प्रतिषेधति । ततो ब्रवीति च भूयः ।

ब्रह्मसूत्र, ३,२,२२.

श्रुतिमां आम क्यां कह्युं छे ?

पुरुष सूक्तमां कह्युं छे ;

अतो ज्यायांश्च पुरुषः ॥

पादोऽस्य विश्वाभूतानि त्रिपादस्यामृतं दिवि ।

'परमपुरुष प्रपंचथी अतीत छे ; तेना एक पादमां बधां भूत छे, अने बीजा त्रण पाद प्रपंचातीत (निर्गुण) छे.' वास्तविक रीते एकज ब्रह्म सगुण अने निर्गुण छे. सगुण अने

निर्गुण भिन्न तत्त्व नथी. आवी ज मतलबनुं बादरायणे कह्युं छे—

प्रकाशादिवच्च अवैशेष्यम् । प्रकाशश्च कर्मण्यभ्यासात् ।
(ब्रह्मसूत्र ३,२,२५).

एनुं द्रष्टांत-प्रकाश छे. वारीमां पडेलो सूर्यनो प्रकाश शुं आकाशमां व्यापी रहेला प्रकाश करतां जुदो छे? बंनेमां मात्र उपाधिकृत भेद छे.

उपाधिनो तिरोभाव-नाश-थतां, तेना स्वेच्छाकृत ससीम भावनो पण तिरोभाव थइ ते असीम, अनंत रुपे विराजे. तेथी बादरायणे कह्युं छे–

अतोऽनन्तेन तथाहि लिंगम् । ब्रह्मसूत्र ३,२,२५.

श्रुतिए पण आवी रीते ज ब्रह्मनां लिंग (लक्षण)नो उपदेश आप्यो छे ; आथी सगुण अने निर्गुण जुदां तत्त्व नथी.

बादरायणे बीजां द्रष्टांतथी पण आ तत्त्व स्पष्ट कर्युं छे ; जेम सर्प कुंडल—सर्प अने तेनी कुंडली.

उभयव्यपदेशात्तु अहिकुंडलवत् । ब्रह्मसूत्र ३,२,३७.

अत उभयव्यपदेशदर्शनात् अहिकुंडलवत् अत्र तत्त्वंभवितुमर्हति । यथाहि-अहिरित्यभेदः कुंडलाभोगप्रांशुत्वादीनि इति भेद एवमिहापीति—शंकर भाष्य.

‘ ज्यारे भेद अने अभेद बंनेनो उपदेश करवामां आव्यो

छे, त्यारे अहि-कुंडलवत्-ए प्रमाणे तत्त्व समजवुं जोइए. साप रुपे जोतां अभेद अने कुंडलनो विस्तार, उच्चता तरफ लक्ष करतां भेद ; ब्रह्मनुं पण आमज समजवुं.'

बादरायण आ सगुण निर्गुणनो भेदाभेद स्पष्ट करवा माटे वळी वधारे कहे छे के :–

प्रकाशाश्रयवद्वा तेजस्त्वात् । पूर्ववद्वा ॥

(ब्रह्मसूत्र ३,२,२८-२९).

ब्रह्म ज्यारे तेज स्वरुप छे, त्यारे ज्योतिनां द्रष्टांतथी पण सगुण-निर्गुणनो उपाधिगत भेद अने स्वरुप गत अभेद प्रतिपन्न-सिद्ध-थाय छे.

जेम सफेद प्रकाश रंगेला काचना संयोगथी रातो अने पीळो रंग धारण करे छे, अथवा प्रकाश जेम आधारना भेदथी वांको के सीधो आकार धारण करे छे, तेमज उपाधिना योगथी ब्रह्मनुं पण थाय छे. वास्तविक रीते ते असीम छे, पण सोपाधिक थतां ते ससीम होय एम लागे छे. स्वरुपथी ते निर्गुण होवा छतां उपाधिना योगथी सगुण जेवुं लागे छे. वास्तविक रीते ते निर्गुण छतां पण ते अवस्थामां ते सक्रिय होय एम लागे छे. पण शास्त्रे आ सगुग अने निर्गुणना वस्तुगत भेदनो निषेध कर्यो छे.

प्रतिषधाच्च । ब्रह्मसूत्र ३,२,३०.

आ निर्गुण ब्रह्मनुं वर्णन करतां बादरायणे नीचे प्रमाणे कह्युं छेः-

अदृश्यत्वादिगुणको धर्मोक्तेः । ब्रह्मसूत्र १,२,२१.

आ ब्रह्मसूत्रमां बादरायणे अवश्ये करीने ब्रह्मना निर्गुण भावने ज वर्णव्यो छे. कारणके, ब्रह्म अदृश्य, अग्राह्य, अगोत्र, अवर्ण, अचक्षु, अश्रोत्र, अपाणि, अपाद, आ प्रसिद्ध श्रुति वाक्य अहींयां तेनुं लक्ष्य छे. बीजे ठेकाणे बादरायणे कह्युं छे के,-

तदव्यक्तम् आह हि । ब्रह्मसूत्र, ३,२,२३.

अव्यक्तम्=अनिन्द्रियाग्राह्यम् । शंकर.

आ सूत्रनुं लक्ष्य पण निर्गुण ब्रह्म छे. ' ब्रह्म अव्यक्त छे, एटले इंद्रिय, मन, बुद्धिथी अगोचर छे.'

स एष नेति नेति आत्मा अगृह्यो नहि गृह्यते।

(बृहदारण्यक, ३,९,२३).

' ते आ " नेति नेति " लक्षणवाळो आत्मा अगृह्य छे, ग्रहण करी शकातो नथी.-आ श्रुति ज अहीं लक्षमां राखवामां आवी छे. पण संराधन तरवे ते योगीने ध्यानगम्य थाय,- माटे श्रुति स्मृतिए आवो उपदेश आप्यो छे.

अपि संराधने प्रत्यक्षानुमानाभ्याम् । ब्रह्मसूत्र ३,२,२४.

आनुं लक्ष्य सगुण ब्रह्म छे.

बादरायणना मत प्रमाणे आ सगुण ब्रह्म सर्व शक्तिमान्, सर्व धर्मोपेत छे.

सर्वधर्मोपपत्तेश्च । ब्रह्मसूत्र, २,१,३७.

सर्वोपेता च तद्दर्शनात् । ब्रह्मसूत्र, २,१,३०.

सर्वोपेता सर्वशक्तियुक्ता च परा देवता (परमेश्वरः) ।

शांकर भाष्य.

'ब्रह्म सर्वज्ञ, सर्ववित् छे ; ते सत्यकाम, सत्य संकल्प छे; तेनी शक्ति जुदी जुदी अने विचित्र छे.' बादरायणे आ सूत्रमां नीचेनां श्रुतिवाक्योने लक्षमां राख्यां छे.

परास्य शक्तिर्विविधैव श्रुयते । श्वेताश्वतर, ६,८.

यः सर्वज्ञः सर्ववित् । मुंडक, १,१,९.

सत्यकामः सत्यसंकल्पः । छांदोग्य, ८,७,१.

आ सगुण ब्रह्म ज उत्पत्ति, स्थिति अने प्रलय करे छे.

जन्माद्यस्य यतः । ब्रह्मसूत्र, १,१,२.

ते मात्र जगत्नुं निमित्त कारण ज छे एम नहि, पण तेज विश्वनुं उपादान कारण पण छे.

प्रकृतिश्च । ब्रह्मसूत्र, १,४,२३.

योनिश्च गीयते । ब्रह्मसूत्र, १,४,२७.

भगवान् मात्र भूतोने ज उत्पन्न करे छे एम नहि, भूतोनां नाम-रुपनुं व्याकरण पण तेज करे छे.

संज्ञामूर्त्तिक्लृप्तिस्तु । त्रिवृत् कुर्वत उपदेशात् ।
(ब्रह्मसूत्र, २,४,२०).

ते अंतर्यामी रूपे जीवने प्रेरणा करे छे. पण तेमां तेनो पक्षपात थतो नथी. कारणके, जीवोनां कर्मो प्रमाणे ते प्रेरणा करे छे.

परात्तु तच्छ्रुतेः । ब्रह्मसूत्र, २,३,४१.

'परमेश्वरथी जीवनी प्रेरणा '--आ वाक्यने श्रुति--अनुमोदन आपे छे.'

य आत्मनि तिष्ठन् आत्मानम् अंतरो यमयति ।

'जे आत्मा (अंतःकरण)मां रहीने अंतर्यामी रूपे आत्माने नियममां राखे छे.'

कृतप्रयत्नापेक्षस्तु विहितप्रतिसिद्धावैयर्थ्यादिभ्यः ।
(ब्रह्मसूत्र २,३,४२)

' भगवान् जीवोनां कर्म प्रमाणे प्रेरणा करे छे. एम न होय तो शास्त्रना विधि-निषेध निरर्थक थइ जाय.'

गीता पण आवी मतलबनुं ज कहे छे,--

ईश्वरः सर्वभूतानां हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति ।
भ्रामयन् सर्वभूतानि यंत्रारूढानि मायया ॥
गीता १८, ६१.

'हे अर्जुन ! मायाथकी यंत्रारुढ सर्व भूतने भ्रमावतो ईश्वर

सर्व भूतना हृदयमां रहे छे.'

भगवान् कर्म प्रमाणे प्रेरणा करे छे, एनो हेतु आज छे के, --तेज फलदाता छे.

फलमतः उपपत्तेः ।

श्रुतत्वाच्च । ब्रह्मसूत्र, ३,२,३८-३९.

अतः=ईश्वरात् । शंकर.

' ईश्वरथी ज जीवने कर्म फल मळे छे--ए मत युक्ति अने श्रुतिथी सिद्ध छे.' कारण, श्रुति कहे छे के,

स वा एष महान् अज आत्मा वसुदानः ।

(बृहदारण्यक, ४,४,२४).

' ते अनादि परमात्माज कर्मफल दाता छे.'

भोक्ता अने भोग्य-प्रकृति अने पुरुष-ए भगवान्नाज विभाव-प्रकार-छे, ए वातने बादरायण पण नीचेना सूत्रमां टेको आपे छे,---

भोक्त्रापत्तेरविभागश्चेत् स्याल्लोकवत् । ब्र. सू. २,१,१३.

आना भाष्यमां शंकराचार्ये लख्युं छे के--

तस्मात् प्रसिद्धस्यास्य भोक्तृभोग्यविभागस्याभावप्रसंगादयुक्तमिदं ब्रह्मकारणतावधारणमिति चेत् कश्चित् चोदयेत् तं प्रति ब्रुयात्--स्याल्लोकवदिति । उपपद्यत एवायमस्मत्पक्षेऽपि विभागः । एवं लोके दृष्टत्वात् । तथाहि-समुद्रादुकात्मनःअन-

न्यत्वेऽपि तद्विकाराणां फेनवीचितरंगबुद्बुदादीनामितरेतर विभागइतरेतरसंश्लेषादिलक्षणश्च व्यवहार उपलभ्यते। न च समुद्रादुदकात्मनोऽनन्यत्वेऽपि तद्विकाराणां फेनतरंगादीनाम् इतरेतरभावापत्तिर्भवति। न च तेषाम् इतरेतरभावानापत्तावपि समुद्रात्मनोऽन्यत्वं भवति। एवमिहापि न च भोक्तृभोग्ययोः इतरेतरभावापत्तिः।

मतलबके ' जो कोइ शंकाकरे के, ब्रह्मने ज जो जगत्नुं कारण कहेवामां आवे तो, प्रसिद्ध आ भोक्ता अने भोग्यनो जे विभाग तेनो लोप थइ जाय. तेना समाधानमां कहे छे के, ' स्यात् लोकवत् ' आम कहेवाथी ए विभागनी कशी हानि थाय नहि. कारणके, एवुं लोकमां जोवामां आवे छे. जेम समुद्रनां फीण, विची, मोजां, परपोटा वगेरे एक बीजाथी जुदां छे, पण ते बधांज पाणीनो विकार छे, आथी जलात्मक समुद्रथी ते सभिन्न छे, अने तेमनो परस्परनो संयोग वियोग जोवामां आवे छे, तेम, ब्रह्मना संबंधमां आ भोक्ता अने भोग्यनुं पण समजवुं. फीण, मोजां वगेरे बधांज जलात्मक छे, पाणीथी अभिन्न छतां पण जेम तेमना विभाग नाश पामता नथी, फीण फीण ज रहेछे; मोजां मोजां ज रहे छे; तेम भोक्ता अने भोग्य, प्रकृति अने पुरुष, बंनेज ब्रह्मात्मक छे, ब्रह्मथी अभिन्न होवा छतां पण तेमनो परस्परनो भेद

25

नाश पामतो नथी.' आथी, ब्रह्मज एक मात्र कारण छे ; जड अने चित्, प्रकृति अने पुरुष, भोक्ता अने भोग्य,-ए बंने तेनाज विभाव अथवा विधा (aspects) छे, ब्रह्मसूत्रमां आ मतनेज टेको आपेलो छे.

(३) साधना सगुण के निर्गुण ?

आपणे जोयुं के, अद्वैत मत प्रमाणे सगुण अने निर्गुण एम बे प्रकारनी उपासना छे, अने ते बेनां फलमां तारतम्य छे. सगुण साधक उत्तरमार्गे देवयान वाटे सूर्यमंडळमां लइ जवाय छे ; पछी त्यांथी क्रमे क्रमे ब्रह्मलोकमां जइने तत्वज्ञान पामे छे ; अने महा प्रलयमां ज्यारे ब्रह्मानो दिवस पुरो थाय छे, त्यारे ब्रह्मानी साथे परब्रह्ममां विलीन थाय छे. आनुं ज नाम क्रम-मुक्ति. पण जे निर्गुण ब्रह्मनो उपासक होय तेनो देह पडे त्यारे तेनी उत्क्रान्ति थती नथी ; ते आ शरीर छोडीने-परम ज्योतिने पामीने स्वस्वरुपमां अवस्थित थाय छे. आनुं ज नाम विदेह मुक्ति. विशिष्टाद्वैत-वादीओ आ बे प्रकारनी उपासना अने तेना फळना तारतम्यने कबुल राखता नथी. तेओ कहे छे के, सगुण ब्रह्मज उपासनानो विषय छे, अने उपासनानुं फल एकज प्रकारनुं छे. आ मतभेदना संबंधमां

गीता शुं कहे छे ते जोइए.

आपणे जोइ गया छीए के, एकज ब्रह्म वस्तुना सगुण अने निर्गुण—ए बे विभाव-रुप-छे. सगुण अने निगुर्ण ए भिन्न तत्त्व नथीं मात्र भावनो ज प्रभेद छे. आथी, गीताना मत प्रमाणे निर्गुण साधना अने सगुण साधनाना फळमां तारतम्य होवुं योग्य नथी. पण निर्गुण ब्रह्म ज्यारे सर्व-विशेष-रहित छे, उपाधि विनानुं छे, अचिंत्य अने अव्यक्त छे, त्यारे निर्गुण ब्रह्मनी साधना अत्यंत कठण छे छतां फळ एकज छे ; कारण के, जे सगुण छे, तेज निर्गुण छे.

गीताना बीजा अध्यायमां स्थित—प्रज्ञनां लक्षण बतावतां निर्गुण साधनानो इसारो करेलो छे.

"प्रजहाति यदा कामान् सर्वान् पार्थ मनोगतान् ।
आत्मन्येवात्मना तुष्टः स्थितप्रज्ञस्तदोच्यते ॥
दुःखेष्वनुद्विग्नमनाः सुखेषु विगतस्पृहः ।
वीतरागभयक्रोधः स्थितधीर्मुनिरुच्यते ॥
यः सर्वत्रानभिस्नेह स्तत्तत्प्राप्य शुभाशुभम् ।
नाभिनन्दाति न द्वेष्टि तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता ॥ "

गीता २, ५५-५७.

"विहाय कामान् यः सर्वान् पुमांश्चरति निस्पृहः ।
निर्ममो निरहंकारः सशांतिमाधिगच्छाति ॥

एषा ब्राह्मी स्थितिः पार्थ ! नैनां प्राप्य विमुह्यति ।
स्थित्वाऽस्यामन्तकालेऽपि ब्रह्मनिर्वाणमृच्छति ॥ ”

गीता २,७१-७२.

‘ हे पार्थ ! ज्यारे मनमां रहेली सर्व कामनाओने ते समाधिस्थ पुरुष त्यजी दे छे, अने आत्मामां आत्मावडे ज संतुष्ट थएलो थाय छे ; त्यारे ते स्थित-प्रज्ञ कहेवाय छे.’

‘ दुःखोमां नहि उद्वेगवाळुं जेनुं मन छे एवो--दुःखोमां उद्वेग रहित मनवाळो, सुखोमांथी गएली छे इच्छा जेनी एवो, गयो छे राग, भय, क्रोध, जेनो एवो मुनि---मननशील पुरुष स्थिर बुद्धिवाळो कहेवाय छे.’

‘ जे पुरुष सर्व ठेकाणे स्नेह रहित छे, ते ते प्रिय अने अप्रिय पामीने वखाणतो नथी अने द्वेष करतो नथी तेनी बुद्धि स्थिर छे.’

‘ जे पुरुष सर्व कामनाओने त्यजीने निस्पृह, इच्छा वगरनो निर्मम-जेने मारुं मटी गयुं छे एवो, अने अहंकार वगरनो विचरे छे, ते शांति-मोक्ष सुख-ने पामे छे.’

‘ हे पार्थ ! आ ब्रह्मनिष्ठारुप स्थितिः आने पामीने पुरुष मोह पामतो नथी. आमां अंतकाले पण रहीने ब्रह्मनिर्वाण-मोक्षने पामे छे.’

गीताना पांचमा अध्यायमां पण आ निर्गुण साधनानो प्र-

संग छे.

"तद्बुद्धयस्तदात्मानस्तन्निष्ठास्तत्परायणाः ।
गच्छन्त्यपुनरावृत्तिं ज्ञाननिर्धूतकल्मषाः ॥
विद्याविनयसंपन्ने ब्राह्मणे गवि हस्तिनि ।
शुनि चैव श्वपाके च पण्डिताः समदर्शिनः ॥"

गीता ५-१७,१८.

"न प्रहृष्येत्प्रियं प्राप्य नोद्विजेत्प्राप्य चाप्रियम् ।
स्थिरबुद्धिरसंमूढो ब्रह्मविद् ब्रह्मणि स्थितः ॥
बाह्यस्पर्शेष्वसक्तात्मा विन्दत्यात्मनि यत्सुखम् ।
स ब्रह्मयोगयुक्तात्मा सुखमक्षयमश्नुते" ॥

गीता ५,२०-२१.

"योऽन्तःसुखोऽन्तरारामस्तथाऽन्तर्ज्योतिरेव यः ।
स योगी ब्रह्मनिर्वाणं ब्रह्मभूतोऽधिगच्छति ॥
लभन्ते ब्रह्मनिर्वाणमृषयः क्षीणकल्मषाः ।
छिन्नद्वैधा यतात्मानः सर्वभूतहिते रताः ॥"

गीता ५,२४-२५.

'तेमां (परब्रह्ममां)ज जेनी बुद्धि छे एवा, तेज जेनो आत्मा छे एवा, तेमांज जेनी निष्ठा छे एवा, तेनो ज जेने आश्रय छे एवा अने ज्ञानवडे जेनां पुण्य पाप धोवाइ गयां छे, एवा पुरुषो मोक्षने पामेछे. विद्या तथा नम्रतावाळा ब्राह्मणमां, गा-

यमां, अने कूतरा तथा चांडालमां पंडितो समान द्रष्टिवाळा ज होय छे.'

'जे प्रियने पामीने हर्ष पामतो नथी अने अप्रियने पामीने उद्वेग पामतो नथी ते स्थिर बुद्धिवाळो, संमोह रहित ने ब्रह्मने जाणनारो पुरुष ब्रह्ममां स्थिति करी रहेलो छे. बहारनां स्पर्श सुखोमां आसक्ति विनानो पुरुष जे सुख अंतःकरणमां मेळवे छे, ते ब्रह्मयोगमां जोडाएला चित्तवालो अनंत सुखने पामेछे.'

'जे अंतरात्मामां ज सुखवाळो, अंतरात्मामांज आरामवाळो तथा जे जंतरात्मामांज प्रकाशवाळो छे ते योगी ब्रह्म रूप थयेलो ब्रह्मरुप निर्वाणने पामे छे. जेनां पाप पुण्य कर्मों नाश पाम्यां छे, संशय जेना छेदाइ गया छे, चित्त जेनुं वश छे, ने जेओ सर्व प्राणी मात्रना भलामां प्रीतिवाळा छे, एवा ऋषिओ ब्रह्म निर्वाणने पामे छे.'

बीजे ठेकाणे गीताए सगुण साधनानो उपदेश आप्यो छे.

"भोक्तारं यज्ञतपसां सर्वलोकमहेश्वरम् ।
सुहृदं सर्वभूतानां ज्ञात्वा मां शांतिमृच्छति ॥"

गीता ५-२९.

'यज्ञ अने तपनो भोगवनार, सर्व लोकनो मोटो ईश्वर तथा सर्व भूतोना मित्ररूप मने जाणीने योगी शांतिने पामे छे.'

"येषांत्वंतगतं पापं जनानाम् पुण्यकर्मणां ।

ते द्वंद्वमोहनिर्मुक्ता भजंते मां दृढव्रताः ॥"
गीता ७-२८.

'जे पुण्य कर्म करनारा जनोनां पापनो अंत आव्यो छे, तेओ सुख दुःखरुपी द्वंद्वमोहथी मुकाएला अने द्रढ व्रतवाळा मने भजे छे.'

"अभ्यासयोगयुक्तेन चेतसा नान्यगामिना ।
परमं पुरुषं दिव्यं याति पार्थानुचिन्तयन् ॥"
गीता ८-८.

'हे पार्थ ! निरंतर चिंतवन करनारो पुरुष, अभ्यास योगथी युक्त अने बीजे न जनारा चित्तवडे परम दिव्य पुरुषने पामे छे.'

"अनन्यचेतास्सततं यो मां स्मरति नित्यशः ।
तस्याहं सुलभः पार्थ ! नित्ययुक्तस्ययोगिनः ॥"
गीता ८, १४.

'जे अनन्य चित्तवाळो मने जीवित पर्यंत निरंतर स्मरण करे छे, तेवा नित्ययुक्त योगीने हे पार्थ ! हुं सुलभ छुं.'

"महात्मानस्तु मां पार्थ ! दैवीं प्रकृतिमाश्रिताः ।
भजन्त्यनन्यमनसो ज्ञात्वा भूतादिमव्ययम् ॥"
गीता ९-१३.

'हे पार्थ ! दैवी प्रकृतिनो आश्रय करी रहेला अने अनन्य

मनवाळा महात्माओ तो मने भूतोना कारणरुप तथा अविनाशी जाणीने भजे छे.'

"मच्चित्ता मद्गतप्राणाः बोधयन्तः परस्परम् ।
कथयन्तश्च मां नित्यं तुष्यन्ति च रमन्ति च ॥
तेषां सततयुक्तानां भजतां प्रीति पूर्वकम् ।
ददामि बुद्धियोगं तं येन मामुपयान्ति ते ॥"

गीता १०-९,१०.

'मारामां मनवाळा, मारामां प्राणवाळा, परस्पर मारो बोध करता अने मने नित्य कथन करता निश्चय संतोष पामेछे, अने आनंद पामे छे. तेओ सततयुक्त अने प्रीतिपूर्वक मने भजनारने हुं ते बुद्धि योग आपुं छुं; जे वडे तेओ मने पामेछे.'

आथी, गीतामां सगुण अने निर्गुण ए बंने प्रकारनी उपासनानो प्रसंग अने उपदेश जोवामां आवे छे, अने तेमांनी गमे ते उपासनाथी पण साधक भगवान्‌ने पामे छे, ए पण स्पष्ट कहेलुं छे. हवे गीताए आ बे उपासनामांथी कइ उपासनानी वधारे प्रशंसा करी छे, ए विचारवा-जाणवा जेवुं छे. गीताना बारमा अध्यायमां जोवामां आवे छे के, अर्जुन भगवान्‌ने आवोज प्रश्न पूछे छे,–

"एवं सततयुक्ता ये भक्तास्त्वां पर्युपासते ।
ये चाप्यक्षरमव्यक्तं तेषां के योगवित्तमाः ॥"

अर्जुन बोल्यो—' ए प्रमाणे निरंतर युक्त थयेला जे भक्तो आपने निरंतर चिंतवे छे अने जे विरक्त पुरुषो अव्यक्त अक्षरनेज चिंतवे छे, तेओमां योगमां अतिशय कुशल कयाछे?'

आ प्रश्नना जवाबमां भगवाने कह्युं छे,—

"मय्यावेश्य मनो ये मां नित्ययुक्ता उपासते ।
श्रद्धया परयोपेताः ते मे युक्ततमा मताः ॥
ये त्वक्षरमनिर्देश्य मव्यक्तं पर्युपासते ।
सर्वत्रगमचिन्त्यं च कूटस्थमचलं ध्रुवम् ॥
संनियम्येन्द्रियग्रामं सर्वत्र समबुद्धयः ।
ते प्राप्नुवन्ति मामेव सर्वभूतहिते रताः ॥
क्लेशोऽधिकतरस्तेषामव्यक्तासक्तचेतसाम् ।
अव्यक्तो हि गतिर्दुःखं देहवद्भिरवाप्यते ॥ "

गीता १२, २-५.

' मनने मारामां एकाग्र करीने जेओ नित्य युक्त सात्विक श्रद्धावाळा थइने मने उपासे छे, तेओ मारायुक्त पुरुषोमां श्रेष्ट मानेला छे. वळी सर्वत्र समबुद्धिवाळा जेओ इंद्रियोना समूहनो निग्रह करीने अक्षर, अनिर्देश्य, अव्यक्त, सर्व व्यापक, अचिंत्य, कूटस्थ, अचल अने ध्रुवने उपासे छे; तेओ सर्व भूतना हितमां प्रीतिवाळा मने ज पामे छे. अव्यक्तमां आसक्तिवाळा तेओने वधारे क्लेश थाय छे, केमके अव्यक्त मा-

गनी प्राप्ति देहधारीओने दुःखे थाय छे.'

आथी, आपणे जोयुं के गीताकारना मत प्रमाणे निर्गुण उपासना करतां सगुण ब्रह्म अथवा महेश्वरनी उपासनाज वधारे प्रशस्त छे.

(४) ब्रह्मप्राप्तिनो उपाय.

—****—

आपणे जोइ गया छीए के, अद्वैत मत प्रमाणे जीव मुक्त स्वभाव वाळो छे,—पूर्वापर मुक्तज छे; कारण के, जीव अने ब्रह्म अभिन्न छे,—जीवज ब्रह्म छे; जीवने बंध छे, एम जे जणाय छे तेतो मात्र अविद्यानी कल्पना छे—भ्रम मात्र छे. ए अविद्यानो नाश करी शकाय तोज ए भ्रम मटे. जीव ए ब्रह्मथी अभिन्न छे, एवुं तत्त्वज्ञान थाय तोज अविद्यानो नाश थाय. जीव 'सोऽहम्," "अहंब्रह्मास्मि" एम जाणे-अनुभवे तोज अविद्यानुं आवरण दूर थाय, अने ते जीव ब्रह्मनी साथे एकपणुं पामीने स्वमहिमामां प्रतिष्ठित थाय. आथी अद्वैतमत प्रमाणे जीव अने ब्रह्मनां ऐक्यनुं ज्ञान एज मुक्तिनो उपाय छे. बीजी तरफ, विशिष्ठाद्वैत मत प्रमाणे अविद्या अने विद्या—कर्म अने भक्तिरुपापन्नध्यान—ए बंन्नेनो समुच्चय एज मुक्तिनुं

साधन छे. विशिष्टाद्वैतवादीओ कहे छे के, जे साधकनुं अंतःकरण ज्ञान कर्म ए बंन्ने प्रकारना योगथी संस्कृत–शुद्ध- थयुं छे, ते ऐकान्तिक अने आत्यन्तिक भक्तियोग वडे भग- वान्ने पामे छे. आ सबन्धमां गीतानो उपदेश शो छे, ते जोइए.

गीतानुं लक्ष पूर्वक मनन करतां एम जणाय छे के, गीता- नो प्रचार थयो ते वखते भारत वर्षमां मोक्ष मेळववा माटे जु- दा जुदा चार मार्ग प्रचलित हता. ए चार मार्गोनां नाम– कर्म मार्ग, ज्ञान मार्ग, ध्यान मार्ग अने भक्ति मार्ग ; प्रत्येक मार्गवाळा एमज मानता के कल्याणनो मार्ग मात्र अमारोज छे, बीजा कोइ मार्गथी कल्याण थाय तेम छेज नहि. भगवा- ने गीतानो प्रचार करीने आ बधा जुदा जुदा साधन मार्गोनो अपूर्व समन्वय करी बताव्यो छे. तेथी, जेम प्रयागमां गंगा, जमना अने सरस्वतीनो पवित्र संगम थइने पतितपावनी रुपे देशने प्लावित करी ए समुद्र तरफ वहेली छे, तेम गीतामां कर्म, ज्ञान, ध्यान अने भक्ति रुप चारे मार्ग अपूर्व समन्वये समन्वित थइ जगत्ने पवित्र करी भगवान् तरफ वहेला छे. ए समन्वयवाद गीतानो पोतानोज छे. शास्त्रमां बीजे कोइपण ठेकाणे आवा उज्वल भावथी एनो उपदेश जोवामां आवतो नथी. तेथी तेनोज विचार करीए.

गीताना तेरमा अध्यायमां भगवाने नीचे प्रमाणे कह्युं छे,--

" ध्यानेनात्मनि पश्यन्ति केचिदात्मानमात्मना।
अन्ये सांख्येन योगेन कर्मयोगेन चापरे ॥
अन्ये त्वेवमजानन्तः श्रुत्वान्येभ्य उपासते।
तेऽपि चातितरन्त्येव मृत्युं श्रुतिपरायणाः॥"

(गीता. १३ । २४-२५)

'कोइ कोइ ध्यान योगवडे आत्मामां आत्मावडे आत्मानुं दर्शन करे छे; कोइकोइ सांख्य योगवडे; बीजा कर्म योगवडे. पण बीजा आ प्रमाणे न समजवाथी बीजानी पासे सांभळीने उपासना करे; श्रुति परायण लोको तेथी पण मृत्युने ओळंगी जाय छे.'

आ श्लोकमां भगवाने कर्मवाद, ज्ञानवाद, ध्यानवाद अने भक्तिवाद ए चारे मार्ग उपर लक्ष आप्युं छे; अने कर्मवाद कर्मयोग रुप थतां, ज्ञानवाद ज्ञानयोग रुप थतां, ध्यानवाद ध्यानयोग रुप थतां अने भक्तिवाद भक्तियोग रुप थतां, ते ते वडे मोक्ष मळे छे, एम पण सूचवी दीधुं छे.

कर्मवादीओना मत प्रमाणे वेदनो कर्मकांडज उपयोगी छे, ज्ञान कांड निरुपयोगी छे, ए आपणे जोइ गया छीए.

"आम्नायस्य क्रियार्थत्वाद् आनर्थक्यम् अतदर्थानाम्।"

(मीमांसा सूत्र, १ । २ । १)

'वेदने प्रतिपादन करवानो विषय कर्मज छे. तेथी वेदमां ते सिवाय जे ज्ञान अंश जोवामां आवे छे, ते निरर्थक छे.'

कर्मवादीओ कहे छे के, जीव वेदविहित कर्मोनुं अनुष्ठान करवाथी सुखधाम स्वर्ग लोक मेळवी शके. जे सुखमां दुःखनुं मिश्रण नथी, जे सुख पाछळथी दुःखमां फेरवाइ जतुं नथी, जे सुख इच्छा मात्रथी थाय छे, ते सुखनुं धाम स्वर्ग छे. वेद कहे छे के,

" अक्षय्यं ह वै चातुर्मास्ययाजिनः सुकृतं भवति "

' चातुर्मास्य यज्ञ करनारने अक्षय पुण्यनो संचय थाय छे.'

" सर्वान् लोकान् जयति मृत्युं तरति पाप्मानं तरति ब्रह्महत्यां तरति योऽश्वमेधेन यजते." ।

'जे अश्वमेध यज्ञ करे छे, ते ते सघळा लोकोने जीते छे, मृत्युने ओळंगी जाय छे, पाप-ब्रह्महत्याने तरी जाय छे.'

" अपाम सोमं अमृता अभूम " ।

' अमे सोमपान करीने अमर थया छीए.'

तेथी कर्मवादीओ कहे छे के, संसार तरवानो, मोक्ष साधवानो मात्र एकज उपाय छे, अने ए उपाय कर्म छे. बीजी तरफ ज्ञान-वादीओ कहे छे के, कर्मवडे खरुं श्रेय मळवानो संभव नथी.

" न कर्मणा न प्रजया धनेन त्यागेनैकेनामृतत्वमानशुः " ।

' अमृतत्व मेळववानो उपाय कर्म नथी, पुत्र नथी, धन नथी, मात्र एक त्यागथीज अमर थवाय छे.'

तेओ बीजुं पण कहे छे के, कर्मनुं फळ चिरस्थायी नथी, कर्मथी जे भोग मळे छे, ते क्षणभंगुर होय छे. भोगोवडे कर्मनो क्षय थवाथी कर्मीनुं अवश्य पतन थाय छे. तेथी यज्ञादि कर्मने मोक्ष मेळववानो उपाय मानवो ए मात्र मोह छे.

" प्लवा ह्येते अदृढा यज्ञरूपाः "।

' यज्ञ रुप कर्म संसार तरवानी नाश पामे तेवी होडी छे.'

वळी तेओ कहे छे के, कर्मनुं फल मात्र बंधननुं ज कारण छे. कर्म करे एटले जीवने कर्म पाशथी बंधावुं ज पडे.

" कर्मणा बध्यते जन्तुः "।

" जीव कर्मवडे बंधाय छे.'

कारणके पाप हो के पुण्य हो, पण जीवने करेलां कर्मनां फल भोगववां पडे ; अने कर्म भोगववा माटे तेने फरी फरीने संसारमां आववुं पडे. तेथी ज कर्मो आटला दोषवाळां छे, ते कर्मोनो संन्यास करवो एज योग्य छे. तेथी सर्व कर्मनो त्याग एज ज्ञानवादीओना मत प्रमाणे उत्कृष्ट मार्ग छे. कर्मोवडे कदि पण मोक्ष मळे ज नहि ; ज्ञानवादी कहे छे के, मोक्ष पामवानो मात्र एकज उपाय छे, अने ते उपाय ज्ञान छे.

" ज्ञानान्मुक्तिः "।

' ज्ञानथी मुक्ति थाय छे.'

शानुं ज्ञान ? ज्ञानवादीओ कहे छे के, प्रकृति-पुरुषनुं विवेक ज्ञान ; सांख्यमां कहेलां पचीश तत्त्वोनुं ज्ञान.

"पंचविंशतितत्त्वज्ञो यत्र तत्राश्रमे वसेत् ।
जटी मुण्डी शिखी वापि मुच्यते नात्र संशयः ॥"

' पचीश तत्त्वनां ज्ञानवाळो माणस गमे ते आश्रममां रहे, ते ब्रह्मचारी होय अथवा गृहस्थ होय अथवा वानप्रस्थ होय, पण ते मुकाइ जाय छे-मोक्ष पामे छे-एमां जराये शक नथी.'

तेथी आ ज्ञानने सांख्यज्ञान कहे छे ; अने ज्ञानवादने सांख्य के सांख्ययोग कहे छे.

गीताना मत प्रमाणे कर्म संन्यास करतां कर्मनुं अनुष्ठान श्रेयस्कर छे, ए आपणे जोइ गया छीए. वळी गीता कहे छे के, जोके कर्म साधारण रीते बंधनना कारण रुप छे खरुं, पण कर्म एवी रीते करी शकाय के, कर्म कराये खरुं अने कर्मथी बंधने न थाय. कर्मनी आवी कुशळतानेज कर्म योग कहे छे.

" योगः कर्मसु कौशलम् "।

वळी आपणे जोइ गया छीए के, एक पछी एक त्रण पगथीयां चडतां गीताए उपदेशेलो आ कर्म योग साधी शकाय. ते त्रण पगथीयां अनुक्रमे नीचे प्रमाणे :—

(क) फळनी इच्छा छोडवी ;

"कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन"॥

गीता २,४७.

'तने कर्ममांज अधिकार छे, कोइ दिवस फलमां न हो.'

(ख) कर्त्तापणानुं अभिमान छोडवुं;

"प्रकृत्यैव च कर्माणि क्रियमाणानि सर्वशः।
यः पश्यति तथात्मानं अकर्त्तारं स पश्यति॥"

(गीता १३,२९).

'प्रकृतिथी ज बधां कामो थाय छे, अने आत्मा अकर्त्ता छे, एम जे जुए छे, ते ज यथार्थ-दर्शी छे.'

(ग) ईश्वरार्पण ; बधां कर्म ईश्वरने अर्पण करवां; यज्ञार्थे कर्मानुष्ठान.

"यत्करोषि यदश्नासि यज्जुहोषि ददासियत्।
यत्तपस्यसि कौन्तेय! तत्कुरुष्वमदर्पणम्॥
शुभाशुभफलैरेवं मोक्ष्यसे कर्मबन्धनैः।
संन्यास योगयुक्तात्मा विमुक्तो मामुपैष्यसि॥"

गीता ९-२७,२८.

'तुं जे करे छे, जेनो उपभोग करे छे, जे होमे छे, जे दान करे छे, ने जे तप करे छे ते हे कौंतेय! मने अर्पण कर. ए प्रकारे शुभाशुभ फलवाळा कर्मबंधनथी तुं मुकाइ जइश. संन्यास योगथी समाहित चित्तवाळो तुं:विमुक्त सतो मने पामीश.'

आ प्रमाणे ज्यारे कर्मफळनी इच्छा छोडीने, अहंकार विना कर्म कराय अने ईश्वरने अर्पण करवामां आवे, त्यारे ते कर्म कर्मयोगमां परिणत थाय ; भगवाने आ कर्मयोगने लक्षमां राखीने कहेलुं छे के, सांख्यज्ञानथी जे फल मळे, तेज फल कर्मयोगथी मळे.

"सांख्ययोगौ पृथग्बालाः प्रवदन्ति न पण्डिताः ।
एकमप्यास्थितः सम्यगुभयोर्विन्दते फलम् ॥
यत्सांख्यैः प्राप्यतेस्थानं तद्योगैरपि गम्यते ।
एकं सांख्यं च योगं च यः पश्यति स पश्यति ॥

गीता ५-४,५.

' विचार विनाना पुरुषो सांख्यने अने योगने जूदा गणे छे, पंडितो नथी गणता. एकने पण सारी रीते आचरनारो पुरुष बंनेनां फळो मेळवे:छे. जे स्थान सांख्य-ज्ञान-संन्यासवाळाओथी पमाय छे. ते कर्मयोगीओथी पण पमाय छे ; माटे जे सांख्यने अने योगने एक जुए छे,तेज जुए छे.'

आना भाष्यमां शंकराचार्ये लख्युं छे के :—

' उभयोर्विन्दतेफलम् उभयोस्तदेवहि निःश्रेयसं फलम् । अतो न फले विरोधोऽस्ति । * * सांख्यैः ज्ञाननिष्ठैःसन्यासिभिः प्राप्यते स्थानम् मोक्षाख्यं ।

मतलबके कर्मयोग अने ज्ञानयोग बंन्नेनुं एक ज फळ छे,--

निःश्रेयस अथवा मोक्ष, आथी फल संबंधे बंनेमां कशो विरोध नथी. * * ज्ञाननिष्ठ संन्यासीओ जे मोक्षरुप स्थान पामे छे, ते ज स्थान कर्मयोगीओ पण पामे छे.

श्रीधर स्वामीए पण पोतानी टीकामां आवुं ज लख्युं छे. तेथी, गीताना मत प्रमाणे ज्ञानयोग अने कर्मयोग बंने वडे मोक्ष मळेछे. ज्ञानथी मोक्ष थाय कर्मथी न थाय, अथवा कर्मथी मोक्ष थाय ज्ञानथी न थाय,-आ बेमांना एके मतने गीताए अनुमोदन आप्युं नथी.

तेनुं कारण ए छे के, गीताए अनुमोदेला कर्म मार्गे जवुंज होय तो साधकने मात्र कर्मी थवाथी चाले नहि, तेने ज्ञानी अने भक्त पण थवुं जोइए. कारणके, ज्ञानी न थाय तो कर्मी कर्तृत्वाभिमाननो परित्याग शी रीते करी शके ? अने भक्त न थाय तो वधांज कर्म भगवान्ने शी रीते अर्पण करे ? एवो कर्मयोग मुक्तिनुं पगथीउं छे, एवो उपदेश भगवाने स्पष्ट भाषामां आप्यो छे.

"कर्मजं बुद्धियुक्ताहि फलं त्यक्त्वा मनीषिणः।
जन्मबन्धविनिर्मुक्ताः पदं गच्छन्त्यनामयम् ॥"

गीता २-५१.

"सर्वकर्माण्यपि सदा कुर्वाणो मद्व्यपाश्रयः।
मत्प्रसादादवाप्नोति शाश्वतं पदमव्ययम्॥" गीता १८,५६.

'कारणके (खरेखर) कर्मथी उत्पन्न थतां फलनो त्याग करीने समान बुद्धिवाळा पुरुषो जन्मरुप बंधथी मुक्त थइने उपद्रवथी रहित मोक्षरुप पदने पामे छे.'

'हमेशां बधां कर्मो करतो छतां पण मत्परायण व्यक्ति मारा प्रसादथी अव्यय नित्य पद पामे छे.'

गीताए बीजे ठेकाणे कह्युं छे के,–

"दैवी संपद् विमोक्षाय। गीता १६,५.

'जे दैवी संपद् छे तेज मोक्षनो हेतु छे.'

आ दैवी संपद् कइ कइ ?

गीताए दैवी संपद् नीचे प्रमाणे गणावी छे :–

"अभयं सत्त्वसंशुद्धिर्ज्ञानयोगव्यवस्थितिः।
दानं-दमश्चयज्ञश्च स्वाध्यायस्तप आर्जवम्।
अहिंसा सत्यमक्रोधस्त्यागः शांतिरपैशुनम्।
दयाभूते ष्वलोलुप्त्वं मार्दवं ह्रीरचापलम्॥
तेजः क्षमा धृतिः शौचमद्रोहो नातिमानिता।
भवन्ति संपदं दैवीमभिजातस्य भारत॥"

गीता १६, १-३.

अर्थात् निर्भयता, प्रसन्नता, ज्ञाननिष्ठा, दान, संयम, यज्ञ, स्वाधाय, तपस्या, सरलता, अहिंसा, सत्य, अक्रोध, त्याग, शांति, अपैशुन, सर्व भूतोमां दया, निर्लोभता, मृदुता, लज्जा,

अचपलता, तेज, क्षमा, धैर्य, पवित्रता, अद्रोह अने अनभिमान–दैवी संपद्वाळा पुरुषना आ बधा गुणो छे.' आथी गीताना मत प्रमाणे मुमुक्षु-साधके मोक्ष मार्गे जवा माटे कयां कयां साधननो संग्रह करवो जोइए ते समजी शकाय छे. साधक ज्यारे अभय वगेरे उपरना गुणोनो अधिकारी थाय, त्यारे ज तेने मुक्ति मंदिरमां प्रवेश करवानो अधिकार मळे. गीतामां जुदी जुदी जग्याए जुदी जुदी रीते आ बधां मोक्षोपयोगी साधनोनो उपदेश आप्यो छे. बीजा अध्यायमां स्थितप्रज्ञनां लक्षणमां आ गुणो वर्णव्या छे. वळी चौदमा अध्यायमां गुणातीतनुं वर्णन करतां पण आ बधां विशिष्ठ साधनोनो उल्लेख जोवामां आवे छे.

"प्रकाशं च प्रवृत्तिंच मोहमेव च पांडव ।
नद्वेष्टि संप्रवृत्तानि न निवृत्तानि कांक्षति ॥
उदासीनवदासीनो गुणैर्यो न विचाल्यते ।
गुणावर्तन्त इत्येवं योऽवतिष्ठति नेंगते ॥
समदुःखसुखः स्वस्थः समलोष्ठाश्मकांचनः ।
तुल्यप्रियाप्रियो धीरस्तुल्यनिंदात्मसंस्तुतिः ॥
मानापमानयोस्तुल्य स्तुल्योमित्रारिपक्षयोः ।
सर्वारंभपरित्यागी गुणातीतः स उच्यते ॥
मां च योऽव्यभिचारेण भक्तियोगेन सेवते ।

स गुणान् समतीत्यैतान् ब्रह्मभूयाय कल्पते ॥

गीता १४, २२-२६.

'हे पांडव! ज्यारे (सत्व गुणरूपी) प्रकाश, (रजोगुणरूपी) प्रवृत्ति अने (तमो गुणरूपी) मोह प्राप्त होय त्यारे तेने जे पुरुष धिक्कारतो नथी अथवा प्राप्त न होय त्यारे तेनी इच्छा करतो नथी ; जे उदासीननी पेठे रहीने गुणोने लीधे चलायमान थतो नथी, अने गुणो ज कार्य करे छे, एम समजीने जे स्थिर अने अचळ रहे छे ; जेने सुख दुःख समान छे, जेने पोतानो ज आश्रय छे, जेने माटी, पथ्थर अने सोनुं समान छे, जेने प्रिय अने अप्रिय सरखां छे, जे द्रढ छे, जेने पोतानी निंदा अने स्तुति समान छे ; जे मान अने अपमानमां समान छे, जे मित्र अने शत्रु प्रत्ये समान छे, जे सर्व कार्यना आरंभनो त्याग करे छे ते गुणोने तरी गयेलो कहेवाय छे.

वळी गीतामां कह्युं छे के,—

"इहैव तैर्जितस्सर्गो येषां साम्ये स्थितं मनः ।
निर्दोषं हि समं ब्रह्म तस्माद् ब्रह्मणि ते स्थिताः ॥
न प्रहृष्येत् प्रियं प्राप्य नोद्विजेत् प्राप्यचाप्रियम् ।
स्थिरबुद्धिरसंमूढो ब्रह्मविद् ब्रह्मणिस्थितः ॥

गीता ५, १९-२०.

' जेओनुं मन समानपणामां रह्युं छे तेओए अहींआं ज सं-

सार जीत्यो छे, केमके ब्रह्म निर्दोष अने सम छे, तेथी तेओ ब्रह्ममां रह्या छे. जे प्रियने पामीने हर्ष पामतो नथी अने अप्रियने पामीने उद्वेग पामतो नथी ते स्थिर बुद्धिवाळो, संमोह रहित ने ब्रह्मने जाणनारो पुरुष ब्रह्ममां स्थिति करी रहेलो छे.'

बीजे स्थळे पण गीतामां कह्युं छे के,—

"यतेन्द्रियमनोबुद्धिः मुनिर्मोक्षपरायणः ।
विगतेच्छाभयक्रोधो यः सदा मुक्त एव सः ॥"

गीता ५, २८.

विहाय कामान् यः सर्वान् पुमांश्चरति निस्पृहः ।
निर्ममो निरहंकारः स शांतिमधिगच्छति ॥गीता २,७१.
वीतरागभयक्रोधा मन्मया मामुपाश्रिताः ।
बहवो ज्ञानतपसा पूता मद्भावमागताः॥ गीता ४,१०
श्रद्धावान् लभते ज्ञानं तत्परः संयतेन्द्रियः ।
ज्ञानं लब्ध्वा परां शांतिमचिरेणाधिगच्छाति ॥"

गीता ४, ३९.

'जेणे इंद्रिय मन तथा बुद्धिने जीत्यां छे ; इच्छा, भय तथा क्रोध जेनां जतां रह्यां छे, तथा मोक्ष एज जेने पामवानी वस्तु छे एवो जे मुनि ते सदा मुक्तज छे.

जे पुरुष सर्व कामनाओने त्यजीने निःस्पृह-इच्छा वगरनो,

निर्मम-जेने मारुं मटी गयुं छे तेवो, अने अहंकार वगरनो विचरे छे, ते शांति-मोक्ष सुख-ने पामे छे.

राग, भय अने क्रोध जेना जता रह्या छे एवा, हुंरुप थएला अभेददर्शी, मने आश्रय करी रहेला अने ज्ञानरुपी तपवडे पवित्र थएला घणा पुरुषो मारा भावने पामेला छे.

श्रद्धाळु, गुरुसेवामां तत्पर अने इंद्रिय निग्रहवाळो पुरुष ज्ञान पामे छे. ज्ञान पामीने पछी तरतज कैवल्य-मोक्ष पामे छे.

आथी सिद्धि मेळववी होय तो साधके आ बधां साधनवाळा थवानी जरुर छे, एवो गीतानो मत छे.

आपणे ए पण जोयुं छे के, साधारण ज्ञानमार्ग अने गीताए अनुमोदेलो ज्ञानयोग ए एक वस्तु नथी. कारणके, ज्ञानवादीओ जेने कैवल्य पामवानो उपाय कहे छे, ते चित् अने जडना विवेकनुं ज्ञान-सत् अने असत् वस्तुनुं विचारलब्धज्ञान छे. गीताने जे ज्ञान अभिप्रेत छे, ते तत्त्वज्ञान छे,—जेने पराविद्या कहे छे अने जेनाथी परम पुरुषने पामी शकायछे ते छे. गीता कहे छे के जे ज्ञानवडे जीव, प्राणी मात्रने पहेलां पोतानामां अने छेल्ले ईश्वरमां जुए, तेने ज ज्ञान कहेवुं.

"येन भूतान्यशेषेण द्रक्ष्यस्यात्मन्यथो मयि॥" गीता ४,३५.

जे आवो ज्ञानी होय, जे भूतमात्रमां भगवान्ने प्रत्यक्ष करे तेने ज सर्वत्र साम्य ज्ञान अथवा समता बुद्धि स्थिर थाय.

भगवान् आवा साम्यज्ञानीनी प्रशंसा करी कहे छे के,–

"ज्ञानविज्ञानतृप्तात्मा कूटस्थो विजितेन्द्रियः ।
युक्त इत्युच्यते योगी समलोष्ठाष्मकांचनः ॥
सुहृन्मित्रार्युदासीनमध्यस्थद्वेष्यबन्धुषु ।
साधुष्वापि च पापेषु समबुद्धिर्विशिष्यते॥"गीता६,८-९.
आत्मौपम्येन सर्वत्र समं पश्यतियोऽर्जुन ।
सुखं वा यदि वा दुःखं स योगी परमोमतः॥"गीता ६,३२
विद्याविनयसंपन्ने ब्राह्मणे गवि हस्तिनि ।
शुनि चैव श्वपाके च पण्डिताः समदर्शिनः ॥गीता५,१८

ज्ञान अने विज्ञानथी तृप्त थएला आत्मावाळो, अविकारी, अत्यंत जीतेंद्रिय अने जेने माटीनुं ढेफुं पथ्थर अने सोनुं सरखां छे, एवो योगी योगारुढ छे, एम कहेवाय छे. सुहृत्, मित्र शत्रु, उदासी, मध्यस्थ, द्वेष्य, बंधुओ, साधुओ अने पापीओमां पण जे समबुद्धिवाळो छे ते श्रेष्ट छे.'

'हे अर्जुन ! जे सर्वभूतोमां पोताना द्रष्टांतवडे सुखने अथवा दुःखने समान जुए छे, ते योगी (ने सर्व योगीयोमां) श्रेष्ट मानेलो छे.'

'विद्या तथा नम्रतावाळा ब्राह्मणमां, गायमां, हाथीमां अने कूतरा तथा चांडालमां पंडितो समान दृष्टिवाळा ज होय छे.'

आ तत्त्वज्ञानथी ज्ञानयोगी केवीरीते मोक्ष पामे, तेनो पण

गीताए घणो उपदेश आप्यो छे.

"तद्बुद्धयस्तदात्मानस्तन्निष्ठास्तत्परायणाः ।
गच्छन्त्यपुनरावृत्तिं ज्ञाननिर्धूतकल्मषाः ॥" गीता ५,१७.

"वीतरागभयक्रोधा मन्मया मामुपश्रिताः ।
बहवो ज्ञानतपसा पूतामद्भावमागताः ॥" गीता ४,१०.

"इहैव तैर्जितः सर्गो येषां साम्ये स्थितं मनः ।
निर्दोषं हि समं ब्रह्म तस्माद् ब्रह्मणि ते स्थिताः ॥
न प्रहृष्येत् प्रियं प्राप्य नोद्विजेत्प्राप्य चाप्रियम् ।
स्थिरबुद्धिरसंमूढो ब्रह्मविद् ब्रह्मणि स्थितं ॥ "
गीता ५, १९-२०.

'ते ब्रह्ममांज जेनी बुद्धि छे एवा, तेज जेनो आत्मा छे एवा, तेमां ज जेनी निष्ठा छे एवा, तेनो ज जेने आश्रय छे एवा अने ज्ञानवडे जेनां पुण्य पाप धोवाइ गयां छे एवा पुरुषो मोक्षने पामे छे.'

'राग, भय अने क्रोध जेना जता रह्या छे एवा हुंरूप थएला अभेददर्शी, मने आश्रय करी रहेला अने ज्ञानरूपी तपवडे पवित्र थएला घणा पुरुषो मारा भावने पामेला छे.'

'जेओनुं मन समानपणामां रह्युं छे तेओए अहींआं ज संसार जीत्यो छे, केमके ब्रह्म निर्दोष अने सम छे; तेथी जेओ ब्रह्ममां रह्या छे, जे प्रियने पामीने हर्ष पामतो नथी अने अ-

प्रियने पामीने उद्वेग पामतो नथी ते स्थिर बुद्धिवाळो, संमोह रहित ने ब्रह्मने जाणनारो पुरुष ब्रह्ममां स्थिति करी रहेलोछे.'

आवा ज्ञान-योगीनी अवस्था भगवाने नीचेना श्लोकमां वर्णवी छे.

"निर्मानमोहा जितसंगदोषा
अध्यात्मनित्या विनिवृत्तकामाः।
द्वंद्वैर्विमुक्ताः सुखदुःखसंज्ञै
र्गच्छन्त्यमूढाः पदमव्ययं तत् ॥" गीता १५,५.

'जेओ मान मोह विनाना छे, जेमणे संग दोष जीत्यो छे, जेओ आत्मज्ञान निष्ठ छे, जेमनी इच्छाओ निवृत्त थइ छे, सुखदुःख रुपी जोडकांओथी जेओ मुक्त छे, तेओ ते अव्ययपदने पामे छे.'

वळी गीता कहे छे के,-

"यदा भूतपृथग्भावमेकस्थमनुपश्यति।
तत एव च विस्तारं ब्रह्म संपद्यते तदा॥"गीता १३,३०

'ज्यारे साधक भूतोना पृथक् भावने एकस्थ (ब्रह्ममां रहेल) जुए छे अने तेमांथी ज भूतोना विस्तारने जाणे छे, त्यारे ते ब्रह्म थाय छे.'

वळी गीता कहे छे के,-

"बहूनां जन्मनामन्ते ज्ञानवान्मां प्रपद्यते।

वासुदेवस्सर्वमिति स महात्मा सुदुर्लभः॥"गीता ७,१९
'बहु जन्मोने अंते ज्ञानी-पुरुष, 'वासुदेव सर्व छे' एम जाणीने मने भजे छे—शरण थाय छे, ते महात्मा अत्यंत दुर्लभ छे.'

जे भगवान्‌ने सर्वत्र प्रत्यक्ष करे छे, जे भगवान्‌मांथी ज जगत् उत्पन्न थयुं जुए छे, तेज खरो ज्ञानयोगी छे.

आवा ज्ञानीने भगवद्‌भक्त थवुं ज जोइए; कारणके, जे निरंतर भगवान्‌ने सर्वत्र प्रत्यक्ष करे छे, ते तेना उपर प्रेम कर्या सिवाय शी रीते रही शके? तेथी गीताना मत प्रमाणे ज्ञान अने भक्ति अति निकटना संबंधथी जोडाएलां छे.

पछीना वखतमां भक्तिवादीओए भावप्रधान अंध नग्न भक्तिना पक्षपाती थइने ज्ञान अने भक्तिमां चिरविच्छेद स्थापन कर्यो जणाय छे, अने ज्ञानगंधहीन भक्तिने ज श्रेष्ठ भक्ति कहेली छे. वैष्णव ग्रंथमां उत्तम भक्तिनुं लक्षण नीचे प्रमाणे बतावेलुं जोवामां आवे छे.

"अन्याभिलाषिताशून्यं ज्ञानकर्माद्यसंवृतम् ।
आनुकूल्येनकृष्णानुभजनं भक्तिरुत्तमा ॥"

अन्य-कामना-शून्य, ज्ञानकर्मो वगेरेथी असंवृत, अनुकूल भावथी श्री कृष्णनुं भजन, एज उत्तम भक्ति.

तेथी व्रजगोपीनी भक्तिने ज उत्तमोत्तम गणवामां आवी छे-

आदर्शरूप गणी छे.

"व्रजगोपिकादिवत् ।" नारदसूत्र.

'केवी रीते भगवान्नुं भजन करवुं ? जेवी रीते व्रजगोपीओए कर्युं छे तेवी रीते.'

"गोप्यः कामाद् ।" भागवत ७,१,२९.

'कामथी गोपीओ श्रीकृष्णने पामी.'

पण गीताना मत प्रमाणे तो ज्ञानी ज भगवाननो श्रेष्ठ भक्त छे, एम जणाय छे.

"चतुर्विधा भजन्तेमां जनासुकृतिनोऽर्जुन ।
आर्त्तो जिज्ञासुरर्थार्थी ज्ञानी च भरतर्षभ ॥
तेषां ज्ञानी नित्ययुक्तः एकभक्तिर्विशिष्यते ।
प्रियो हि ज्ञानिनोऽत्यर्थं अहं स च मम प्रियः ।
उदारास्सर्व एवैते ज्ञानी त्वात्मैव मे मतम् ।
आस्थितस्स हि युक्तात्मा मामेवानुत्तमां गतिम् ॥"

गीता ७, १६-१८.

'हे भरतवंशमां श्रेष्ठ अर्जुन ! चार प्रकारनां सुकृत करनारा जनो मने भजे छे, पीडावाळो, जाणवाने इच्छतो, भोगसाधनोने इच्छतो अने ज्ञानी. तेओमां नित्य समाहित चित्तवाळो अने एक भक्तिवाळो ज्ञानी उत्कृष्ट छे, केमके हुं ज्ञानीने अत्यंत प्रिय छुं अने ते मने प्रिय छे. ए सर्व उत्तमज छे, पण ज्ञा-

नीतो मारो आत्मा ज छे एम मारो मत छे ; केमके ते समाहित चित्तवाळो हुं ज सर्वोत्तम गतिने आश्रये रहेलो छे.'

गीताना बारमा अध्यायमां भगवद्भक्तनां जे लक्षणो गणाव्यां छे, ते उपरथी भाव-प्रधान भक्ति ए गीतानुं लक्ष्य नथी एम समजाय छे.

"अद्वेष्टा सर्वभूतानां मैत्रः करुण एव च ।
निर्ममो निरहंकारः समदुःखसुखः क्षमी ॥
संतुष्टः सततं योगी यतात्मा द्रढनिश्चयः ।
मय्यर्पितमनोबुद्धिर्यो मद्भक्तस्स मे प्रियः ॥
यस्मान्नोद्विजते लोको लोकान्नोद्विजते च यः ।
हर्षामषभयोद्वेगै र्मुक्तो यस्स च मे प्रियः ॥
अनपेक्षः शुचिर्दक्षं उदासीनो गतव्यथः ।
सर्वारंभपरित्यागी यो मद्भक्तस्स मे प्रियः ॥
यो न हृष्यति न द्वेष्टि न शोचति न कांक्षति ।
शुभाशुभपरित्यागी भक्तिमान्यस्स मे प्रियः ॥
समश्शत्रौ च मित्रे च तथा मानापमानयोः ।
शीतोष्णसुखदुःखेषु समस्संगविवर्जितः ॥
तुल्यनिंदास्तुतिर्मौनी सन्तुष्टो येन केनाचित् ।
अनिकेतः स्थिरमति र्भक्तिमान्मे प्रियोनरः ॥

गीता १२, १३-१९.

'सर्व भूतोमां द्वेष नहि करनारो, मैत्री वाळो ज, करुणा-वाळो, ममता रहित, अहंकार रहित, सुखदुःख जेने समान छे एवो अने क्षमावाळो (मने प्रिय छे). निरंतर संतोषी, समाहितचित्तवाळो, शरीर अने इंद्रियोने नियममां राखनारो, द्रढ निश्चयवाळो ने मारामां अर्पण करेलां मनबुद्धिवाळो जे मारो भक्त छे, ते मने प्रिय छे. जेनाथी कोइ प्राणी उद्वेग पामतो नथी अने जे कोइ प्राणीथी उद्वेग पामतो नथी, तथा जे हर्ष, अदेखाइ, भय अने उद्वेगथी मुक्त छे, ते मने प्रिय छे. निस्पृह, पवित्र, डाह्यो, उदासीन, पीडारहित अने सर्व आरंभनो परित्याग करनार जे मारो भक्त छे, ते मने प्रिय छे. जे नथी हर्ष पामतो, नथी द्वेष करतो, नथी शोक करतो, नथी इच्छा करतो, अने शुभ अशुभनो परित्याग करनारो जे भक्तिमान् छे, ते मने प्रिय छे. अने शत्रुमां तथा मित्रमां समान छे तथा मानमां अने अपमानमां अने टाढ, तडको, सुख अने दुखमां समान छे ने संगथी अत्यंत रहित छे. निंदा अने स्तुति जेने तुल्य छे एवो, मौनवाळो, जे ते वडे संतोषी, घर विनानो, स्थिर बुद्धिवाळो एवो भक्तिमान् पुरुष छे, ते मने प्रिय छे.'

ज्ञान ए भक्तिथी जुदुं नथी, ए समजाववा माटे गीतामां बीजे ठेकाणे ज्ञाननां लक्षणनो निर्देश करतां कह्युं छे के,

"मयि चानन्ययोगेन भक्तिरव्यभिचारिणी॥" गीता १३,१०

'अनन्ययोगमां अव्यभिचारी भक्ति एज ज्ञान.'

ध्यानवादीओना मत प्रमाणे चित्तवृत्ति निरोध एज मात्र कैवल्य पामवानो उपाय छे, ए आपणे जोइ गया छीए. चित्तवृत्तिना निरोधने माटे तेमणे जुदा जुदा अनेक उपायो बताव्या छे-अभ्यासवैराग्य, ईश्वरप्रणिधान, प्राणायाम, अभिमतध्यान वगेरे. अने योगसिद्धिना फलमां द्रष्टाना स्वरुपमां अवस्थिति थाय,–पुरुष केवल (स्वतंत्र) थइ निर्मल स्वज्योतिमां प्रतिष्ठित थाय,=एम कहेलुं छे. तेथी तेमना मत प्रमाणे योग एटले जीव ब्रह्मनो संयोग नहि,–पुरुष प्रकृतिनो वियोग.

"पुंप्रकृत्योर्वियोगोऽपि योग इत्युदितो यया ॥"

गीताए मननो संयम करीने चित्त ईश्वरमां जोडवानो फरी फरीने वारंवार उपदेश कर्यो छे, ए आपणे जोइ गया छीए.

"मनःसंयम्य मच्चित्तो युक्त आसीत मत्परः।" गीता ६,१४

वळी गीतामां कह्युं छे के, योगथी जे शांति मेळवी शकाय, ते भगवान्मां स्थिति थवानुं फळ छे.

"शांतिं निर्वाणपरमां मत्संस्थामधिगच्छाति।" गीता ६,१५

आथी ईश्वरमां चित्तने जोडी देवुं तेनुं नामज योग, एवो गीतानो मत छे. गीताना मत प्रमाणे ईश्वरने छोडी देवाथी योग थवानो संभवज नथी. जे श्रद्धायुक्त थइ भगवान्मां

चित्त संयुक्त करीने तेनुं भजन करे, ते ज गीताना मत प्रमाणे श्रेष्ठ योगी छे.

"योगिनामपि सर्वेषां मद्गतेनान्तरात्मना ।
श्रद्धावान् भजते योमां स मे युक्ततमो मतः ॥ "

गीता ६,४७.

वळी गीता कहे छे के,—

"यो मां पश्यति सर्वत्र सर्वं च मयि पश्यति ।
तस्याहं न प्रणश्यामि स च मे न प्रणश्यति ॥
सर्वभूतस्थितं यो मां भजत्येकत्वमास्थितः ।
सर्वथा वर्तमानोऽपि स योगी मयि वर्त्तते ॥"

गीता ६, ३०-३१.

'जे मने सर्वत्र जुए छे अने सर्वने मारामां जुए छे, तेने हुं परोक्ष थतो नथी, अने ते मने परोक्ष थतो नथी. जे एकत्वना आश्रयवाळो सर्वभूतोमां रहेला मने भजे छे, ते योगी सर्व प्रकारे रहेतो छतो पण मारामां वर्ते छे.

तेथी भगवाने गीतामां योगनो छेल्लो उपदेश नीचे प्रमाणे आप्यो छे.

"मन्मना भव मद्भक्तो मद्याजी मां नमस्कुरु ।
मामेवैष्यसि युक्त्वैवं आत्मानं मत्परायणः ॥ "

गीता ९, ३४.

'मारामां मनवाळो, मारो भक्त अने मने पूजनारो था, मने नमस्कार कर. ए प्रमाणे मारे शरण थएलो तुं मारामां अंतःकरणने जोडीने मनेज पामीश.'

"सर्व भूतस्थमात्मानं सर्वभूतानि चात्मनि ।
ईक्षते योगयुक्तात्मा सर्वत्र समदर्शनः" ॥

गीता ६ । २९.

'सर्वमां समदृष्टिवाळो अने समाहित अंतःकरणवाळो योगी आत्माने सर्वभूतोमां अने सर्व भूतोने आत्मामां जुए छे.'

आथी जणाय छे के, गीताना मत प्रमाणे ध्यानयोगवडे पण मोक्ष मळे छे; पण ते ध्यान भक्ति विनानुं नहि. ध्यान वादमां-योगमां-ईश्वरनुं स्थान केटले दरज्जे गौण छे अने तेमां भक्तिने केटलुं ओछुं वजन आपवामां आव्युं छे ते आपणे अगाउ जोइ गया छीए. पण गीताए अनुमोदेला ध्यान योगनो तो मुख्य आधारज ईश्वर छे अने तेमां भक्तिज मुख्य छे. अने तेना फळथी योगी सर्वत्र समदर्शी थइ भूतमात्रमां रहेला भगवान्‌ना साक्षात्कार रुप चरमज्ञानने पामे छे.

त्यारे आ बधा उपरथी आपणे जोयुं के कर्म, ज्ञान के ध्यान ए बधांयनी साथे गीताए ईश्वरभक्ति जोडी दीधी छे. जेम दोरामां मणिओ परोवायला रहे, तेम गीतामां बोधेला कर्म, ज्ञान के ध्यानमां ईश्वर परोवायला छे; कर्मवाद, ज्ञान-

वाद अने ध्यानवाद ए दरेकमां ईश्वरवाद अनुस्यूत रहेलो छे.

ब्रह्मसूत्र विचारतां पण जणाय छे के, बादरायणे विद्यानेज मोक्ष मेळववानो उपाय कहेलो छे.

" पुरुषार्थोऽतः शब्दात् इति बादरायणः । ३ । ४ । १ सूत्र.

" अस्माद् वेदान्तविहिताद् आत्मज्ञानात् स्वतंत्रात् पुरुषार्थः सिद्ध्यति इति बादरायण आचार्यो मन्यते " ।

शंकरभाष्य.

' बादरायणना मत प्रमाणे मात्र वेदान्तविहित आत्मज्ञानथीज पुरुषार्थ सिद्ध थाय छे.' कारण श्रुति कहे छे के,–

" तरति शोकम् आत्मवित् । ब्रह्मवेद ब्रह्मैव भवति ।

आत्माने जाणनार शोकने तरी जाय छे.' ब्रह्मने जाणनार ब्रह्मज थाय छे.' आथी बादरायणनो सिद्धांत ए छे के विद्याज पुरुषार्थनी जननी-माता-छे. कर्म ए तो मात्र विद्यानुं अंग छे.

जैमिनिनो सिद्धांत आनाथी बराबर उलटो छे. तेना मत प्रमाणे ज्ञान ए कर्मनुं अंग छे. ब्रह्मसूत्रना त्रीजा अध्यायना चोथा पादमां कर्म अने ज्ञानना अंगांगित्वनो विचार करतां बादरायणे जैमिनिनो मत पूर्वपक्षरुपे उपस्थित कर्यो छे.

शेषत्वात् पुरुषार्थवादो यथान्येषु इति जैमिनिः" ।३।४।२.

"जैमिनिनो मत एवो छे के, ज्ञानथी मुक्ति थाय छे एवी

जे श्रुतिओ छे, ते तो मात्र अर्थवाद छे. देहातिरिक्त आत्मा छे, तेज कर्मनो कर्त्ता छे, ए ज्ञान द्रढ करीने कर्मीने कर्ममां उत्साहित करवो एज ए बधां श्रुति वाक्योनो हेतु छे.

बादरायणे ३ थी ७ सुधीनां सूत्रोमां ए संबंधमां जैमिनिनी युक्तिनुं संकलन करीने ८ थी १७ सुधीनां सूत्रोमां एके एके तेनुं खंडन कर्युं छे.

" अतोऽपि न विद्यायाः कर्मशेषत्वं नापि तद् विषयायाः
फळश्रुतेरयथार्थत्वं शक्यम् आश्रयितुम् । "

३ । ४ । १९ सूत्रनुं शंकरभाष्य.

' आथी विद्याने कर्मनुं अंग कहेवुं ते अने विद्यानी फळश्रुतिने अयथार्थ (अर्थवाद) कहेवी ए संगत-युक्तियुक्त-नथी.'

आश्रमविहितकर्म ए ज्ञाननुं अंग छे—ज्ञानोत्पत्तिनुं सहकारी कारण छे,—ए वात बादरायणे नीचेनां सूत्रमां साबीत करी छे.

" सर्वापेक्षा च यज्ञादिश्रुते रश्ववत् । ३ । ४ । २६ सूत्र.

" विहितत्वाद् आश्रमकर्मापि । सहकारित्वेन च । "

(३ । ४ । ३२-३३ सूत्र).

विद्यासहकारीणि तु एतानी स्युः । शंकर.

' आश्रमविहितकर्म ज्ञानोत्पत्तिनुं सहकारी कारण छे.'

ज्ञानोत्पत्तिनां अंगरुपे शमदमादिनुं अनुष्ठान करवानी पण

जरुर छे. वादरायणे नीचेनां सूत्रमां तेनो उपदेश कर्यो छे.

" शमदमाद्युपेतः स्यात् तथापि तु तद्विधेः तदंगतया तेषामवश्यानुष्ठेयत्वात् " । ३ । ४ २७ । सूत्र. ।

जो प्रतिबंध न होय, तो आ जन्ममांज ज्ञान उत्पन्न थइ शके, नहि तो वीजा जन्ममां थाय.

" ऐहिकमपि अप्रस्तुतप्रतिबन्धे तद्दर्शनात् "

ब्रह्मसूत्र, ३ । ४ । ५१.

" तस्मात् ऐहिकम् आमुष्मिकं वा विद्याजन्म प्रतिबन्धक्षयापेक्षया इति स्थितम् । " शंकरभाष्य.

' प्रतिबंध दूर थतां आ जन्ममां अथवा वीजा जन्ममां विद्या (ज्ञान) उत्पन्न थायज.

बादरायणना मत प्रमाणे आ विद्यानुं फळ मुक्ति छे. तेनो पण आ प्रमाणे अनियम छे; एटले मुक्तिपण ऐहिक अथवा आमुष्मिक थइ शके.

" एवं मुक्तिफलानियमः । तदवस्थावधृतेः "॥[1]

(ब्रह्मसूत्र, ३ । ४ । ५२)

पण आ शमदमादि अने आ बधां आश्रमविहितकर्मो एतो ज्ञान मेळववानां मात्र बहिरंग साधनो छे. विद्यानां अंतरंग

---

[1]आ सूत्रनी शंकरनी व्याख्या बीजी रीते छे. अमे अहिंयां रामानुजना मतने अनुसर्या छीए.

साधन—श्रवण, मनन अने निदिध्यासन छे. कारण श्रुति कहे छे के—

" आत्मा वा अरे दृष्टव्यः श्रोतव्यो मन्तव्यो निदिध्यासि -
तव्यः "।

" आत्मानुं दर्शन करवुं, श्रवण करवुं, मनन करवुं, निदिध्यासन (ध्यान) करवुं.' मतलबके आत्मसाक्षात्कारनो उपाय श्रवण मनन अने निदिध्यासन छे. पहेलां तो आत्मा संबंधी श्रुतिवाक्योनुं श्रवण करवुं जोइए. पछी तेनुं मनन अने तेनुं निदिध्यासन (एकान्तमां एकाग्र भावे विचार) करवो जोइए. तेथी साधकने आत्मानो साक्षात्कार थाय. आ श्रुतिने लक्षमां राखीने बादरायणे नीचेनुं सूत्र रच्युं छे,—

" आवृत्तिरसकृद् उपदेशात् " ॥
" लिंगाच्च " ॥ (ब्रह्मसूत्र ४ । १ । १-२)

श्रवण, मनन, निदिध्यासन,—ए बधानुं एकवार अनुष्ठान करवाथी जो आत्मदर्शन न थाय, तो फरी फरीने करवां जोइए. ज्यां सुधी आत्मदर्शन न थाय, त्यां सुधी श्रवण, मनन, निदिध्यासन करवुं जोइए. शास्त्रमां आ हेतुथीज वारंवार अने श्रवणादि घणा उपायोनो उपदेश कर्यो छे.

आ श्रवण, मनन, निदिध्यासन फरी फरीने करवां एटलुंज नहि, पण शरीर रहे त्यां सुधी करवां जोइए.

" आप्रायणात् तत्रापि हि दृष्टम् " । ब्रह्मसूत्र ४।१।१२.

आ आत्म साक्षात्कार माटे उपनिषद्मां जुदी जुदी उपासनाओ बतावेली छे. बादरायणे त्रीजा अध्यायना त्रीजा पादमां एनो विचार कर्यो छे.

" नाना शब्दादिभेदात् " । –ब्रह्मसूत्र ३ । ३ । ५८.

ए उपासनाना मोटा त्रण प्रकार छे,–अंगाश्रित, तटस्थ अथवा प्रतीक अने अहंग्रह. अहंग्रह उपासनानुंज बादरायणे अनुमोदन कर्युं छे.

" आत्मेति तूपगच्छति ग्राहयन्ति च । ब्रह्मसूत्र ४ । १ । ३ ।

' ते परमात्माने पोताना आत्मारूप जाणवो जोइए,' मतलब के "सोऽहं" भावथी उपासना करवी जोइए.

प्रतीक उपासनाथी ए प्रयोजन सिद्ध थतुं नथी. तेथी बादरायणनो मत आम छे के, प्रतीकमां अहंज्ञान नाखवुं नहि.

" न प्रतीके न हि सः । ब्रह्मसूत्र ४ । १ । ४.

पण प्रतीकमां ब्रह्मदृष्टि करवी जोइए.

" ब्रह्मदृष्टिरुत्कर्षात् " । ब्रह्मसूत्र ४ । १ । ५.

कारण, ब्रह्मदृष्टिए जोवाथी, ब्रह्मभावे भावित थवाथी, प्रतीक पण उत्कृष्ट ब्रह्मना अध्यासना बळथी उत्कृष्ट फळ आपे.

कहेवानी जरुर नथी के, आ बधी उपासनाओ अने भक्ति

प्रणोदित ईश्वर भजन, ए एक वस्तु नथी. खरुं जोतां, ब्रह्म-सूत्रमां कोइ जग्याए "भक्ति" शब्दनो प्रयोग नथी; भक्तिनी वातपण कोइ जग्याए मळती नथी, तोपण मात्र त्रण सूत्रोमां भक्तिनो इसारो छे. जेमकेः—

(१) "अपि संराधने प्रत्यक्षानुमानाभ्याम्"।

३ । २ । २४ ब्रह्मसूत्र.

"अपि चैनम् आत्मानं संराधनकाले पश्यन्ति योगिनः। संराधनं भक्तिध्यान प्रणिधाना द्यनुष्ठानम्"। शंकरभाष्य.

'योगीओ संराधनकाळे परमात्मानुं दर्शन करे छे; संराधन एटले भक्ति, ध्यान, प्रणिधान वगेरेनुं अनुष्ठान.'

(२) "पराभिध्यानात् तु तिरोहितम्"। ३ । २ । ५ सूत्र.

"तत्पुनस्तिरोहितं सत् परमेश्वरमभिध्यायतो यतमानस्य जंतोः * * * * ईश्वरप्रसादात् संसिद्धस्य कस्यचिद्द् आविर्भवति"।

जीवनो ते तिरोहित थयेलो ईश्वरभाव, परमेश्वरनुं ध्यान करनार यत्नशील साधक ईश्वरकृपाथी सिद्धि मळतां फरीने पामे छे.'

(३) "तदोकोग्रज्वलनं तत्प्रकाशितद्वारो हार्दानुगृहितः शताधिकया"। ४ । २ । १७ ब्रह्मसूत्र.

विद्वान् साधकनुं ब्रह्मागार (हृदय) उज्वल-शुद्ध-थाय छे.

ते प्रकाशमां ते (निर्गमन) द्वार जोइ शके छे, अने शताधिक नाडी (सुषुम्णा मार्गे) 'हार्दानुगृहित' साधक नीकळे छे.

" हार्दानुगृहीतः=हृदयालयेन ब्रह्मणा समुपासितेन अनुगृहीतः " । शंकर.

" प्रसन्नेन हार्देन परमपुरुषेण अनुगृहीतः " । रामानुज.

मतलब के एवा साधकनी उपर हृदयमां रहेला उपासना कराएला भगवाननो अनुग्रह थाय छे.

आ सिवाय ब्रह्मसूत्रमां बीजी कोइपण जग्याए ईश्वर भक्तिनो प्रसंग मळी शकतो नथी.

पण गीतानी आलोचना करतां जणाय छे के, गीतामां भक्तिनुं स्थान अति उच्च छे—भक्ति एज साधकनो मुख्य आधार छे—साधनना मार्गमां भक्ति एज मुख्य छे.

भगवाने कह्युं छे के—

" दैवी ह्येषा गुणमयी मम माया दुरत्यया ।
मामेव ये प्रपद्यंते मायामेतां तरन्ति ते" ॥ गीता ७। १४.

' मारी आ त्रिगुणात्मिका दैवी माया खरेखर दुःखे करी तराय एवी छे. जेओ मनेज शरण थाय छे तेओ आ मायाने तरे छे.'

भगवान्‌ने शरणे शी रीते जवाय ?

" तमेव शरणं गच्छ सर्वभावेन भारत ।

तत्प्रसादात् परां शांति स्थानम् प्राप्स्यसि शाश्वतम् "॥
गीता १८। ६२.

हे भारत सर्वभावथकी तेने शरण जा, तेना प्रसादथी पर-शांति, शाश्वतस्थान, पामीश.'

गीतामां जुदे जुदे ठेकाणे, आ प्रमाणे भक्तिनेज ईश्वर प्राप्तिनो मुख्य उपाय कह्यो छे;=

" मन्मना भव मद्भक्तो मद्याजी मां नमस्कुरु।
मामेवैष्यसि युक्त्वैव मात्मानं मत्परायणः " ॥
गीता, ९। ३४.

" मच्चिता मद्गतप्राणा बोधयन्तः परस्परम्।
कथयन्तश्च मां नित्यं तुष्यन्ति च रमन्ति च " ॥
गीता १०। ९.

" भक्त्या त्वनन्यया शक्यः अहमेवंविधोऽर्जुन।
ज्ञातुं द्रष्टुं च तत्त्वेन प्रवेष्टुं च परंतप ॥
मत्कर्म कृन्मत्परमो मद्भक्तः संगवर्जितः।
निर्वैरः सर्वभूतेषु यः स मामेति पांडव "
गीता ११। ५४-५५.

" ये तु सर्वाणि कर्माणि मयि संन्यस्य मत्परः।
अनन्येनैव योगेन मां ध्यायन्त उपासते ॥
तेषामहं समुद्धर्ता मृत्युसंसारसागरात्।

भवामि न चिरात् पार्थ मय्यावेशितचेतसाम् ॥
मय्येव मन आधत्स्व मयि बुद्धिं निवेशय ।
निवसिष्यसि मय्येव अत ऊर्ध्वं न संशयः " ॥

गीता, १२ । ६ थी ८.

" तस्मात् सर्वेषु कालेषु मामनुस्मर युद्ध्य च ।
मय्यर्पितमनोबुद्धिर्मामेवैष्यस्य संशयम् ॥
अभ्यासयोगयुक्तेन चेतसानान्यगामिना ।
परमं पुरुषं दिव्यं यातिपार्थानुचिंतयन् ॥
कविं पुराणमनुशासितारं-
अणोरणीयां समनुस्मरेद्यः ।
सर्वस्य धातारमचिंत्यरूपं-
आदित्यवर्णं तमसः परस्तात् ॥
प्रयाणकाले मनसाचलेन
भक्त्या युक्तो योगवलेन चैव
भ्रुवोर्मध्ये प्राणमावेश्य सम्यक्
स तं परं पुरुषमुपैति दिव्यम् "॥गीता८।७थी १०.

" अनन्यचेताः सततं यो मां स्मरति नित्यशः ।
तस्याहं सुलभः पार्थ नित्ययुक्तस्य योगिनः" ॥

गीता ८ । १४.

" पुरुषः स परः पार्थ भक्त्या लभ्यस्तनन्यया ।

यस्यान्तःस्थानि भूतानि येन सर्वमिदंततम् " ॥

गीता ८ । २२.

" मां च यो व्यभिचारेण भक्तियोगेन सेवते ।
स गुणान् समतीत्यैतान् ब्रह्मभूयाय कल्पते " ॥

गीता १४ । २६.

" सर्व कर्माण्यपि सदा कुर्वाणोमद्व्यपाश्रयः ।
मत्प्रसादादवाप्नोति शाश्वतं पदमव्ययम् " ॥

गीता, १८ । ५६.

" यो मामेवमसंमूढो जानाति पुरुषोत्तमम् ।
स सर्वविद् भजति मां सर्वभावेन भारत " ॥

गीता १५ । १९.

" मच्चितः सर्वदुर्गाणि मत्प्रसादात् तरिष्यसि "॥

गीता १८ । ५८.

' मारामां मनवाळो, मारो भक्त अने मने पूजनारो था. मने नमस्कार कर. ए प्रमाणे मारे शरणे थएलो तुं मारामां अंतःकरणने जोडीने मनेज पामीश. '

' मारामां मनवाळा, मारामां प्राणवाळा, परस्पर मारो बोध करता अने मने नित्य कथन करता निश्चय संतोष पामे छे अने आनंद पामे छे.'

' हे परंतप अर्जुन ! ए प्रकारनो हुं अनन्य भक्तिवडेज जा-

णवाने शक्य छुं अने तत्त्ववडे-वास्तविक स्वरुपवडे साक्षात्कार करवाने अने मळवाने शक्य छुं. हे पांडव! जे मारे माटे कर्म-करनारो, हुं जेने मुख्य छुं एवो, मारो भक्त, संग विनानो अने सर्व भूतोमां वेर रहित छे, ते मने पामे छे.'

'परंतु जेओ सर्व कर्मोने मारामां समर्पण करीने मारे परायण थइ अनन्य योग वडेज मने ध्यान करता उपासे छे, हे पार्थ! मारामां प्रवेश करावेला चित्तवाळा तेओनो हुं मृत्युयुक्त संसार सागरथी तरतज उद्धार करनारो थाउं छुं. मारामां मनने स्थिर कर, मारामां बुद्धि द्रढ कर; आ शरीर पड्या पछी तुं मारामांज निवास करीश एमां संशय नथी.'

तेटला माटे सर्वकाळमां मने संभार—मारुं स्मरण कर अने युद्ध कर. मारामां अर्पण करेलां मन बुद्धिवाळो तुं मनेज पामीश, एमां संदेह नथी. हे पार्थ! निरंतर चिंतवन करनारो पुरुष अभ्यासयोगथी युक्त अने बीजे न जनारा चित्तवडे परम दिव्य पुरुषने पामे छे. जे पुरुष सर्वज्ञ, अनादि, सर्वने नियममां राखनार, सूक्ष्ममां सूक्ष्म, सर्वने धारण करनार विचारी न शकाय तेवा, सूर्य जेवा प्रकाशी अने अज्ञानरुपतमथी दूर एवाने स्मरे छे, प्रयाणकाळमां अचळ मनवडे भक्ति तथा योग बळथी युक्त थइने भ्रूना मध्य भागमां यथार्थ रीते प्राणने हरण करीने जे अनुस्मरे छे, ते—पुरुष ते पर अने

दिव्य पुरुषने पामे छे.'

'जे अनन्य चित्तवाळो मने जीवित पर्यंत निरंतर स्मरण करे छे, तेवा नित्य युक्त योगीने हे पार्थ! हुं सुलभ छुं.'

'हे पार्थ! ते उत्कृष्ट पुरुष ते अनन्य भक्तिवडे पामी शकाय तेवो छे, जेनी अंतर् भूतो रहेलां छे ने जेणे आ सर्व व्याप्त छे—व्यापेलुं छे.'

'वळी जे मने अव्यभिचार थकी भक्तियोगे करीने सेवे छे ते आ गुणोनी पार जइ ब्रह्मभाव योग्य थाय छे.'

'सदा सर्व कर्म करतो, मने ज शरण रहेतो, मारा प्रसाद-थी, शाश्वत अव्यय पद पामे छे.'

'जे असंमूढ मने आ रीते पुरुषोत्तम जाणे छे, ते सर्वविद् सर्वभाव थकी हे भारत! मने भजे छे.'

'मच्चित्त थइ, मारा प्रसादथी, सर्व दुर्गने तुं तरशे.'

पण आ जे भक्ति, जेने भगवाने माया तरवाना उपाय रुप वर्णवी छे,—ते भक्ति-ज्ञान-कर्म-ध्यान विनानी भक्ति नथी. ते भक्तिनी साथे ज्ञान, कर्म अने ध्यान अपूर्व समन्वय—सूत्रथी गुंथाएल छे. भगवान कहे छे—

"तेषां सततयुक्तानां भजतां प्रीतिपूर्वकम् ।
ददामि बुद्धियोगं तं येन मामुपयान्ति ते ॥
तेषामेवानुकंपार्थं महमज्ञानजं तमः ।

नाशयाम्यात्मभावस्थो ज्ञानदीपेन भास्वता ॥"

गीता १०, १०-११.

'तेओ सतत युक्त अने प्रीति पूर्वक मने भजनाराने हुं ते बुद्धियोग आपुंछुं ; जे वडे तेओ मने पामे छे. तेओनाज अनुग्रहने माटे आत्मभावमां रहेलो हुं प्रकाशमान ज्ञानदीपवडे अज्ञानथी उत्पन्न थता अंधारानो नाश करुंछुं, आ परथी जणाय छे के, भगवद्‌भक्त उच्चतम ज्ञाननो अधिकारी थाय छे. भक्त ते मात्र निष्कर्मा भावुकज नथी, ए वात पण गीताए स्पष्ट भाषामां कहेली छे.

"मत्कर्मकृन्मत्परमो मद्‌भक्तः संगवर्जितः ।
निर्वैरः सर्वभूतेषु यः स मामेति पांडव॥"गीता ११,५५.

'हे पांडव ! जे मारे माटे कर्म करनारो, हुं जेने मुख्य छुं एवो, मारो भक्त, संगविनानो अने सर्व भूतोमां वेर रहित छे ते मने पामे छे.'

एज प्रमाणे भक्त साधक ध्यानयोगथी पण अटकतो नथी एम जणाय छे.

"मन्मना भव मद्‌भक्तो मद्‌याजी मां नमस्कुरु ।
मामेवैष्यसि युक्त्वैव मात्मानं मत्परायणः॥" गीता ९,३४
येतु सर्वाणि कर्माणि मयिसंन्यस्य मत्पराः
अनन्येनैव योगेन मां ध्यायन्त उपासते॥"गीता १२,६

'मारामां मनवाळो, मारो भक्त अने मने पूजनारो था. मने नमस्कार कर. ए प्रमाणे मारे शरण थएलो तुं अंतःकरणने जोडीने मने ज पामीश.'

'परंतु जेओ सर्व कर्मोने मारामां अर्पण करीने मारे परायण थइ अनन्य योगवडे ज मने ध्यान करता उपासे छे.'

वळी गीता कहे छे के :—

"अभ्यासयोगयुक्तेन चेतसा नान्यगामिना ।
परमं पुरुषं दिव्यं याति पार्थानुचिंतयन् ॥
कविं पुराणमनुशासितार
मणोरणीयां समनुस्मरेद् यः ।
सर्वस्य धातारमचिन्त्यरूप
मादित्यवर्णं तमसः परस्तात् ॥
प्रयाणकाले मनसाचलेन
भक्त्यायुक्तो योगबलेन चैव ।
भ्रुवोर्मध्ये प्राणमावेश्य सम्यक्
स तं परं पुरुषमुपैति दिव्यम् ॥"

(गीता ८, ८-१०).

'हे पार्थ ! निरंतर चिंतवन करनारो पुरुष, अभ्यासयोगथी युक्त अने बीजे न जनारा चित्तवडे परम दिव्यपुरुषने पामे छे. जे पुरुष सर्वज्ञ, अनादि, सर्वने नियममां राखनार,

सूक्ष्मथी सूक्ष्म, सर्वने धारण करनार, विचारी न शकाय तेवा सूर्यजेवा प्रकाशी अने अज्ञान रुप तमथी दूर एवाने स्मरे छे, प्रयाण काळमां अचल मनवडे भक्ति तथा योगवळथी युक्त थइने भ्रूना मध्यभागमां यथार्थ रीते प्राणने धारण करीने जे अनुस्मरे छे, ते—पुरुष ते पर अने दिव्यपुरुषने पामे छे.'

आथी गीताए अनुमोदेली भक्ति ते ज्ञान-कर्म-ध्यानसाथेनी भक्ति छे.

अढारमा अध्यायनी आलोचना करवाथी गीतामां भक्तिने केटले दरज्जे प्राधान्य आप्युंछे ते समजायछे. भगवाने कह्युं छे के-

"बुद्ध्या विशुद्धया युक्तो धृत्यात्मानं नियम्य च ।
शद्बादीन् विषयांस्त्यक्त्वा रागद्वेषौ व्युदस्यच ॥
विविक्तसेवी लघ्वाशी यतवाक्कायमानसः ।
ध्यानयोगपरो नित्यं वैराग्यं समुपाश्रितः ॥
अहंकारं बलं दर्पं कामं क्रोधं परिग्रहम् ।
विमुच्य निर्ममः शांतो ब्रह्मभूयाय कल्पते ॥
ब्रह्मभूतः प्रसन्नात्मा न शोचति न कांक्षति ।
समः सर्वेषु भूतेषु मद्भक्तिं लभते पराम् ॥
भक्त्या मामभिजानाति यावान् यश्चास्मितत्त्वतः ।
ततो मां तत्त्वतो ज्ञात्वा विशते तदनंतरम् ॥"

गीता १८, ५१-५५.

'विशुद्ध बुद्धिथी युक्त, धृतिथी आत्माने नियमी, अने शब्दादि विषयोने त्यजी, अने राग द्वेषनो व्युदास करी, विविक्त सेवतो, लघु आहार करतो, वाक्काया मनने वश राखनारो, नित्य ध्यान योग परायण, वैराग्यमां सुस्थित, अहंकार, बल, दर्प, क्रोध, परिग्रह त्यजी निर्मळ, शांत, ते ब्रह्म साक्षात्कार योग्य छे. जे ब्रह्मभूत प्रसन्नात्मा ते शोक के काम धरतो नथी, सर्वभूत प्रति सम होइ मारी पर भक्तिने प्राप्त करे छे. भक्तिथी हुं तत्त्व थकी केवो अने केवडो छुं ते अभिज्ञान पामे छे, अने तत्त्वथी मने जाणीने अनन्तर प्रवेशे छे.'

आ विशुद्ध भक्तिने भगवान् ज्ञाननो चरम उत्कर्ष कहे छेः

"निष्ठा ज्ञानस्य यापरा" ॥ गीता, १८ । ५०.

आ परा भक्ति साधन नथी, साध्य छे. भगवान अहींयां तेनाथी पण उपरनी अवस्थानी वात कहे छे. ब्रह्मभूत थइने आ भक्ति मेळवी शकाय छे. आ भक्तिने लक्षमां राखीने भागवते कह्युं छे के,—

"आत्मारामाश्च मुनयो निर्ग्रन्था अप्युरुक्रमे ।
कुर्वन्त्यहैतुकीं भक्तिं इत्थंभूतगुणो हरिः ॥

'जेओ आत्माराम छे, जेनी बधी गांठो छुटी गइ छे, ते मुनीओ उरुक्रम (भगवान) नी अहैतुकी भक्ति करे छे. हरिनो एवोज गुण छे.'

साधन संबंधे गीतानो छेल्लो उपदेश आ छेः—

" सर्वगुह्यतमंभूयः श्रुणु मे परमं वचः ।
इष्टोऽसि मे द्रढमिति ततो वक्ष्यामि ते हितम् ॥
मन्मना भव मद्भक्तो मद्याजी मां नमस्कुरु ।
मामेवैष्यसि सत्यं ते प्रतिजाने प्रियोऽसि मे " ॥

(गीता, १८ । ६४-६५.)

पुनः सर्वमां पण गुह्य मारुं परम वचन सांभळ, तुं मारो द्रढ इष्ट छे माटे तारुं हित कहुं छुं. मन्मय था, मारो भक्त था, मद्याजी था, मने नमस्कार कर, हुं सत्य प्रतिज्ञा कहुं छुं के मनेज तुं पामीश, तुं मारो प्रिय छे.

गीताए साधनाना संबंधमां कर्म, ज्ञान, भक्ति अने ध्याननो एवी रीते समन्वय कर्यो छे के, विचार करी जोतां तेनी विशेष सार्थकता समजाय छे.

आपणे जोयुं छे के जीव ब्रह्मनो अंश छे. ब्रह्म अग्नि, जीव स्फुलिंग. ब्रह्म सिंधु, जीव बिंदु. ब्रह्मचिदाकाश, जीव चिन्मात्र. ए स्फुलिंगने अग्निरुपे विकसित करवो जोइए, ए बिंदुने सिंधुमां निमज्जित करवुं जोइए, ए चिन्मात्रने चिदाकाशमां प्रसारित करवुं जोइए, एम करवानो उपाय साधना छे. एवी साधनानो आश्रय करवो के जेथी जीव ब्रह्मत्वने पामे. एवी कइ साधना छे के जेनुं आवुं अमृतमय फळ थाय?

जीव ज्यारे ब्रह्मनो अंश छे, अने ब्रह्म ज्यारे सच्चिदानंद छे, त्यारे जीव पण सच्चिदानंद छे. पण जीव अने ब्रह्ममां मोटो भेद ए छे के, ब्रह्ममां आ सत्-भाव, चित्-भाव अने आनंदभाव सुव्यक्त छे; पण जीवमां ए भावो अव्यक्त छे. आ अव्यक्त सत्-भाव, चित्-भाव अने आनंद भावने साधनावडे सुव्यक्त करी शकाय तो जीव ब्रह्म थइ शके. वास्तविक रीते साधनानो अंत आ ब्रह्मप्राप्ति छे. जीव कयां साधनोना बळथी ब्रह्म थाय ?

श्रुतिए भार दइने कह्युं छे के,—

" ब्रह्मवेद ब्रह्मैव भवति "।

' जे ब्रह्मने जाणे ते ब्रह्म थाय.' पण श्रुतिए आ पण कह्युं छे के—

" ब्रह्म सन् ब्रह्म अवैति "। बृहदारण्यक, ४ । ४ । ६.

' ब्रह्म थाय त्यारेज ब्रह्मने जाणे.'

पाछळ कहेवाइज गयुं छे के, जीवना ब्रह्म थवानो अर्थ, जीवना चित् भाव (जेनो प्रकाश विज्ञानमय कोशमां छे ते) तेमज आनंद भाव (जेनो प्रकाश आनंदमय कोशमां छे ते) अने सत् भाव (जेनो प्रकाश हिरण्मय कोशमां छे ते) सुव्यक्त करवो एटलो छे. साधनानो मुख्य उद्देश अने लक्ष्य आ ज होवुं जोइए.

पहेलां तो कर्मयोगवडे चित्त शुद्धि करवी. जेनुं चित्त अशुद्ध होय, ते साधक उंची साधनानो अधिकारी नथी.[1] तेथी गीता कहे छे के,—

" यज्ञदानतपः कर्म न त्याज्यं कार्यमेव तत् ।
यज्ञोदानं तपश्चैव पावनानि मनीषिणाम् ॥
एतान्यपि तु कर्माणि संग त्यक्त्वा फलानि च ।
कर्त्तव्यानीति मे पार्थ निश्चितं मतमुत्तमम् " ॥

(गीता १८, ५-६).

' यज्ञ, दान, तप ए कर्म त्याज्य नथी कार्यज छे, यज्ञ दान तप ए मनीषीने पावन करे छे. आ कर्मो पण संग तथा फळ त्यजीने कर्तव्य छे एम हे पार्थ ! मारुं निश्चित अने उत्तम मत छे.'

पछी ज्ञानयोगवडे विज्ञानमय कोशनी सहायताथी आत्माना

---

[1] आ मतनुं समर्थन करवा माटे शंकराचार्ये नीचे कहेलां श्रुतिवाक्यनो उतारो कर्यो छेः—

कषायपक्तिः कर्माणि, ज्ञानं तु परमागतिः ।
कषाये कर्मभीः पक्के, ततो ज्ञानं प्रवर्तते ॥

' कर्म सघळां पापनुं पाचक—पापनो नाश करनार छे; ज्ञान ज परम गति छे. कर्मवडे पाप परिपाकने प्राप्त थतां, पछी ज्ञान उत्पन्न थाय.'

चित्‌भावनो विकास करवो. अने भक्तियोगवडे आनंदमय कोशनी मददथी आत्माना आनंदभावनो विकास करवो. छेल्ले ध्यानयोग वडे हिरण्मय' कोशनी मददथी आत्माना सत् भावनो विकास करवो. आ प्रमाणे ज्यारे आत्माना चित् भावनो, आनंद भावनो अने सत् भावनो संपूर्ण विकास थाय, त्यारे पछी जीव-जीव रहे नहि, ब्रह्म थाय. इशोपनिषत्‌ना नीचेना मंत्रमां आ विषय उपर लक्ष राखवामां आव्युं छे.

"हिरण्मयेन पात्रेण सत्यस्यापिहितं मुखम् ।
तत्त्वं पूषन्नपावृणु सत्यधर्माय द्रष्टये ॥ " इश १५.

'सुवर्णमय पात्रवडे ब्रह्मनुं द्वार ढांकेलुंछे, तेने हे सूर्य ! आप सत्यधर्मनुं अनुष्ठान करनार सारु ज्ञान माटे उघाडो.'

'हिंदु शास्त्रमां साधारण रीते मात्र पांच कोशनोज उल्लेख मळे छे ; अन्नमय, प्राणमय, मनोमय, विज्ञानमय अने आनंदमय. पण ठेकाणे ठेकाणे ए उपरांत हिरण्मय कोशनो उल्लेख जोवामां आवे छे.

हिरण्मये परे कोशे विरजं ब्रह्म निष्कलं । मुंडक २,२,९.

आ छ कोशने लक्षमां राखीने ज सर्वोपनिषदे "षण्णां कोशाणां समुहः" एम कह्युं छे. आ हिरण्मय कोशज जीवनो सूक्ष्मतम अने श्रेष्टतम कोश छे, माटे 'परे कोशे' एम कहेलुं छे.

आ हिरणमय आवरणथी ढंकाएलुं सत्य तेज माया-उपहित ज्योतिर्मय परमात्मा छे. जे जीव सत्यधर्मनुं अनुष्ठान करनार थाय छे, एटले जे जीव साधनानां बळथी स्वगत सर्वोच्च सत्भाव संपूर्ण विकसित करे छे, तेज ते परमात्माना अनावृत स्वरुपनो साक्षात्कार करवाने योग्य थाय छे. तेथी ते कहे छे,--

" तेजो यत्ते रुपं कल्याणतमं तत्ते पश्यामि ।
योऽसावसौ पुरुषः सोऽहम् अस्मि ॥ "

' आपनुं जे कल्याणतम रुप (छे) तेने आपनी (कृपाथी हुं) देखुं छुं. जे आ पुरुष (छे) ते आ हुं छुं.'

" किं चाहं नतु त्वां भृत्यवत् याचे । योऽसौ आदित्यमंडलस्थो व्याहृत्यवयवः पुरुषः * * सोऽहं भवामि ॥

हुं भृत्यभावे तमारी साक्षात् याचना करतो नथी ; कारण, सूर्यमंडलमां जे ॐकारमय पुरुष (नारायण) छे, हुं ज ते,-- तज हुं छुं,--" सोऽहम् "।

साधननुं छेल्लुं फळ मेळवीने चित्भाव अने आनंद भावनो विकास कर्यापछी, सत् भावने पण विकसित करे, मतलबके जे सच्चिदानंद ब्रह्मभूत थाय, ते सिवाय आ वात बीजुं कोण बोली शके ?

आथी कर्म, ज्ञान, भक्ति अने ध्याननो समन्वयनो उपदेश

करी गीताए देखाड्युं छे के, जीवना संपूर्ण विकासने माटे एकलुं कर्म, एकलुं ज्ञान, एकली भक्ति के, एकलुं ध्यान ए पुरतुं नथी ; जीवने ब्रह्मरुपे विकसित करवो होय तो ए चारे मार्ग संपूर्ण रीते साधवा जोइए. नहितो आत्मानो मात्र आंशिक के एकदैशिक विकास थाय. तेथी गीताए कर्मवाद, ज्ञानवाद, भक्तिवाद अने ध्यानवादनुं सामंजस्य करी आ अपूर्व समन्वय वादनो उपदेश कर्यो छे.
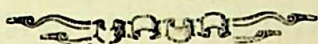
(५) ब्रह्म प्राप्तिनुं फळ.

ब्रह्मनी साथे परम साम्य एज अद्वैतमत प्रमाणे मुक्तनुं लक्षण छे अने ब्रह्मनी साथे ऐक्य (एकीभाव अथवा अविभाग) एज मुक्तिनुं स्वरुप छे, एम आपणे जोइ गया छीए. कारणके अद्वैतवादीओ कहे छे के " ब्रह्मवेद ब्रह्मैव भवति." बीजा पक्षमां, विशिष्टाद्वैत मत प्रमाणे मुक्त पुरुप कदि पण ब्रह्मना स्वरुपनी साथे एकता पामे नहि ; ते ब्रह्मना स्वभावने प्राप्त थाय खरो, ब्रह्मने योग्य एवा गुणोथी भूषित थाय खरो, पण क्यारे पण ब्रह्मनी साथे एकीभूत थाय नहि. विशिष्टा-

द्वैतवादीना मत प्रमाणे आ ज मुक्ति. आवा विरोधमां गीतानो मत शो छे, ते जोइए.

उपनिषद्नी आलोचना करतां जणाय छे के, ऋषिओए जीवनी उत्क्रान्तिना बे मार्ग कहेला छे. उत्तरमार्ग अने दक्षिण मार्ग. आने अनुक्रमे देवयान अने धूमयान अथवा पितृयान कहे छे. आ संबंधमां छांदोग्य उपनिषद् नीचे प्रमाणे कहेछे,

" अथ य इमेग्रामे इष्टापूर्ते दत्तमित्युपासते ते धूममभिसंभवन्ति धूमाद्रात्रिं रात्रेरपरपक्षमपरपक्षाद्यान्षड् दक्षिणैति मासांस्तान्नैते संवत्सरमभिप्राप्नुवन्ति " ॥

मासेभ्यः पितृलोकं पितृलोकादाकाशमाकाशाच्चन्द्रमसमेष सोमो राजा तद्देवानामन्नं तं देवा भक्षयान्ति ॥

तस्मिन्यावत्सम्पातमुषित्वाऽथैतमेवाध्वानं पुनर्निवर्तन्ते यथेतमाकाशमाकाशाद्वायुं वायुर्भूत्वा धूमो भवति धूमो भूत्वाऽभ्रं भवति ॥

अभ्रं भूत्वा मेघो भवति मेघो भूत्वा प्रवर्षति त इह व्रीहियवा ओषधिवनस्पतयास्तिलमाषा इति जायन्तेऽतो वै खलु दुर्निष्प्रपतरं यो योह्यन्नमत्ति यो रेतः सिञ्चति तद्भूय एव भवाति ॥"

छांदोग्य ५,१०,३-६.

हवे जे आ गाममां इष्ट, पूर्त, दत्त इत्यादिनुं अनुष्ठान करेछे ते धुमाडाने पामे, जे धूमाडाथी रात्रिने, रात्रिथी बीजा

पक्षने, ने अपरपक्षथी जे छ मासोमां दक्षिणभणी जाय छे, तेने (पामे छे). ' आ संवत्सरने प्राप्त थता नथी. मासोथी पितृलोकने, पितृलोकथी आकाशने, आकाशथी चंद्रमाने पामे छे. आ सोमरुप राजाछे, ते देवोनुं अन्न छे. तेनुं देवो भक्षण करे छे.'

' तेमां कर्मना समयपर्यंत निवास करीने पछी जेम आव्या (हता तेम) आ मार्ग प्रति पुनः पाछा आवे छे. आकाशने, आकाशथी वायुने (पामे छे). वायु थइने धूम थाय छे, ने धूम थइने वादळुं थाय छे,'

' वादळुं थइने मेघ थाय छे, मेघ थइने वर्षे छे, तेओ अहिं डांगर, जव, औषधि, वनस्पति, तल अने अडद एवी रीते उंपजे छे. अहींथी निश्चय अति दुःखवडे नीकळवुं (थाय छे.) जे जे अन्न खाय छे, अने जे वीर्यनुं सिंचन करे छे, तेनी अधिकतावाळो ज थाय छे.'

आ ज धूमयान के दक्षिणमार्ग. आ मार्गे जे साधको जाय, ते वधाने पाछुं मनुष्य लोकमां आववुं पडे. पण जे देवयानने मार्गे जाय तेओ क्रमे क्रमे ब्रह्मलोकमां लइ जवाय ; त्यांथी तेमने पाछुं फरवुं पडे नहि. तेमना संबंधमां छांदोग्य उपनिषद् आ प्रमाणे कहे छे,–

" ये चेमेऽरण्ये श्रद्धातप इत्युपासते तेऽर्चिषमभिसंभव-

न्त्यर्चिषोऽहरह्न आपूर्यमाणपक्षमापूर्यमाणपक्षाद्यान्षडु दंकेति मासां स्तान् ॥

मासेभ्यः संवत्सरं संवत्सरादादित्यमादित्याच्चन्द्रमसं चन्द्रमसोविद्युतं तत्पुरुषोऽमानवः स एनान्ब्रह्म गमयत्येष देवयानः पन्था इति "— छांदोग्य ५,१०,१-२

अथ यदु चैवास्मिञ्छव्यं कुर्वन्ति यदि च नार्चिषमेवासंभवन्त्यर्चिषोऽहरह्न आपूर्यमाणपक्षाद्यान् षडुदंकेति मासां स्तान् मासेभ्यः संवत्सरं संवत्सरादादित्यमादित्याचंद्रमसम् चंद्रमसो विद्युतं तत्पुरुषोऽमानवःसएनान् ब्रह्मगमयत्येष दैवपक्षे ब्रह्मपथ एतेन प्रतिपद्यमाना इमं मानवमावर्तं नाऽऽवतन्ते नानावर्तन्ते "॥ छांदोग्य ४,१५,५.

'अने जे आ अरण्यमां श्रद्धा तप एम उपासे छे, तेओ अर्चिने पामेछे,अर्चिथी दिवसने, दिवसथी शुक्ल पक्षने, शुक्लपक्षथी जे छ मासोमां (सूर्य) उत्तर भणी जाय छे, ते (मासो) ने पामे छे.'

'(ते) मासोथी संवत्सरने, संवत्सरथी आदित्यने, आदित्यथी चंद्रमाने, चंद्रमाथी विजळीने (पामे छे). अमानवपुरुष (आ वेछे), ते आने ब्रह्म-प्रति लइ जाय छे. आ देवयान मार्ग (छे).' इति.

'हवे जो आ (पुरुष) नुं श्राद्ध (मरण पछीनी क्रिया)

करे, अथवा न (करे, सर्वथा ते) अर्चिने ज पामे छे. अर्चिथी दिवसने, दिवसथी आपूर्यमाण (शुक्ल) पक्षने, आपूर्यमाण पक्षथी जे छ मासोमां (सूर्य) उत्तरभणी जाय छे, ते (मासो)ने, मासोथी संवत्सरने, संवत्सरथी आदित्यने, आदित्यथी चंद्रमाने, चंद्रमाथी विजळीने पामे छे. त्यां अमानव पुरुष (आवे छे) ते आने ब्रह्मने प्राप्त करे छे. आ देवमार्ग (छे). आ ब्रह्ममार्ग (छे). आ वडे जनारा आ मानव संसार प्रति आवता नथी, आवता नथी.'

गीतामां पण आ धूमयान अने देवयाननो उल्लेख जोवामां आवे छे.

"यत्रकाले त्वनावृत्तिं आवृत्तिं चैव योगिनः ।
प्रयाता यान्ति तं कालं वक्ष्यामि भरतर्षभ ॥"
अग्निर्ज्योतिरहः शुक्लः षण्मासा उत्तरायणम् ।
तत्र प्रयाता गच्छन्ति ब्रह्म ब्रह्मविदो जनाः ॥
धूमोरात्रिस्तथा कृष्णः षण्मासा दक्षिणायनम् ।
तत्र चान्द्रमसं ज्योतिः योगी प्राप्य निवर्तते ॥
शुक्लकृष्णे गती ह्येते जगतश्शाश्वते मते ।
एकया या ।नावृत्तिं अन्ययाऽऽवर्तते पुनः ॥"

गीता ८, २३-२६.

'वळी जे काळमां प्रयाण करता योगीओ, अनावृत्ति (मोक्ष)

अने आवृत्ति (जन्म)ने पामे छे ते काळ, हे भरत श्रेष्ठ ! हुं तने कहुंछुं. अग्नि अने ज्योति अथवा ज्योतिरुप अग्नि, दिवस, शुक्लपक्ष, अने छ मासरुप उत्तरायण ते-मार्गमां गएला ब्रह्मविद् पुरुषो ब्रह्मने पामे छे. धूम, रात्रि तथा कृष्णपक्ष अने छ मासरुप दक्षिणायन, तेमां जनारो योगी चंद्रमानी ज्योतिने पामीने पाछो आवे छे. खरेखर ! जगत्नी आ शुक्ल अने कृष्णगतिओ अनादि मनाएली छे, तेमांनी एक वडे अनावृत्ति (मोक्ष) पामे छे, अने बीजीवडे फरीने पाछा आवे छे.'

आथी, गीता पण कहे छे के, देवयान (उत्तर) मार्गे जनारनी आवृत्ति (जन्म) थती नथी ; पण धूमयान (दक्षिण) मार्गे जनारना फरी आववानुं वर्णन गीता आ प्रमाणे कहे छे.

" त्रैविद्या मां सोमपाः पूतपापाः
यज्ञैरिष्ट्वा स्वर्गतिं प्रार्थयन्ते ।
ते पुण्यमासाद्य सुरेन्द्रलोकम्
अश्नन्ति दिव्यान्दिवि देवभोगान् ॥
ते तं भुक्त्वा स्वर्गलोकं विशालं
क्षीणे पुण्ये मर्त्यलोकं विशन्ति ।
एवं त्रयीधर्ममनुप्रपन्नाः
गतागतं कामकामा लभन्ते॥"गीता ९,२०-२१.

' त्रण वेदने जाणनारा, सोम पीनारा अने निष्पाप-पुरुषो

मने यज्ञोवडे पूजीने स्वर्ग प्राप्तिने प्रार्थे छे--इच्छे छे. तेओ पुण्यरुप स्वर्गलोकने पामीने स्वर्गमां दिव्य एवा देवोना भोगोने भोगवे छे.'

'ते सकाम पुरुषो, ते विशाळ स्वर्ग लोकने भोगवीने पुण्यक्षय थये मर्त्यलोकने पामे छे. ए प्रमाणे त्रयीधर्मनो आश्रय करनारा भोगोनी इच्छावाळा पुरुषो, गमनागमनने पामे छे.'

बादरायणे चोथा अध्यायना त्रीजा पादमां जीवनी उत्क्रांतिनुं वर्णन कर्युं छे. तेना उपदेशनो सार आ छे के, ज्यारे मरण आवे, त्यारे जीवनी बधी इंद्रियो अने प्राणवृत्ति सूक्ष्म भूतमां सपिन्डित थाय छे, एटले मळी जाय छे. जीव आ सूक्ष्म शरीरने आशरे देहमांथी नीकळे छे.

"सूक्ष्मं प्रमाणतश्च तथोपलब्धेः ।

ब्रह्मसूत्र, ४,२,९.

'जीव, मरण वखते सूक्ष्म शरीर लइने परलोकमां जायछे.'

गीता पण एमज कहे छे,–

" शरीरं यदवाप्नोति यच्चाप्युत्क्रामतीश्वरः।

गृहीत्वैतानि संयाति वायुर्गंधानिवाशयात् ॥

गीता १५,८.

' जीवरुपी ईश्वर शरीर ग्रहण करे, अने शरीरमांथी नीकळे

त्यारे वायु जेम आधार (पुष्प वगेरे)मांथी गंधनो अंश लइ ने जाय, तेम आत्मा पण बधी इंद्रियोने लइने जाय.'

बादरायणना मत प्रमाणे विद्वान्, अविद्वान्, उपासक, अनुपासक,-ए बधांनीज उत्क्रान्ति थाय. ते कहे छे के, श्रुतिए विद्वान्नी उत्क्रान्तिनो निषेध कर्यो छे, तेथी शरीरमांथी उत्क्रान्तिनो निषेध थतो नथी, जीवमांथी उत्क्रान्तिनोज निषेध कर्यो छे. एवी रीते ज नीचलुं श्रुति वाक्य समजवुं जोइए.

" न तस्मात् प्राणा उत्क्रामन्ति । अत्रैव समवनीयन्ते ।"

' ब्रह्मज्ञानीना प्राणो तेनामांथी उत्क्रान्त थता नथी,-त्यांज विलीन थाय छे.'

एवी ज मतलबनुं बादरायणे सूत्र रच्युं छे.'

प्रतिषेधादिति चेन्न शारीरात् ।' ब्रह्मसूत्र ४,२,१२.

आथी तेना मत प्रमाणे विद्वान् अविद्वान्-सौनीज उत्क्रांति थाय छे. पण उत्क्रांतिना प्रकारमां कांइक विशेषता छे. अविद्वान्ना प्राण गमे ते नाडीवाटे बहार जाय छे. पण ज्ञानी उपासकना प्राण सुषुम्णा नाडीवाटे सूर्यकिरणने अवलंबन करीने बहार नीकळे छे.

'शंकरे आ सूत्रने पूर्वपक्ष सूत्ररुपे ग्रहण कर्युं छे ; ते संगत होय एम जणातुं नथी. रामानुजना मत प्रमाणे ए सिद्धांत सूत्र छे. अमे तेनाज मतनुं अनुसरण कर्युं छे.

" तदोकोऽग्रज्वलनं तत् प्रकाशितद्वारो विद्यासामर्थ्यात् तच्छेष गत्यनुस्मृतियोगाच्च हार्दानुगृहीतः शताधिकाय । रश्म्यनुसारी । ब्रह्मसूत्र ४,२,१७-१८.

मतलबके 'ज्ञानी उपासकना हृदयनो अग्रभाग प्रद्योतित थाय छे. ते वडे ते वहार नीकळवानुं द्वार जाणे छ ; अने हृदयमां रहेला ब्रह्मनी कृपाथी सुषुम्णानाडीवाटे वहार नीकळीने सूर्यकिरणोनुं अनुसरण करे छे.' आज देवयान मार्ग. वादरायणे त्रीजा पादमां आ मार्गनो विचार कर्यो छ ; ते कहे छे के, बधाज ब्रह्मज्ञानीओ आ अर्चिरादि मार्गे ब्रह्मलोकमां लइ जवाय.

" अर्चिरादिना तत् प्रथितेः " । ब्रह्मसूत्र ४,३,१.

आ मार्गनां अनेक पगथीयां (stages), अर्चिः, दिवस, शुक्लपक्ष, उत्तरायण, संवत्सर वगेरे. वादरायण कहे छे, अर्चिः वगेरे मार्ग-चिन्ह अथवा भोग भूमि नथी, एओ रस्तो वतावनार दिव्य पुरुषो छे ;—ब्रह्मज्ञानीने पोत पोताना अधिकारनां पगथीयां ओळंगावी दे.

" आतिवाहिका स्तल्लिंगात् "

उभयव्यामोहात् तत् सिद्धेः । ब्रह्मसूत्र ४,३,४-५.

मतलबके 'अर्चिः, दिवा वगेरे आतिवाहिक पुरुष' छेल्ले पगथीए ब्रह्मज्ञानी, एक अमानुष पुरुषवडे ब्रह्मलोकमां लइ

जवाय.

" तत् पुरुषोऽमानवः" । " सएतान् ब्रह्म गमयति" ।

' अमानव पुरुष तेओने ब्रह्मप्राप्ति करावे.'

आ संबंधमां बादरायणे कांइक विचार उत्थापन कर्यो छे. तेणे बादरि अने जैमिनिना मतनो उल्लेख करीने, ते ते मतो समीचीत नथी एम कहीने, पोतानो मत स्थापित कर्यो छे. बादरिनो मत एवो छे के, जेओ कार्य ब्रह्म-हिरण्य गर्भनी उपासना करे, तेनेज अमानवं पुरुष ब्रह्मलोकमां लइ जाय. त्यां कल्प पूरो थतां सुधी रहीने प्रलय वखते ब्रह्मानी साथे तेओ परब्रह्ममां विलीन थाय.

" कार्यं बादरि रस्य गत्युपपत्तेः " । ब्रह्मसूत्र ४,३,७.

" कार्यात्यये तदध्यक्षेण सहातः परमाभिधानात् " ।

ब्रह्मसूत्र ४,३,१०.

जैमिनि आ मत स्वीकारता नथी तेओ कहे छे के, परब्रह्मना उपासकने पण अमानव पुरुष ब्रह्मलोकमां लइ जाय.

" परं जैमिनि मूख्यत्वात् " । ब्रह्मसूत्र ४,३,१२.

बादरायणे आ बंने मतनुं सामंजस्य करीने सूत्र रच्युं छेः--

" अप्रतीकालंबनान्नयतीति बादरायण
उभयथाऽदोषात् तत्क्रतुश्च " । ब्रह्मसूत्र ४,१,१५.

बादरायणना मत प्रमाणे प्रतीक उपासक सिवायना बधा

आ दैवयान गतिनो छेडो ब्रह्मलोकनी प्राप्तिछे. ब्रह्मलोकना ऐश्वर्यनुं उपनिषद्‌मां ठेकठेकाणे वर्णन छे. कौषितकी उपनिषद्‌मां रूपकमां ब्रह्मलोकने पामेला साधकनी अवस्थानुं वर्णन नीचे प्रमाणे कर्युं छे.

"स एतं देवयानं पन्थानम् आपद्य अग्निलोकमागच्छति स वायु लोकं स आदित्यलोकं स वरुणलोकं स इन्द्रलोकं स प्रजापति लोकं स ब्रह्मलोकं। तस्य वा एतस्य ब्रह्मलोकस्य आरो ह्रदो मुहुर्त्ता येष्टिहा विरजा नदी इल्यो वृक्षः सालज्यं संस्थानम् अपराजितम् आयतनम् इन्द्रप्रजापती द्वारपालौ। विभु प्रमितं विचक्षणा आसन्दी अमितौजा पर्यंकः। * * स आगच्छति आरं ह्रदं तं मनसात्येति। तमित्वा संप्रति विदो मज्जन्ति। स आगच्छति मुहुर्त्तान्येष्टिहान् ते अस्मद् अपद्रवन्ति। स आगच्छति विरजां नदीं तां मनसैवात्येति। तत् सुकृतदुष्कृते धुनुते * * * स एष विसुकृतो विदुष्कृतो ब्रह्म विद्वान् ब्रह्मैवाभिप्रैति। स आगच्छति इल्यं वृक्षं। तं ब्रह्मगन्धः प्रविशति। स आगच्छति सालज्यं संस्थानम् तं ब्रह्मरसः प्रविशति। स आगच्छति अपराजितं आयतनम् तं ब्रह्मतेजः प्रविशति। स आगच्छति विचक्ष-

---

एज सिद्धांतसूत्र. पण रामानुजे "उभयथा दोषात्" एवो पाठ लीधो छे. शंकरे लीधेलो पाठ ज ("उभयाऽदोषात्") शोभन लागे छे.

णामआसन्दीम्***सा प्रज्ञा। प्रज्ञया हि विपश्यति। स आगच्छति अमितौजसम् पर्यंकम् स प्राणः * * तस्मिन् ब्रह्मास्ते। तम् इत्थंवित् पादेनैवाग्रे आरोहति इत्यादि"॥

(प्रथम अध्याय २-५).

'ते आ देवयान मार्गे अग्नि लोकप्रति आवे छे. त्यांथी क्रम प्रमाणे वायुलोकप्रति, आदित्यलोकप्रति, वरुणलोकप्रति, इंद्रलोकप्रति, प्रजापतिलोकप्रति ने ब्रह्मलोकप्रति आवे छे. त्यां आर नामनो महान् ह्रद् छे. मुहूर्तना अभिमानी येष्टिहा नामना देवो छे. विरजा नामनी नदी छे, इल्य नामनुं वृक्ष छे, सालज्य नामनुं सुंदर नगर छे, अपराजित नामनुं ब्रह्मानुं निवास स्थळ छे, तेना इंद्र अने प्रजापति नामना द्वारपाळो छे, विभुनामनुं ब्रह्मानुं सभास्थान छे, ते सभामां विचक्षणा (लौकिक बुद्धि) नामनी वेदि छे. अमितौजस (प्राण) नामनो ब्रह्मानो पलंग छे. ते आरह्रद पासे आवे छे, मनवडे तेने ओळंगे छे; अज्ञानीओ आ ह्रदमां डुबी जाय छे. तेओ यष्टिहानामना देवोनी समीप आवे छे. ते देवो तेने जोइने दूर जता रहे छे. पछी ते विरजा नामनी नदीनी पासे आवे छे. ते तेनुं मनवडे ज उल्लंघन करेछे. ते अहिं पुण्य पापनो परित्याग करेछे. ते पुण्य पापथी मुक्त थइ ब्रह्मने जाणी ब्रह्मने पामे छे. ते इल्य वृक्षनी पासे आवे छे, तेनामां ब्रह्मनो गंध प्रवेश करे-

उपासको अमानव पुरुषवडे ब्रह्मलोकमां लइ जवाय छे. आम कहेवाथी कोइ पक्षमां दोष आवतो नथी. कारणके जेवी जेनी भावना तेवी तेने प्राप्ति थाय.' जे ब्रह्मक्रतु (ब्रह्मनी भावना करे ; ते ब्रह्म परब्रह्मज थाय, वळी कार्यब्रह्म पण थाय) तेने ब्रह्मलोकनी प्राप्ति थाय एज योग्य छे. श्रुति कहेछे के,

"तं यथा यथा उपासते तदेव भवति।"

'जे जेवी उपासना करे, ते तेवो थाय.'[1]

---

[1]बादरायणे ३-३-२६थी ३१ सुधीनां सूत्रमां साधारण भावे प्रतिपन्न कर्युं छे के उपासक मात्रनी देवयान गति थाय.

अनियमः सर्वासामविरोधः शद्बानुमानाभ्याम्।

ब्रह्मसूत्र, ३,३,३१.

प्रतीक उपासक पण एनी अंदर समाय छे. पण चोथा अध्यायना ३जा पादमां बादरायणे बताव्युं छे के, जोके तमाम उपासकनी देवयान गति थाय, तोपण ब्रह्मोपासक ज ब्रह्मलोकमां गमन करे, प्रतीकोपासक त्यां गमन करी शके नहि.

शंकराचार्ये, बादरी अने जैमिनिना मतना विचार उपलक्षे जैमिनिना मतने पूर्वपक्ष करी बादरीना मतने बादरायणना सिद्धांतरुपे प्रतिपन्न कर्यो छे, ए संगत लागतुं नथी. रामानुजे तेम कर्युं नथी. तेमना मत प्रमाणे "अप्रतीकालंबनान्"

छे. ते सालज्य नगरनी पासे आवेछे, तेनामां ब्रह्मनोरस प्रवेश करे छे. ते अपराजित नामना ब्रह्मना मंदिर पासे आवे छे, तेनामां ब्रह्म तेज प्रवेश करे छे. ते इंद्रप्रजापति द्वारपाळोनी पासे आवे छे ; त्यारे तेओ तेनाथी दूर खसे छे. ते विभु नामना सभास्थानमां आवे छे, त्यां तेनामां ब्रह्म तेज प्रवेश करे छे. ते विचक्षणा नामनी वेदिपासे आवे छे ; आ विचक्षणा एज प्रज्ञा. प्रज्ञावडे बधा विषयोने जुवे छे. ते अमितौजा नामना पलंगनी पासे आवे छे. एज प्राण. तेमां ब्रह्मा बेठेला होय छे. ब्रह्मवित् एक पगवडे ए पलंग उपर चडे छे.'

छांदोग्य उपनिषद्नुं वर्णन नीचे प्रमाणे छे;--

अरश्च ह वै ण्यश्चार्णवौ ब्रह्मलोके तृतीयस्यामितो दिवितदैरं मदीयं सरस्तदश्वत्थः सोमसवन स्तदपराजिता पूर्ब्रह्मणः प्रभुविमितम् हिरण्मयम् । तद् य एषौतावरं च ण्यं चार्णवौ ब्रह्मलोके ब्रह्मचर्येणानुविन्दन्ति तेषामेवैष ब्रह्मलोकस्तेषां सर्वेषु लोकेषु कामचारो भवति ॥

(छांदोग्य ८,५,३-४).

एष संप्रसादोऽस्मात्शरीरात् समुत्थाय परं ज्योतिरुपसंपद्य स्वेन रुपेणाभि निष्पद्यते । स उत्तमः पुरुषः स तत्र पर्येति । जक्षन् क्रीडन् रममाणः स्त्रीभिर्वायानैर्वा ज्ञातिभिर्वा नोपजनं स्मरन् इदं शरीरम् * * स वा एष एतेन दैवेन चक्षुषा मन-

सैतान् कामान् पश्यन् रमते । य एते ब्रह्मलोके ।

(छांदोग्य, ८,१२,३-५).

' अहिंथी त्रीजा स्वर्गरुप ते ब्रह्मलोकमां प्रसिद्ध अर अने ण्य (ए नामवाळां) समुद्र जेवां (वे सरोवर छे). त्यां अन्नना रसथीपूर्ण (अने तेनो उपयोग करनारने) हर्ष उपजावनार तळाव (छे. वळी) ते (ब्रह्मलोकमां) जेमांथी अमृत टपके छे एवो पीपळो (छे.) त्यां अपराजिता नामनी ब्रह्मानी पुरी (छे अने ब्रह्मारुप) स्वामीए रचेल सुवर्णनो (मंडप छे). ते ब्रह्मलोकमां जे आ प्रसिद्ध अर ने ण्य (नामवाळां वे) समुद्र जेवां (सरोवर कह्यां तेने) ब्रह्मचर्यवडे पामे छे. तेओनोज आ ब्रह्मलोक छे, ने) तेओनी सर्व भोगोमां इच्छा प्रमाणे निवृति थाय छे.'

'एवीजरीते आ जीव शरीरथी सारीरीते उठी परमज्योतिने पामी पोतानेरुपे सिद्ध थाय छे, ते उत्तम पुरुष छे. ते त्यां सर्वभणी जाय छे. हसतो, अथवा स्त्रीओनी (साथे) वा वाहनोनी (साथे) वा ज्ञातिओनी (साथे) क्रीडा करतो (छतां, तथा मनथीज) रमण करतो, समागमथी उपजेला आ शरीरने नहि संभारतो (सर्व तरफ विचरे छे) ते आ प्रसिद्ध मनरुप अप्राकृत नेत्रवडे आ भोगोने जोतो रमे छे.'

बादरायणे चोथा अध्यायना चोथा पादमां मुक्तना स्वरुप

अने ऐश्वर्यनो विचार कर्यो छे. त्यां तेणे हमणां कहेवायली छांदोग्य श्रुति उपर लक्ष राख्युं छे.

"एष संप्रसादः अस्मात् शरीरात् समुत्थाय परं ज्योतिरुप संपद्य स्वेन रुपेणाभिनिष्पद्यते।"

'ते जीव आ शरीरमांथी सारीरीते उठी परम ज्योतिने पामी पोताने रुपे सिद्ध थाय छे.'

बादरायणना मत प्रमाणे आ मुक्त जीवोने माटे ज कहेवायुं छे.

'मुक्तः प्रतिज्ञानात्'। ब्रह्मसूत्र, ४,४,२.

ज्योतिः शद्धथी आत्मा समजवो.

'आत्मा प्रकरणात्'। ब्रह्मसूत्र ४,४,३.

बादरायण कहे छे के, आ श्रुतिमां मुक्तनी अवस्था कहेवाएली छे.

'सम्पद्याविर्भावः स्वेन शद्धात्'। ब्रह्मसूत्र, ४,४,१.

'जीव आत्मानी साथे मळी जइने पोताना स्वरुपमां प्रतिष्ठित थाय ; त्यारे तेनुं जे स्वरुप, तेनोज आविर्भाव थाय.'

"केवलेनैकात्मनाविर्भवति न धर्मान्तरेण" शंकरभाष्य.

"संपद्याविर्भावः स्वरुपस्य। यं दशाविशेषमापद्यते स स्वरुपाविभविरुपः न अपूर्वाकारोत्पत्तिरुपः"॥ (रामानुज)

ते अवस्थामां जीवनो आत्मानी साथे अविभाग (अभेद)

थाय. मतलबके त्यारे जीव अने आत्मामां कशो भेद रहे नहि.

“ अविभागेन दृष्टत्वात् ”। [1] ब्रह्मसूत्र ४, ४, ४.

[1]शंकराचार्ये एना भाष्यमां कह्युं छे के, मुक्त जीव परमात्मानी साथे अभिन्न थाय. “अविभक्त एव परेणात्मना मुक्तोऽवतिष्ठते। कुतः द्रष्टत्वात् । तथाहि तत्त्वमसि अहं ब्रह्मास्मि * * इत्येवमादीनि वाक्यानि अविभागेनैव परमात्मनं दर्शयाति ” रामानुज कहे छे के मुक्त पुरुष पोताने परमात्माथी अभिन्न (तेनाज प्रकारभूत) रुपे अनुभवे. “ परस्माद् ब्रह्मणः स्वात्मानम् अविभागेनानुभवति मुक्तः। कुतः द्रष्टत्वात् । * * अंतः प्रविष्टः शास्ता जनानाम् सत आत्मा इत्यादिभिश्च परमात्मात्मकम् तच्छरीरतया तत्प्रकारभूतमिति प्रतिपादितम्” संप्रसाद अर्थे जीवात्मा अने आत्मा अर्थे आ ठकाणे अध्यात्मा समजतां केम थाय ? जीवनी मुक्तिना अर्थमां आ ठेकाणे बादरायणनुं लक्ष आज छे के, चिदाभास (जीवात्मा) चिन्मात्र एटले (अध्यात्मामां) एकीभूत थाय, त्यारे चिदाभासमां (क्षरपुरुषमां) अने चिन्मात्रमां (अक्षर पुरुषमां) अविभाग थाय. चिन्मात्र अने चिदाकाशनुं जे संमिश्रण, अक्षर (अध्यात्मा) अने पुरुषोत्तम (परमात्मा)नुं जे चिरसंमिलन ते आ ठेकाणे घणुं करी बादरायणनुं लक्ष्य नथी.

जीव स्वस्वरुपे प्रतिष्ठित थाय. आ स्वरुप कया प्रकारनुं ? त्यारपछी बादरायणे आ बाबतनो विचार कर्यो छे. ते कहे छे के, जैमिनिना मत प्रमाणे ते ब्रह्मरुप अने उडुलोमिना मत प्रमाणे ते चिन्मात्र.

" ब्राह्मेन जैमिनिरुपन्यासादिभ्यः।

" चितितन्मात्रेण तदात्मकत्वाद् इति उडुलोमिः "।

(ब्रह्मसूत्र ४,४,५-६).

" स्वम् अस्य रुपं ब्राह्मम् अपहतपाप्मत्वादिसत्यसंकल्पत्वावसानं तथा सर्वज्ञत्वं सर्वेश्वरत्वं च तेन स्वेन रुपेणाभिनिष्पद्यते इति जैमिनिराचार्यो मन्यते। ** चैतन्यमेवतु अस्यात्मनः स्वरुपमिति तन्मात्रेण स्वरुपेनाभिनिष्पत्तिर्युक्ता । ** तस्मात् निरस्ताशेषप्रपंचेन प्रसन्नेनाव्यपदेश्येन बोधात्मनाऽभिनिष्पद्यत इति उडुलोमिराचार्यो मन्यते "। शंकरभाष्य.

मतलबके, 'आचार्य जैमिनि कहे छे के, मुक्त ब्रह्मस्वरुप थाय ; ब्रह्म, निष्पाप, सत्यसंकल्प, सत्यकाम, सर्वेश्वर अने सर्वज्ञ छे. मुक्त पण तेवो ज थाय. उडुलोमि आचार्य कहे छे के, चैतन्यज आत्मानुं स्वरुप छे. तेथी, मुक्तनुं स्वरुप चिन्मात्र थाय एज योग्य छे. * * * आथी मोक्षमां बधा प्रपंच तिरोहित थइ जीव एकान्त प्रसन्न अने अचिंत्य चैतन्यरुपे रहे.'

बादरायण आ बंने मतोनुं सामंजस्य करीने कहे छे के,–

" एवमुपन्यासात् पूर्वभावादविरोधं बादरायणः" ।

ब्रह्मसूत्र ४,४,७.

' आत्मा चिन्मात्र होवा छतां पण ब्रह्मरुप होय एमां कशो विरोध नथी, कारणके मुक्तने ब्रह्मना जेवुं ऐश्वर्य होय छे एम शास्त्रमां कहेलुं छे.'

श्रुति कहे छे के, मुक्तने सघळुं ऐश्वर्य प्राप्त थाय छे, ते कामचार थाय छे, ते स्वराट् थाय छे.

" आप्नोति स्वाराज्यम् * * तेषां सर्वेषु लोकेषु कामचारो भवति * * संकल्पादेवास्य पितरः समुत्तिष्ठन्ति । * * सर्वेऽस्मै देवा बलिमाहरन्ति "।

' ते स्वराट् थाय छे. बधा लोकमां तेनी इच्छा प्रमाणे गति थाय छे. तेना संकल्पमात्रथी पितृओ आवे छे. बधा देवताओ तेने माटे बलि आहरण करे छे.'

बादरायणे आनुं समर्थन करी कह्युं छे के, मुक्तने जे ऐश्वर्य मळे छे, ते संकल्प मात्रथी तेनी पासे आवे छे.

" संकल्पादेव तत् श्रुतेः " ।–ब्रह्मसूत्र, ४ । ४ । ८.

आथी, ते अनन्याधिपति (स्वराट्) थाय छे.

" अत एव च अनन्याधिपतिः " । ब्रह्मसूत्र, ४ । ४ । ९.

आ स्थितिमां तेने शरीर होय छे के नहि ? बादरि कहे छे

के, शरीर होतुं नथी. जैमिनि कहे छे शरीर होय छे. बादरायणनो मत एवो छे के, शरीर होवुं न होवुं ए मुक्त पुरुषनी मरजी उपर छे. जो शरीर होय, तो जाग्रत्‌ना जेवा भोग होय; जो शरीर न होय तो स्वप्नना जेवा भोग होय.

" अभावं बादरिराहह्येवम् । भावं जैमिनिर्विकल्पामननात्। द्वादशाहवत् उभयविधं बादरायणोऽतः । तन्वभावे सन्ध्यवदुपपद्यते । भावे जाग्रद्वत् " । (ब्रह्मसूत्र, ४ । ४ । १०-१४.)

मुक्त पोतानी मरजी प्रमाणे कायव्यूहरचना करी शके. अने ते बधा देहोमां अनुप्रवेश करी शके.

" प्रदीपवत् आवेश स्तथा हि दर्शयति" ।–ब्रह्मसूत्र, ४।४।१५

तेथी श्रुतिए कह्युं छे के,

" स एकधा भवति त्रिधा भवति पंचधा सप्तधा " ।

' ते एक थाय, त्रण थाय, पांच थाय, सात थाय.'

मुक्त बधी बाबतमां स्वतंत्र अने स्वाधीन थाय खरो, पण जगत्‌ना उत्पत्ति-स्थिति-लयमां तेनुं कांइपण कर्तृत्व होय नहि.

" जगद्व्यापारवर्ज्जम् " ।[1] ब्रह्मसूत्र, ४ । ४ । १७.

वळी तेना जे भोग होय, ते आ सूर्य मंडळमांज सीमावाळा होय.

---

[1] बादरायणे आ वातनां समर्थन माटे जुदी जुदी युक्तिओ बतावी छे; प्रकरणात् असन्निहितात् वगेरे.

" प्रत्यक्षोपदेशादिति चेन्न आधिकारिकमंडलस्थोक्तः। "[1]

(ब्रह्मसूत्र, ४।४।१८).

' जो कहोके, मुक्तनुं निरंकुश ऐश्वर्य श्रुतिमां कहेलुं छे.—
" आप्नोति स्वाराज्यम्;" तो तेना उत्तरमां कहेवानुं के, ते ऐश्वर्य अधिकृतमंडळमां सीमावाळुं होय छे.'

भगवाननी साथे मात्र मुक्तना भोगोनुं सादृश्य थाय.

" भोगमात्रसाम्यलिंगाच्च "।—ब्रह्मसूत्र, ४।४।२१.

" भोगमात्रमेषाम् अनादिसिद्धेनेश्वरेण समानम्।-शंकर.

' मुक्तना मात्र भोगोज ईश्वरना जेवा थाय.'

मतलबके शक्ति ईश्वरना जेवी न थाय. तेथी मुक्त, ईश्वरनी पेठे उत्पत्ति-स्थिति-लयमां समर्थ न थाय.

वळी बादरायणे कह्युं छे के, आ मुक्तने पाछुं संसारमां आववुं पडतुं नथी.

" अनावृत्तिः शब्दात् अनावृत्तिः शब्दात् "।

ब्रह्मसूत्र, ४।४।२२.

'ब्रह्मलोकमां गयेला मुक्तनी आवृत्ति थती नथी—एम श्रुति-

[1] अर्थात् Confined to the particular solar system. आधिकारिका अधिकारेषु नियुक्ता स्तेषां मण्डलानि लोकाः तत्स्था भोगा मुक्तस्य भवन्ति-रामानुज भाष्य. शंकरनी व्याख्या बीजी रीते छे, ते समीचीन जणाती नथी.

ए कहेलुं छे.'

ब्रह्मलोकमां गयेला साधकनी आ अनावृत्ति ते आत्यन्तिक छे के आपेक्षिक ?

आ संबंधमां उपनिषदे कहेलुं छे के,

"ब्रह्मलोकान् गमयति। ते तेषु ब्रह्मलोकेषु पराः परावतो-वसन्ति."।

'ब्रह्मलोकमां तेओ लांबा आयुष्यवाळा ब्रह्माना आयुष्य जेटलो वखत रहे छे.'

"स खल्वेवं वर्तयन् यावदायुषं ब्रह्मलोकमभिसंपद्यते न च पुनरावर्तते"। छांदोग्य, ८। १५। १.

'ते प्रसिद्ध (अधिकारी) आयुष् पर्यंत एम वर्ततो ब्रह्म-लोकने पामे छे अने पुनः आवतो नथी.'

गीताना उपदेशथी आपणे जाणी शकीए छीए के, ब्रह्म-लोकमांथी पण आवर्तन थइ शके. गीतामां कह्युं छे केः—

"मामुपेत्य पुनर्जन्म दुःखालयमशाश्वतम्।
नाप्नुवन्ति महात्मानः संसिद्धिं परमां गताः॥
आब्रह्मभुवनाल्लोकाः पुनरावर्तिनोऽर्जुन।
मामुपेत्य तु कौंतेय! पुनर्जन्म न विद्यते"॥

गीता ८। १५-१६.

'मने पाम्या पछी दुःखना स्थानरुप अने अशाश्वत एवो

पुनर्जन्म, परम सिद्धिने पामेला महात्माओ पामता नथी. हे अर्जुन ! ब्रह्मलोकथी मांडी सर्व लोक पुनरावर्तन पामनारा छे परंतु मने पामीने हे कौंतेय ! पुनर्जन्म नथी.'

आथी समजाय छे के, ब्रह्मलोकने पामेला साधकनी कल्पमां आवृत्ति थती नथी, पण कल्प क्षय थतां तेने पण फरवुं पडे छे. आ श्लोकनी टीकामां श्रीधर स्वामीए लख्युं छे के:--

"ब्रह्मलोकस्यापि विनाशित्वात् तत्रत्यानाम् अनुत्पन्नज्ञानानाम् अवश्यंभावि पुनर्जन्म । य एवं क्रममुक्तिफलाभिरुपासनाभिः ब्रह्मलोकं प्राप्तास्तेषामेव तत्र उत्पन्नज्ञानानाम् ब्रह्मणा सह मोक्षो नान्येषाम् । मामुपेत्य वर्तमानानां तु पुनर्जन्म नास्त्येव.'

मतलबके ' ब्रह्मलोक पण विनाशी छे, तो ब्रह्मलोकमां गयेला जीवनो पण जो तेमने ज्ञान न उत्पन्न थाय तो अवश्य पुनर्जन्म थाय. आ प्रमाणे जेओ क्रम मुक्तिफल आपनारी उपासना वडे ब्रह्मलोकने पामे तेमना ब्रह्मलोकना वास वखते जो तेमने ज्ञान उत्पन्न थाय, तोज तेओ (कल्पांते) ब्रह्मानी साथे मोक्ष पामे. बीजा मोक्ष पामी शके नहि. पण मने (भगवान्ने) पामीने कदि पण पुनर्जन्म थाय नहि.'

अहिं श्रीधर स्वामीए नीचलां स्मृति वाक्य उपर लक्ष आप्युं छे,—

"ब्रह्मणा सह ते सर्वे संप्राप्ते प्रतिसंचरे।
परस्यान्ते कृतात्मानो प्रविशन्ति परं पदम्" ॥

'कल्पने अंते ज्यारे प्रलय थाय, त्यारे तेओ ब्रह्मानी साथे ब्रह्मानुं आयुष्य पुरुं थये कृतार्थ थइ परम पद पामे.'

ब्रह्मसूत्रमां पण आवी मतलबनुं ज कहेलुं छे,–

"कार्यात्यये तदध्यक्षेण सहातः परम् अभिधानात्" ।

ब्रह्मसूत्र ४,३,१०.

'कार्य (ब्रह्मांड)नो अंत आवे त्यारे, तेना अध्यक्ष ब्रह्मानी साथे तेओ परतत्त्व (ब्रह्म)ने पामे,-एम श्रुतिए कहेलुं छे.'

आथी एमज सिद्ध थाय छे के, जोके ब्रह्मलोकमां गयेलानी स्थिति स्वर्गमां गयेला करतां घणी लांबी खरी पण जो एटलामां तेओ ब्रह्मज्ञानना अधिकारी न थइ शके तो तेमनुं पण कल्पांते पतन थाय, कारणके, तेम थाय तो (ब्रह्मज्ञान थाय तो) तेने पछी फरवुं पडे नहि, ते परम पद पामे.

बादरायणे जे सूत्र रच्युं छेः–

"अनावृत्तिः शब्दात्" । ब्रह्मसूत्र ४,४,२२.

ते अनावृत्ति आ भावथीज समजवी.

तेथी पंडितवर श्री कालीवर वेदान्त वागीश महाशये पोताना शंकरभाष्यना अनुवादमां आ अनावृत्तिना संबंधमां नीचे प्रमाणे लख्युं छे,–

' अहिं एक बीजो सिद्धांत कहेवा योग्य छे. ते आः—जेओ ईश्वरोपासना सिवाय एटले पंचाग्नि विद्यानुं अनुशीलन, अश्वमेधयज्ञ, सुदृढ ब्रह्मचर्य वगेरे वगेरे कर्मोनां बळथी ब्रह्मलोकमां जाय तेओ तत्त्वज्ञानना अभावथी कल्पनो क्षय थतां एटले प्रलय थाय त्यारे पुनर्जन्म पामे. पण जेओ ईश्वरोपासनाथी अने तत्त्वज्ञानना नियम प्रमाणे ब्रह्मलोकमां गया होय तेओ पाछा फरे नहि. कल्पने अंते तेओ तत्त्वज्ञानी थइ अत्यंत मुक्त थाय."

बीजे ठेकाणे गीतामां आ प्रसंगमां कह्युं छे के, जीव जो भगवान्‌नी पासे पहोंची शके, तोज तेनी आवृत्ति अटके; नहि तो नहि.

" यद् गत्वा न निवर्तंते यद् धाम परमं मम " ।

गीता १८,६.

'ज्यां जइने पाछुं आववानुं नथी, एज मारुं परम धाम छे.'

भगवान्‌ने लक्ष्य करीने गीतामां बीजे ठेकाणे पण ए वात कहेली छे,

" अव्यक्तोऽक्षर इत्युक्तस्तमाहुः परमां गतिम् ।
यं प्राप्य न निवर्तन्ते तद्धाम परमं मम" ॥ गीता ८-२१

' अक्षर अव्यक्त छे, एम कह्युं छे, तेनेज परम गति कहे छे; जेने पामीने ब्रह्मनिष्ठ पुरुषो पाछा आवता नथी तेज

मारुं परम धाम छे.'

गीतामां बीजे ठेकाणे कह्युं छे के ;–

" इदं ज्ञानमुपाश्रित्य मम साधर्म्यमागता ।
सर्गेऽपि नोपजायन्ते प्रलये न व्यथन्ति च । "

गीता १४,२.

पुनर्नावर्तन्ते ।–श्रीधर.

'आ ज्ञाननो आश्रय करीने मारा साधर्म्यने पामेला सर्गमां उपजता नथी, प्रलयमां व्यथा पामता नथी.'

अनावृत्तिना संबंधमां पण गीतामां कह्युं छे के,–

" ततः पदं तत् परिमार्गितव्यम्
यस्मिन् गता न निवर्तन्ति भूयः ।
तमेव चाद्यं पुरुषं प्रपद्ये
यतः प्रवृत्तिः प्रसृता पुराणी " ॥ गीता १५, ४.

" तद्बुद्धयस्तदात्मानस्तन्निष्ठास्तत्परायणाः ।
गच्छन्त्यपुनरावृत्तिं ज्ञाननिर्धूतकल्मषाः ॥ गीता५,१७.
गुणानेतानतीत्यत्रीन्देही देहसमुद्भवान् ।
जन्ममृत्युजरादुःखैर्विमुक्तोऽमृतमश्नुते" ॥ गीता १४,२०

' पछी ते पदनी मार्गणा करवी के जेमां गएला पुनः निवर्तता नथी ; तेज आद्य पुरुषने, हुं प्रपन्न छुं के जेनाथी पुराणी प्रवृत्ति प्रसरेली छे.

'ते ब्रह्ममांज जेनी बुद्धि छे एवा, तज जेनो आत्मा छे एवा, तेमांज जेनी निष्ठा छे एवा, तेनोज जेने आश्रय छे एवा अने ज्ञानवडे जेनां पुण्य पाप धोवाइ गयां छे एवा पुरुषो मोक्षने पामे छे.'

'देह समुद्भव आ त्रण गुणने तरीने देही जन्म मृत्यु अने जरानां दुःखथी मुक्त थाय छे अने अमृत भोगवे छे.'

आथी गीताना मत प्रमाणे अनावृत्तिनो भगवत् प्राप्ति ए एकज उपाय छे. साधकनी गमे तेटली उंची गति थाय, गमे तेवडां उत्कृष्ट ऐश्वर्यनो तेने लाभ थाय, पण ज्यांसुधी भगवान्‌नी साथे ऐक्य न थाय, त्यांसुधी तेना जन्म मरणना फेरानो अत्यंत अटकाव न थाय. आथी जणायछे के, साधारण साधक धूममार्गे भुः, भुवः, स्वः, ए त्रण लोकमां कर्म प्रमाणे जा आव करे एने मानव आवर्त कहे छे. उंचां साधनो साधकने आ त्रण लोकथी उपर लइ जाय. ते देवयान मार्गे त्रिलोकीनी उपर जे उंचा लोको छे—जनः, तपः, महः, सत्य —आ बधा लोकोमां जाय. आ सत्य लोकनुं बीजुं नामज ब्रह्मलोक. ते ए बधा लोकमां एक कल्प जेटलो वखत रहे. ते कल्पमां तेने फरीने मानव आवर्तमां आववुं पडे नहि. पण कल्पांते ज्यारे प्रलय थइ ब्रह्मलोक पण नाश पामे, त्यारे ब्रह्मांडना नाशनी साथे तेनुं पण पतन थाय. पण उंचामां उंचा जे

साधक आ लोकमां अथवा परलोकमां रहेनी वखते भगवा-नूनी साथे मळी जवानो अधिकार पामे, तेओ सत्य लोकनी पण पार, ब्रह्मांडनो बहार रहेल जे भगवान्नुं परम धाम (पु-राणनी भाषामां जेने वैकुंठ कहे छे), त्यां जाय तेने कदापि पण फरवुं पडे नहि. ते भगवान्नी साथे अनंत मिलनमां मळी जाय. गीताना अढारमा अध्यायमां आ गूढ रहस्य खुल्लु क-रवामां आव्युं छे.

" ब्रह्मभूतः प्रसन्नात्मा न शोचति न कांक्षति ।
समः सर्वेषु भूतेषु मद्भक्तिं लभते पराम् ॥
भक्त्या मामभिजानाति यावान् यश्चास्मि तत्त्वतः ।
ततो मां तत्त्वतो ज्ञात्वा विशते तदनन्तरम् " ॥

(गीता १८, ५४-५५).

' जे ब्रह्मभूत प्रसन्नात्मा ते शोच के काम धरतो नथी, सर्व भूतप्रति सम होइ मारी परभक्तिने प्राप्त करे छे. भक्तिथकी हुं तत्त्वथकी केवो ने केवडो छुं ते अभिज्ञान पामे छे, अने त-त्त्वथी मने जाणीने अनन्तर प्रवेशे छे.'

आ अवस्था ब्रह्मभूत थयानी पण पछीनी अवस्था छे; गीतामां ठेकठेकाणे ब्राह्मीस्थिति, ब्रह्मनिर्वाण वगेरेनो जे उल्लेख छे, तेनाथी पण उपरनी अवस्था छे. ब्रह्मभूत थवानो अर्थ ए छे के आपणा ब्रह्मांडनो जे आत्मा-जेने ब्रह्मा कहे

छे–तेनी साथे एकीभूत थवुं. आ साधनानी घणी उंची अवस्था छे खरी, पण साधकनी ए छेल्लामां छेल्ली साधना नथी. कारणके, जेवुं आपणुं ब्रह्मांड छे तेवां बीजां करोडो ब्रह्मांडो छे.

" संख्या चेद् रजसामस्ति विश्वानां न कदाचन ।"

'रजकणोनी गणत्री थाय, पण ब्रह्मांडोनी कदि पण न थाय.'

नारायण उपनिषद्मां कहेलुं छे के,

" अस्य ब्रह्मांडस्य समन्ततः स्थितान्येतादृशान्यनन्तकोटिब्रह्मांडानि सावरणानि ज्वलन्ति । चतुर्मुख पंचमुख षण्मुख सप्तमुखाष्टमुखादिसंख्याक्रमेण सहस्रावधिमुखान्ते नारायणांशै रजोगुणप्रधानैरेकैक सृष्टिकर्तृभिरधिष्ठितानि विष्णुमहेश्वराख्यैर्नारायणांशैः सत्त्वतमोगुणप्रधानैरेकैकस्थितिसंहार कर्तृभिरधिष्ठितानि महाजलौघमत्स्यबुद्बुदानन्तसंघवद्भ्रमन्ति."

'आ ब्रह्मांडनी चारे दिशाए आवां अनंतकोटि सावरण ब्रह्मांड प्रकाशे छे. ते बधां ब्रह्मांडोमां अनुक्रमे उत्पत्ति-स्थिति-लय करनार, रजोगुण, सत्वगुण अने तमोगुण प्रधान, नारायणना अंश, चारथी हजार लगीनां मोंवाळा ब्रह्मा, विष्णु अने शिव अधिष्ठित रह्या छे. जेम समुद्रमां अनेक माछलां अने परपोटा भमता करे छे, तेम आ बधां ब्रह्मांडो विचरण करे छे–

भमे छे.'

दरेक ब्रह्मांडना स्वतंत्र ईश्वर छे. गुणभेदे तेनां नाम ब्रह्मा, विष्णु अने रुद्र छे. पण जे बधां ब्रह्मांडाना अधिपति छे, जे आ बधा ईश्वरोना पण ईश्वर छे,—तेज महेश्वर, तेज भगवान् छे.

" कोटिकोट्ययुतानीशे चाण्डानि कथितानि तु।
तत्र तत्र चतुर्वक्त्रा ब्रह्माणो हरयोभवाः ॥
असंख्याताश्च रुद्राख्या असंख्याता पितामहाः।
हरयश्च ह्यसंख्याता एक एव महेश्वरः " ॥

(विज्ञानभिक्षु-धृत लिंगपुराण).

मतलबके ' ईश्वरने आशरे कोटी कोटी ब्रह्मांडो छे. दरेक ब्रह्मांडमां ब्रह्मा विष्णु रुद्र रहेला छे. ए ब्रह्मा विष्णु अने रुद्रनी गणत्री थाय तेम नथी. जे एना ईश्वर-महेश्वर, ते तो मात्र एक छे.'

साधकने ते महेश्वरनी साथे संयुक्त करी देवो ए गीतानुं लक्ष्य छे. आपणे जोयुंछे के, ब्रह्मसूत्र साधकने ब्रह्मलोक सुधी लइ गयुं छे.

" आधिकारिकमंडलस्थोक्तः" । ब्रह्मसूत्र ४,४,१८.

पण गीताए तेनाथी पण उपरनी अवस्थानुं वर्णन कर्युं छे अने साधनना जे छेल्लामां छेल्लो अंत भगवाननुं धाम त्यां सा-

धकने लइ गइ छे.

साधक साधनने बळे ब्रह्मने पामी शके छे, ए वात गीतामां फरी फरीने कहेली छे;

" बहूनां जन्मनामन्ते ज्ञानवान् मां प्रपद्यते "

गीता ७, १९.

'ज्ञानवान घणा जन्मने अंते मने पामे छे.'

" परमं पुरुषं दिव्यं याति पार्थानुचिंतयन् "।

गीता ८, ८.

'हे पार्थ ! (साधक) ध्यानवडे दिव्य परम पुरुषने पामे छे.'

" सतं परं पुरुषमुपैति दिव्यम् "। गीता ८, १०.

'ते (योगी) दिव्य परम पुरुषने पामे छे.'

" मामेवैष्यासियुक्त्वैवम् आत्मानं मत्परायणः "।

गीता ९, ३४.

'ईश्वरपरायण (योगी) आत्मानो आवी रीते योग करीने मने (ईश्वरने) पामे छे'

" निर्वैरः सर्वभूतेषु यः स मामेति पाण्डव ।

गीता ११, ५५.

'सघळां प्राणीमां वेर वगरनो (भक्त) मने पामे छे.'

" मय्येव मन आधत्स्व मयि बुद्धिं निवेशय ।

निवसिष्यसि मय्येव अत ऊर्ध्वं न संशयः" ॥

गीता १२, ८.

'मारामां मन राख, मारामां बुद्धि जोड ; एम करवाथी नक्की ज देहान्ते तुं मारामां वसीश.'

"सिद्धिं प्राप्तो यथा ब्रह्म तथाप्नोति निबोध मे" ।

(गीता १८, ५०).

'सिद्धि पामेलो साधक जे रीते ब्रह्मने पामे छे, ते सांभळी ले.'

ब्रह्मने पामेलो साधक ब्रह्म थाय छे, ए वात गीताए स्पष्ट रीते कहेली छे :—

"योऽन्तः सुखोऽन्तरारामस्तथान्तर्ज्योतिरेव यः ।
स योगी ब्रह्मनिर्वाणं ब्रह्मभूतोऽधिगच्छति" ॥

गीता ५,२४.

"प्रशान्तमनसं ह्येनं योगिनं सुखमुत्तमम् ।
उपैति शांतरजसं ब्रह्मभूतमकल्मषम् ॥
युंजन्नेवं सदात्मानं योगी विगतकल्मषः ।
सुखेन ब्रह्मसंस्पर्शमत्यंतं सुखमश्नुते" ॥ गीता ६,२७-२८

"सर्वभूतस्थितं यो मां भजत्येकत्वमास्थितः ।
सर्वथा वर्तमानोऽपि स योगी मयि वर्तते" ॥ गीता ६,३१

"यदा भूतपृथग्भावमेकस्थमनुपश्यति ।
तत एव च विस्तारं ब्रह्म संपद्यते तदा" ॥ गीता १३,३०

" मां च योऽव्यभिचारेण भक्तियोगेन सेवते।
स गुणान् समतीत्यैतान् ब्रह्मभूयाय कल्पते " ॥
गीता १४, २६.

" अहंकारं बलं दर्पं कामं क्रोधं परिग्रहम्।
विमुच्य निर्ममः शांतो ब्रह्मभूयाय कल्पते " ॥
गीता १८, ५३.

' जे अंतरात्मामां ज सुखवाळो, अंतरात्मामां ज आरामवाळो तथा जे अंतरात्मामां ज प्रकाशवाळो छे, ते योगी ब्रह्मरुप थएलो ब्रह्मरुप निर्वाणने पामे छे.'

' शांत मनवाळा, रजोगुण जेनो निवृत्त थयो छे एवा, ब्रह्मरुप थएला, पाप पुण्य रहित एवा योगीने निश्चय उत्तम सुख प्राप्त थाय छे. ए प्रमाणे निरंतर चित्तने समाहित करतो पाप पुण्यरहित योगी आत्मानुभवना निरातिशय सुखने अनायासे पामे छे '

' जे एकत्वना आश्रयवाळो सर्व भूतोमां रहेला मने भजे छे, ते योगी सर्व प्रकारे रहेतो छतो पण मारामां वर्ते छे.'

' ज्यारे भूतमात्रनो पृथग्भाव एकस्थ देखे छे अने ए थकीज विस्तार (पामे छे) त्यारे ब्रह्म थाय छे.'

' वळी जे मने अव्यभिचारथकी भक्तियोगे करीने सेवे छे ते आ गुणोनी पार जइ ब्रह्मभाव योग्य थाय छे.'

'अहंकार, बल, दर्प, काम, क्रोध, परिग्रहत्यजी निर्मम, शांत ते ब्रह्म साक्षात्कार योग्य छे.'

ब्रह्मभूत साधकनी जे अवस्था थाय छे, तेनुं वर्णन गीताए नीचे प्रमाणे कर्युं छेः—

"बहवो ज्ञानतपसा पूतामद्भावमागताः"। गीता ४,१०.

मद्‌भावं=मत्सायुज्यम् ।---- श्रीधर.

मद्‌भावं=मद्रूपत्वम् ।---मधुसूदन.

"नान्यं गुणेभ्यः कर्त्तारं यदा द्रष्टानुपश्यति ।
गुणेभ्यश्च परं वेत्ति मद्भावं सोऽधिगच्छति" ॥

गीता १४, १९.

मद्‌भावं=ब्रह्मत्वम् ।----श्रीधर.

मद्‌भावं=मद्रूपतां ।----मधुसूदन.

मद्‌भावं= मम भावं ।----शंकर.

"इदं ज्ञानमुपाश्रित्य मम साधर्म्यमागताः
सर्गेऽपि नोपजायन्ते प्रलये न व्यथन्ति च" ॥

गीता १४,२.

मम साधर्म्यं=मद् रुपत्वम् ।----श्रीधर.

मम साधर्म्यं=मत् स्वरुपताम् ।---शंकर.

मम साधर्म्यं=मत् साम्यं---रामानुज.

"भक्त्यात्वनन्यया शक्यः अहमेवं विधोऽर्जुन ।

ज्ञातुं द्रष्टुं च तत्त्वेन प्रवेष्टुं च परंतप"॥ गीता ११,५४.

प्रवेष्टुं च तादात्म्येन।

"भक्त्यामामभिजानाति यावान् यश्चास्मि तत्त्वतः।
ततो मां तत्त्वतो ज्ञात्वा विशते तदनंतरम्"॥
गीता १८, ५५.

मां विशते=परमानंदरुपोभवति।----श्रीधर.

'ज्ञानरुपी तपवडे पवित्र थएला घणा पुरुषो मारा भावने पामेला छे.'

'ज्यारे द्रष्टा गुणथकी अन्यने कर्त्ता देखतो नथी त्यारे गुण थकी परने जाणे छे. अने मारा भावने पामे छे.'

'आ ज्ञाननो आश्रय करीने मारा साधर्म्यने पामेला सर्गमां उपजता नथी, प्रलयमां व्यथा पामता नथी.'

'हे परंतप अर्जुन! ए प्रकारनो हुं अनन्यभक्तिवडे ज जाणवाने शक्य छुं अने तत्त्ववडे-वास्तविक स्वरुपवडे-साक्षात्कार करवाने अने मळवाने शक्यछुं.'

'भक्तिथकी हुं तत्त्वथकी केवो अने केवडो छुं ते अभिज्ञान पामे छे, अने तत्त्वथी मने जाणीने अनन्तर प्रवेशे छे.'

आथी, गीताना मत प्रमाणे मुक्त पुरुष ब्रह्मनी साथे मळी जइ ब्रह्म थाय छे, एम समजाय छे. तेमां अने ब्रह्ममां कांइ भेद रहेतो नथी, बंने अभिन्न थाय छे.

मुक्तनुं वर्णन करतां उपनिषदे लख्युं छे के,–

"यथेमा नद्यः स्यन्दमानाः समुद्रायणाः समुद्रंप्राप्यास्तं गच्छन्ति भिद्येते तासां नामरूपे समुद्र इत्येवं प्रोच्यते । एवमेवास्य परिद्रष्टुरिमाः षोडशकलाः पुरुषायणाः पुरुषं प्राप्यास्तं गच्छन्ति भिद्येते तासां नामरूपे पुरुष इत्येवं प्रोच्यते। स एषोऽकलोऽमृतो भवति"॥ (प्रश्न ५,६.).

'जेम आ नदीओ वहन करती (छती) समुद्र छे आत्मभाव जेनो एवी (थइने) समुद्रने पामीने अस्त थाय छे, तेओनां नाम अने रुप नाश पामे छे, (ने) समुद्र एम कहेवाय छे, तेमज आ परिद्रष्टानी आ सोळ कळा पुरुष छे आत्मभाव जेनो एवी (थइने) अस्त थाय छे, तेमनां नाम रुप नाश पामे छे, (ने) पुरुष एम कहेवाय छे. ते आ कळारहित (ने) मरण रहित थाय छे.'

बादरायणे नीचेनां बे सूत्रोमां आ उपरनी श्रुति तरफ लक्ष आपेलुं छे;

"तानिपरे तथा ह्याह"। "अविभागो वचनात्"॥

[ब्रह्मसूत्र, ४,२,१५-१६].

तत्त्वज्ञानीनां आ बधां [इंद्रियो अने सूक्ष्मभूतो] परमां [आत्मामां] लीन थाय छे. तेमना आत्मानी साथे अवि-

भाग सिद्ध थाय.'

आ विदेह मुक्तिनी वात छे. ए अवस्थामां मुक्तनां स्थूल, सूक्ष्म, कारण, ए बधां शरीरांनो अत्यंत नाश अथवा प्रविलय थाय छे.

जीवात्मा अने परमात्माना एक रुप थवानी वात बादरायणे बीजां सूत्रमां कहेली छे;

" अविभागेन दृष्टत्वात् " । ब्रह्मसूत्र ४,४,४.

' श्रुतिमां एवुं जोवामां आवे छे के, मुक्त अवस्थामां जीवनो अविभाग थायछे.' कारणके उपनिषदे एवी रीतेज मुक्तना स्वरुपनुं वर्णन कर्युं छे;—

"यथानद्यः स्यन्दमानाः समुद्रेऽस्तं गच्छन्ति नामरुपे विहाय।
तथा विद्वान्नामरुपाद् विमुक्तः परात् परं पुरुषमुपैति दिव्यम् ॥

' जेम नदीओ वहन करती [छती] नाम रुप छोडीने समुद्रने पामीने अस्त थाय छे, तेम विद्वान् [तत्त्वज्ञानी] नाम रुपथी मुक्त थइने दिव्य परम पुरुषने पामे छे.'

---

[1] अहिं "पर" एटले परब्रह्म एम शंकराचार्य समज्या छे. रामानुजना मत प्रमाणे पर एटले परमात्मा. रामानुज कहे छे के अविभाग एटले अपृथक् भाव-' पृथग् व्यवहारानर्ह संसर्ग' अर्थात्, एवुं मिश्रण के जे मिश्रणमां पृथक् रुपे अनुभूति तिरोहित थाय.

आ जे नदी समुद्रनुं मिलन, ते मात्र मिलन नथी, एतो मिश्रण [एक रूपता] छे. जेम समुद्रने मळवाथी नदी पछी नदी रहेती नथी, समुद्र थइ जाय छे, तेम विदेह मुक्तिनी अवस्थामां जीवनुं पण थाय छे. जीव पछी जीव रहेतो नथी, ब्रह्म थइ जाय छे.

जीव अने ब्रह्मनुं आ अत्यंत मिलन एज गीतानुं छेवटनुं लक्ष्य छे, अने एज गीतानी अनुमोदली मुक्ति छे, ए आपणे जोइ गया छीए.

प्रकरण १३ मुं.

उपसंहार.

गीतामां ईश्वरवादना विचारमां प्रवृत्त थइ आपणे षड्दर्शननां दुर्गम वनमां पेठा हता. महा मुश्केलीए आपणे तेमांथी बहार नीकळ्या छीए. हवे ग्रंथ पूरो करतां पहेलां आपणी महेनतथी मळेलां फळनो सारसंग्रह करी आ पुस्तकनो उपसंहार करीए. आपणे पहेला प्रकरणमां जोयुं के, दुःखनो नाश करवो ए जीवनी इच्छा छे अने तेथी दुःखहानि एज जीवनो परम पुरुषार्थ छे. गीता रचाइ ते वखते चालतां बधां

दर्शनोमां आ दुःखनाशनो उपाय जूदी जूदी रीते उपदेशाएलो हतो. गीताए पण दुःखनाशना उपायनो उपदेश कर्यो छे. ते उपायथी दर्शन-शास्त्रमां उपदेशेला उपायनुं एक खास जूदापणुं छे. गीतामां कहेला उपायना केंद्रस्थानमां ईश्वर छे, पण एक वेदांत सिवाय बीजां दर्शनोए बतावेला दुःखहानिना उपायनी साथे ईश्वरनो बहु पासेनो संबंध नथी. बीजुं पण आपणे कही गया छीए के, दर्शनशास्त्रनो उंडो विचार करतां क्रमे क्रमे एवो दृढ निश्चय थतो जाय छे के, तेमां काइक अपूर्णता छे, काइक अभाव रही गयो छे. वळी गीताए ए बधां दर्शनशास्त्रना मूळ प्रतिपाद्य विषयनो अंगीकार करी लइने तेमां एक एवी अपूर्व वस्तुनो संयोग करी दीधो छे के, तेथी ते अभाव दूर थइ गयो छे, ते असंपूर्णता पुराइ गइ छे. आ अपूर्व वस्तु ईश्वरवाद छे. ईश्वरवाद संयोजी दइने गीताए अति सहजे दर्शनशास्त्राने सुसंपूर्ण करी दीधां छे.

आ वात सिद्ध करवामाटे आपणे एके एके षड्दर्शननो टुंकामां विचार कर्यो. ते विचारथी आपणे एवो सिद्धांत बांध्यो के, न्याय अने वैशेषिक दर्शनमां ईश्वरनुं खंडन करवामां आव्युं नथी, तोपण ए बंने दर्शनमां ईश्वरनुं स्थान अति गौण छे. कारणके न्याय अने वैशेषिक दर्शनमां दुःख नाश (अपवर्ग लाभ अथवा निःश्रेयस प्राप्ति)ना जे उपाय बताववामां

આવ્યો છે, તેની સાથે ઈશ્વરનો કાંઇ પણ સંબંધ નથી. ઇશ્વર જાય કે રહે, તેની સાથે જીવનો સંબંધ સ્થાપિત થાઓ કે ન થાઓ, તેમાં ન્યાય વૈશેષિકને કાંઇ લેવા દેવા નથી. આપણે બીજું પણ જોયું છે કે, આખી ગીતામાં કોઇ પણ ઠેકાણે ન્યાય અને વૈશેષિક દર્શનનો જરાયે પ્રસંગ, ઇંગિત કે આભાસ જોવામાં આવતો નથી. તેથી ગીતામાં ઈશ્વરવાદના વિચારમાં એ બે દર્શનનું વિવરણ ન આપ્યું હોત તોપણ ચાલી શકત. પણ વિષયની સંપૂર્ણતા માટે તે વિષય આપવામાં આવ્યો છે.

બીજાં ચાર દર્શનોની સાથે ગીતાનો સંબંધ ઘનિષ્ટ (ગાઢો) છે. ગીતાએ સાધારણ રીતે તે તે દર્શનનો મૂળ પ્રતિપાદ્ય વિષય અંગીકાર કરીને, તેની સાથે ઈશ્વરવાદ સંયુક્ત કરી દઇ તે દર્શનોને સુસંપૂર્ણ કર્યાં છે. તેથી પહેલાં તો તેમાંનાં પ્રત્યેક દર્શનનું ટુંકું વર્ણન આપવામાં આવ્યું છે. પછી ગીતાએ તેમાંના કયા કયા વિષયમાં તેની અસંપૂર્ણતા પૂર્ણ કરી દીધી છે, તેનો વિચાર કર્યો છે. તે વિચારનું ફળ આ પ્રમાણે થયું છે.

મીમાંસા દર્શનનો વિચાર કરતાં આપણે જોયું છે કે, તે દર્શનના મત પ્રમાણે યજ્ઞરુપ કર્મ એજ જીવના શ્રેયોલાભનો ઉપાય છે. યજ્ઞથી જીવ અમર થઇને જરા-મૃત્યુને ઓળંગી જાય છે. મીમાંસકો નિરીશ્વરવાદી છે, એ પણ આપણે જોયું છે. મીમાંસા દર્શનમાં કોઇ પણ ઠેકાણે ઈશ્વરનો કશો પ્રસંગ નથી.

गीताए जीवनी यज्ञमां प्रवृत्ति करावीने यज्ञने अनुमोदन आ-
प्युं छे, अने ईश्वरोद्देशे यज्ञार्थे कर्मानुष्ठान करवानो उपदेश
आपी मीमांसकोए उपदेशेलां कर्मनी साथे ईश्वरवाद संयुक्त
करी दीधो छे. तेथी कर्म, कर्मयोगना रुपमां आवी जाय छे.
आ कर्मयोगनो मेरु दंड (वरडानी करोड-मुख्य आधार) ई-
श्वरार्पण छे. फलेच्छानो त्याग करी, अहंकाररहित थइ, ई-
श्वरने बधां कर्म अर्पण करवां.

आ पछी आपणे सांख्यदर्शननो विचार करतां जोयुं छे के
सांख्यमत प्रमाणे प्रकृति-पुरुष एज छेल्लुं द्वैत छे, अने तेमनो
विवेक अथवा भेदज्ञान एज दुःखनिवृत्तिनो उत्तम उपाय छे.
सांख्यदर्शन निरीश्वर छे, ए पण आपणे जोयुं छे. सांख्योए
स्पष्ट भाषामां ईश्वरनुं खंडन कर्युं छे. तेमना मत प्रमाणे प्रकृ-
तिनो परिणाम स्वतः (पोतानी मळेज) सिद्ध छे. तेनी साथे
ईश्वरने कशो संबंध नथी ; पुरुष घणा अने स्वतंत्र छे, ईश्वरने
आधीन नथी. पाछळ गीतानो विचार करतां आपणे जोयुं छे
के, गीताने अभिमत जे ज्ञान ते तत्त्वज्ञान छे, तत्त्वज्ञान एटले
ततनुं ज्ञान. ते ज्ञानवडे जीव प्राणीमात्रने पहेलां पोतामां अने
पछी ईश्वरमां जुए छे, अने ते ज्ञानथी ज्ञानी छेवट भगवानने
प्राप्त थाय छे अने बधुंज ईश्वर छे, एवो अनुभव करे छे. आपणे
बीजुं पण जोयुं छे के, गीताना मत प्रमाणे पुरुषो घणा नथी,

एक छे, अने ते पुरुष ईश्वरथी अभिन्न छे, ईश्वरज जीवरुपे सौनां हृदयमां रहेलो छे. गीताना मत प्रमाणे प्रकृतिनो परिणाम ईश्वरना अधिष्ठानने लीधेज थायछे,ए पण आपणे जोयुं छे. गीताना मत प्रमाणे ईश्वरना अधिष्ठानने लीधेज प्रकृति आ चराचर(जड-चेतन) आखां विश्वने उत्पन्न करे छे, ते प्रकृतिमां जे गर्भाधान करे छे, तेने लीधेज भूतमात्र उत्पन्न थाय छे. गीताना मत प्रमाणे प्रकृति अने पुरुष ए विश्वनुं चरम (छेल्लुं) द्वैत नथी ; तेओ तो खरुं जोतां ईश्वरना ज मात्र विभाव अथवा प्रकार छे. सांख्योक्त प्रधान ए तेनी अपरा प्रकृति अने सांख्योक्त पुरुष ए तेनी पराप्रकृति छे ; छेवटनुं तत्त्व तो तेज छे, तेनाथी पर बीजुं कशुं ज नथी. आ सघळुं आपणे पाछळ जोइ गया छीए. आथी प्रकृति-पुरुष स्वतंत्र नथी, ईश्वरने आधीन छे. वळी आपणे जोयुं के सांख्यशास्त्रमां कैवल्य मेळववानो जे उपाय बतावावामां आव्यो छे, तेनी साथे ईश्वरनो कांइपण संबंध नथी. कारणके सांख्यमत प्रमाणे पचीश तत्त्व (जेमां ईश्वरनो समास नथी थतो.)नुं उत्कृष्ट ज्ञान मेळवे तोज जीव अत्यंत दुःखना अधिकारमांथी छुटीने कैवल्य मेळवी शके. गीताए अनुमोदन करेलो आ मार्ग मुक्तिमार्ग करतां तद्दन जूदो ज छे. कारणके ईश्वरने लक्ष्य कर्या सिवाय गीताने मुक्तिमार्ग चलाय तेम छे ज नहि.

त्यारपछी पातंजल दर्शननो विचार करतां आपणे जोयुं छे के योग अथवा चित्तवृत्ति निरोधथी थाय तेवो प्रकृति पुरुषनो वियोग एज ते दर्शनमां कैवल्य पामवानो उपाय बताव्यो छे. आ चित्तवृत्ति निरोधना जूदा जूदा उपायोमां ईश्वर प्रणिधाननो पण उल्लेख छे. वळी आपणे जोयुं छे के, चित्तवृत्तिनिरोधवडे योग सिद्ध थवाथी जीव निर्बीज समाधि पामे, एज पातंजल दर्शननुं चरम लक्ष्य छे. आ स्थितिमां पुरुष स्वरुपमां स्थित थाय छे, अने सुख दुःखने ओळंगी जइने कैवल्य पामे छे. तेथी ए मत प्रमाणे समाधिवडे मात्र आत्मसाक्षात्कार थाय छे; ईश्वर प्राप्ति थती नथी. आपणे जोयुं छे के, गीता योगने अनुमोदन आपीने अने योग साधवानो उपदेश करीने ईश्वरमां चित्तना संयोगने ज योगनो मुख्य उपाय कहे छे. पण पातंजल दर्शनमां ईश्वर प्रणिधान ए योग सिद्धिना विविध उपायोमांनो मात्र एक उपाय गण्यो छे, तेथी ए मत प्रमाणे ईश्वरने छोडी दइए तोपण योगने कशी हानि थती नथी. पण गीतामां ज्यां योगनो प्रसंग छे, त्यां साथेने साथेज ईश्वरनो उल्लेख छे. गीताना मत प्रमाणे जे श्रद्धायुक्त थइ, भगवान्‌मां चित्त संयुक्त करी तेनी उपासना करे, तेज श्रेष्ट योगी छे. तेथी गीताए चरम योगनो उपदेश आपी कह्युं छे के, ईश्वरने-ईश्वरमां-मन अर्पण कर, ईश्वरनुं यजन कर, ईश्वरने

प्रणाम कर, ईश्वरने सार कर, आ प्रमाणे आत्मानो योग करवाथी तुं ईश्वरमां मळी जइश.

मन्मना भव मद्भक्तो मद्याजी मां नमस्कुरु ।
मामेवैष्यसि सत्यं ते प्रतिज्ञाने प्रियोऽसि मे ॥

गीता अ. १८ श्लो ६५.

मारामां मनवाळो था, मारो भक्त था, मारुं पूजन कर, अने मने नमस्कार कर, तेथी तुं मनेज पामीश. हुं मारा सत्यनी प्रतिज्ञा करुं-छुं. तुं मने प्रिय छे.

गीताना मत प्रमाणे योगनुं फळ मात्र आत्मसाक्षात्कार नथी ; भगवान्‌ना संगनो लाभ छेः ए पण आपणे जोयुं छे गीताए कह्युं छे के–

प्रशांतमनसं ह्येनं योगिनं सुखमुत्तमम् ।
उपैति शांतरजसं ब्रह्मभूत मकल्मषम् ॥
युंजन्नेवं सदात्मानं योगी विगतकल्मषः ।
सुखेन ब्रह्मसंस्पर्श मत्यंतं सुखमश्नुते ॥

गीता अ. ६ श्लो. २७-२८.

आवी रीते अत्यंत शांतमनवाळा, जेनो रजोगुण शांत थयो छे एवा अने ब्रह्मरुप थयेला पाप रहित योगीने उत्तम सुख मळे छे.

ए प्रमाणे सदा चित्तने आत्मामां जोड्या करतो पाप रहित योगी ब्रह्मना स्पर्शथी थतां अत्यंत सुखने सहेजमां अनुभवे छे.

त्यार पछी आपणे वेदांतदर्शनना विचारमां प्रवृत्त थया हता. अने कांइक विस्तारथी अद्वैत अने विशिष्टाद्वैत मतनुं विवरण कर्युं हतुं. वैदांत दर्शनमां ब्रह्मज मुख्य छे. गीतामां पण तेमज छे. तेथी वेदांत अने गीताना संबंधनो विचार करतां आपणे जे प्रसंगो उत्पन्न कर्या हता, तेमां घणेखरे ठेकाणे गीता अने वेदांतनो एक मत जणायो छे. अहीं ए बधांनी पुनरावृत्ति करवी ए नकामुं छे. तोपण ब्रह्मप्राप्तिना उपाय अने फळना संबंधमां विचार करवा जतां आपणे ब्रह्मसूत्र अने गीतामां कोइ कोइ अंशे जूदाइ जोइ छे; अने ते प्रसंगे गीताना अपूर्व समन्वयवादनो विचार कर्यो छे. आपणे आ पण जोयुं के, गीताना मत प्रमाणे मुक्त पुरुषनो ब्रह्मनी साथे अभेद थाय छे; मुक्त पुरुष ब्रह्मभाव पामीने ब्रह्मनी साथे एकीभूत थाय छे. वेदांतदर्शन जीवने ब्रह्मलोक पर्यंत लइ जाय छे, पण गीता तो जीवने ईश्वर साथे मेळवी दे छे.

आथी, छाती ठोकीने कही शकीए छीए के, पहेलां प्रकरणमां अमे गीतामां ईश्वरवादने लक्ष्य करीने जे वात कही हती, ते वात गीता अने दर्शनशास्त्रना विचारथी साबीत थइ छे. एमां जरापण शक जेवुं नथी.

आ ईश्वरवादज गीतानो प्राण छे. गीतानो आदि, मध्य, अंत-आखी गीताज ईश्वरवादथी प्रकाशी रही छे.

आदावन्ते च मध्ये च
हरिः सर्वत्र गीयते ।

गीतामां ईश्वरनुं एटले दरज्जे प्राधान्य छे के, गीतामांथी ईश्वरवाद लइ लेवामां आवे तो गीता मात्र अर्थ वगरनो वाक्य-विन्यासज थइ पडे. तेथी ज गीतानो आटलो महिमा छे, तेथीज गीता सर्व शास्त्रमयी छे, गीता कल्पवृक्ष छे, उपनिषदोना पण सारनो सार छे. गीताने लक्ष्य करीने प्राचीनो जे कही गया छे, तेनो प्रतिध्वनि करी आ ग्रंथनो उपसंहार करीए छीए.

संसार सागरं घोरं तर्तुमिच्छति यो नरः ।
गीतानावं समासाद्य पारं याति सुखेन सः ॥

अर्थ—संसार सागर घोर, तरवा इच्छे जे नर ;
गीता नौका चडे तो ते, उतरी जाये सुखथकी.

ॐ तत् सत् परमात्मने नमः

राजकोटः—" दामोदरदास " मुद्रालयमां त्रि. दा. गढीआए छाप्युं.